THE BOOK WAS DRENCHED

TEXT FLY WITHIN THE BOOK ONLY

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_182244
UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No H891.072/T79H Accession No G H. 1011

Author त्रिवेदी, गणेश प्रसाद v. 1 III

Title [illegible]

This book should be returned on or before the date last marked below

हिंदी के कवि और काव्य

(भाग ३)

श्री गणेशप्रसाद द्विवेदी

हिंदुस्तानी एकेडेमी

संयुक्त प्रांत, इलाहाबाद

१९४१

प्रकाशक—
हिंदुस्तानी एकेडेमी, संयुक्त प्रांत
इलाहाबाद

मूल्य	कपड़े की जिल्द	३॥)
	सादी जिल्द	३)

मुद्रक—
ओंकार प्रसाद गौड़, मैनेजर,
कायस्थ पाठशाला प्रेस व प्रिंटिंग स्कूल, प्रयाग

भूमिका

'हिंदी के कवि और काव्य' के प्रथम और द्वितीय भाग प्रकाशित हो चुके है। यह संतोष का विषय है कि विद्वन्मंडली तथा विशेष कर हिंदी साहित्य के विद्यार्थियों के लिये यह उपयोगी सिद्ध हो सके है। इसी बीच प्रथम भाग को प्रयाग विश्व-विद्यालय ने हिंदी की एम्० ए० परीक्षा के लिये पाठ्य-पुस्तक बनाने का निश्चय कर लिया है। यह प्रथम भाग वीरगाथा काल से सबध रखता है।

द्वितीय भाग में कबीर आदि प्रमुख सतों की श्रेष्ठ रचनाएँ तथा सत साहित्य का समालोचनात्मक अनुशीलन है। यह भाग हाल ही मे प्रकाशित हुआ है, अत हिंदी जगत् का यथोचित ध्यान अभी तक नहीं आकृष्ट कर सका है।

अब यह तृतीय भाग हिंदी ससार के सामने उपस्थित किया जा रहा है। इस का सबध हिंदी के प्रेमगाथा या दूसरे शब्दों मे आख्यानक काव्य से है। इस मे जायसी, नूरमुहम्मद, उसमान निसार तथा आलम की रचनाएँ सगृहीत है।

इन मे से निसार कृत 'यूसुफ-जुलेखा' तथा आलम कृत 'माधवानल-काम-कदला अप्रकाशित ग्रंथ है। इस सग्रह मे पहले-पहल उक्त दोनों की रचनाएँ प्रकाशित हो रही है। स्मरण रहे कि यह आलम 'आलमकेलि' नामक ग्रथ के रचयिता आलम से भिन्न है। खेद है कि अभी तक भ्रमवश सभा हिंदी साहित्य के इतिहास लेखक इन दोनों को अभिन्न मानते आये है। समालोचना खड (पृ० १४) मे इस संबंध मे विशेष कहा गया है।

इस संग्रह मे सुविधा के लिये समालोचना खड तथा संग्रह खंड अलग-अलग रक्खे गये है। पहले पाँचों कवियों की जीवनी तथा गवेषणा आदि फिर सग्रह—ऐसा क्रम रक्खा गया है।

संग्रह का क्रम ऐसा रक्खा गया है कि सब पढने पर मूल कथा का सारांश स्पष्ट हो जाता है।

'माधवानल-कामकंदला' अद्यावधि अप्रकाशित तथा छोटा होने के कारण पूरा ले लिया गया है।

गणेशप्रसाद द्विवेदी

विषय-सूची

१. समालोचना खंड—

नूर मुहम्मद कृत इंद्रावती .. ... १—५

उसमान कृत चित्रावली .. .. ६—१३

आलम कृत माधवानल-कामकंदला . ... १४—१९

शेख़ निसार कृत यूसुफ़ ज़ुलेख़ा .. .. २०—३२

२. संग्रह खंड—

मलिक मुहम्मद जायसी कृत पद्मावत .. ... १—७२

(समालोचना तथा संग्रह)

इंद्रावती .. .. ७५—१३३

चित्रावली .. १३७—१८४

माधवानल कामकंदला .. ... १८७—२२६

यूसुफ़-ज़ुलेख़ा ... ... २३०—२९९

नूर मुहम्मद-कृत इंद्रावती

इन्द्रावती का केवल पहला भाग काशी नागरी-प्रचारिणी-सभा से प्रकाशित हुआ है। इसका दूसरा भाग अभी तक प्रकाशित नही हो सका है अतः इस की कहानी अभी तक अधूरी ही प्राप्त हो सकी है, जिससे पूरी कहानी का अटकल लगाना कठिन है। पहले भाग मे जो अश सुदर जान पडे वह इस सग्रह मे ले लिये गये हैं। हाँ, कथा का रचना काल आदि का पता प्रथम भाग से ही चल जाता है।

कवि

इस के रचयिता नूरमुहम्मद अपना जन्मस्थान पूरब मे 'सबरहद' नामक एक स्थान बताते है--

कबि अस्थान कीन्ह जेहि ठाऊं। सो वह ठाऊं सबरहद नाऊं॥
पूरब दिस कइलास समाना। अहै नसीरुद्दी को थाना॥

पूर्व दिशा मे कैलास के समान रम्य यह 'सबरहद' नामक स्थान कहाँ है इसका पता गजेटियर आदि से भी नही चलता। यह कोई मामूली गाँव या कस्बा होगा जो अभी तक कोई प्रसिद्धि नहीं पासका।

यह एक तरुण कवि की रचना है। कवि स्पष्ट कहता है कि मैंने नई तरुणाई की अवस्था मे इस की रचना की है। मेरा लडकपन अभी नहीं छूटा है, मेरी वुद्धि अभी अपरिपक्व है। मै तो खेल खेलना जानता हूँ 'पोथी कहना' मैं नहीं जानता अत: विद्या वयोवृद्ध गुरुजन मेरी रचना देख कृपया नाक भौं न सिकोडे। मैंने तो भूतपूर्व कवियों के खेतो से बाले चुनकर एक बडा सा खलिहान खड़ा करने का प्रयासमात्र किया है। मेरी अपनी पूँजी बहुत परिमित है, इत्यादि—

कवि है नूर मुहम्मद नाऊं। है पछलग सब को जग ठाऊं॥
चुनि कविजन खेतन सों बाला। करै चहत खलिहान बिसाला॥
है कवि समै नई तरुनाई। छूट न अबहीं कवि लरिकाई॥
जाके हिए लरिक बुधि होई। बहुतै चूक कहत है सोई॥
विनवत कवि जन कहँ कर जोरी। है थोरी बुधि पूँजिय मोरी॥

चूका देखि सँभारिकै, जोरेहु अच्छर टूट।
दाया कर मोहि दीन पर, दोस न लायहु कूट॥

हौं हीना विद्या बुधि सेती। गरब गुमान करौं केहि सेती॥
हौं मैं लरिकाई को चेला। कहौं न पोथी खेलहुँ खेला॥
गुरुजन सों यह बिनती मोरी। कोप न मानहिं भौंह सिकोरी॥

विनयशीलता मे यह कवि उसमान से भी बाजी मार ले जाता है। पर जो भी हो, एक नवयुवक कवि की कविता मे यौवन की स्फूर्ति और उमग का होना स्वाभाविक है, जिसका परिचय हमे बराबर इस काव्य मे मिलता है।

कवि ने अपनी बशावली या गुरु परपरा का वर्णन नही किया है। स्तुति के रूप मे इन्होंने 'सिरजनहार' ईश्वर का स्मरण किया है और उस के बाद अपने 'अरबी' नबी मुहम्मद साहब का स्मरण किया है। 'अपने कुल की रीति' का पालन करने के ये कायल थे। ये कहते है –

है मगु बहुत जगत महँ, तिन मगु की नहिं चाव।
आपन पंथ देखावहु, राखौं तापर पाँव॥
सुमिरौं चेत धरें मन ढाऊँ। अरबी नबी मुहम्मद नाऊँ॥
जा कहँ करता दरस देखाएउ। कै किरपा सब भेद बताएउ॥

रचना काल

ये अतिम मुगल सम्राट मुहम्मद शाह के सम-कालीन थे और पैगम्बर की स्तुति के बाद ही इन्होंने शाह की प्रशसा की है—

करौं मुहम्मद साह बखानूं। है सूरज दिल्ली सुलतानू॥
धरम पंथ जग बीच चलावा। निबरन सबरै सौ दुख पावा॥
पहिरे सलातीन जग केरे। आये सुहँस बने है चेरे॥
इहै साह नित धरम बढ़ावे। जेहि पहराँ मानुस सुख पावै॥
सब काहू पर दाया करई। धरम सहित सुलतानी करई॥

कला प्रेमी, कवि, तथा निपुण सगीतज्ञ मुहम्मद शाह उपनाम "रँगीले" का नाम अब भी प्राचीन परिपाटी के गायकों तथा शायरों की जबान पर रहता है। इन का जीवन ही सगीत-साहित्यमय था। इन के रचे हुए सैकड़ों ख्याल अस्थायी अब भी गवैयों को याद है। ऐसी अवस्था मे कोई आश्चर्य नही कि सुदूर पूर्व सबरहद निवासी नूरमोहम्मद तक इन से प्रभावित हुए हों। अस्तु

अपने ग्रथ का रचना काल नूर मोहम्मद ने सन् ११५७ हिजरी (सवत १८०१) दिया है—

सन इग्यारह सौ रहेउ, सत्तावन उपनाह।
कहै लगेउ पोथी तबै, पाय तपी कर बाँह॥

इस हिसाब से इनकी रचना उसमान १०२२ हिजरी मे १३५ वर्ष और जायसी ९४७ हि० से २१० वर्ष बाद की ठहरती है। पडित रामचंद्र शुक्ल के हिंदी साहित्य के इतिहास मे कहा गया है कि 'इस ग्रथ' (इंद्रावती) को सूफीपद्धति का अतिम ग्रथ मानना चाहिये। पर तब तक शायद शेख निसार का पता नहीं लग सका था। यह इन के बाद के है और अभी तक इन की रचना अप्रकाशित रही है। हो सकता है कि इन के 'सूफी पद्धति' के कवि होने मे मतभेद हो। पर इतना निश्चय

है कि यूसुफ-जुलेखा सोलहो आने प्रेम-गाथा काव्य हैं और इन का सभी ढंग 'पद्मावत' आदि के समान है। सूफी ढंग के रहस्यवाद का दृष्टिकोण कुछ कवियों के सामने कम रहा है और कुछ के सामने अधिक। आलम और निसार (मुख्यतः आलम) अपेक्षाकृत यदार्थ-वादी कवि हुए हैं। और निसार का कथानक अपना आदर्श ईरानी सस्कृति से अधिक लेता है, बजाय भारतीय के। जो हो, उक्त तिथि से नूर मोहम्मद की जन्म तथा निधन तिथि का अटकल लगाना असभव है। सिवाय इंद्रावती के इन के रचे हुए अन्य किसी ग्रथ का पता नही चल सका है, अभी तक।

कथा का रूप

उसमान की भाँति इन की कथा भी पूर्णतः काल्पनिक प्रतीत होती है[1]। उधर उसमान कहते हैं 'कथा एक मैं हिए उपाई, और इधर नूरमुहम्मद को स्वप्न में इस की प्रेरणा मिली।

एक रात सपना मैं देखा। सिधु तीर वह तपिय सरेखा॥
अहै ठाढ़ मोहि लीन्ह बुलाई। कहेसि कि सिंधु में बूड़हु भाई॥
असा छोड़ पोढ़ा कै हीया। मोती काढ़हु होइ मरजीया॥
ससि मोती को हार सँवारहु। इद्रावति की गोद महँ डारहु॥
लै मोती दोउ हाथन माहाँ। भारू रतन। सोर उपराहाँ॥
तेहि पल तपसी दरस देखाएउ। मोहि संग एहिबात सुनाएउ॥
राज कुँवर रानी इंद्रावतो। हैं रवि कमल औ भँवर मालती॥
चुनि परसुन दुइ हार सँवारहु। तिनके ग्रीव बीच लै डारहु॥
अज्ञा मान तपी कर, चलेउ जहाँ फुलवार।
खुला न पायउँ द्वार को, मालिहि दिएउँ पुकार॥
माली कहा जएत सन होई। कोहु फूल नहि बरजित कोई।
तन पलुहा बारी की नाँई। भन भा फूलवारी तेहि ठाई॥
किरपा सों बारी महँ, माली दीन्ह साथ।
आडे कीउ न आएउ, भै फुलवारी हाथ॥

स्पष्ट है कि नूर मोहम्मद को स्वप्न मे किसी तपस्वी द्वारा इस कथा की अतः-प्रेरणा मिली और माली गुरु ने रास्ता दिखाया। कवि का हृदय ही एक फुलवारी है। और वहीं माला गूथने की सामग्री मिल जाती है। यदि माली द्वार खोल देता है तो दर-दर भटकने की जरूरत नही है।

फिर कहते हैं मन ही समुद्र है और उस में गहरा गोता लगाने से ही मुक्तावत्

---

[1] चूंकि कथा अधूरी है और कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है अतः इसका सक्षेप देना व्यर्थ समझा गया। हां संग्रहीत अंश इस ढङ्ग से रखे गये है कि कथा का संबंध लगता चला जावगा।

कवि-वचन-सुधा की प्राप्त हो सकती है और उन्हीं मोतियो से दोहा चौपाई की शकल मे हार गूथे जा सकते है।

फिर इनके हृदय ने कहा कि दो हार बना कर एक राजकुँवर के और एक इन्द्रावती के गले मे पहिनावो।

कथा की उपज के सबंध मे कवि के इन प्रवचनो से उसका रहस्यवादी दृष्टिकोण स्पष्ट हो जाता है। कालिंजर नाम अवश्य ऐतिहासिक है (यहाँ का किला देश-प्रसिद्ध है) पर पात्र कल्पित है, जैसा कि नाम ही से प्रगट है। राजा का नाम 'भूपति', राजकुमार का नाम 'राजकुँवर', और यह नाम ज्योतिषियो ने बहुत विचार तथा गणना के बाद तय किया।

राजैं पंडित बेगि हँकारेउ। पंडित आइ सुजनम विचारेउ॥
कहा पुत्र के हीयरे, बाढ़ै प्रेम वियोग।
रूप एक पर रीझै, वेहि नित साधै योग॥
'राजकुँवर' तेहि राखा नाऊँ। जनम नछत्र घड़ो के भाऊँ'।

ख़ैर, कालिजर के इन्ही राजकुवर का प्रेम आगमपुर[1] की राजकुमारी से होता है, स्वप्न दर्शन विधि के अनुसार। फिर नाना प्रकार की चौरासी भागते हुए (वही जोगी खंड, सुवा खड युद्ध, खड आदि होते हुए) अंत मे इन का मिलन होता है।

आगमपुर इंद्रावती कुवर कलिंजर राय।
प्रेम हुते दोउन्ह कहँ, दीन्हा अलख मिलाय॥

यहां पर 'अलख' शब्द ध्यान देने योग्य है। 'अलख' 'निरंजन' माया आदि नाथपथियो और फिर कबीर दादू आदि सतों की बोली मे ही ज्यादातर आते हैं, और सूफी कवि भी इनकी विचारधारा से काफी प्रभावित है। फिर इस सबध मे कवि के निम्नलिखित प्रवचन भी ध्यान देने योग्य हैं—

आपुहु भोग रूप धरि, जग मो मानत भोग।
आपुहि जोगी भेस होई, निस-दिन साधत जोग॥
अलख प्रेम कारन जग कीन्हा। धन जो सीस प्रेम महँ दीन्हा॥
जाना जेहिक प्रेम महे हीया। मरै न कबहूं सो मर जीया॥
प्रेम खेत है यह दुनियाई, प्रेमी पुरुष करत बोवाई।
जीवन जाग प्रेम को अहई। सोवन मोच वो प्रेमी कहई॥
आग तपन जल चाल समूझो। पुनि टिका माँटी कहं बूझो॥

इन पक्तियो से स्पष्ट है कि कवि नाथ पंथियो या सतों के एकेश्वर वाद को मानता हुआ भी हठयोगी मार्ग का क़ायल नहीं था। उस की प्रणाली प्रेम की

---

[1] यह नाम भी काल्पनिक है, ऐतिहासिक नहीं।

थी। और प्रेम ही उस का मार्ग तथा ध्येय दोनो एक साथ था। इस से यह स्पष्ट हो जाता है कि सूफी दृष्टिकोण के रहस्यवाद मे एक साथ ही कबीर और खैयाम के रहस्यवाद का कितना मधुर सम्मिश्रण है।

प्रबंधशैली

इन्होंने भी प्रबंधरचना जायसी और उसमान के ढग पर ही किया है। खंड-विभाग और कथा का किकास प्रायः समान है। भाषा की प्रौढता उसमान से घट कर है। नव-युवक कवि की रचना तो है ही। ढाँचे मे एक खास फर्क है कि इन्होंने पाँच-पाँच चौपाई के बाद दोहा बैठाया है और जायसी आदि ने सात-सात के बाद। हाँ निसार ने नौ चौपाई का क्रम रक्खा है, और इन्होंने (निसार ने) दोहा चौपाई के सिवा सोरठा, कवित्त सवैया आदि अन्य छदो का भी यथास्थान उपयोग किया है और उन स्थानों पर इन की भाषा मे व्रजभाषा की छटा आये बिना नही रह सकी है।

भाषा

पर नूर मोहम्मद की भाषा शुद्ध अवधी है और उसमान की भाँति परिमार्जित नही है। ठेठ और ग्रामीण प्रयोग बहुत आये हैं। इन्होंने कहा भी तो है कि 'पोथी कहना' मेरा काम नहीं, मै ने तो खेल खेल मे यह कथा लिख डाली है।

उसमान-कृत चित्रावली

अन्य प्रेमगाथाओं की भांति चित्रावली मे भी कवि ने ग्रथ का रचनाकाल और व्यक्तिगत परिचय तथा निवासस्थान आदि का पर्याप्त विवरण दे दिया है। इन्होने अपनी कथा के आदर्शस्वरूप तीन कथाओ का स्मरण आरंभ मे किया है। मृगावती (मिरगावति) मधुमालती और पद्मावत। इन मे से जायसी कृत पद्मावत अभी तक इस कोटि का पहला काव्य माना जाता था (९४७ हिज़री या १५४० ईसवी) पर जायसी ने स्वय अपने काव्य मे कुछ कथाओ का उल्लेख किया है। जब तक ये ग्रंथ मिले नहीं थे तब तक जायसी की इन पंक्तियों पर यथोचित ध्यान आलोचको ने नहीं दिया। जायसी ने कहा है—

विक्रम धँसा प्रेम के बारा, सपनावति लगि गयो पतारा।
सिरी भोज खँडरावति लागी, गगनपूर होइगा बैरागी॥
राजकुँवर कंचनपुर गैऊ, मिरगावति तजि जोगी भैऊ॥
साधा कुवर मनोहर जोगू, मधुमालति कहँ कीन्ह वियोगू॥

इस मे से मिरगावति का पता काशी नागरीप्रचारिणी सभा को सन १९०० मे लगा। इस के रचयिता कुतुबन के अनुसार इसकी रचना ९०९ हिज़री अर्थात् १५०२ ईसवी मे हुई।

मधुमालती की भी एक खडित प्रति चित्रावली के सपादक श्री जगमोहन वर्मा को मिली थी (सन १९१२) इस के आदि अत के पन्ने गायब होने के कारण रचना काल तथा कवि का परिचय आदि ठीक न प्राप्त हो सका। कवि का ठीक नाम भी नही मालूम हो सका। "मझन" नाम मिलता है जो स्पष्टतः उपनाम सा जाँचता है। कवि अपना परिचय आमतौर से आदि या अत के पन्नो मे देता है और वही पन्ने गायब हैं। प्रतिलिपिकार ने एक जगह ११ रबी उस्सानी सन् १०६९ हिज़री की तारीख लिखी है। इस हिसाब से इसकी प्रतिलिपि सन् १६५३ ई० की ठहरती है तो फिर असल रचना काफी पहले की होगी। पर इस सबध में ज्यादा से ज्यादा अटकल ही हो सकते हैं। जो हो, आशा यह की जा सकती है कि शायद किसी दिन सपनावति और खँडरावति का भी अनुसधान मिल जाय।

पर उसमान ने सपनावति और खँडरावति का स्मरण नही किया। शायद इनके समय तक इन कथाओं को लोग भूल चुके हो या कवि ने इनको इतनी महत्वपूर्ण न समझा हो।

मृगावली मुख रूप बसेरा। राज कुवँर भयो प्रेम अहेरा॥
सिघल पदुमावति भो रूपा। प्रेम कियो है चितउर भूपा॥
मधुमालति होइ रूप दिखावा। प्रेम मनोहर होइ तहँ आवा॥

कवि

उसमान अपना जन्म स्थान गाज़ीपुर बतलाते हैं। तत्कालीन नगर का बडा सुन्दर और सजीव वर्णन इन्होंने किया है।

गाज़ीपुर उत्तम अस्थाना। देवस्थान आदि जग जाना॥
गगा मिलि जमुना तहँ आई। बीच मिली गोमती सुहाई॥
तिरधारा उत्तम तट चीन्हा। द्वापर तहँ देवतन्ह तप कीन्हा॥ इत्यादि

शेख

इनके पिता का नाम शेख़ हुसेन था और ये पाँच भाई थे। हुसेन के पाँचो पुत्र योग्य और किसी न किसी कला मे पारगत थे।

कवि उसमान बसै तेहि गाऊँ। सेख हुसेन तनै जग नाऊँ॥
पाँच भाई पाँचो कवि हीये। एक-एक भाँति सो पाँचो लीये॥
शेख़ अजीज पढ़ै लिखि जाना। सागर सील ऊँच कर दाना॥
सानुल्लह बिधि मारग गहा। जोग साधि जो मौन होइ रहा॥
शेख़ फैजुल्लह वीर अपारा। गनै न काहु गहे हथियारा॥
शेख़ हसन गायन भल अहा। गुन बिद्या कहँ गुनी सराहा॥

अन्य मसनवी कवियो की भाँति उसमान ने अपनी या अपने पिता की वश-परपरा या गुरू परपर की तालिका नही दी है। निसार अपने का विख्यात मौलवी रूम का वशज कहता है। जायसी प्रसिद्ध औलिया शेख़ निजामउद्दीन चिश्ती की शिष्य परपरा मे थे। पर इस तरह की कोई बात उसमान ने अपने संबध मे नही कही है। यहाँ, ग्रथारभ मे, शाह निजामउद्दीन चिश्ती तथा एक बाबा हाजी की प्रशसा इन्होंने की है। हाजी बाबा को इन्होंने अपना गुरू कहा है।

बाबा हाजी सिद्ध अपारा। सिद्ध देत जेहि लाग न पारा॥
मोहि माया कै एक दिन, श्रवन लागि गहि माच।
गुरू मुख बचन सुनाय कै, कलिमहँ कीन्ह सनाथ॥

निसार ने अपने को अरबी फारसी आदि अन्य भापाओ का ज्ञाता तथा इन भाषाओं मे ग्रंथ रचना करने की बात भी कही है, पर उसमान (उपनाम "मान") ने इस तरह का कोई दावा नहीं किया। यह बहुत निरभिमामी और खाकसार तबियत के कवि थे। अपनी विद्याबुद्धि आदि के सबध मे इन्होंने सिर्फ इतनाही कहना उचित समझा कि चार अच्छुर पढ़ना हमने मी सीख लिया था और सो भी माथे मे लिखा था इस बजह से हो गया।

आदि हुता बिधि माथे लिखा। अच्छर चारि पढ़ै हम सिखा॥
देखत जगत चला सब जाई। एक बचन पै अमर रहाई॥
बचन समान सुधा जग नाहीं। जेहि पाय कबि अमर रहाहीं॥
औ जो यह अमिरित सों पागे। सोऊ अमर जग भये सभागे॥
पढ़ि गुनि देखा 'मान' कवि बैठि खोई संसार।
और जगत सब थोथरा, एक बचन पै सार॥

उक्त पंक्तियों से कवि की उच्चता और विनयशीलता दोनों एक साथ ही प्रकट होती है। पर इतना तो इनकी कविता से ही प्रकट है कि इनकी शिक्षा दीक्षा इस वर्ग के शायद सभी कवियों से ऊँचे दर्जे की थी।

रचना काल

कविने इस ग्रथ का रचना काल सन् १०२२ हिजरी दिया है। और तदनुसार ईसवी सन् १६१५ की यह रचना मानी जायगी[1]।

सन् सहस्र बाइस जब अहे। तब हम बचन चारि एक कहे॥
कहत करेजा लोहु भा पानी। सोई जान पीर जिन्ह जानी॥
एक एक बचन मोति जनु पोवा। कोऊ हँसा कोउ पुनि रोवा॥
बहुतन्ह सुनि कै दुख मन लावा। के कवि कह जग दोष नसावा॥
मोरी बुद्धि जहाँ लहु अही। जहँ लहु सूझि कथा मैं कही॥
हर हर बचन कहौ अति रूखा। दूखन कहे सेराय न दूखा॥
जाकी बुद्धि होइ अधिकाई। आन कथा एक कहै बनाई॥

हम देखते है कि जायसी की रचना इनसे केवल ७५ वर्ष पहले की है और और यही कारण है कि इनकी शैली भाषा तथा प्रबधकौशल आदि जायसी से बहुत कुछ मिलते जुलते हैं। अतर यही है कि इनकी भाषा जायसी से बहुत कुछ परिमार्जित सी है, और व्याकरण तथा शैली मे ग्रामीणता की छाप उतनी नहीं है।

एक मुख्य अतर यह है कि इनकी कथा पूर्णतः काल्पनिक है और यह सब उसमान के उर्वर मस्तिष्क की उपज है। जायसी की भाँति कुछ ऐतिहासिक आधार और कुछ कल्पना, दोनो की खिचड़ी बनाना इन्होंने उचित नहीं समझा। और यह ठीक भी है। यदि ऐतिहासिक कथा लेना है तो उसका निर्वाह यथावत होना चाहिये। पर ऐतिहासिक आधार का निर्वाह करने मे जायसी असफल हुए हैं। इतिहास और कल्पना का कुछ ऐसा बेतुका सम्मिश्रण जायसी ने किया

---

[1] ना० प्र सभा से प्रकाशित चित्रावली की भूमिका में इसका रचना काल ई० १६१३ दिया गया है जो शायद संपादक की गणना की भूल है।

है कि कहानी में वह तासीर नहीं पैदा होती जो होनी चाहिये। पर उसमान ने अपनी कथा का ढाँचा तैयार करने और शब्द चयन करने मे असाधारण परिश्रम किया है और इसका उनको उचित गर्व भी है, जैसा कि ऊपर उद्धृत की हुई पंक्तियों से स्पष्ट है। और साथ ही ये माना अन्य कवियों को चुनौती देते हुए से कहते हैं:—

जाकी बुद्धि होइ अधिकाई। आन कथा एक कहै बनाई॥

यहां "बनाई" शब्द ध्यान देने योग्य है। पुराण और इतिहास से बनी बनाई सामग्री लेकर तो बहुतो ने प्रेमगाथा लिखी, पर कोई इस तरह निराधार रूप से रच कर गाथा लिखै तो हम जानै। वह स्पष्ट कहते है:

कथा एक मै हिए उपाई। कहत मीठ औ सुनत सोहाई॥
कहौ 'बनाय' जैस मोहि सूझा। जेहि जस सूझ सो तैसे बूझा॥

यह कथा कवि के हृदय से उपजी जिसे उन्होंने बनाकर कहा। अस्तु

कवि की जन्म और निधनतिथि निर्णय करने का हमारे पास कोई साधन नही है। ऊपर दिए हुए रचना काल के अनुसार हम केवल यह जान सके हैं कि यह जहाँगीर के समय मे विद्यमान थे।

कथा का सारांश

नेपाल का राजा धरनीधर पँवार कुल का क्षत्रिय था। वह निस्संतान था, और इस कारण बड़ा दुखी रहता था। अंत में इस दुख से उसे इतनी ग्लानि हुई की वह राज-पाट छोड़ कर जंगल मे जाकर तप करने को उद्यत हुआ, पर मंत्रियों के बहुत समझाने बुझाने से राज्य मे क्षेत्र (सत्र) स्थापित कर शिव की आराधना मे दत्त-चित्त हुआ। अंत मे शिव-पार्वती इस के उग्र तप से प्रभावित होकर इसकी परीक्षा लेने आये, और भेंट स्वरूप इसका सिर माँगा। यह तलवार उठा कर अपना सिर काटने ही को था कि भगवान शिव ने इसका हाथ थामा और बोले, 'तुझे पुत्र-रत्न प्राप्त होगा जो कुछ दिन योगाभ्यास करेगा और एक अनिंद्य सुंदरी के प्रेमपाश मे भी बिद्ध होगा।'

भगवान की दया से राजा धरनीधर के एक पुत्र हुआ जिसकी कुंडली आदि बनाकर ज्योतिषियो ने 'सुजान' नाम रखा। समय पाकर यह राजकुमार कामदेव की भाँति सुंदर, महापराक्रमी और अपूर्व विद्या-बुद्धि-संपन्न हुआ।

एक दिन की घटना है कि सुजान शिकार खेलने जा कर रास्ता भूल कर किसी देव की मढ़ी मे जा सोया। उस देव ने उसकी असहाय अवस्था देख कर उस पर बड़ी दया की, और हर प्रकार से उसकी रक्षा का भार लिया। इसी बीच उस देव का कोई मित्र वहाँ आया और उसने कहा कि आज रूपनगर मे राजकुमारी चित्रावली की वर्षगाँठ का जलसा है, चलो उसे देख आवे। पर उसने कहा कि हमने इस राजकुमार की रक्षा का भार ले रक्खा हैं, इसे कहाँ फेकें। उसने

कहा इसे भी वहाँ ले चलो, सो तो रहा ही है, कहीं रख देंगे और लौटते वक्त फिर लेते आवेगे। यही राय तय पाई और वे दोनों देव आकाशमार्ग से सुजान को ले उड़े और वहां जाकर चित्रावली की चित्रसारी मे इसे सुला दिया और खुद उत्सव देखने बाहर चले गये।

इधर रात मे सुजान की नीद जब टूटी तो वह अपने को इस अपूर्व चित्र-शाला मे पडा देख बडा चकराया, पर सामने ही चित्रावली का मनमोहक चित्र देख कर मुग्ध हो गया और उसी के बगल मे अपना चित्र खीच कर फिर सो गया। इधर सुबह देव लोग उसे फिर वहीं उडा ले गये। उठने पर सुजान को सब बाते याद आई और उसे स्वप्न का भ्रम हुआ पर कपडों मे रग और तूलिका का दाग वगैरह लगा देख कर सच्ची घटना का निश्चय हो गया और उसे चित्रावली की याद सताने लगी।

इधर राज्य मे कुमार के लापता होने के कारण सब लोग व्याकुल होकर ढूढने चले और कुछ सेवक उस मढी तक आ पहुॅचे और उसे राज्य मे ले आये पर वह प्रेम की पीर से बेसुध पडा रहा। सुजान का एक मित्र सुबुद्धि नाम का ब्राह्मण था, उसने युक्ति से सब बाते सुजान से पूँछ ली। और एक राय कर दोनों फिर उसी मढ़ी मे पहुँचे। और वहां पहुॅच कर उन दोनों ने अन्न-सत्र जारी किया।

इधर कुमार का चित्र देख कर चित्रावली का भी यही हाल हुआ। उसने अपने नपुसक भृत्यों को कुमार की खोज मे रवाना किया जिनमे से एक इस मढी तक पहुँच भी गया। इसी बीच एक कुटीचर ने चित्रावली की माता हीरा से शिकायत कर दी जिससे उसने कुमार का चित्र धुलवा डाला। पर इस अपराध मे कुमारी ने उसका सिर मुडवा कर उसे राज्य से निकलवा दिया। इधर यह जोगी कुमार के पास पहुँचा और उसे रूपनगर मे लाकर युक्ति से शिव के मदिर मे चित्रावली से साक्षात्कार करवा दिया। पर इसी बीच उस कुटीचर ने उसे अपना शत्रु मान कर उसे अधा बना एक पहाड की कदरा मे डाल दिया जहॉ इसे एक अजगर निगल गया, पर इसमे विरह की आग इतनी भयकर थी कि अजगर ने तुरत उगल दिया। इस घटना को एक बनमानुस देखता था और उसने एक ऐसा अजन दिया जिससे उसकी दृष्टि फिर पूर्ववत् होगई। पर इसके बाद इसे एक हाथी ने पकडा और उस हाथी को एक पक्षिराज ले उडा। तब हाथी ने उसे छोड दिया और वह एक समुद्र तट पर गिरा और घूमता हुआ सागर गढ राज्य मे पहुँचा जहां की राजकुमारी अपनी फुलवाड़ी मे इसे घूमता देख इस पर मोहित हो गई। कुमार उस समय योगी वेश मे था। कौलावती ने योगियों की एक दावत की जिसमे इसको भी शरीक किया। पर इसके भोजन मे अपना हार छिपा कर रख दिया था और इस प्रकार इसे चोरी मे फॅसा कर कैद करवा लिया। फिर कौलावती के रूप गुण से मुग्ध होकर सोहिल नाम का राजा सैन्य लेकर सागरगढ पर चढ आया, पर सुजान ने इसे अपने बाहुबल से मार गिराया। इस पर कौलावती के पिता ने प्रसन्न होकर

सुजान के साथ उसका विवाह कर दिया पर उसने कौलावती से प्रतिज्ञा कर ली थी कि वह चित्रावली के मिलन से विरोध न करेगी।

कुमार कौलावती क साथ गिरनार पहुँचा और वहां चित्रावली के भेजे हुए दूत से उसकी भेंट हुई और उसने उसका समाचार चित्रावली के पास पहुँचाया। फिर किसी प्रकार वह योगी कुमार को लकर रूपनगर की सीमा पर पहुँचाया और यह खबर चित्रावली को मिली। अब रूपनगर के राजा को चित्रावली के विवाह की चिंता सता रही थी। उसने चार चित्रकार राजकुमारो के चित्र लाने के लिये भेजे। इधर रानी हीरा कुमारी को खिन्न देख कर उसका हाल पूँछ रही थी पर वह अपने मन का भेद बताता नहीं थी। इसी समय सुजान को एक जगह बैठा कर वह दूत कुमारी को खबर देने आ रहा था। रानी ने उसे मार्ग में ही पकड़वा कर कैद करा दिया। पर वह पागल हो चित्रावली नाम ले लेकर भागने लगा। राजा तक खबर पहुँची। उसने अपजस के डर से इसे मरवा डालने की ठानी और इस पर हाथी छोड़वा दिया, पर सुजान ने अपने बाहुबल से इसे मार गिराया। इस पर राजा स्वयं इसे मारने चला पर इसी बीच एक चितेरा सागरगढ से एक कुमार का चित्र लाया जिसने सोहिल को मारा था। देखने पर वह चित्र इसी का निकला। राजा ने उचित पात्र समझ कर चित्रावली का विवाह इसके साथ कर दिया।

इसके कुछ दिन बाद विरहाकुल कौलावती ने कुमार की खबर लाने को हंस-मित्र का दूत बना कर भेजा। कुमार ने अपने पिता और कौलावती का स्मरण कर रूपनगर से बिदा ली और वहां से सागरगढ आ कौलावती को बिदा करा लिया और अपने राज्य को रवाना हुआ। पर रास्ते मे असख्य विघ्न बाधाएं उपस्थित हुईं। समुद्र मे तूफान आया पर किसी प्रकार सब से बच कर वह जगन्नाथ पुरी मे पहुँचे जहाँ पुरोहित काशी पाँडे से इनकी भेट हुई। वहां से अपने राज्य में पहुँचे और शोक-संतप्त माता-पिता से मिले। दुख से रोते-रोते माता अंधी होगई थी पर इनके आने की खुशी मे इसकी आँखे ठीक होगईं और सुजान अपनी रानियों सहित आनंदोपभोग करने लगा।

इस कथा के सरांश से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि यह आद्योपान्त काल्पनिक है और इसमे अनेक अस्वाभाविक और बेतुकी बातें भरी पडी हैं पर यह सब होते हुए भी कथा बडी रोचक बन पडी है, और कही भी जी नहीं ऊबता। इनकी प्रबध-शैली कुछ ऐसी हो पडी है कि बालक, युवा बृद्ध, योगी, भोगी सभी वर्ग के लोग इसका आनंद ले सकते हैं। कवि स्वयं कहता है—

बालक सुनत कान रस लावा। तरुनन्ह के मन काम बढ़ावा॥
बिरिध सुनै मन होइ गियाना। यह संसार धंधा कै जाना॥
जोगी सुनै जोग पंथ पावा। भोगी कहँ सुख भोग बढ़ावा॥
इच्छा तरु एक आह सोहावा। जेहि जस इच्छा तेस फल पावा॥

कथा का आध्यात्मिक दृष्टिकोण

न्यूनाधिक रूप से सभी सूफी कवियों की रचना मे अध्यात्मवाद की कुछ न कुछ झलक आ ही जाती है। शाह निजामुद्दीन चिश्ती की शिष्य परंपरा मे होने के कारण हम इनको जायसी का गुरु भाई भी कह सकते है और इनका अध्यात्मिक दृष्टिकोण भी जायसी से बहुत कुछ मिलता है। इनकी सारी कथा भी अन्योक्ति के रूप मे समझी जा सकती है और कवि का अभिप्राय हर बात से ऐसा ही प्रतीत होता है कि श्रोतागण इसे इसी रूप मे समझे बूझे। और यही मुख्य कारण जान पड़ता है कि इन्होने किसी ऐतिहासिक घटना या इतिहास प्रसिद्ध नायक-नायिका का सदुपयोग या दुरुपयोग करना उचित नही समझा। जायसी ने बड़ी भूल की थी। इन्हे प्रतिपादन तो करना था एक विशेषवाद (सूफीवाद) जो वेदांत, रहस्य, अध्यात्म या एकेश्वरवाद आदि कई 'वादो' की पँचमेल खिचड़ी है और पात्र तथा घटनाए इन्होने इतिहास से ली। आधी कथा लिखने के बाद इन्हे शायद अपनी भयानक भूल का पता चला और इन्होने यथासंभव कल्पित नाम और घटनाओ का आश्रय लिया। जायसी की इस फजीहत से उसमान ने पूरा लाभ उठाया। ऐतिहासिक महा-काव्य और मसनवी ढंग की प्रेमा गाथा दो जुदा चीजे है, और इस पार्थक्या को उसमान ने भलीभाँति समझा था। दोनो को मिला कर चलाना या दोनो का सामंजस्य किसी प्रकार स्थिर रखते हुए अंत मे सूफी एकीश्वरवाद के सिद्धांत का निष्कर्ष निकालना एक असंभव बात है। यही जायसी से भूल हुई पर उसमान ने इस भूल को पहचाना और पहले से तैयार होकर खूब सोच समझ कर कहानी का प्लाट और पात्रो के नामकरण आदि को अपने आध्यात्मिक निष्कर्ष को दृष्टिपथ मे रखते हुए किया। और वे सफल हुए।

चरितनायक 'सुजान' का नाम बहुत सोच समझ कर रक्खा गया है। वह शिव का 'अंश' अतः born जोगी या पैदाइशी साधक है। कौलावती और चित्रावली इन दोनो नायिकाओ को हम अविद्या और विद्या के रूप मे देखते हैं। कौलावती से विवाह तो हुआ पर शर्त यह रही कि जब तक चित्रावली न मिलेगी तब तक सहवास नही होगा। 'सुजान' अर्थात् वास्तविक ज्ञानी बिना विद्या के प्राप्त किए अपनी साधना पूरी नहीं समझता। इसी प्रकार विचारने से सभी पात्र-पात्री तथा उनका सारा कार्य-कलाप हम आध्यात्मिक साधना, तज्जनित विघ्न-बाधाए और अंतिम निर्वाण के रूप मे पढ सकते हैं। सरोवर-क्रीडा वाले खंड मे इन्होने बड़ी सुंदर रीति से ईश्वर की प्राप्ति की ओर संकेत किया है।

इस कथा की कविता और भाषा आदि के संबध मे हमे कोई नई बात नहीं कहनी है। भाषा, व्याकरण, प्रबंध, शैली, खंड-विभाग आदि सब ढंग जायसी का ही है; केवल अंतर यही है कि इनकी भाषा विशेष परिमार्जित और प्रौढ़ है। यह

तुलसी के समसामयिक थे और सस्कृत का ज्ञान यदि इन्हे होता तो इनकी भाषा प्रौढ़ता मे उनके आस-पास पहुँचती।

इनकी जानकारी बढ़ी-चढ़ी थी, समय-समय पर लोकोक्तियाँ ये 'बड़े मार्के से' बैठाते गये हैं। एक जगह इन्होने अंग्रेजों का भी वर्णन किया है—

बुलंदीप देखा अँगरेजा। तहाँ जाइ जेहि कठिन करेजा॥
ऊँच नीच धन संपति हेरा। मद बराह भोजन जेहि केरा॥

सन् १६१२ मे ईष्ट इण्डिया कम्पनी ने सूरत मे अपनी गुदाम खोली थी, और सन् १६१३ की यह रचना है। कहाँ सूरत और कहाँ गाजीपुर, और इस समय न रेल, न पोस्ट, न तार न अखबार। इनका भौगोलिक ज्ञान भी असाधारण था, जैसा कि सग्रह से जान पडेगा। 'जोगी ढूढन खड' में इन्होने काबुल, बदखशाँ, खुरासान, रूस, साम, मिस्र, इस्तबोल, गुजरात, सिहल आदि-आदि अनेक देशों का वर्णन किया है।

यों तो सभी सूफी कवि विरह वर्णन में कलम तोड देते हैं, पर इस के सिवा इनके अन्य वर्णन भी मार्के के हुए हैं; यथा विदाई के समय रानी हीरा के उपदेश आदि। ये अश हमे तुलसी की याद दिलाते हैं। इसके सिवा विरह वर्णन के अतर्गत इनका यह ऋतु-वर्णन कुछ नवीन और बडे सुदर ढग से हुआ है।

आलम कृत माधवानल-कामकंदला

इस कवि के संबध मे आरंभ से ही हिंदी ससार मे एक भ्रांत धारणा फैली हुई है, और वह यह कि 'माधवानल-कामकंदला' के आलम और 'आलमकेलि' के लेखक आलम दो अभिन्न व्यक्ति हैं। आलम केलि के रचयिता तथा शेख रँगरेजिन के प्रेम मे पड़ कर मुसलमान हो जाने वाले आलम (जो पहले जाति के ब्राह्मण थे) का रचना काल संवत् १७४०-६० तक माना गया है। पर माधवानल-कामकंदला के रचयिता आलम का रचना काल स० १६४० या ई० १५८४ था। इनका शेख़ रँग-रेजिन से कोई सरोकार नही था और न इनके जाति के ब्राह्मण होने का ही कोई प्रमाण है।

हिंदी साहित्य के सभी इतिहास लेखकों ने आलम के संबंध मे यह भद्दी भूल की है। स्पष्ट है कि यह भूल प्रथम इतिहास लेखक से आरंभ हुई और बाद के सभी इतिहास लेखक आँख मूद कर इस भूल का अनुकरण करते गये।[1]

अस्तु, आलम केलि के रचयिता विशुद्ध ब्रज भाषा मे शृङ्गार सबधी फुट कर पदो की रचना करते थे, पर प्रस्तुत आलम अवधी के कवि थे और इनका रचनाकाल उनसे ठीक सौ वर्ष पहले का था।

सन नौ सै इक्यानुवै आइ। करौ कथा अब बोलौं ताहि ॥

सन् नौ सै इक्यानवे हिजरी और तदनुसार सं १६४० मे इन्होने इस ग्रंथ की रचना की। उस समय दिल्ली के सिंहासन पर सम्राट अकबर विराजमान थे और इनके अर्थसचिव राजा टोडर मल हमारे कवि के आश्रयदाता थे। ग्रंथारंभ मे कवि ने दोनो की प्रशंसा की है।

दिलिय पति अकबर सुरताना। सप्त दीप मैं जाकी आना ॥
सिंहन पति जगन्नाथ सुहेला। आपनु गुरू जगत सब चेला।
जब घर भूमि पयानौ करई। वासुक इंद्र आसन थर थरई ॥

---

[1] यदि किसी भी साहित्य के इतिहास लेखक ने 'माधवानल-कामकंदला' को देखने का कष्ट उठाया होता तो इस भ्रांति का निराकरण कभी का हो गया होता। पर कटु सत्य यह है कि आज के हिंदी साहित्य के 'इतिहास' ग्रंथों के अध्ययन के फलस्वरूप नहीं लिखे गये हैं, बल्कि पिछले लेखकों की नक़ल के आधार पर। वास्तव में साहित्य के इतिहास लेखन से बढ़ कर श्रमसापेक्ष और उत्तरदायित्व पूर्ण कोई दूसरा काम नहीं है, पर हिंदी में तो जितने साहित्य के स्रष्टा नही हैं उनसे अधिक इतिहास लेखक हो रहे हैं और नक़ल से बढ़ कर आसान कोई काम होता भी नहीं!

धर्म राज सब देस चलावा। हिंदू तुरुक पंच सबुलावा॥
आगरैंवु महामति मइनु। नृप राजा टोडर मल डंडनु॥

रचनाकाल, तत्कालीन दिल्लीसम्राट तथा आश्रय दाता राजा टोडर मल आदि का उल्लेख कवि ने अपने ग्रन्थ मे इतनी स्पष्ट रीति से किया है कि इनके समय के बारे मे संदेह करने की कोई गुंजाइश नही है। हाँ, इतना अवश्य है कि केवल इनके रचनाकाल की तिथि ही जानी जा सकती है, जन्म-मरण-तिथि नही। इन्होंने अपनी वंशावली या गुरु-परंपरा के संबंध मे भी कुछ नहीं कहा है।

कथा

आलम की यह रचना मौलिक नही है। इस नाम का एक नाटक संस्कृत मे है और इसी की कथा के आधार पर इन्होंने इस काव्य की रचना की। पर इसका तद्वत अनुकरण नही किया है। अपनी आवश्यकतानुसार कुछ घटाया-बढाया है। वह साफ कहते है कि कुछ अपनी और कुछ 'परकृति' मैंने 'चुराई' है।

कुछ अपनी कुछ परकृति चोरौं। यथा सकति करि अच्छर जोरौं।
सकल सिँगार विरह की रीति। माधौ काम कंदला प्रीति॥

हो सकता है कि आलम संस्कृत के विद्वान रहे हों, क्योंकि इनकी रचना मे संस्कृत के शब्द इस शाखा के अन्य कवियों से अधिक आते हैं पर यह कोई जरूरी नही है, क्योंकि यह साफ कहते हैं कि संस्कृत की कथा 'सुन' कर मैंने भाषा चौपाई मे इसका रूपांतर किया—

कथा संस्कृत सुनि कछु थोरी। भाषा बांधि चौपही जोरी॥

कथा का सारांश

पुष्पावती नामक नगर मे गोपीचंद नामक एक राजा राज्य करता था। वह बड़ा न्यायपरायण और धर्मनिष्ठ था। उसी नगर मे माधव नामक एक बैरागी ब्राह्मण रहता था। वह नित्य प्रातःकाल राजा के पास जाकर पूजा कराता था। माधव बड़ा विद्वान और संगीत कला मे पारदर्शी था। वेद, पुराण, ज्योतिष, व्याकरण, सामुद्रिक आदि विविध शास्त्रों मे भी वह निपुण था। विद्या मे बृहस्पति और रूप मे कामदेव के समान था। अभूतपूर्व वीणा वादक था। उसकी बीन सुन कर नगर की स्त्रियाँ अपना काम छोड़ देती थीं और सब बेहाल हो जाती थी। कोई मूर्छित होकर गिर पडती थी और उसके पीछे-पीछे घूमती थी। अंत मे नौबत यहाँ तक पहुँची कि माधव का मोहक स्वरलहरी शहर के लिये अभिशाप हो गई। लोगो के घर-गृहस्थी की शांति भंग होने लगी। किसी को वक्त पर खाना नही मिल रहा है, किसी के घर की बीबियाँ घर का काम धंधा छोड़ कर बेसुध पडी हुई है। सब हैरान थे। अंत मे नगर निवासियों का डेपुटेशन राजा के यहाँ इस आशय का गया

कि या तो आप इस बला को (माधव को) यहाँ से हटाइए या तो हम लोग सब आपका राज्य छोड कर दूसरे देश को जाते हैं। राजा बडे धर्म सकट मे पडा, पर अंत मे यह निर्णय किया कि अकेले माधव के लिये सारी प्रजा को देश निकाला दे देना ठीक न होगा पर इसके पहले उन्होंने माधव पर लगाए गए इलजाम की जाँच कर लेना मुनासिब समझा। इस दृष्टि से उन्होंने बीस नव-यौवना सेविकाओं को बुलवा कर एक कतार मे कमल के पत्तो पर बिठलाया। इधर माधव को सामने बैठा कर वीणा का आलाप करने कहा। आलाप शुरू हुआ, कुछ ही देर बाद सभी स्त्रियाँ स्पष्ट रूप से कामार्द्रा हो गई। अब राजा का निश्चय हो गया और उसने माधव से हाथ जोड लिया।

तब राजा गयो पौरि पगारैं। तुम को ठौर न विप्र हमारें॥
तीन पान को बीरा कयो। राइ हाथ माधौ के दयो॥

इस प्रकार विचारा माधव पुष्पावती से विदा हुआ, और अपना वीणा सभाल कर एक ओर को चल दिया। वह चलते-चलते कामावती नामक नगरी मे पहुँचा और वहाँ विश्राम करने के लिये ठहर गया।

उस नगर मे कामकंदला नाम की वारांगना रहती थी जो रूप लावण्य और संगीत तथा नृत्यकला दोनो ही मे अद्वितीय थी। एक दिन राजा के दरबार मे जलसा था जिसमे कामकदला का नृत्य होने को था। शहर के अनेक लोग देखने जा रहे थे। माधव स्वय सगीत कला का अन्यतम साधक था। उसे भी उत्सुकता हुई और अपनी बीन कधे पर रख दरबार के दरवाजे पर पहुँचा पर अपरिचित होने के कारण दरवानो ने भीतर जाने से रोक दिया। खैर वह बाहर ही बैठ कर सुनने लगा। भीतर कामकदला का नृत्य हो रहा था और सगत मे बारह मृदग एक साथ बज रहे थे। पर इनमे से एक पखावजी के जो चौथे के बाद बैठा हुआ था, चार ही उँगलियाँ थीं जिससे उसकी थाप बेसुरी और बेताली पडती थी। माधव के कान इतने अभ्यस्त थे कि इन सब बातो का पता उसने बाहर से ही लगा लिया। और सिर धुन कर कहने लगा कि सभा मे सब उल्लू के पट्ठे बैठे हैं, किसी को पता नहीं, द्वारपाल से कहा कि राजा से जाकर कह दो कि एक ब्राह्मण बाहर बैठा हुआ ऐसा-ऐसा कह रहा है। राजा के पास जब यह अद्भुत समाचार पहुँचा तो पहले तो बहुत चकराया पर जाँच कराने पर माधव की बाते सच्ची साबित हुई। वह फौरन भीतर बुलाया गया और राजा ने बड़े आदर से उसे अपनी गद्दी पर दाहिनी ओर बैठाया। राजा ने उसे सोने का मुकुट पहिनाया और दो करोड़ रुपये भेंट किये। राजा टोडर ने अपनी अँगूठी उतार कर माधव को पहिना दिया। इसके बाद माधव का गायन और वीणा वादन हुआ। सब लोग मुग्ध हुए, खास कर कामकदला बहुत प्रभावित हुई। अंत मे कामकंदला का नृत्य हुआ। उसने सिर पर पानी से भरा हुआ कटोरा रख कर एक कठिन नृत्य आरंभ किया। नाचते समय जब वह भावप्रदर्शन मे लीन थी

उसी समय एक शहद की मक्खी उसके वक्षस्थल पर बैठ कर काटने लगी। अब वह अगर हाथ से उसको हटाती है तो नृत्य बिगड़ता है। यह सोच कर वहीं से उसने नृत्य की गति चौगुन करके एक चक्करदार टुकड़ा लिया जिसके पवन के वेग से वह मक्खी उड गई। इस बात को सिवा माधव के और कोई लक्ष्य न कर सका। माधव ने खुले आम कामकंदला की प्रशसा की और जो कुछ भेट उसे वहाँ मिली थी सब उतार कर कामकंदला को दे दिया। इसका कारण पूँछे जाने पर उसने राजा से कहा—"तुम्हारी सारी सभा मूर्ख मडली है, कोई गुण का समझने वाला नही है, कामकदला इतना चमत्कारपूर्ण काम कर गई और किसी के पहचान मे वह न आया।" राजा को इस अपमान से क्रोध चढ़ आया और उसने कहा कि "यदि तुम ब्राह्मण न होते तो तुम्हारा सिर उडा देता, तुम फौरन हमारे राज्य से बाहर चले जाओ।" माधव इसके पहले ही उठ चुका था और यह कहता हुआ चल पड़ा कि "ऐसे मूर्ख राजा के यहाँ रहने मे ही मेरा अपमान है।"

पर उसके गुण को पहिचानने वाली कामकदला से यह न देखा गया। वह आग्रह कर के माधव को अपने घर ले गई और उसे छिपा कर रक्खा। दोनो एक दूसरे के रूप-गुण पर मुग्ध थे। कामकंदला ने वहाँ माधव से प्रेम-कला सिखाने की प्रार्थना की। कई दिन तक दोनो आकठ आनदोपभोग मे रत रहे। अन्त मे माधव ने यह कह कर बिदा चाही कि यदि यहाँ हमारा रहना राजा को मालूम हो जायगा तो तुम विपद् मे पड़ोगी पर कामकंदला ने एक रात्रि और उसके यहाँ व्यतीत करने की प्रार्थना की और माधव रुक गया। मध्य रात्रि मे कामकदला ने प्रार्थना की कि कोई ऐसा उपाय करो कि इस रात का अत न हो। माधव ने बीन सँभाली और अलाप शुरू किया। कहते है कि उस अपूर्व संगीत के प्रभाव से चन्द्रमा की गति रुक गई और ग्रह उपग्रह आदि अपनी-अपनी धुरी पर रुक गये।

ख़ैर, आख़िर उसका संगीत ख़तम हुआ, रात बीती और सबेरा हुआ और माधव चलने को तैयार हुआ। इस अवसर पर कामकंदला का दुख बडा हृदय-विदारक है। माधब के जाने पर वह एक प्रकार से मर ही गई। किसी प्रकार सखियो ने होश दिलाया पर 'माधव' 'माधव' कहती हुई विक्षिप्त की सी अवस्था मे रहने लगी। वह सूख कर काँटा होगई और खाना-पीना सभी भूल कर जीवित ही मृत सी अवस्था मे रहने लगी।

इधर माधव की अवस्था भी लगभग वैसी ही थी। सिवा रात-दिन रोने के और कोई काम न था। अन्त मे उसने बहुत सोच-विचार कर राजा विक्रम की शरण लेने की ठानी। उसने सुन रक्खा था कि वह बड़ा परोपकारी राजा है। यह ठै कर वह उज्जैन पहुँचा, पर राजा तक उसकी पहुँच न हो पाती थी। पर अपनी अर्जी राजा तक पहुँचाने का उसने एक उपाय निकाल ही लिया। वहाँ एक महादेव का मंदिर था जहाँ राजा नित्य आता था। उसी मदिर मे माधव ने अपनी वेदना-सूचक एक दोहा लिख दिया और राजा की निगाह में वह दोहा पड़ गया और

उसने उसे दासियो को भेज कर पता लगाया। 'ज्ञानवती' नाम की एक चेरी राजा का सदेस लेकर माधव के पास पहुँची और अपने साथ राजा के पास लिवा ले गई। माधव को देखते ही राजा को विश्वास हो गया कि यह विरह पीडित कोई सच्चा प्रेमी है और कहा कि मै आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ। माधव ने अपना और अपने गुण का परिचय देते हुए अपनी रामकहानी कह सुनाई। राजा ने आश्वासन देते हुए सहायता करने का वचन दिया। पर पहले उसको बहुत ऊँच-नीच समझाया कि गणिका से प्रीत करना ठीक नही। पर माधव ने कुछ इस ढंग से अपने सच्चे प्रेम का परिचय इतनी करुण रीति से किया कि सारी राजसभा रोने लगी और सब को यह निश्चय हो गया कि यह सच्चा प्रेमी है और अगर कामकदला इसे न मिली तो यह घुल-घुल कर मर जायगा।

अत मे राजा विक्रम ने कामसेन राजा के नगर पर चढाई कर दी। पर जब नगर थोडी दूर रह गया तो वहीं ठहर कर वह कामकंदला के प्रेम की परीक्षा करने का निश्चय कर के छद्म-वेश से उसके घर गया, और कामकदला को बडी बुरी हालत मे, विरह मे म्रियमाण अवस्था मे पाया। पर तो भी प्रेम की परीक्षा करने के इरादे से उस यह खबर दी कि माधव तो वियोग मे घुलते-घुलते मर गया। यह सुनते ही पिगला की भाँति कामकदला ने भी तत्काल माधव का नाम उच्चारण करते हुए प्राण त्याग दिया। राजा बडा चकराया और उदास होकर अपने खेमे मे आया और यह दुखद समाचार उसने सभा मे कहा। गज़ब हो गया। इधर माधव ने भी अपनी प्रियतमा का निधन सुनकर वही दम तोड़ दिया। सारे कटक मे हाहाकार मच गया। इधर राजा ने दो प्रेमियो का खून अपने सर लेकर जब कोई उपाय न सूझा तो आत्म-हत्या करने की ठानी और चदन की चिता तैयार करवाई और बहुत सा दान पुण्य कर सूर्य नमस्कार कर चिता पर बैठ गया।

स्वर्गलोक तक यह बात पहुँची, देवी देवता सब अपने-अपने विमानो पर आरूढ़ होकर यह विचित्र दृश्य देखने पहुँचे। राजा के मित्र बैताल को भी यह खबर मिली। राजा अग्निदान की आज्ञा ले रहा था कि इसी समय बैताल ने पहुँच कर हाथ थाम लिया और राजा की निर्यात का सब हाल जान तुरत अमृत ले आया और माधव को जिलाया। वह कामकंदला का नाम लेता हुआ उठ बैठा। तब राजा वैद्य के वेश मे अमृतकलश लेकर कंदला के यहाँ पहुँचे और उसे भी जिलाया और बहुत कुछ आश्वासन देकर खेमे मे आये। वहाँ से राजा के यहाँ दूत भेज कर यह कहलवाया कि जिस किसी मूल्य पर हो आप कामकंदला को हमारे हवाले कर दीजिये। पर उसने इसमे अपमान समझ कर युद्ध की ठानी।

दोनो मे घमासान युद्ध हुआ चार प्रहर तक। अंत मे कामसेन राजा पराजय स्वीकार कर, हथियार फेंक हाथ जोड़ विक्रम के सामने खडा हुआ और माफ़ी माँगी। फिर उसने कामकंदला को लाकर राजा के खेमे मे दाखिल कर दिया।

चिर विरही माधव और कामकंदला का मिलन हुआ और आर्त दुखहारी राजा विक्रम दोनों को लेकर अपनी राजधानी उज्जैन चला गया।

× × ×

इस काव्य की भाषा परिमार्जित अवधी है। चूंकि यह ग्रंथ छोटा और अभी तक अप्रकाशित है इसलिए इस सग्रह में यह समूचा दे दिया गया है।

शेख़ निसार

हिंदी के मुसलमान कवियो मे हम यह विशेषता देखते है कि वह अपनी रचनाओ मे अपना संक्षिप्त व्यक्तिगत परिचय तथा रचना काल आदि का कुछ व्योरा दे देते है जिससे संपादक को बड़ी सुविधाएं हो जाती है। काश की यही प्रथा हिंदी के अन्य कवियो मे भी होती तो आज गड़े मुर्दे उखाड़ने मे जो दिक्कते हो रही हैं, विभिन्न कवियो के काल निर्णय के सबध मे विद्वानो म जो भीषण मतभेद की सृष्टि हुई है, और समालोचको मे आये दिन व्यर्थ का झगडा और विद्वेष हो रहा है वह न होता, और समय तथा विद्वत्ता का इतना दुरुपयोग न होता। तमाशा यह है कि तुलसी, भूषण आदि हमारे अधिकांश प्रमुख महाकवियों के ही संबध मे अभी तक सर्व- सम्मति से सब बाते नही तय हो पाई है। अस्तु,

सौभाग्य से इन अख्यानक कवियो ने अपना परिचय तथा रचना काल का स्पष्ट उल्लेख कर बड़ी दूरदर्शिता से काम लिया है।

कवि निसार का रचनाकाल देहली के अंतिम मुगलसम्राट शाह आलम के समय मे हुआ था।

आलम शाह हिंद सुलताना। तेहि के राज यह कथा बखाना॥

× × ×

साथ ही यह भी लिखते हैं कि उस समय अवध मे नवाब आसिफुद्दौला राज्य करते थे। और उनके हिंदू मत्री बड़े न्याय निष्ठ तथा राजनीतिकुशल थे।

चहुँ दिसि अंध धुंध सब छावा। अवध देस कों दियो बिहावा॥
येहिया खां आसिफ़ उद्दौला। तासु सहाय अहर नित मौला॥
हिंदू सचिव वह बली नरेसा। तेहि के धरम सुखी सब देसा॥
तेहि के राजनीत जग छाए। धरम दान को सरवर पाए॥

× × ×

शेख निसार का जन्म अवध के अतर्गत शेखपुर नामक एक कसबे मे हुआ था। डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर से पता चलता है कि शेख़पुरा नाम का एक कसबा ज़िला रायबरेली परगना बडरावाँ और तहसील महराजगंज मे है। यहाँ शेख़ो की अच्छी बस्ती है। पिछली मर्दुमशुमारी मे वहाँ शेख़ो की सख्या ८,७१९ थी।

कवि निसार ने कहा है कि शेख़पुरा उनके पूर्वज शेख़ हबीबुल्ला द्वारा बसाया गया था।

शेखपुर इत गाँव सुहावा। शेख निसार जनम तहँ पावा॥
शेख हबीबुल्लाह सुहाये। शेखपूर जिन आन बसाये॥

× × ×

फिर आगे चल कर कवि कहता है कि सम्राट अकबर के समय में वे (शेख हबीबुल्लाह) देहली से अवध आये और बीस वर्ष तक वहाँ रहे। इनके पुत्र शेख मुहम्मद हुए। इनके पुत्र का नाम गुलाम मुहम्मद था और यही शेख निसार के पिता थे। फिर निसार ने अपने पूर्वज शेख हबीबुल्लाह को प्रसिद्ध मौलाना रूम का वंशज माना है।

पातशाह अकबर सुलताना। तेहि के राज कर जगत बखाना॥
अवध देस सूब होय आए। बीस बरस तहँ रहे सुहाए॥
तेहि के शेख मुहम्मद बारा। रूपवंत भू के अवतारा॥
ता सुत गुलाम मुहम्मद नाऊँ। सो हम पिता सो ताकर गाऊँ॥
वस मौलवी रूम के, शेख हबीबुल्लाह।
जेहि के मसनवी जगत महँ अगम निगम अवगाह॥

× × ×

अपनी शिक्षा दीक्षा तथा ग्रंथ रचना आदि के संबंध में भी कवि स्वयं पर्याप्त सामग्री दे देता है। अरबी, फारसी, तुर्की, और संस्कृत आदि कई भाषाओं में कवि की गति थी और इन्होंने सात ग्रंथ रचे थे जिनमें तीन गद्य, एक दीवान, एक अलंकार ग्रंथ तथा एक भाखा काव्य (युसुफ-जुलेखा) मुख्य थे। कवि की पंक्तियों से यह व्यक्त होता है कि इनके ग्रंथ फारसी, अरबी और संस्कृत में भी थे, पर इनका हमें अभी तक पता नहीं लग सका है।

सात गरंथ अनूप सुहाए। हिंदी औ पारसी सोहाए॥
संस्कृत तुरकी मन भाए। अरबी और फारसी सुहाए॥
हीर निकार के गेहूँ खाने। रस मनोज रस गीत बखाने॥
औ दिवान मसनवी भाखा। कर दोइ नसर पारसी राखा॥

कवि का समय

निसार कवि कहते हैं कि बुढ़ौती में उन्होंने युसुफ जुलेखा लिखी। सात दिन में वह ग्रंथ लिखा गया और उस समय उनकी अवस्था ५७ सत्तावन वर्ष की थी। ग्रंथरचना का समय १२०५ हिजरी दिया हुआ है। प्रतिलिपि में संवत् १८२७ पर हिसाब लगाने पर यह संवत् १८४७ होता है। स्पष्ट है कि यहाँ लिपिकार ने भूल की है। फ़ारसी लिपि में 'सैंतालीस' का 'सत्ताइस' पढ़ा जाना या लिखा जाना दोनों ही संभव है। जायसी के संबंध में भी ठीक इसी तरह की भूल हुई है जहाँ कि

९४७ हि० का ९२७ पढ़ा गया था। अस्तु इस प्रकार हम देखते है कि कवि का जन्म १८४७—५७=संवत् १७९० मे मानना चाहिये और तदनुसार ई० सन् १७२२ इनकी जन्म तिथि हुई।

वार वैस महँ कथा बनाए। हीर निकार अनूप सोहाए॥
रस मनोज रस गीत सोहावा। सभै बात का भेस बतावा॥
सत्तावन बरस बीते आयू। तब उपज्यो यह कथा क चारू॥
सात दिवस महँ कथा समापत। दुरमति नाम रह्यो सो संमत॥
हिजरी सन बारह सै पाँचा। बरनेउँ प्रेम कथा यह साँचा॥
अट्ठारह सै सत्ताईसा। संवत् विक्रम सेन नरेसा॥

× × ×

काव्य रचना का निमित्त

'यूसुफ जुलेखा' काव्य की रचना का सबध कवि के जीवन की एक दुःखद घटना मे है। काव्य के अत में कवि ने इस करुण घटना का उल्लेख किया है। इनके एक मात्र पुत्र लतीफ की मृत्यु २२ वर्ष की अवस्था मे हो गई। कवि कहता है कि उसके निधन से मैं पागल सा हो गया था। मृत्यु शय्या पर पडे हुए उसने मुझे रोते देख कर कहा था कि पिता तुम रोते क्यो हो, बडे लोगो को सदा दुःख सहना पड़ता है। नबी यूसुफ को दुःख भोगना पडा था, राम को दुःख सहन करना पडा। दुःख मे ही मनुष्य की परीक्षा होती है। आगे पीछे एक दिन सब को जाना है। जब से उसकी मृत्यु हुई मै नित्य याकूब की याद करता था। उसी की भाँति पुत्र-शोक मे अकालबृद्धत्व को प्राप्त हुआ। उसी के विरह मे रो रो कर मैंने यह गाथा लिखी। ससार के रहस्य का कुछ पता नही। अब तो ईश्वर मुझे जल्दी ही मौत दे और मेरे सांसारिक दुःखो का अत हो। मै तो रहूँगा नही पर यह कहानी सदा रहेगी। जो इस कथा को पढ़ें सुने उनसे विनती है कि मुझे आशीर्वाद दे कि मेरी सद्गति हो। कथा के अत का यह भाग करुण रस की कविता का एक अपूर्व नमूना है। कुछ पंक्तियाँ यहां उद्धृत की जाती है।

जब तें जनम लीन्ह जग माहीं। छुटि दुख अवर सो देख्यों नाहीं॥
अवर दुःख मैं सब कुछ सहा। भयो एक दुख बाउर महा॥
पुत्र अनूप दई मोहिं दीन्हा। रूप अनूप बुधि आगे कीन्हा॥
बाइस बरिस रहा जग माहीं। छुट विद्या उन जान्यो नाही॥
नाम लतीफ अनूप सोहाये। सभ गुन ज्ञान दई अधिकाये॥

बाइस बरिस के बैस महँ, छाँड़ि दीन्ह उन देह।
मुरत अनूप गुलाब सो, जाय मिले पुन खेह॥

तब मैं भय जो बाउर भेसा। करौ सदा अँतकाल अँदेसा ॥
जब तें लतीफ कर मरम बिसेख्यों। तप संपत अमिरथा देख्यौ ॥
रोम रोम यह विरह बखानी। कोउ न रहा जग रहै कहानी ॥
देहु दया मोहै कब मोखू। हरहु मोर अन अवगुन दीखू ॥
पढ़ै प्रेम कै अच्छर कोई। दईं असीस मोर गति होई ॥
हम न रहब आखर रहि जाई। सब हि लोग होइहि सुख दाई ॥
× × ×
सात दिवस मे कथा सोहाई। कीन्ह समापत दीन्ह बनाई ॥

इत्यादि।

कबि निसार सैयद इंशाअल्ला खाँ के समसामयिक थे इसका पता भी आभ्यतरिक प्रमाणो से मिल जाता है, साथ ही यह भी पता चलता है कि हस-जवाहिर' नामक मसनवी काव्य भी इनके समय मे प्रचलित था।

हंस जवाहिर प्रेम कहानी। कहा मसनवी अँविरत बानी ॥
हंसा कहे जहाँ लह भेदू। औ सब कथा जहा लह वेदू ॥
झूंठ ज्ञान सम तिन मन भाषा। अब यह सोंच कथा चित लागा ॥
× × ×

कथा का सारांश

यूसुफ जुलेखा की कथा का आधार है प्रसिद्ध फारसी काव्य 'यूसुफ-जुलेखा'। कवि निसार ने इसको भारतीय जामा पहिनाने की चेष्टा की है पर इस चेष्टा मे यह अधिक सफल नही हो सके हैं। मूल कथा यो है।

नबी याकूब किनआँ नगर मे रहते थे जो कि 'नूह' साहब का बसाया हुआ था। नबी 'लूत' की लडकी से इसहाक ने शादी की थी जिससे 'ईस' और 'याकूब' नाम के दो बेटे पैदा हुए थे। याकूब की सात बीबियां थी और उनसे बारह बेटे हुए इनकी 'राहेल' नाम की बीबी से 'यूसुफ' नामक पुत्र और 'दुनियां' नाम की कन्या हुई। याकूब यूसुफ को बहुत ज्यादा मानते थे और इससे अन्य सब लड़के इनसे भयानक ईर्ष्या करते थे। बात यहाँ तक पहुँची कि शेष सब भाइयो ने मिल कर यूसुफ का प्राणांत करने का निश्चय किया। इस विचार से जब वे जङ्गल मे भेड़ चराने जाने लगे तो पिता से कह सुन कर यूसुफ को भी ले गये। वहा इन लोगो ने उसे कुएँ मे ढकेल दिया।[1] उसका एक कुरता छीन कर बकरी के ख़ून से रँग दिया और घर मे पिता के सामने कुरता पेश करते हुए कहा कि यूसुफ को भेड़िये ने मार डाला।

---

[1] इस स्थल की यूसुफ की कही हुई बाते और उसका व्यवहार ईसा या मुहम्मद की उच्चता की याद दिलाती है, साथ ही यहाँ की कविता भी उच्च कोटि की बन पड़ी है।

इधर यूसुफ कुएँ मे पडे रहे। एक दिन कुछ सौदागर उधर से गुज़रे। इनमे एक ने पानी निकालने को डाल डाली जिसे यूसुफ ने पकड ली और तब सबो ने इन्हे मिल कर बाहर निकाला। सौदागरो के सरदार ने यूसुफ के रूप और कांति पर मुग्ध हो इन्हे अपने साथ ले जाना चाहा, पर इतने ही मे इनके हत्यारे भाई भी उधर आ पहुँचे और उन्होने कहा कि यह मेरा ग़ुलाम है और भाग आया है तुम चाहो तो इसे ख़रीद सकते हो। सौदागर ने मुह मॉगा दाम देकर यूसुफ को खरीद लिया इस प्रकार इन भाइयो ने यूसुफ को अपने राह के कटक के समान दूर तो किया ही, साथ ही अच्छी खासी रकम भी वासूल की।[1] खैर सौदागर ने मिस्र की राह ली।

उधर मग़रिब (पश्चिम) देश मे तैमूस नामक एक सुलतान राज्य करता था जिसके ज़ुलेखा नाम की एक अनिद्य सुदरी बेटी थी। ससार मे कोई उसके समकक्ष नही थी। दुनिया के कोने-कोने से बडे से बडे बादशाहो के विवाह के प्रस्ताव आये पर सुलतान ने सब को कोरा जवाब दिया।

इधर ज़ुलेखा ने स्वप्न मे यूसुफ को देख कर मन ही मन उसे ही पति बनाने की प्रतिज्ञा की। पर उससे मिलने का कोई उपाय न देख वह दिन-दिन घुलने लगी। वैद्य, हकीम सब थक गये पर उसकी अवस्था शोचनीय हो चली। उसकी धाय बड़ी चतुर थी और ज़ुलेखा ने उससे अपनी सब बाते प्रगट कर दी। उसने राय दी कि यदि फिर कभी स्वप्न मे उस पुरुष के दर्शन हो तो उसका 'नॉव गॉव' सब पूँछ लेना। और हुआ भी ऐसा ही। फिर जब स्वप्न हुआ तो बहुत जिद करने पर यूसुफ ने कहा मिसिर के सचिव के यहां आवो तो मुझसे भेट होगी। धाय ने यह भेद सुलतान पर प्रगट किया कि यदि आप अपनी लड़की की जिंदगी चाहते हैं तो मिस्र के वज़ीर के साथ इसकी शादी कर दीजिये।

सुलतान बड़ा दुःखी हुआ, क्योकि वज़ीर की हैसियत उससे कही नीचे थी। पर आख़ीर क्या करता। पैग़ाम भेजा गया और मिस्र के वज़ीर ने बहुत झेप कर इसे मजूर किया और शादी हुई। ज़ुलेखा रुखसत हुई। रास्ते मे धाय से इसने जिद किया कि एक बार 'उन्हे' दिखा दो। पर जब उसने पति को देखा तो मानो आसमान से गिरी। वह तो स्वप्न मे आने वाला वह सुदर पुरुष नही था। अब घोर सकट इनके सामने उपस्थित हुआ। बात यह हुई थी कि स्वप्न वाले मनुष्य ने यह तो कहा नही था कि मैं मिस्र का वज़ीर हूँ। यह तो सिर्फ उसके यहां मुलाज़िम था। पर ज़ुलेखा ने समझा कि वही वज़ीर है। इसी ग़लतफ़हमी पर कथा की सारी दिलचस्पी निर्भर करती है।

---

[1] बिदा होते समय फिर यूसुफ़ ने बड़े करुण शब्दों मे केवल यही कहा कि 'भाई मेरा अपराध क्षमा करना और कभी-कभी याद करना, और पिता को कहना मेरे लिये दुःखी न हों। पर भाइयों ने भेद खुलने के डर से यूसुफ़ का मुह बंद कर दिया।

ख़ैर, आख़िर ज़ुलेखा मिस्र के वजीर के हरम मे दाख़िल हुई। पर अपने सतीत्व की रक्षा के लिये उसने धाय की सलाह से एक उपाय सोच निकाला। वह बीमारी का बहाना कर के पड रही। धाय ने वज़ीर को समझा दिया कि इसको यह रोग है। इस तरह से बडे दुःख के साथ ज़ुलेखा के दिन कटने लगे।

इधर वह सौदागर यूसुफ को लिये हुये मिस्र पहुँचा। वहां उसने ग़ुलामो के बाजार मे बेचने के लिए यूसुफ को खड़ा किया। उसका अपूर्व रूपसौंदर्य देख कर सारा मिस्र हैरान था। सारा देश उसकी एक झलक देखने के लिये उमडा पडता था। बडी-बडी कीमते लग रही थी। ऐसी शोहरत सुन धाय को लेकर ज़ुलेखा भी उसके दर्शन को चली। देखते ही उसने पहचान लिया कि यह तो वही पुरुष है जिसने स्वप्न मे अपनी सूरत दिखा उसका मन हर लिया था। ख़ैर, धाय की सलाह से यह तय पाया कि वज़ीर से कह कर इस दास को खरीदवाया जाय। वज़ीर ने ज़ुलेखा को खुश करने के इरादे से यूसुफ को खरीद कर उसकी सेवा के लिये रख दिया।

अब ज़ुलेखा कुछ ख़ुश रहने लगी। धीरे-धीरे ज़ुलेखा अपने मनोभाव यूसुफ पर प्रगट करने लगी पर वह इस पर कुछ ध्यान न देता। वह अधिकतर उदासीन ही रहता। पर क्रमशः ज़ुलेखा की चेष्टाएं बहुत स्पष्ट होती गई और एक दिन यूसुफ बहुत कामातुर हो गया और ज़ुलेखा को पकडने को बढा पर उसी समय उसके पिता की मूर्ति उसके सामने खडी हो गई। वह तुरत सँभल गया और उलटे पॉव भागा। पर भागते समय ज़ुलेखा ने उसका कुरता पकड लिया और झटके मे वह फट भी गया पर यूसुफ निकल भागा। इसपर ज़ुलेखा ने अपने को अपमानित समझ कर वजीर से यह शिकायत कर दी कि यूसुफ की निगाह ठीक नही है, उसने उस पर हमला किया था। प्रमाणस्वरूप उसने उसके फटे कुरते का टुकडा पेश किया। पर कुरते के पीछे का हिस्सा फटा देख वज़ीर ने असल बात का पता लगा लिया पर ऊपर से चुप रहा और ज़ुलेखा का मान रखने के लिये यूसुफ को सिर्फ कारावास का दंड दिया।

अब ज़ुलेखा को अपने ऊपर बडी ग्लानि हुई। वह बहुत सतप्त रहने लगी। कारागार मे यूसुफ के सुख के लिये भाँति-भाँति के प्रयत्न गुप्त रीति से करने लगी पर वह इन सब हरकतो से बिलकुल उदासीन रहने लगा और कभी ज़ुलेखा की चेष्टाओ पर आकर्षित न होता था।

एक दिन एक सवार किनआँ नगर से मिस्र आया। यूसुफ ने कारागार की खिड़की से उसे देखा और अपने देश का आदमी पहचान कर उसे बुलाया और अपने नगर और अपने पिता का हाल चाल पूँछना चाहा, पर उसने यूसुफ को न पहचान कर इसकी बातो पर कुछ ध्यान न देकर आगे बढना चाहा पर न जाने किस दैवशक्ति से उसके ऊँट के पॉव ही आगे न बढते थे। आख़िर उसने यूसुफ से कहा कि मै व्यापार करने मिस्र आया हूँ। यूसुफ ने पिता के लिये अपना सदेसा

कहा और कहा कि वे ईश्वर से प्रार्थना करे कि मै जेल से छुटकारा पाऊँ। उसने लौट कर याकूब से यह सँदसा कहा भी। उधर यूसुफ ने कई पत्र पिता के पास भिजवाये पर कोई भी उनके पास तक न पहुँचा।

इधर मिस्र मे जुलेखा की बडी निंदा होने लगी। सब स्त्रियॉ उसे दुराचारिणी कहतीं। आखिर जब .जुलेखा से न रहा गया तो उसने शहर को बहुत सी औरतो को दावत दी और सब को एक कतार मे बैठा कर सब के सामने एक एक तरबूज और एक-एक चाकू रखवा दिया। जब सब तरबूज काटने मे लगी तब ठीक उसी समय .जुलेखा ने यूसुफ को बुला कर उनके सामने से गुजारा। सब उसके रूप को देख कर इतनी तन्मय होगई कि सबो ने चाकू मे अपना हाथ काट डाला। इस प्रकार .जुलेखा ने यह सिद्ध कर दिया कि यूसुफ का रूप ही ऐसा है कि उसे देख कर कोई अपने बस मे नही रह सकता। आखिर यूसुफ के चले जाने पर सब स्त्रियाँ बडी लज्जित हुई और सबो ने जुलेखा से क्षमा माँगी।

यूसुफ़ सात साल तक जेलखाने मे सडता रहा। .जुलेखा उसे मुक्त करने के उपाय सोचा करती पर उसकी कोई तरकीब कारगर न होती थी। इसी बीच मिस्र के सुलतान ने एक बडा बेढब सपना देखा जिसका कोई अर्थ ही न बता सकता था। यूसुफ़ के पाण्डित्य और अनोखी सूझ-बूझ की बडी शोहरत थी। आखिर इस स्वप्न-फल के विचार के लिये सुलतान ने इन्हे तलब किया। इन्होने बताया कि इसका अर्थ यह है कि सात साल तक वर्षा न होगी और यदि शांति का समुचित प्रबंध किया जायगा तो प्रजा के प्राण बँच जायँगे। इस पर सुलतान ने समुचित प्रबंध करना शुरू किधा और बहुत बड़े पैमाने पर अन्न वस्त्र एकत्रित करने लगा। इसी सिल-सिले मे सुलतान ने यूसुफ के कैद होने का कारण पूछा और प्रसगवश .जुलेखा ने अपनी सारी आत्म-कथा साफ-साफ सुलतान पर प्रगट कर दी। मंत्री ने क्रोधवश .जुलेखा को त्याग दिया।

पर इस सुलतान ने युसुफ को ही इस मत्री के पद पर बडे आदर से बैठाया। इधर जुलेखा तप करने लगी। मत्री होने पर सात साल तक अच्छा खेती हुई। युसुफ़ ने बहुत सा अन्न तथा खाद्य द्रव्य इकट्ठा कर लिया। इसके बाद घोर दुर्भिक्ष का समय आया चारो ओर त्राहि-त्राहि मँची। इस अकाल के पॉचवे साल वह मिस्र का पुराना वजीर मर गया। यूसुफ़ का मान और भी बढ़ गया और सुलतान ने सारा राज-काज इन्ही के हाथ सौंप दिया।

इधर यूसुफ़ का जन्म भूमि किनआँ मे भी अकाल पड रहा था। याक़ूब ने अपने लड़को को अन्न लाने और यूसुफ़ का पता लगाने के लिये मिस्र की ओर रवाना किया। दसो भाई मिस्र पहुँचे और यूसुफ ने सब को पहचाना पर अपने को इन पर प्रगट नही किया। सब का हाल-चाल पूछ कर और बहुत सा अन्न आदि देकर बिदा किया और साथ ही यह भी कहला भेजा कि अपने छोटे भाई इब्न अमी को लाओ तो और भी बहुत सा सामान देगे।

सभों ने आकर पिता से सब हाल कहा। उन्होंने बड़े दुःख से इब्नअमीं को जाने दिया क्योंकि यसुफ के बाद यही सब से प्यारा बेटा होगया था।

आखिर ये लोग फिर यूसुफ के पास पहुँचे और इन्होंने सब का बड़ा स्वागत किया। सब एक साथ भोजन करने बैठे। छः थालियाँ लगीं और एक-एक मे दो-दो भाई एक-साथ भोजन करने बैठे। इब्नअमी अकेला पडता था, इससे ख़ुद यूसुफ उसके साथ वैठ गया। इस मौके पर इब्नअमी यूसुफ को पहचान गया। विदा होते समय यूसुफ ने फिर सबको बहुत सा अन्न वग़ैरह दिया पर इब्न को रोकने की गरज से उसके कपडे मे बाँट रखवा दी जिससे वह चोर समझ कर पकडा गया। कहते है कि इस पर किनआँ और मिस्र वालो मे घोर युद्ध हुआ और किनआँ वाले हार कर वदी कर लिये गये और सुलतान ने सब को मरवा डालने का हुक्म दिया पर यूसुफ ने किसी तरह माफ करवाया। बाद को सब भाइयो ने यूसुफ को पहचाना और सब गले मिल कर बहुत देर तक रोये और सबो ने अपनी पिछली करनी पर बडा दुःख प्रगट किया। बाद को सब किनआँ गये पर यूसुफ ने इब्न और यहूदा दो भाइयो को रोक लिया था। किनआँ पहुँचने पर सब को यूसुफ का पता चला और याकूब के साथ सारा किनआँ यूसुफ के दर्शन को चला। यूसुफ ने सब को वडे प्रेम से ख़ातिर की और तीस वर्ष बाद पिता पुत्र मिले। मिस्र का सुलतान भी वडा सुखी हुआ। वह निस्सतान था और काफी बूढा हो गया था अतः उसने इस मौके पर यूसुफ को अपने सिंहासन पर बैठा कर राज्याभिषेक कर दिया। यूसुफ अब सुलतान था।

इधर ज़ुलेखा को यूसुफ के विरह मे तप करते ४० वर्ष होगये थे। वह बूढ़ी और रोते-रोते अंधी होगई थी। वह अपना सब कुछ खो चुकी थी। अब वह पथ की भिखारिन थी।

एक दिन शहर मे यूसुफ़ की सवारी निकली। यद्यपि नेत्र-हीन थी, उसे यूसुफ के अंतिम दर्शन की बडी अभिलाषा हुई और बडी खुशामद के बाद कुछ औरतो ने उसे यूसुफ़ के रास्ते मे खडा किया। सयोग से यूसुफ ने इसे तुरत पहिचाना और इसे बडी दया आई। यूसुफ ने पूछा तुम्हारा यह हाल क्योकर हुआ। उसने कहा सब तुम्हारे कारण। याकूब को भी सब हाल मालूम हुआ। उन्होंने ज़ुलेखा को दुआ दी जिससे वह फिर षोडषी रूप मे परिणत हुई और रूपलावण्य पहले से भी उज्ज्वलतर हुआ। अत मे दोनो का विवाह हुआ और याकूब ने दोनो को दुआ दी।

पर जब सब कुछ हो गया तब आखिर को ज़ुलेख़ा को कुछ शरारत सूझी। उसने यूसुफ को छकाने की ठानी ताकि उसे कुछ पता तो चले कि कैसे हमने ये ४० बरस बिताये है। आखिर को यूसुफ का नाको चना चबवा कर तब अत मे जब उसके मरने की नौबत आई तब ज़ुलेखा ने आत्मसमर्पण किया।

कथा का आधार तथा उसकी विशेषता

यूसुफ ज़ुलेखा का कथा पदमावत आदि अन्य कथाओ से एक महत्व-पूर्ण विभिन्नता रखती है और उस पर ध्यान देना आवश्यक है। अन्यः सभी प्रेमगाथा या आख्यानक काव्य जा अभी तक प्राप्त हो सके है, किसी न किसी लोकप्रसिद्ध भारतीय ऐतिहासिक घटना का आश्रय लेकर रचे गये है। अंतर इतना ही है कि कुछ मे यह आश्रय केवल नाम मात्र का और कुछ मे ऐतिहासिक तथ्यो के सामजस्य का आद्योपांत यथाशक्ति ध्यान रक्खा गया है। हाँ कविता की आवश्यकताओ को ध्यान मे रखते हुए जितनी निरकुशता का अधिकार इस कोटि के महाकाव्य लेखको को हो सकता है इसका किसी ने बहुत दुरुपयोग किया है, किसी ने कम। पर यूसुफ-ज़ुलेखा की कथा भारतीय इतिहास या सस्कृति से कोई सबध नही रखती, इसका आधार या आश्रय पूर्णतया विदेशी है। इसमे जिस समाज का चित्र खीचा गया है वह भी भारतीय न होकर ईरानी या मिसरी कहा जाता है। इसकी प्रेमपरपरा का कोई सबध भारतीय-जीवन से नही है। वह सोलह आने ईरान या अरब आदि इस्लामी देशो की है।

ज़ुलेखा की प्रेमपरंपरा

स्वप्न मे किसी अपरिचित पुरुष को देख कर उसके प्रेम मे पागल हो जाना, भारतीय काव्य और रसपद्धति के लिये एक नई बात है। प्राचीन सस्कृत या हिंदी काव्यो मे हम इस प्रकार के प्रेम पर आधारित कोई बडा काव्य नही पाते। 'ऊषा-अनिरुद्ध' की बात छोड दीजिये, वह एक दूसरे ही ढग की चीज है। 'गुणश्रवण' 'चित्रदर्शन' आदि ढंग तो हमारे यहां मिलते है, और अधिकतर प्रेमगाथाओ मे अपनाये गये हैं। पर 'स्वप्नदर्शन' पर आधारित प्रेम बहुत अश तक अस्वाभाविक होता है और वास्तविक जीवन मे असभव सा ही है। वन, वीथी, तडाग आदि कहीं पर नायक नायिका का एक बार परस्पर साक्षात्कार हो चुका हो, निगाहे चार हो चुकी हो, उसके बाद स्वप्न-दर्शन होना स्वभाविक है, और ऐसा वास्तविक जीवन और काव्य दोनो ही मे हम प्राय: देखते है। पर जिसको कभी न देखा न सुना, न चित्र ही देखा, उसे स्वप्न मे देखना और सदा के लिये उसी मे अपने को लीन कर देना यह फारिस की ही देन है।

फिर दूसरी विभिन्नता यह है कि पदमावत आदि मसनवी काव्यो मे गुण-श्रवण या चित्र-दर्शन आदि जिस किसी कारण से भी प्रेम आरभ होता है, दोनो ओर नायक-नयिका मे समान रूप से आरभ होता है। यहां सब कुछ ज़ुलेखा की तरफ से ही है। यूसुफ इससे बिलकुल बरी रक्खा गया है। इसने कभी न स्वप्न ही देखा न इसकी याद मे अस्थिपिंजर मात्र ही दिखलाया गया, इधर ज़ुलेखा इसके कारण अपमानित और लांछित होकर परित्यक्ता हुई और ४० वर्ष तक तप करते-करते अधी, बूढ़ी और मरणासन्न अवस्था को प्राप्त हुई, इधर यूसुफ दास से मन्त्री, फिर

मिस्र का सुलतान तक हो गया। इसे मानो पता भी नहीं कि जुलेखा इसकी याद में मर रही है। अगर इत्तफाक से जुलेखा की कुटिया की तरफ से उसकी सवारी न निकलती तो शायद ज़ुलेखा मर ही जाती और कोई यूसुफ तक उसके मरने की खबर तक पहुँचाने वाला न था।

लौकिक और अलौकिक

इस प्रकार की अस्वाभाविकताओं का हम एक ही कारण देखते हैं। इस कथा मे नायक दो रूप मे चित्रित किया गया है—लौकिक और अलौकिक। राम-चरित-मानस के नायक के संबध मे भी महाकवि तुलसीदास ने जाने या अन-जाने मे ऐसा ही किया है। उनके सबध मे 'कवि' तुलसी और 'भक्त' तुलसी दोनो अपनी-अपनी बात बारी-बारी से कहते है। पर कवि निसार के सबन्ध मे यह बात नहीं है। उन्होने भगवद्भक्ति से प्रेरित होकर यह कथा नही लिखी है। पर इस्लाम की दुनियां मे यूसुफ 'नबी' या ईश्वर के प्रतिनिधि, मनुष्य रूप मे माने गये है, और इनकी कथा फारसी यूसुफ-ज़ुलेखा मे वर्णित है। इस मौलिक ग्रथ का कहाँ तक अनुकरण निसार ने किया है यह जानने का हमारे पास कोई साधन नही है। पर इतना हम कह जानते हैं कि जहाँ-जहाँ चाहे जिसी जाति या भाषा के कवि नायक मे एक साथ ही 'मनुष्यत्व' और 'ईश्वरत्व' का आरोप करते हुए चले है वहाँ इसी तरह का गपड़चौथ हुआ है। कवि कुलगुरु तुलसी की प्रतिभा असाधारण थी। उन्होने दोनो का निर्वाह कर ही दिया है एक प्रकार से, और दाते इतनो खटकीं भी नहीं।

चरित्र-चित्रण

पर यही बात हम निसार के सबन्ध मे नही कह सकते। यूसुफ के चरित्र-चित्रण मे कवि ने किसी हद तक उनको 'हर्ष विषाद-रहित' महामानव के रूप मे चित्रित करने का प्रयास किया है पर सफलता नही मिल सकी है। वह 'उदात्त' गांभीर्य हम यूसुफ मे नही पाते। कही-कही तो इनका व्यवहार काफी निम्न-कोटि का सा भी बन पड़ा है। अब जैसे युसुफ के हृदय मे जुलेखा की प्रबल काम-चेष्टाओं से कामातुर होकर उस को आलिंगन करने का दौड पडना, फिर यकायक पिता की तस्वीर सामने आजाने पर सँभलना और उल्टे पॉव भाग खडा होना और जुलेखा का उसे रोकने के लिये झपटना और कुरता थाम लना, कुरते का फट जाना आदि कुछ ऐसी बाते है जो नायक और नायिका दोनो के चरित्र का बहुत नीचे गिरा देती हे। पर जुलेखा का चरित्र तो यहाॅ बहुत ही निम्नकोटि का कर दिया गया है। कहा गया है कि ऐन मौके पर यूसुफ के भाग निकलने से उसे इतना घृणित क्रोध होता है कि वह अपने पति से शिकायत करती है कि यूसुफ ने उस पर बलात्-कार की चेष्टा की थी, पर उसने किसी तरह अपनी इज्जत बचाई। अपने कथन की सत्यता मे वह यूसुफके फटे कुर्ते का भाग पेश करती है। यह व्यवहार तो कुछ-कुछ

मुगल कोर्ट की रखेलियो और बाँदियो के intrigues या छल-कपट और प्रेम षड-यंत्रो की याद दिलाता है। पर इसके लिये हम निसार को कहाँ तक उत्तरदायी ठहरावें ? यह तो फारसी काव्य-पद्धति और इस्लामी समाज-चित्र की बातें है जिन्हे कवि ने अवधी मे वर्णन मात्र कर दिया है।

नायक, नायिका के सिवा धाय का चरित्र विशेष ध्यान देने योग्य है। मुसलमान बादशाहो में अंत:पुर मे दाई या धाय जैसी होती थी उनका सच्चा चित्र हम देखते है। गुप्त प्रेम मे शाहो और सुलतानो की बेटियो को ये दाइयाँ डूबते को तिनके के सहारे की भाँति थीं। ये दूती का काम करती थीं और आख़ीर तक साथ देती थी।

भाइयो के पारस्परिक द्वेष का निकृष्टतम उदाहरण इस काव्य मे मिलता है। बाप यूसुफ को और भाइयो से ज्यादा मानता था इसलिये उन्होने बिचारे को खपाहो डाला और बाप से आकर कह दिया कि उसे भेड़िये ने खा डाला ! फिर वह किसी तरह से कुएँ से निकला भी तो उसे अपना दास कह कर बेच डाला और अच्छी ख़ासी रकम वसूल कर ली ! नबी के सगे भाइयो का यह हाल है ! विमाता के पुत्र भरत और शत्रुघ्न की याद बरबस आ जाती है। कितना असम्भव पार्थक्य है !

कविता

यह हम पहले भी कह चुके हैं कि इन मसनवी कवियो की कविता प्राय: सभो की एक ही ढर्रे की हुई है। रहा अवधी भाषा। वही दोहे, चौपाईयो की छंदावली और वही विषय ! पर निसार का काव्य भाषा और विषय दोनों ही दृष्टि से अन्य मसनवी काव्यो से काफी पार्थक्य रखता है। विषय या कथावस्तु का पार्थक्य हम ऊपर दिखा चुके हैं।

निसार की भाषा मे हमे साहित्यिक अवधी के परिमार्जित रूप का आभास मिलता है। पद्मावत के ढंग के ग्रामीण या rustic या ठेठ प्रयोग ज़ुलेखा मे शायद ही कही मिलते हो। मानस की अवधी से भी कुछ अशो मे निसार की भाषा परिष्कृत है। अरबी, फारसी के शब्द प्राय: आते रहते हैं। इन्होने अपनी रचना मे विशेष कर ऋतुवर्णन और बारहमासा वर्णन के समय कवित्त और सवैये भी ख़ूब लिखे है जो कि प्रेम-गाथा कविता के संबध मे एक अनहोनी बात है। इनके कवित्तों मे ब्रज-भाषा की छाया भी प्रचुर परिमाण मे मिलती है। एक उदाहरण दिया जाता है।

मासा भादों महँ सुहावन जगत सुख छायो सभै,
रितु फलत फूलत और तरुवर गेल सों पूरन भए।
भुवन सीतल छाँह सुंदर सुख सँजीगिन के रहै,
कवन हरियर करै पिउ बिन बेल बिरही सों दहै॥

इस तरह का छंद पद्मावत, चित्रावली, मृगावती आदि किसी मे न मिलेगा।

अलकार आदि बाहरी सजावट निसार के काव्य में कम है, अनुप्रास का शौक भी इनको न था। हाँ, रस का परिपाक अच्छा हुआ है। इस काव्य मे करुणा रस का प्राधान्य अद्योपांत है। यों तो विरह-वर्णन सभी सूफी कवियो का मुख्य व्यवसाय रहा है और इस संबध मे ये लोग प्रायः ऐसी उडान भरने के अभ्यासी होते हैं कि पढ़ कर रसबोध के स्थान पर हँसी आये बिना नही रहती। सारा कथानक ही उपहासास्पद हो जाता है। पर जायसी और निसार इसके अपवाद है। निसार ने इस काव्य की रचना एक नितांत दुःखद (पुत्र शोक) सांसारिक घटना के बाद लिखी थी। वह इस समय स्वय ५७ वर्ष के थे और इस समय उनके एक मात्र सुयोग्य पुत्र का निधन निश्चय ही एक दुखांत घटना थी। इस मर्मांतक घटना को यथाकथचित् भुलाने के उद्देश्य से ही उन्होंने इस कथा की रचना मे हाथ डाला था।

× × ×

जायसी आदि अन्य मसनवी शाखा के कवियो का उद्देश्य लौकिक प्रेम के मिस अलौकिक का निर्देश करना होता था पर यहाँ हम वह बात भी नही पाते। दो एक स्थान पर हम 'अलख' आदि ऐसे शब्दो का प्रयोग पाते है पर उस अध्यात्म-तत्व या रहस्यवाद का पता कही नही चलता जिनके लिये जायसी और उनके पदमावत की इतनी ख्याति हुई। इस श्रेणी के प्रायः सभी काव्यो मे कवि अत मे स्पष्ट रूप से कह देता है कि यह सारी कथा 'अन्योक्ति' के रूप मे कही गई है और पाठको से स्पष्ट अनुरोध रहता है कि वह कथा मे वर्णित प्रेम-कहानी को इसी रूप मे ले। नायक को साधक, नायिका या माशूक को खुदा या ईश्वर, राह बताने वाले 'सुआ' को गुरु, इसी प्रकार 'शैतान,' माया, सांसारिक बंधन आदि सभी के प्रतिनिधि स्वरूप कोई-न-कोई कथा का पात्र होता है। पर इस कथा मे हम इस तरह की कोई बात नही देखते। यहाँ 'प्रेम की पीर' पहले नायिका पर ही चोट करती है और वही नायक की तलाश मे, जिसके नॉउ-ठाँउं का कोई पता नही, बाहर निकलती है। सूफ़ी परपरा मे ईश्वर की कल्पना माशूक के रूप मे की गई है और एक 'गुरु' की अनिवार्यता पर बहुत जोर दिया गया है। पर कितना ही खींच-तान करने पर भी यहाँ इस तरह की कोइ 'अन्योक्ति' ठीक बैठती नही, और न कवि कही इस तरह का कोई स्पष्ट निर्देश ही करता है।

इस सग्रह मे कथा का प्रारंभिक भाग और अंतिम भाग लिया गया है। बीच के कुछ भाग इस ढंग से संग्रहीत है कि कथा का सबध ठीक बैठ जाता है। यह ग्रथ अभी तक अप्रकाशित है और यह सग्रह पहले पहल प्रेस मे जा रहा है। इसी की फ़ारसी मे लिखी हुई प्रति लिपि पहले पूरी संपादन के निमित्त ही एकेडेमी मे आई थी, और मुझे तथा श्री सत्यजीवन वर्मा को इसका भार सौंपा गया था, पर अभी तक यह पूरी प्रकाशित न हो सकी। इसकी पाडु-लिपि फारसी मे होने के कारण पाठ में असंख्य गड़बड़ी होना स्वाभाविक है। तुलना के लिये नागरी अक्षरों में लिखी हुई कोई दूसरी पाडु-लिपि भी अभी तक नही मिल सकी है।

मलिक मुहम्मद जायसी

हिंदी और संस्कृत के अधिकांश प्राचीन कवियों की भाँति जायसी की भी जन्म-मरण-तिथि, जन्मस्थान, तथा माता पिता आदि के संबंध मे प्रामाणिक रूप से कुछ ज्ञात नही है। इतना तो इन के उपनाम 'जायसी' से ही प्रगट है कि ये अवध प्रांत के अंतर्गत 'जायस' नामक स्थान के रहने वाले थे। प्रकृत मातृभूमि या जन्म स्थान चाहे जायस न रहा हो पर इन के क्रियाकलाप का केंद्र यही रहा होगा। पद्मावत मे आई हुई इस पंक्ति से भी यही धारणा पुष्ट होती है—

जायस नगर धरम अस्थानू। तहाँ आइ कवि कीन्ह बखानू ॥

इस पंक्ति से यह स्पष्ट है कि कहीं से आकर ('तहाँ आइ') यह जायस मे बस गए थे, कहाँ से आकर इस का कुछ पता नहीं।

इन की उत्पत्ति के संबध मे यह किंवदंती बहुत दिन से चली आ रही है कि इन का जन्म गाजीपूर ज़िले के एक बड़े दरिद्र परिवार मे हुआ था। सात वर्ष की अवस्था मे इन्हे चेचक की बीमारी हुई, जिस मे इन के प्राण तो बच गए पर इन की एक आँख जाती रही। कहते हैं इस बीमारी से जायसी की रक्षा करने के लिये इन की माता ने मकनपुर के पीर मदार शाह की मनौती मानी थी और उन्हीं की दुआ से इन की जान बची। पर मनौती पूरी करने के पहले ही इन की माता का स्वर्गवास हो गया और इन के पिता तो पहले ही मर चुके थे। कवि के एकाक्ष होने का प्रमाण पद्मावत की इस पंक्ति से मिलता है —

एक नयन कवि महमद गुनी।

एक दोहे मे इस बात का भी उल्लेख मिलता है कि बीमारी मे इन की बाँई आँख तो फूटी थी ही, साथ ही बाँयां कान भी बहरा हो गया था। वह दोहाश नीचे दिया जाता है—

मुहम्मद बाई दिसि तजा एक सरवन एक आँखि।

इन किंवदंतियो तथा अन्य ऐतिहासिक वृत्तांतो से यह स्पष्ट हो जाता है कि शीतला देवी ने इन के शरीर और स्वरूप के साथ मनमाना अत्याचार किया था। इन के अत्यंत कुरूप होने का प्रमाण इस कथा से मिलता है। एक बार अवध का कोई राजा जो इन्हे पहचानता नही था, इन के कुरूप चेहरे को देखकर हसा।

इस पर जायसी ने इन से केवल इतना ही कहा—"मोहि का हसेसि कि कोंहरहि," अर्थात् तू मुझ पर हसा कि उस कुम्हार (निर्माता, ईश्वर) पर ? कहते हैं कि इस पर वह बडा लज्जित हुआ और बाद मे इन का परिचय जानने पर बहुत तरह से इन से क्षमा माँगी ।

इन के जीवन काल का कुछ अनुमान पद्मावत के रचनाकाल से लगता है जो कि इन्होने उक्त ग्रंथ मे दे दिया है—

सन् नव सै सैंतालिस अहा । कथा अरभ बैन कवि कहा ॥

इस ग्रथ का आरंभ सन् ९४७ हिजरी अथवा तदनुमार सवत् १५९७ मे हुआ था । यह शेरशाह का राजत्वकाल था और ग्रथारंभ मे कवि ने इस की प्रशसा मे भी बहुत से पद्य लिखे हैं । बस इसी से जायसी के आविर्भाव और कविताकाल का स्थूल अनुमान किया जा सकता है ।

जायसी के गुरु शेख़ मोहिदी (मुहीउद्दीन) थे । इनकी गुरुपरपरा का वर्णन जायसी की 'पद्मावत' और 'अखरावट' दोनो मे मिलता है । यह परपरा निज़ामुद्दीन औलिया से आरंभ होती है । इस की प्रतिलिपि नीचे दी जाती है—

- निज़ामुद्दीन औलिया (मृत्यु सन् १३२५ ई०)
  - सिराजुद्दीन
    - शेख़ अलाउल हक़
      - शेख़ कुतुब आलम (पडोई के, सन् १४१५ ई०)
        - शेख़ हशामुद्दीन (मानिक पुर के)
          - सैयद राजी हामिदशाह
            - शेख़ दानियाल (मृत्यु १४८६ ई०)
              - सैयद मुहम्मद
                - शेख़ अलहदाद
                  - शेख़ बुरहान (कालपी के, मृत्यु सन् १५६२ ई०)
                    - शेख़ मोहिदी (मुहीउद्दीन)
                      - मलिक मुहम्मद (जायसी)
      - सैयद अशरफ़ जहाँगीर
        - शेख़ हाजी
          - शेख़ मुबारक
          - शेख़ कमाल

उपर्युक्त परंपरा जायसी के अनुयायी मुसलमानों में अब तक प्रचलित है। पद्मावत में दी हुई वंशावली इस से कुछ भिन्न है। अखरावट में इन्होंने अपनी गुरु-परंपरा का इस प्रकार वर्णन किया है—

पा—पाएउ गुरु मोहदी मीठा। मिला पंथ सो दरसन दीठा॥
नाँव पियार सेख बुरहानू। नगर कालपी हुत गुरु थानू॥
औ तिन्ह दरस गोसाईं पावा। अलहदाद गुरु पंथ लखावा॥
अलहदाद गुरु सिद्ध नवेला। सैयद मुहमद के वै चेला॥
सैयद मुहमद दीनहि साचा। दानियाल सिख दीन्ह सुबाचा॥
जुग जुग अमर सो हजरत ख्वाजे। हजरत नबी रसूल नेवाजे॥
दानियाल तहँ परगट कीन्हा। हजरत ख्वाज खिजिर पंथ दीना॥

दोनों वंशावलियों का मिलान करने से मालूम होगा कि शेख दानियाल तक तो दोनों एक हैं, पर इस के आगे जायसी की दी हुई वंशावली में दानियाल के गुरु हामिदशाह और इन के ऊपर के गुरुओं का उल्लेख नहीं है। अस्तु, यह तो हुई जायसी की वास्तविक गुरुपरंपरा। परंतु इन के ग्रंथ को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन्होंने अन्य संप्रदाय वालों से भी बहुत कुछ सत्संग और ज्ञानोपार्जन किया था। इन की रचनाओं में योग, तथा वेदांत दर्शन के बहुत से सिद्धांतों का सूफी संप्रदाय के सिद्धांतों के साथ एक बड़ा रुचिर संमिश्रण देखने में आता है जो शायद अन्य किसी भी कवि की रचना में दुष्प्राप्य है। परमात्मा की प्राप्ति के लिये भिन्न भिन्न आचार्यों ने जितने मार्ग दिखाए हैं उन में से किसी की भी इन्होंने कबीर की भाँति तीव्र आलोचना नहीं की है। जहाँ जिस की चर्चा की है वहाँ उस के प्रति श्रद्धा ही प्रगट की है। पर इस के साथ ही एक सच्चे मुसलमान की भाँति मुहम्मद साहेब के बताए हुए मार्ग को सब से सुगम और अतएव उसे सर्वश्रेष्ठ माना है। नीचे लिखी हुई चौपाइयों से यह बात स्पष्ट हो जायगी—

बिधिना के मारग हैं ते ते। सरग नखत तन रोवाँ जेते॥
तिन्ह महँ पंथ कहौं भल गाई। जेहि दूनौ जग छाज बडाई॥
सो बड़ पंथ मुहम्मद केरा। है निरमल कैलास बसेरा॥

जायसी की एक मुख्य विशेषता यही है कि एक सच्चे पहुँचे हुए फकीर या साधक की भाँति ये सदा दैन्य भाव से ही रहे। न तो इन्होंने कबीर आदि की भाँति अपना कोई नया पंथ ही चलाने का विचार किया और न इन्होंने अपनी फकीरी के संबंध में किसी प्रकार की गर्वोक्ति ही की। कबीर का तो यहाँ तक दावा था कि जिस चादर (चोला या शरीर) को सुर, नर, मुनि सब ने ओढ़कर धब्बा लगा दिया उसे मैंने ज्यों की त्यों धर दी। जायसी की भगवद्-भक्ति में अहंकार के लिये स्थान नहीं था। उन्हें हम सदा एक विनयावनत जिज्ञासु के रूप में ही देखते हैं।

इन के एक मात्र आश्रयदाता तत्कालीन अमेठी के महाराज माने जाते हैं। अमेठी दरबार में इन का प्रवेश इस प्रकार हुआ। एक बार इन का कोई शिष्य अमेठी में जाकर इन का रचा हुआ नागमती का बारहमासा (पद्मावत का एक प्रकरण) गा गा कर भीख माँग रहा था। लोगों ने इसे बहुत पसंद किया और इसे राजा साहब के पास ले जाकर उन्हें भी इसे सुनवाया। राजा साहब को भी यह बहुत पसंद आया और खास कर उन्हें यह दोहा बहुत ही अच्छा लगा था—

कवल जो विगसा मानसर, बिनु जल गएउ सुखाइ।
सूखि बेलि पुनि पलुहै, जौ पिउ सींचै आइ॥

इस शिष्य से पूछने पर मालूम हुआ कि यह मलिक मुहम्मद नामक एक संत कवि की रचना है। राजा साहब ने तुरत बड़े आदर और आग्रह से उन्हें बुलावा भेजा और वहाँ आने के बाद जायसी वहीं रहने लगे और वहीं पद्मावत की रचना भी पूरी हुई। कहते हैं कि अमेठी के राजा के कोई संतति नहीं थी और इन्हीं की दुआ से उन का वंश चला। तब से इन की मान प्रतिष्ठा उक्त दरबार में बहुत बढ़ गई और लोग इन्हें कोई असाधारण सिद्ध पुरुष समझकर दूर दूर से इन के दर्शनों को आने लगे। इन के देहावसान होने पर अपने कोट के सामने ही इन की कब्र बनवाई गई जो अद्यावधि वर्तमान है।

जायसी के ग्रंथ

'पद्मावत' और 'अखरावट' नाम के जायसी रचित केवल दो ही ग्रंथ प्राप्त और प्रकाशित हैं। इन में मुख्य पद्मावत है जो कि अवधी का प्रबंध-काव्य है। यह ग्रंथ दोहा चौपाइयों में है और इसी के ढंग पर सौ वर्ष बाद गोस्वामी तुलसीदास ने अपने जगत्प्रसिद्ध ग्रंथ रामचरित-मानस की रचना की थी।

प्रेमगाथा-साहित्य

प्रेमगाथा का प्रादुर्भाव

जायसी से करीब सौ सवा सौ वर्ष पहिले ही हिंदू और मुसलमान जनता सांप्रदायिक विद्वेष को बहुत कुछ किनारे कर एक दूसरे की संस्कृति, उपासना और विचार आदि को सहानुभूतिपूर्वक समझने और परस्पर इन के आदान प्रदान की ओर रुचि करने लगी थी। यद्यपि तत्कालीन मुसलमान शासकों का भाव हिंदू-प्रजा के प्रति उतना सहानुभूतिपूर्ण नहीं था तथापि हिंदू और मुसलमान प्रजा में एक प्रकार का भ्रातृभाव स्थापित हो चला था और वह उत्तरोत्तर दृढ़ से दृढ़तर होता चला जा रहा था। मुसलमान प्रजा यह समझने लगी थी कि यदि हमें हिंदुस्तान में रहना ही है तो हिंदुओं के विश्वास, संस्कृति तथा साहित्य आदि के प्रति छत्तीस होकर रहना असंभव है। शायद यही कारण था कि तत्कालीन कुछ मुसलमान विचारक, फकीर और कवि हिंदुओं के साहित्य और संस्कृति के अध्ययन की ओर

ती झुके ही पर कुछ ने हिंदुओं की तत्कालीन काव्यभाषा मे साहित्य निर्माण का भी श्री गणेश किया। इन लोगो ने इस बात को ठीक ठीक समझ लिया था कि दोनो सप्रदायो के लोगो मे एक दूसरे की सस्कृति और साहित्य के प्रचार और लोकप्रिय बनाने से बढ़कर आपस मे घनिष्ठता और सौहार्द स्थापित करने का दूसरा उपाय नही हो सकता। इसी विचार से प्रेरित हो कर खुसरो, कबीर और जायसी आदि कुछ दूरदर्शी कवियो ने इस दिशा की ओर पैर बढाया और इस मे उन्हे अच्छी सफलता भी मिली।

सब से पहले खुसरो ही इस कार्य मे अग्रसर हुए। खुसरो की कविता का एक बहुत बडा भाग लुप्त हो गया है, तो भी जो प्राप्त है उस से उन की हिंदुओं के धर्मग्रथ, सस्कृति तथा साहित्य आदि के प्रति पूरी श्रद्धा और सहानुभूति स्पष्ट है। कबीर का मार्ग सब से निराला था। इन्हो ने दोनो की बुराइयो का प्रतिवाद करते हुए उन्हे प्रेम के साधारण सूत्र मे बाँधने की चेष्टा की। इन के प्रतिवाद प्रायः इतने तीव्र परतु सच्चे हुआ करते थे कि दोनो ही सप्रदायो के कट्टर और धर्माध लोग इन के घोर विरोधी हो गए। पर इतना होते हुए भी दोनो ही सप्रदायो की अधिकांश जनता पर इन की शिक्षाओ का बडा प्रभाव पडा और दोनो ही जातियो की अधिकाश जनता जो धार्मिक कट्टरपन की बहॅक से बरी थी, कबीर की अनुयायी हुई, इस के बाद कुतुबन और जायसी आदि का समय आता है। कबीर की उद्दड उक्तियो से जो बात नही हुई वह इन की प्रेमगाथाओ से हुई।

प्रेमगाथाओ का लक्ष्य

इन लोगो ने अपनी प्रेमगाथाओ द्वारा यह सिद्ध कर दिखाया कि सभी मनुष्यो के हृदय मे, चाहे वह हिंदू हो या मुसलमान या कोई हो प्रेमभावना का वही बीज समान रूप से अकुरित होता है। इन लोगो ने आख्यानक-काव्य द्वारा यह दिखलाया कि किसी के रूप, गुण से आकर्षित हो कर उस मे एक होने की इच्छा करना, इस कार्य की सिद्धि के लिए नाना प्रकार के असह्य कष्ट झेलना, अत मे उस की प्राप्ति से सुख, फिर इस के वियोग के दुख और प्रेम की पीर, आदि हृदय के विविध भाव और उस की तरगे, क्या हिंदू क्या मुसलमान सभी के हृदय मे समान रूप से उठती है। इन लोगो ने मुसलमान होकर हिंदू घरानो मे प्रचलित प्राचीन प्रेम-कहानियो को उन्ही की भाषा मे कहा, पर अपने ढग से, और इस प्रकार यह सिद्ध कर दिया कि जहा प्रेम है वहा जाति, सप्रदाय या मतमतातर का भेद कोई अर्थ नही रखता। इस प्रकार की प्रेमगाथा लिखने वालो मे सब से पहले कवि जिन की रचना प्राप्य है, शेख कुतुबन है। ये चिश्तीवश के शेख बुरहान के शिष्य थे और इन की रचित 'मृगावती' (निर्माण काल ९०९ हिजरी अर्थात् १५५८ वि०) इस प्रकार का पहला आख्यानक काव्य है। इस मे अवधी बोली मे दोहा चौपाइयो मे चद्रनगर के राजा गणपतिदेव के राजकुमार और कचन नगर के राजा रूपमुरार की राजकन्या मृगावती की प्रेम कहानी वर्णित है।

हम ऊपर कह चुके है कि इन लोगों ने कही तो इन्होने हिदुओ की कहानियां पर उन्हे अपने ढग से कही। ढंग से यहां मेरा मतलब है इन की रचनाओ के ढांचे और वर्णन शैली से। भारतीय साहित्य मे प्रबधकाव्यो की जो सर्गबद्ध प्रथा पुराकाल से चली आ रही थी उस से इन्होने काम नही लिया। इन्होने फारसी की मसनवियो को आदर्श बनाया। इन मे विस्तार के अनुसार कथा सर्गो या अध्यात्रो मे विभक्त नही होती। एक सिरे से इन का क्रम अखंड रूप से बराबर चला जाता है, केवल कही कही घटनाओ या प्रसंगो का उल्लेख शीर्षको के रूप मे दे दिया जाता है, जैसे—'सात समुद्र खड' राजा गढ़ छेका खड' या 'राजा बादशाह युद्ध खड', इत्यादि। मसनवियो के रचना के सबध मे कुछ विशेष साहित्यिक परपराओ के पालन का प्रतिबध नही होता। इन मे केवल इतना ही आवश्यक होता है कि सारी रचना केवल एक ही छद मे हो, पर कथावस्तु के सबध मे एक परपरा का पालन अवश्य करना पडता था। आरभ मे परमेश्वर, नबी और तत्कालीन बादशाह की स्तुति मसनवियो मे अनिवार्य समझी जाती थी। इस परपरा का पालन जायसी और कुतुबन आदि सभी प्रेमगाथाकारो ने नियम से किया है। छद भी इन लोगो ने आद्योपांत दोहा चौपाई ही (सात सात या कही कही नौ नौ चौपाइयो के बाद एक एक दोहा) रक्खा है। चौपाइयो की विषम सख्या देखकर यह धारणा होती है कि ये लोग दो ही चरणो से चौपाइ पूरी मानते रहे होगे, पर जैसा कि 'चौपाई' शब्द ही से स्पष्ट है, चार चरणो मे एक चौपाई पूरी होती है। तुलसी दास जी ने ऐसा ही किया है।

गाथाओं की विशेषताए

सब से मार्के की बात इन प्रेमगाथाओ के सबध मे यह है कि ये सभी अवधी मे और दोहा चौपाई छद मे ही लिखी गई हैं। अब तक प्राय: दस प्रेमगाथाओ का पता लग चुका है पर उन मे के प्रकाशित सस्करण केवल तीन ही हमारे देखने मे आए है। पर सभो की भाषा, शैली तथा विषय निर्वाह आदि के सबध मे आश्चर्य-जनक समानता पाई गई है। यहां तक कि लेखको के भिन्न भिन्न नाम यदि न बताए जायॅ तो पाठक यही समझेगा कि ये सब एक ही लेखक की लिखी हुई हैं। विषय प्राय: सभों मे कुछ कुछ इसी ढग का होता है — कोई राजकुमार किसी राजकुमारी के रूप गुण की प्रशसा सुन या प्रत्यक्ष या स्वप्न या चित्र मे देख कर आकर्षित होता है। उधर भी यही हालत होती है। अत मे वह कुछ विश्वस्त साथियो को साथ ले कर उस की खोज मे चल पड़ता है। प्राय: उसे कोई मार्गप्रदर्शक भी मिल जाता है। यह अधिकतर राजकुमारी का भेजा हुआ कोई दूत था दूत का काम करने वाला कोई पक्षी या तोता हुआ करता है। राह मे उसे बड़ी विघ्न-बाधाओ का सामना करना पड़ता है। कई बार उसे फलागम होते होते कोई ऐसा विघ्न या कोई ऐसी भूल उस से हो जाती है जिस से उस की

प्रेमगाथाओं का रूप और विषय

उद्देश्यसिद्धि फिर एक अनिश्चित काल तक के लिए रुक जाती है। कारागार और प्राण-संकट तक की नौबत आती है। रक्त-पात और युद्धवर्णन भी इन आख्यायिकाओं का एक आवश्यक अंग होता है। इन के संबंध में यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि इन कहानियों का आधार सदा ऐतिहासिक होता है और बहुत सी घटनाएं भी ऐतिहासिक होती हैं, यद्यपि कवि उस में अपनी आवश्यकतानुसार हेर फेर किए रहता है। पर इन इतिहासमूलक कथानकों के अतिरिक्त कवि अपनी इच्छा या आवश्यकता के अनुसार एक या अधिक काल्पनिक कथानक भी मिला देता है। यह प्रायः चरितनायक के उत्कर्ष को बढ़ाने और कथा में अलौकिक या आध्यात्मिक पक्ष को स्पष्ट करने के उद्देश्य से होता है।

प्रेमगाथाओं में रहस्यवाद

इन प्रेमगाथाओं का सब से महत्त्वपूर्ण वह अंश होता है जिस का संबंध अध्यात्म या रहस्यवाद से होता है। लौकिक कथा के द्वारा कवि जो परोक्ष की ओर संकेत करता है वही शायद रचना का प्रधान उद्देश्य रहता था। कथा के अंत में कवि स्पष्ट रूप से कह देता है कि यह सारी कथा अन्योक्ति रूप में कही गई है और उसी रूप में कथा को समझने के लिए वह पाठक से अनुरोध करता है। उदाहरणार्थ पद्मावत में नायक रतनसेन को साधक समझना चाहिए। पद्मावती को प्राप्त करने की इच्छा से जो उस के हृदय में प्रेम की पीर उठती है उसे ईश्वरोन्मुख प्रेम या लगन समझना चाहिए। पद्मावती तक पहुँचने की राह बताने वाले 'सुआ' को गुरु, राघव दूत को शैतान, रानी नागमती को सांसारिक बंधन, तथा सुलतान अलाउद्दीन को माया का प्रतिनिधि या शैतान बताया गया है। निम्नलिखित चौपाइयां देखिए—

मैं एहि अरथ पंडितन्ह बूझा। कहा कि हम्ह किछु और न सूझा॥
चौदह भुवन जो तर उपराहीं। ते सब मानुप के घट माहीं॥
तन चितउर मन राजा कीन्हा। हिय सिंघल बुधि पदमिनि चीन्हा॥
गुरू सुआ जेइ पंथ देखावा। बिनु गुरु जगत को निरगुन पावा?॥
नागमती यह दुनिया-धंधा। बाँचा सोइ न एहि चित बंधा॥
राघव दूत सोइ सैतानू। माया अलाउद्दी सुलतानू॥
प्रेम-कथा एहि भाँति बिचारहु। बूझि लेहु जौं बूझै पारहु॥

इस प्रकार अंतिम चौपाई में कवि एक प्रकार से चुनौती सी दे देता है कि यदि उक्त रीति से कथा को समझ सको तो समझ लो।

पद्मावत की कथा

अब यहां पर पद्मावत की कथा भी संक्षेप से दे देना आवश्यक है। सिंहल द्वीप के राजा गंधर्वसेन की पुत्री पद्मावती रूप-गुण में अद्वितीय थी, यहां तक कि उस के योग्य वर कहीं नहीं मिलता था। उस के पास हिरामन नाम का एक तोता था जो कि बड़ा विद्वान् और वाक्पटु था। पद्मावती के वर न मिलने के संबंध में वह एक दिन

अपने विचार प्रकट कर रहा था पर सयोग से राजा ने उस के विचारो को सुन लिया जिस से उसे बड़ा क्रोध आया और उस ने तोते को अपने यहां से निकलवा दिया। इधर उधर कुछ दिनो तक भटकने के बाद हिरामन रतनसेन के यहां पहुँचा और उस ने उसे अपने यहां रख भी लिया। एक दिन जब वह कही शिकार खेलने गया तब उस की रानी नागमती ने हिरामन से पूछना आरभ किया कि 'हिरामन तू तो दुनिया मे बहुत घूमा फिरा है, बता तो तूने कही मेरे समान कोई और भी सुंदरी देखी है?' हिरामन ने सिहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती की चर्चा करते हुए कहा कि 'उस मे और तुम मे दिन और अँधेरी रात का अतर है।' यह सुन कर रानी ने बड़े क्रोध मे आकर उसे मरवा डालने की आज्ञा दे दी। पर चेरियो ने राजा के भय से उसे मारा नही, केवल एक जगह छिपा कर रख दिया। शिकार से लौटने पर अपने प्यारे तोते को न पाकर रतनसेन का मिजाज बहुत बिगडा, यहां तक कि अत मे उस के गुस्से से डर कर बांदियो ने हिरामन को उस के सामने लाकर रख दिया। पूछने पर उस ने सब वृत्तांत कह सुनाया और प्रसगवश पद्मावती के सौदर्य का भी वर्णन किया। राजा के हृदय पर उस की सुनी हुई सुदरता का ही इतना गहरा प्रभाव पडा कि वह मूर्छित होकर गिर ही पडा और होश मे आने पर योगीवेश मे सिहलगढ की ओर चल पडा और सोलह हजार उस के साथी राजकुमार भी योगी का बाना धारण कर उस के साथ हो लिये। इस योगियो की पलटन का नेता और मार्गप्रदर्शक वही हिरामन तोता था।

अंत मे अनेक विघ्न-बाधाए झेलते हुए दुर्गम समुद्र पार कर यह विचित्र दल सिंघल द्वीप पहुचा और रतनसेन ने एक मदिर मे, जहा कभी कभी पद्मावती पूजन करने आया करती थी, पड़ाव डाला और वहीं पद्मावती की मानसिक पूजा मे लीन हो गया। कुछ समय के उपरात श्री पचमी के पर्व के दिन पद्मावती वहा पूजन के निमित्त आई पर रतनसेन ऐन मौके पर चूक गया। वह उसे देखते ही मूर्छित हो गया। तोते ने महल मे जाकर उस की करुण कहानी पद्मावती को कह सुनाई। पद्मावती ने कहला भेजा कि वक्त पर तो तुम चूक गए अब इस दुर्गम सिहलगढ़ तक चढ़ो तभी मुझे देख सकते हो। राजा अपने साथी जोगियो सहित किले मे घुसा पर गढ़ मे पहुँचते पहुँचते सवेरा हो गया और वह वहीं पकडा गया। राजा के सामने उस का विचार हुआ और उसे सूली पर चढ़ाने की आज्ञा दी गई। पर यह हाल देख कर उस के साथी योगियो ने गढ़ घेर लिया और उन की सहायता के लिये शिव, हनुमान आदि सारे देवता भी उन के दल मे मिल गए। फल यह हुआ कि गधर्वसेन की सारी सेना हार गई। उस ने जोगियो के बीच जब साक्षात शिव को लड़ते हुए तो देखा तो वह दौड़ कर उन के पैरो पर गिर पड़ा और बोला, "महाराज पद्मावती आप की है जिसे चाहिए उसे दीजिए।" अब रतनसेन के मार्ग मे कोई रुकावट न थी। उस का विवाह पद्मावती से हो गया और वह उसे लेकर चित्तौर गढ़ लौट भी आया।

रतनसेन के दरबार मे राघवचेतन नामक एक पडित रहता था। वह बड़ा तांत्रिक था और उसे यक्षिणी सिद्ध थी। उस ने अपनी माया से दरबार के अन्य पडितों को बडा नीचा दिखाया। राजा को इस पर बडा क्रोध आया और उसने उसे देश निकाले का दंड दे दिया। राघव इस अपमान का बदला लेने की नीयत से दिल्ली के तत्कालीन बादशाह अलाउद्दीन के पास पहुँचा और उस से पद्मावती के रूप की बडी प्रशसा की। अलाउद्दीन ने उसे प्राप्त करने के अनेक उपाय किए, रतनसेन से कई बार युद्ध हुआ पर प्रत्येक बार उसे नीचा देखना पडा। अंत मे सधि हुई और धोखे से उसने रतनसेन को पकड लिया और कहवा दिया कि जब पद्मावती मेरे पास आएगी तभी रतनसेन छूट सकेगे। इस पर रानी ने कहलवा दिया कि मै सात सौ बादियो के साथ तुम्हारे पास आ रही हूँ और एक बार राजा से अतिम साक्षात् कर उन्हे चित्तौर रवाना कर तुम से आ मिलूँगी। इस मे सुलतान ने कोई आपत्ति नही की। पर इन सात सौ पालकियो क अदर, और उन के ढोने वाले कहार सब वीर राजपूत योद्धा थे। सुलतान के खीमो मे पहुँच कर इधर तो रतनसेन को छुडा कर एक घोड़े पर बैठा कर वीर बादल के साथ चित्तौर रवाना कर दिया गया और उधर गोरा इन राजपूत वीरो के साथ यवनो को रोके रहा। चित्तौर पहुचने पर पद्मावती ने कुंभलनेर के राजा देवपाल द्वारा अपने पास दूती भेजी जाने की बात कही। इस पर राजा ने कुभलनेर जा घेरा और दोनो एक दूसरे से लडते हुये वीर गति को प्राप्त हुए। इधर जब नागमती और पद्मावती के पास यह समाचार पहुँचा तो दोनो सहर्ष अपने पति के शव के साथ सती हो गई। बाद मे जब अलाउद्दीन गढ मे पहुँचा तो उसे जलती हुई चिताओ को छोड कर और कुछ नही दिखाई पडा।

कथा में कल्पना और इतिहास का सम्मिश्रण

इस कहानी का पूर्वार्द्ध तो प्राय. पूरा कल्पित है पर उत्तरार्द्ध ऐतिहासिक घटनाओ के आधार पर है। इस के नायक नायिका दोनो ही इतिहास-प्रसिद्ध पात्र है और जायसी यद्यपि मुख्य मुख्य स्थलो पर ऐतिहासिक आधार का अनुसरण करते हुये चले हैं तथापि अपनी अपूर्व कल्पना और अनुभूति के साहाय्य मे वे पूरी कथा को एक ऐसा रूप देने में सफल हुये है जो जनता के हृदय मे परपरा से अवस्थित था और यही कारण है कि यह कथा इतनी लोकप्रिय हुई।

जायसी की कविता

भाषा

जायसी की भाषा ठेठ अवधी है। अवधी मे इतनी बडी और व्यापक प्रबध-रचना सब से पहले इन्ही की मिलती है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरित मानस की रचना के समय इन की पद्मावती का बहुत सी बातो मे आदर्श बनाया होगा। कम से कम मानस का वाह्य रूप और विशेषत: उस की भाषा तो पद्मावती से बहुत कुछ मिलती जुलती

है, अंतर केवल इतना ही है कि मानस मे हम अवधी का परिमार्जित, सुसस्कृत और सर्वथा साहित्यिक रूप देखते है पर पद्मावत मे यह अपने ठेठ रूप मे है और प्रायः ग्रामीणता लिये हुये है। जायसी उतने काव्यकला-कुशल तो थे नही पर साथ ही यह भी मानना पडेगा कि जिस भाषा का प्रयोग उन्हो ने किया है उस पर उन्हे पूरा अधिकार था। तुलसी की भाषा जो इतनी सुसज्जित या साहित्यिक कही जाती है उस का कारण है उन का सस्कृत का गभीर पांडित्य। मानस की चौपाइयो का माधुर्य, उन का ओज तथा उन की साहित्यिकता बहुत कुछ उन मे प्रयुक्त संस्कृत की कोमल-कान्त पदावली पर निर्भर करती है। जायसी मे यह कमी है, या यो कहिये कि यही उन की खूबी है। अवधी का स्वाभाविक माधुर्य जायसी की ही भाषा मे प्रस्फुटित हो पाया है। यह कहना कठिन है कि तुलसी ने अपने चुने हुये संस्कृत के तत्सम शब्दो या वाक्यांशो के आभूषण भार से उस की शोभा को सचमुच और प्रदीप्त करके दिखाया है या उस की नैसर्गिक शोभा को ढाँक दिया है।

रस और अलकार

यो तो जायसी ने अपने काव्य मे प्रायः सभी रसो का समावेश किया है पर उन की स्वाभाविक रुचि विप्रलंभ-शृगार की ओर जान पडती है। सभोग-शृगार, वीर, और करुणा मे भी इन्हे अच्छी सफलता मिली है। यद्यपि जायसी का रस-वर्णन भारतीय कविपरंपरा-प्रणाली के अनुसार ही हुआ है, तथापि कुछ बातो मे इन का ढग सब से निराला है। उर्दू कवियो के वियोग-वर्णन मे प्राय जो एक प्रकार की वीभत्सता पाई जाती है उस की प्रचुरता पद्मावत मे भी है, और शृगार के सभोग पक्ष के सबध मे यह भी कहा जा सकता है कि वह बहुत परिष्कृत अथवा कोमल नही है। उस मे मिठास या प्रेमनिर्भरता की मात्रा इतनी अधिक हो गई है कि कुछ लोगो को उस मे ग्रामीणता या अश्लीलता की बू भी मिल सकती है। वीर-रस का वर्णन इन का सर्वत्र शृंगार की आड लिये हुए है और उसी के आधार पर स्थित जान पडता है। वीर के साथ ही उचित अवसरो पर रौद्र, भयानक और वीभत्स भी अपनी अपनी छटा दिखाते है। 'राजा-बादशाह युद्ध खंड' मे वीर, और 'लक्ष्मी-समुद्र खड' मे भयानक रस का बडा सुदर समावेश हुआ है। परंतु एक बार फिर कहना पड़ेगा कि यह सभी ग्रथ के स्थायी रस-शृगार के आधार पर स्थित हैं। ग्रथ के स्थायीरस पर विचार करते समय एक बात और स्मरण रखनी पड़ेगी। यह सारा ग्रथ एक प्रकार से अन्योक्ति के रूप मे है। कवि ने अत मे स्पष्ट कर दिया है कि इस मे वर्णित नायक-नायिका के प्रेम को साधारण लौकिक प्रेम न समझ कर साधक का ईश्वरोन्मुख प्रेम समझना चाहिए। इस दृष्टि से ग्रंथ का स्थायीरस शात मानना पड़ेगा।

अलकारो के संबध मे भी जायसी ने अधिकतर कवि-कुलागत पद्धति का ही अनुसरण किया है। इन के अलंकारो मे सादृश्यमूलक अलकारो का ही एक

प्रकार से साम्राज्य है। यद्यपि अलकारो के प्रयोग मे इन्होने अधिकतर भारतीय काव्य-पद्धति को ही आदर्श माना है तथा स्थान स्थान पर फारसी कवित्व की भी झलक स्पष्ट है, विशेष कर करुण रस और विरह वर्णन के अवसरो पर। अलकारो का समावेश दो उद्देश्यो से होता है। प्रस्तुत विषय को स्पष्ट करने और भाव को प्रदीप्त करने के लिये। और भी उद्देश्य हो सकते हैं पर मुख्य यही दोनो होते है। इस के साथ ही भावुक कवि अलकारों के प्रयोग के समय इस बात का बडा ध्यान रखता है कि कही उस के द्वारा प्रयुक्त अलकार से रस के परिपाक मे बाधा न पडे। प्राय: लोग वर्णन को स्पष्ट करने के लिये ऐसी उपमा या उत्प्रेक्षा आदि रख देते हैं जिस से एक प्रकार से वर्णन तो स्पष्ट हो जाता है पर साथ ही रंग में भग भी हो जाता है। जायसी भी स्थान स्थान पर इस दोष के भागी हुए है। विरह-वर्णन के समय शृंगार को वीभत्स के आधारभूत करना इन के लिये साधारण बात है। नख सिख वर्णन के समय इन की उपमा और उत्प्रेक्षाए, विशेषत: हेतूत्प्रेक्षाएं, भिन्न भिन्न वर्णनीय अगो की विशेषताओ का तो बहुत स्पष्ट परिचय देती है पर साथ ही हँसी भी आती है। शृगार रस के लिये अलकार भी वैसे ही होने चाहिए जिन से सौंदर्य भावना मे व्याघात न पड़े। पर जायसी की उडान तो कही कही उपहासास्पद सी जान पड़ने लगती है।

प्रबध-कुशलता

पद्मावत एक वृहत् प्रबध-काव्य है। इस मे कवि को थोडे से ऐतिहासिक आधार पर एक बहुत बडी इमारत खड़ी करनी पडी है। किसी भी इमारत का सर्वांगसुदर बनना असभव है और फिर जायसी के सामने ऐसे आदर्श भी नही थे जिन से वे कोई विशेष लाभ उठा सकते। मधुमालती, मुग्धावती, मृगावती, तथा प्रेमावती, आदि कुछ प्रेमगाथाओ का उल्लेख पद्मावत मे मिलता है और इस से यह स्पष्ट है कि जायसी के पहले कुछ कवि इस प्रकार की प्रेमगाथा-काव्यों की रचना कर चुके थे पर इस से यह निष्कर्ष निकालना कि इन्ही को आदर्श मान कर जायसी ने अपने ग्रथ की रचना की होगी, भूल है। पहले तो उक्त गाथाओं मे से मुग्धावती और प्रेमावती का अभी तक पता ही नही लगा। मधुमालती और मृगावती की खडित प्रतिया नागरी प्रचारिणी सभा को देखने मे मिली है। इन का जो भाग देखने मे आया है उन से यह किसी प्रकार सिद्ध नहीं होता कि जायसी ने अपनी प्रबन्धकल्पना मे इन को आदर्श बनाया होगा। सारांश यह कि इतने विस्तृत और व्यापक रूप से एक प्रबधकाव्य की रचना मे जायसी का प्रयास बहुत कुछ मौलिक था। अब यहां पर देखना यह है कि इन को इस काम मे कहां तक सफलता मिली है। किसी भी प्रबधकाव्य की सफलता की विवेचना के पहले यह देखना चाहिए कि कवि का दृष्टिकोण क्या रहा है। क्या अपनी कथा के परिणाम द्वारा कवि किसी विशेष आदर्श को स्थापित करना चाहता है अथवा उस का उद्देश्य कथा के रूप मे कोई

सुंदर वस्तु पाठको के सामने उपस्थित करना है। यह तो हम तुरत कह सकते हैं कि इस रचना मे किसी आदर्श विशेष को सामने रख कर उसे स्थापित करने के उद्देश्य से पात्रो के स्वाभाविक विकास अथवा घटनाओं के नैसर्गिक प्रवाह को किसी खास दिशा की ओर नही मोडा गया है, फिर जायसी और भारतीय काव्य-परम्परा के प्राचीन आदर्श — 'अंत भले का भला और बुरे का बुरा,' — के भी क़ायल नही थे। इस के प्रमाण मे इतना ही कहना यथेष्ट होगा कि इस कथा का अंत बड़ा करुण और अत्यत दुखांत है, सब आपत्तियो के टलने के बाद नायक नायिका आदि सभी मुख्य पात्र मृत्युमुख मे पतित होते हैं और सारे फसाद की जड उस राघव चेतन, या अलाउद्दीन ही का, कोई परिणाम-दुखद या सुखद-दिखलाना कवि ने आवश्यक नही समझा। और फिर कथा के इतने करुण अत को कविने उपसहार मे एक विचित्र रूप से शांत रस मे परिणत कर दिया है। पर्यवसान के समय कवि इस चातुरी से अपना दृष्टिकोण दार्शनिक बना लेता है जिस से यह स्पष्ट भासित होने लगता है कि मनुष्य के वास्तविक जीवन का वास्तविक अंत दुःखमय नही वल्कि सांसारिक माया-मोह से उदासीन और पूर्ण रूप से शांत होना चाहिए। इस धारणा का कारण यही है कि जहाँ कवि ने कथा के बीच बीच मे नागमती और पद्मावती को प्रिय-वियोग मे अत्यत खिन्न और विषाद पूर्ण दिखलाया है वहाँ प्रिय के निधन अवसर पर भी विषादपूर्ण करुण-क्रंदन अपेक्षित था। पर ऐसा नही हुआ। हम देखते है कि रतनसेन के मरने पर दोनो महिषियो का विलाप मे रत न हो शोक से उदासीन होकर एक शातिमय आनद के साथ मृतपति के साथ सती हो जाती हैं। यही हाल वीरगति को प्राप्त अन्य पुरुषो की स्त्रियो का भी दिखलाया गया है। सब कुछ शेष हो जाने पर अलाउद्दीन जब बडी बड़ी उम्मीदे बाँधता हुआ गढ़ मे घुसा तो इस के सामने एक ऐसा दृश्य आया जिस की उसे स्वप्न मे भी आशा न थी। वह दृश्य इस लोक का नही था। उस के हृदय पर भी इस दृश्य का गहरा प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सका। सतियो के चिताओं की एक मुट्ठी भस्म उसने उठाई और दुनियाँ का इसी (भस्म) की भाँति झूठी समझा —

"छार उठाइ लीन्ह एक मूठी। दीन्ह उठाइ पिरिथिवी झूँठी"

सिंहलद्वीप वर्णन खंड

सिंहलद्वीप-वर्णन खंड

सिहलदीप कथा अब गावौ । औ सो पदमिनि बरनि सुनावौ ॥
निरमल दरपन भाति बिसेखा । जो जेहि रूप सो तैसइ देखा ॥
धनि सो दीप जहँ दीपक बारी । औ पदमिनि जो दई सवारी ॥
सात दीप बरनै सब लोगू । एकौ दीप न ओहि सरि जोगू ॥
दिया दीप नहि तस उजियारा । सरनदीप सरि होइ न पारा ॥
जँबू दीप कहौ तस नाहीं । लकदीप सरि पूज न छाहीं ॥
दीप गभस्थल आरन परा । दीप महुस्थल मानुस-हरा ॥

सब ससार परथमै, आए सातौ दीप ।
एक दीप नहि उत्तिम, सिहलदीप समीप ॥

गध्रबसेन सुगध नरेसू । सो राजा, वह ताकर देसू ॥
लका सुना जो रावन राजू । तेहु चाहि बड ताकर साजू ॥
छप्पन कोटि कटक दल साजा । सबै छत्रपति औ गढ-राजा ॥
सोरह सहस घोड घोडसारा । स्यामकरन अरु बाँक तुखारा ॥
सात सहस हस्ती सिघली । जनु कैलास एरावत बली ॥
अस्वपतिक-सिरमौर कहावै । गजपतीक आँकुस-गज नावै ॥
नरपतीक कहँ और नरिदू । भूपतीक जग दूसर इदू ॥

ऐस चक्कवै राजा चहूँ खड भय होइ ।
सबै आइ सिर नावहि सरबरि करै न कोइ ॥

जबहि दीप नियरावा जाई । जनु कैलास नियर भा आई ॥
घन अमराउ लाग चहुँ पासा । उठा भूमि हुत लागि अकासा ॥
तरिवर सबै मलयगिरि लाई । भइ जग छाँह रैनि होइ आई ॥
मलय समीर सोहावन छाहाँ । जेठ जाड लागै तेहि माहाँ ॥
ओही छाँह रैनि होइ आवै । हरियर सबै अकास देखावै ॥
पथिक जो पहुँचै सहि कै घामू । दुख बिसरै, सुख होइ बिसरामू ॥
जेइ वह पाई छाँह अनूपा । फिरि नहि आइ सहै यह धूपा ॥

अस अमराउ सघन घन बरनि न पारौ अत ।
फूलै फरै छवै ऋतु, जानहु सदा बसत ॥

फरे आँब अति सघन सोहाए । औ जस फरे अधिक सिर नाए ॥
कटहर डार पीड सन पाके । बडहर, सो अनूप अति ताके ॥
खिरनी पाकि खाँड असि मीठी । जामुन पाकि भवर असि डीठी ॥
नरियर फरे, फरी फरहरी । फुरै जानु इद्रासन पुरी ॥

पुनि महुवा चुअ अधिक मिठासू। मधु जस मीठ, पुहुप जस बासू॥
और खजहजा अनबन नाऊँ। देखा सब राउन अमराऊँ॥
लाग सबै जस अमृत साखा। रहै लोभाइ सोइ जो चाखा॥
लवँग सुपारी जायफर, सब फर फरे अपूर।
आस पास घन इमिली, औ घन तार खजूर।
बसहिं पंखि बोलहिं बहु भाखा। करहिं हुलास देखि कै साखा॥
भोर होत बोलहिं चुहचूही। बोलहि पाँडुक "एकै तूही"॥
सारौं सुआ जो रहचह करहीं। कुरहिं परेवा औ करबरहीं॥
"पीव पीव" कर लाग पपीहा। "तुही तुही" कर गडुरी जीहा॥
"कुहू कुहू" करि कोइलि राखा। औ भिंगराज बोल बहु भाखा॥
"दही दही" करि महरि पुकारा। हारिल बिनवै आपन हारा॥
कुहकहिं मोर सोहावन लागा। होइ कुराहर बोलहिं कागा॥
जावत पखी जगत के, भरि बैठे अमराउँ।
आपनि आपनि भाषा, लेहि दई कर नाउँ॥
पैग पैग पर कुवाँ बावरी। साजी बैठक और पाँवरी॥
और कुड बहु ठावहि ठाऊँ। सब तीरथ औ तिन्ह के नाऊँ॥
मठ मडप चहुँ पास सँवारे। तपा जपा सब आसन मारे॥
कोइ सु ऋषीसुर, कोइ सन्यासी। कोइ रामजती बिस्वासी॥
कोई ब्रम्हाचर पथ लागे। कोइ सो दिगबर बिचरहिं नाँगे॥
कोई सु महेसुर जगम जती। कोइ एक परखै देवी सती॥
कोइ सुरसती कोई जोगी। कोई निरास पथ बैठ बियोगी॥
सेवरा, खेवरा, बानपर, सिध, साधक, अवधूत।
आसन मारे बैठ सब, जारि आतमा भूत॥
मानसरोदक बरनौ काहा। भरा समुद अस अति अवगाहा॥
पानि मोति अस निरमल तासू। अमृत आनि कपूर सुबासू॥
लक दीप कै सिला अनाई। बाँधा सरवर घाट बनाई॥
खँड खँड सीढी भई गरेरी। उतरहिं चढहिं लोग चहुँ फिरी॥
फूला कँवल रहा होइ राता। सहस सहस पखुरिन कर छाता॥
उलथहिं सीप, मोति उतिराही। चुगहि हस औ केलि कराहीं॥
खनि पतार पानी तहँ काढा। छीरसमुद्र निकसा हुत बाढा॥
ऊपर पाल चहूँ दिसि, अमृत-फल सब रूख।
देखि रूप सरवर कै, गै पियास औ भूख॥
पानि भरै आवहिं पनिहारी। रूप सुरूप पदमिनी नारी॥
पदुमगध तिन्ह अग बसाहीं। भँवर लागि तिन्ह सग फिराहीं॥

लंक - सिंघिनी, सारँगनैनी। हंसगामिनी कोकिलबैनी ॥
आवहिं झुंड सो पाँतिहि पाँती। गवन सोहाइ सु भाँतिहि भाँती ॥
कनक कलस मुखचंद दिपाहीं। रहस केलि सन आवहि जाहीं ॥
जा सहुँ वै हेरै चख नारी। बाँक नैन जनु हनहिं कटारी ॥
केस मेघावर सिर ता पाईं। चमकहिं दसन बीजु कै नाईं ॥

माथे कनक गागरी आवहिं रूप अनूप।
जेहि के असि पनहारी सो रानी केहि रूप ॥

ताल तलाव बरनि नहिं जाहीं। सूझै वार पार किछु नाहीं ॥
फूले कुमुद सेत उजियारे। मानहुँ उए गगन महँ तारे ॥
उतरहिं मेघ चढहि लेइ पानी। चमकहिं मच्छ बीजु कै बानी ॥
पौरंहि पंख सुसंगहि संगा। सेत पीत राते बहु रंगा ॥
चकई चकवा केलि कराहीं। निसिक बिछोह,दिनहि मिलि जाहीं ॥
कुररहिं सारस करहि हुलासा। जीवन मरन सो एकहिं पासा ॥
बोलहिं सोन ढेक बगलेदी। रही अबोल मीन जल-भेदी ॥

नग अमोल तेहि तालहि, दिनहिं बरहि जस दीप।
जो मरजिया होइ तहँ, सो पावै वह सीप ॥

आस पास बहु अमृत बारी। फरी अपूर, होइ रखवारी ॥
नारंग नींबू सुरंग जँभीरा। औ बदाम बहु भेद अँजीरा ॥
गलगल तुरंज सदाफर फरे। नारंग अति राते रस भरे ॥
किसमिस सेव फरे नौ पाता। दारिउँ दाख देखि मन राता ॥
लाग सुहाई हरफारयौरी। उनै रही केरा कै घौरी ॥
फरे तूत कमरख औ न्योजी। रायकरौंदा बेर चिरौंजी ॥
संगतरा व छुहारा दीठे। और खजहजा खाटे मीठे ॥

पानि देहिं खंडवानी कुवहिं खाँड़ बहु मेलि।
लागी घरी रहट कै सींचहिं अमृतबेलि ॥

पुनि फुलवारि लागि चहुँ पासा। बिरिछ बेधि चन्दन भइ बासा ॥
बहुत फूल फूलीं घनबेली। केवडा चम्पा कुंद चमेली ॥
सुरंग गुलाल कदम औ कूजा। सुगँध बकौरी गंध्रब पूजा ॥
जाही जूही बगुचन लावा। पुहुप सुदरसन लाग सुहावा ॥
नागेसर सदबरग नेवारीं। औ सिंगारहार फुलवारीं ॥
सोनजरद फूली सेवती। रूपमंजरी और मालती ॥
मौलसिरी बेइलि औ करना। सबै फूल फूले बहु बरना ॥

तेहि सिर फूल चढहिं वै जेहि माथे मनि भाग।
आछहिं सदा सुगन्ध बहु जनु बसंत औ फाग ॥

सिंहलनगर देखु पुनि बसा। धनि राजा अस जे कै दसा॥
ऊँची पौरी ऊच अवासा। जनु कैलास इन्द्र कर बासा॥
राव रंक सब घर घर सुखी। जो दीखै सो हँसता-मुखी॥
रचि रचि साजे चन्दन चौरा। पोते अगर मेद औ गौरा॥
सब चौपारहि चन्दन खँभा। ओठँधि सभापति बैठे सभा॥
मनहुँ सभा देवतन्ह कर जुरी। परी दीठि इंद्रासन पुरी॥
सबै गुनी औ पंडित ज्ञाता। समकिरित सब के मुख बाता॥

असकै मंदिर सँवारै जनु सिवलोक अनूप।
घर घर नारि पदमिनी मोहहि दरसन रूप॥

पुनि देखी सिंहल कै हाटा। नवो निद्धि लछिमी सब बाटा॥
कनक हाट सब कुहकुह लीपी। बैठ महाजन सिंघलदीपी॥
रचहि हथौडा रूपन ढारी। चित्र कटाव अनेक सँवारी॥
सोन रूप भल भयउ पसारा। धवल सिरी पोतहि घर बारा॥
रतन पदारथ मानिक मोती। हीरा लाल सो अनबन जोती॥
औ कपूर बेना कस्तूरी। चंदन अगर रहा भरपूरी॥
जिन्ह एहि हाट न लीन्ह बेसाहा। ता कहँ आन हाट कित लाहा॥

कोई करै बेसाहनी काहू केर बिकाइ।
कोई चलै लाभ सन कोई मूर गँवाइ॥

पुनि सिंगारहाट भल देसा। किए सिंगार बैठी तहँ बेसा॥
मुख तमोल, तन चीर कुसुंभी। कानन कनक जडाऊ खुंभी॥
हाथ बीन सुनि मिरिग भुलाहीं। नर मोहहि सुनि, पैग न जाहीं॥
भौंह धनुष तिन्ह नैन अहेरी। मारहि बान सान सौं फेरी॥
अलक कपोल डोल हँसि देहीं। लाइ कटाछ मारि जिउ लेहीं॥
कुछ कंचुक जानौ जुग सारी। अंचल देहि सुभावहि ढारी॥
केत खिलार हारि तेहि पासा। हाथ झारि उठि चलहि निरासा॥

चेटक लाइ हरहि मन जब लहि होइ गथ फेंट।
साठनाठ उठि भए बटाऊ ना पहिचान न भेंट॥

लेइ के फूल बैठि फुलहारी। पान अपूरब धरे सँवारी॥
सोंधा सबै बैठ लै गाँधी। फूल कपूर खिरौरी बाँधी॥
कतहूँ पंडित पढहि पुरानू। धरम पंथ कर करहि बखानू॥
कतहूँ कथा कहै किछु कोई। कतहूँ नाच-कूद भल होई॥
कतहुँ चिरहँटा पखी लावा। कतहुँ पखंडी काठ नचावा॥
कतहूँ नाद सबद होइ भला। कतहूँ नाटक चेटक कला॥
कतहुँ काहु ठगविद्या लाई। कतहुँ लेहि मानुष बौराई॥

चरपट चोर गँठिछोरा मिलैं रहहिं ओहि नाच ॥
जो ओहि हाट सजग भा गथ ताकर पै बाँच ॥

पुनि आए सिंहलगढ पासा । का बरनौं जनु लाग अकासा ॥
तरहि करिन्ह बासुकि कै पीठी । ऊपर इंद्रलोक पर दीठी ॥
परा खोह चहुँ दिसि अस बाँकी । काँपै जाँघ, जाइ नहि झाँकी ॥
अगम असूझ देखि डर खाई । परै सो सपत-पतारहि जाई ॥
नव पौरी बाँकी, नवखंडा । नवौ जो चढै जाइ बरम्हंडा ॥
कंचन कोट जरे नग सीसा । नखतहि भरी बीजु जनु दीसा ॥
लंका चाहि ऊँच गढ ताका । निरखि न जाइ, दीठि मन थाका ॥

हिय न समाइ दीठि नहि, जानहुँ ठाढ सुमेर ।
कहँ लगि कहौं उँचाई कहँ, लगि बरनौ फेर ॥

नितिगढ बाँचि चलै ससि सूरू । नाहि त होइ बाजि रथ चूरू ॥
पौरी नवौ बज्र कै साजी । सहस सहस तहँ बैठे पाजी ॥
फिरहि पाँच कोतवार सुभौंरी । काँपै पाँव चपत वह पौरी ॥
पौरिहि पौरि सिंघ गढि काढे । डरपहिं लोग देखि तँह ठाढे ॥
बहुबिधान वै नाहर गढे । जनु गाजहिं चाहहि सिर चढे ॥
टारहि पूँछ, पसारहिं जीहा । कुंजर डरहि कि गुँजरि लीहा ॥
कनक-सिला गढि सीढी लाई । जगमगाहि गढ ऊपर ताई ॥

नवैखंड नव पौरी औ तहँ बज्र-केवार ।
चारि बसेरे सौं चढै, सत सौं उतरै पार ॥

नव पौरी पर दसवँ दुवारा । तेहि पर बाज राज घरियारा ॥
घरी सो बैठि गनै घरियारी । पहर पहर सो आपनि बारी ॥
जबहीं घरी पूजि तेहिं मारा । घरी घरी घरियार पुकारा ॥
परा जो डाँड़ जगत सब डाँड़ा । का निचिंत माटी कर भाँडा ॥
तुम्ह तेहि चाक चढे हौ काँचे । आएहु रहै, न थिर होइ बाँचे ॥
घरी जो भरी घटी तुम्ह आऊ । का निचित होइ सोउ बटाऊ ॥
पहरहि पहर गजर निति होई । हिया बजर, मन जाग न सोई ॥

मुहमद जीवन जल भरन रहँट घरी कै रीति ।
घरी जो आई ज्यो भरी, ढरी-जनम गा बीति ॥

गढ पर नीर खीर दुइ नदी । पनिहारी जैसे दुरपदी ॥
और कुंड एक मोतीचूरू । पानी अमृत, बीच कपूरू ॥
ओहि क पानि राजा पै पीया । बिरिध होइ नहिं जौ लहि जीया ॥
कंचन-बिरिछ एक तेहि पासा । जस कलपतरु इंद्र कैलासा ॥
मूल पतार, सरग ओहि साखा । अमरबेलि को पाव, को चाखा ॥
चाँद पात औ फूल तराई । होइ उजियार नगर जहँ ताई ॥

वह फल पावै तप करि कोई । बिरिध खाइ तौ जोबन होई ॥
राजा भए भिखारी सुनि वह अमृत भोग ।
जेइ पावा सो अमर भाई, ना किछु व्याधि न रोग ॥
गढ पर बसहि झारि गढपती । असुपति गजपति भू-नर-पती ॥
सब धौराहर सोने साजा । अपने अपने घर सब राजा ॥
रूपवत धनवत सभागे । परस-पखान पौरि तिन्ह लागे ॥
भोग विलास सदा सब माना । दुख चिता कोइ जनम न जाना ॥
मँदिर मँदिर सब के चौपारी । बैठि कुँवर सब खेलहिं सारी ॥
पासा ढरहि खेल मल होई । खड़गदान सरि पूज न कोई ॥
भाँट बरनि कहि कीरति भली । पावहि हस्ति घोड़ सिहली ॥
मँदिर मँदिर फुलवारी चोवा चदन वास ।
निसि दिन रहै बसत तहँ छवौ ऋतु बारह मास ॥
पुनि चलि देखा राज दुआरा । मानुष फिरहि पाइ नहि बारा ॥
हस्ति सिघली बाँधे बारा । जनु सजीव सब ढाढ पहारा ॥
कौनौ सेत पीत रतनारे । कौनौ हरे धूम औ कारे ॥
बरनहि बरन गगन जस मेघा । औ तिन्ह गगन पीठि जनु ठेघा ॥
सिंघल के बरनौं सिंघली । एक एक चाहि एक एक बली ॥
गिरि पहार वै पैगहि पेलहिं । बिरिछ उचारि डारि मुख मेलहि ॥
माते तेइँ सब गरजहिं बाँधे । निसि दिन रहहिं महाउत काँधे ॥
धरती भार न अँगवै, पावँ धरत उठ हालि ।
कुरुम टुटै भुइँ फाटै, तिन्ह हस्तिन्ह के चाल ॥
पुनि बाँधे रजबार तुरगा । का बरनौ जस उन्हकै रगा ॥
लील, समद चाल जग जाने । हाँसल, भौर, गियाह बखाने ॥
हरे, कुरग, महुआ बहु भाँती । गरर, कोकाह, बुलाह सु पाँती ॥
तीख तुखार चाँड़ औ बाँके । सँचरहि पौरि ताज बिनु हाँके ॥
मन ते अगमन डोलहिं बागा । लेत उसास गगन सिर लागा ॥
पौन-समाज समुद्र पर धावहिं । बूड़ न पावँ, पार होइ आवहि ॥
थिर न रहहि रिस लोह चबाहीं । भाँजहिं पूँछ, सीस उपराहीं ॥
अस तुखार सब देखे जनु मन के रथबाह ।
नैन-पलक पहुँचावहि जहँ पहुँचा कोइ चाह ॥
राज सभा पुनि देख बईठी । इद्रसभा जनु परि गै डीठी ॥
धनि राजा असि सभा सँवारी । जानहु फूलि रही फुलवारी ॥
मुकुट बाँधि सब बैठे राजा । दर निसान नित जिन्हके बाजा ॥
रूपवत, मनि दिपै ललाटा । माथे छात, बैठ सब पाटा ॥
मानहुँ कवल सरोवर फूले । सभा क रूप देखि मन भूले ॥

पान कपूर मेद कस्तूरी। सुगंध बास भरि रही अपूरी॥
माँझ ऊँच इंद्रासन साजा। गंध्रबसेन बैठ तहँ राजा॥
छत्र गगन लगि ताकर, सूर तवै जस आप।
सभा कंवल अस बिगसइ, माथे बड़ परताप॥
साजा राजमंदिर कैलासू। सोने कर सब धरति अकासू॥
सात खंड धौराहर साजा। उहै सँवारि सकै अस राजा॥
हीरा ईंट, कपूर गिलावा। औ नग लाइ सरग लै लावा॥
जावत सबै उरेह उरेहे। भाँति भाँति नग लाग उबेहे॥
भा कटाव सब अनबन भाँती। चित्र कोरि कै पाँतिहि पाँती॥
लाग खंभ मनि-मानिक जरे। निसि दिन रहहि दीप जनु बरे॥
देखि धौरहर कर उँजियारा। छपि गए चाँद सूरुज औ तारा॥
सुना सात बैकुंठ जस तस साजे खँड सात।
बेहर बेहर भाव तस खंड खंड उपरात॥
बरनौ राजमँदिर रनिवासू। जनु अछुरीन्ह भरा कैलासू॥
सोरह सहस पदमिनी रानी। एक एक ते रूप बखानी॥
अति सुरूप औ अति सुकुवाँरी। पान फूल के रहहि अधारी॥
तेहि ऊपर चंपावति रानी। महा सुरूप पाट-परधानी॥
पाट बैठि रह किए सिंगारू। सब रानी ओहि करहिं जोहारू॥
निति नौरंग सुरंगम सोई। प्रथम बैस नहि सरवरि कोई॥
सकल दीप महँ जेती रानी। तिन्ह महँ दीपक बारह बानी॥
कुँवरि बतीसो-लच्छनी, अस सब माँह अनूप।
जावत सिंघलदीप के सबै बखानै रूप॥

———

मानसरोदक खंड

मानसरोदक खंड

एक दिवस पून्यो तिथि आई। मानसरोदक चली नहाई ॥
पदमावति सब सखी बुलाई। जनु फुलवारि सबै चलि आई ॥
कोइ चंपा कोइ कुंद सहेली। कोइ सुकेत करना, रस बेली ॥
कोइ सु गुलाल सुदरसन राती। कोइ सो बकावरि-बकुचन भाँती ॥
कोइ सो मौलसिरि, पुहुपावती। कोइ जाही जूही सेवती ॥
कोई सोनजरद कोइ केसर। कोइ सिंगार-हार नागेसर ॥
कोइ कूजा सदबर्ग चमेली। कोई कदम सुरस रस-बेली ॥
चलीं सबै मालति सँग फूलीं कवँल कुमोद।
बेधि रहे गन गँधरब बास-परमदामोद ॥
खेलत मानसरोवर गई। जाइ पाल पर ठाढी भई ॥
देखि सरोवर हँसैं कुलेली। पदमावति सौं कहहि सहेली ॥
ए रानी! मन देखु बिचारी। एहि नैहर रहना दिन चारी ॥
जौ लगि अहै पिता कर राजू। खेलि लेहु जो खेलहु आजू ॥
पुनि सासुर हम गवनब काली। कित हम, कित यह सरवर-पाली ॥
कित आवन पुनि अपने हाथा। कित मिलि कै खेलब एक साथा ॥
सासु ननद बोलिन्ह जिउ लेहीं। दारुन ससुर न निसरै देहीं ॥
पिउ पियार सिर ऊपर, पुनि सो करै दहुँ काह।
दहुँ सुख राखै की दुख, दहुँ कस जनम निबाह ॥
मिलहिं रहसि सब चढहि हिंडोरी। झूलि लेहिं सुख बारी भोरी ॥
झूलि लेहु नैहर जब ताई। फिरि नहि झूलन देइहि साई ॥
पुनि सासुर लेइ राखिहि तहाँ। नैहर चाह न पाउब जहाँ ॥
कित यह धूप, कहाँ यह छाहाँ। रहब सखी बिनु मंदिर माहाँ ॥
गुन पूछिहि औ लाइहि दोखू। कौन उतर पाउब तहँ मोखू ॥
सासु ननद के भौंह सिकोरे। रहब सँकोचि दुवौ कर जोरे ॥
कित यह रहसि जो आउब करना। ससुरेइ अंत जनम दुख भरना ॥
कित नैहर पुनि आउब कित ससुरे यह खेल।
आपु आपु कहँ होइहि परब पखि जस डेल ॥
सरवर तीर पदमिनी आई। खोंपा छोरि केस मुकलाई ॥
ससि मुख, अंग मलयगिरि बासा। नागिन झाँपि लीन्ह चहुँ पासा ॥
ओनई घटा परी जग छाहाँ। ससि कै सरन लीन्ह जनु राहाँ ॥

छपि गै दिनहि भानु कै दसा। लेइ निसि नखत चाँद परगसा ॥
भूलि चकोर दीठि मुख लावा। मेघ घटा मँह चंद देखावा ॥
दसन दामिनी, कोकिल भाखी। भौहैं धनुख गगन लेइ राखी ॥
नैन खँजन दूइ केलि करेहीं। कुच-नारँग मधुकर रस लेहीं ॥
सरवर रूप बिमोहा हिए हिलोरहि लेइ।
पावँ छुवै मकु पावौं एहि मिस लहरहि देइ ॥
धरी तीर सब कंचुकि सारी। सरवर मँह पैठीं सब बारी ॥
पाइ नीर जानौं सब बेली। हुलसहि करहि काम कै केली ॥
करिल केस बिसहर बिस-भरे। लहरैं लेहि कवँल मुख धरे ॥
नवल बसंत सँवारी करी। होइ प्रगट जानहु रस-भरी ॥
उठी कोंप जस दारिव दाखा। भई उनंत पेम कै साखा ॥
सरवर नहिं समाइ संसारा। चाँद नहाइ पैठ लेइ तारा ॥
धनि सो नीर ससि तरई ऊईं। अब कित दीठ कमल औ कूईं ॥
चकई बिछुरि पुकारै कहाँ मिलौं, हो नाँह।
एक चाँद निसि सरग मँह, दिन दूसर जल माँह ॥
लागीं केलि करै मझ नीरा। हंस लजाइ बैठ ओहि तीरा ॥
पदमावति कौतुक कहँ राखी। तुम ससि होहु तराइन साखी ॥
बाद मेलि कै खेल पसारा। हार देइ जो खेलत हारा ॥
सँवरिहि साँवरि, गोरिहि गोरी। आपनि आपनि लीन्ह सो जोरी ॥
बुझि खेल खेलहु एक साथा। हार न होइ पराए हाथा ॥
आजुहि खेल, बहुरि कित होई। खेल गए कित खेलै कोई ॥
धनि सो खेल खेल सह पेमा। रउताई औ कूसल खेमा ॥
मुहमद बाजी पेम कै ज्यों भावै त्यों खेल।
तिल फूलहि के संग ज्यों होइ फुलायल तेल ॥
सखी एक तेइ खेल न जाना। भै अचेत मनि-हार गँवाना ॥
कवँल डार गहि भै बेकरारा। कासों पुकारौं आपन हारा ॥
कित खेलै आइउँ एहि साथा। हार गँवाइ चलिउँ लेइ हाथा ॥
घर पैठत पूछत यह हारू। कौन उतर पाउब पैसारू ॥
नैन सीप आँसू तस भरे। जानौ मोति गिरहि सब ढरे ॥
सखिन कहा बौरी कोकिला। कौन पानि जेहि पौन न मिला ॥
हार गँवाइ सो ऐसै रोवा। हेरि हेराइ लेइ जौं खोवा ॥
लागीं सब मिलि हेरै बूड़ि बूड़ि एक साथ।
कोइ उठी मोती लेइ काहू घोंघा हाथ ॥
कहा मानसर चाह सो पाई। पारस-रूप इहाँ लगि आई ॥
भा निरमल तिन्ह पायँन्ह परसे। पावा रूप रूप के दरसे ॥

मलय-समीर बास तन आई। भा सीतल-गै तपनि बुझाई ॥
न जानौं कौन पौन लेइ आवा। पुन्य-दसा भै, पाप गँवावा ॥
ततखन हार बेगि उतिराना। पावा सखिन्ह चंद बिहँसाना ॥
बिगसा कुमुद देखि ससि-रेखा। भै तहँ ओप जहाँ जोइ देखा ॥
पावा रूप रूप जस चहा। ससि-मुख जनु दरपन होइ रहा ॥
नयन जो देखा कँवल भा, निरमल नीर सरीर।
हँसत जो देखा हंस भा, दसन-जोति नग हीर ॥

——

नखशिख खंड

नखशिख–खंड

का सिँगार ओहि बरनौं, राजा । ओहिक सिँगार ओही पै छाजा ॥
प्रथम सीस कस्तूरी केसा । बलि बासुकि, का और नरेसा ॥
भौंर केस, वह मालति रानी । बिसहर लुरे लेहि अरघानी ॥
बेनी छोरि झार जौं बारा । सरग पतार होइ अँधियारा ॥
कोंवर कुटिल केस नग कारे । लहरन्हि भरे भुअंग बैसारे ॥
बेधे जनौ मलयगिरि बासा । सीस चढ़े लोटहिं चहुँ पासा ॥
घुघुरवार अलकैं बिषभरी । सँकरैं पेम चहैं गिउ परी ॥

अस फँदवार केस वै परा सीस गिउ फाँद ।
अस्टौ कुरी नाग सब अरुझ केस के बाँद ॥

बरनौं माँग सीस उपराहीं । सेंदुर अबहिं चढ़ा जेहि नाहीं ॥
बिनु सेंदुर अस जानहु दीआ । उजियर पँथ रैनि महँ कीआ ॥
कँचन रेख कसौटी कसी । जनु घन महँ दामिनि परगसी ॥
सुरुज-किरिन जनु गगन बिसेखी । जमुना माँह सुरसती देखी ॥
खाँड़ै धार रुहिर जनु भरा । करवत लेइ बेनी पर धरा ॥
तेहि पर पूरि धरे जो मोती । जमुना माँझ गंग कै सोती ॥
करवत तपा लेहिं होइ चूरू । मकु सो रुहिर लेइ देइ सेंदूरू ॥

कनक दुवादस बानि होइ चह सोहाग वह माँग ।
सेवा करहिं नखत सब उवै गगन जस गाँग ॥

कहौं लिलार दुइज कै जोती । दुइजहि जोति कहाँ जग ओती ॥
सहस किरिन जो सुरुज दिपाई । देखि लिलार सोउ छपि जाई ॥
का सरवरि तेहि देउँ मयंकू । चाँद कलंकी वह निकलंकू ॥
औ चाँदहि पुनि राहु गहासा । वह बिनु राहु सदा परगासा ॥
तेहि लिलार पर तिलक बईठा । दुइज पाट जानहु धुव दीठा ॥
कनक-पाट जनु बैठा राजा । सबै सिंगार अत्र लेइ साजा ॥
ओहि आगे थिर रहा न कोऊ । दहुँ का कहँ अस जुरै सजोऊ ॥

खरग, धनुक, चक, बान दुइ जग मारन तिन्ह नाँव ।
सुनि कै परा मुरुछि कै (राजा) मो कहँ हए कुठाँव ॥

भौंहैं स्याम धनुक जनु ताना । जा सहुँ हेर मार बिष-बाना ॥
हनै धुनै उन्ह भौंहनि चढ़े । केइ हतियार काल अस गढ़े ? ॥
उहै धनुक किरसुन पहँ अहा । उहै धनुक राघौ कर गहा ॥

ओहि धनुक रावन संघारा। ओहि धनुक कंसासुर मारा ॥
ओहि धनुक बेधा हुत राहू। मारा ओहि सहस्राबाहू ॥
उहै धनुक मैं तापहँ चीन्हा। धानुक आप बेझ जग कीन्हा ॥
उन्ह भौहनि सरि केउ न जीता। अछरी छपीं छपीं गोपीता ॥
भौंह धनुक, धनि धानुक, दूसर सरि न कराइ।
गगन धनुक जो ऊगै लाजहिं सो छपि जाइ ॥
नैन बाँक, सरि पूज न कोऊ। मानसरोदक उलथहिं दोऊ ॥
राते कँवल करहिं अलि भवाँ। घूमहिं माति चहहिं अपसवाँ ॥
उठहिं तुरंग लेहिं नहिं बागा। चाहहिं उलथि गगन कहँ लागा ॥
पवन झकोरहिं देइ हिलोरा। सरग लाइ भुइँ लाइ बहोरा ॥
जग डोलै डोलत नैनाहाँ। उलटि अडार जाहिं पल माहाँ ॥
जबहिं फिराहिं गगन गहि बोरा। अस वै भौंर चक्र के जोरा ॥
समुद-हिलोर फिरहिं जनु झूले। खंजन लरहिं मिरिग जनु भूले ॥
सुभर सरोवर नयन वै मानिक भरे तरंग।
आवत तीर फिरावहीं काल भौंर तेहि संग ॥
बरुनी का बरनौं इमि बनी। साधे बान जानु दुइ अनी ॥
जुरी राम रावन कै सैना। बीच समुद्र भए दुइ नैना ॥
वारहिं पार बनावरि साधा। जा सहुँ हेर लाग विष-बाधा ॥
उन्ह बानन्ह अस को जो न मारा ?। बेधि रहा सगरौ संसारा ॥
गगन नखत जो जाहिं न गने। वै सब बान ओही के हने ॥
धरती बान बेधि सब राखी। साखी ठाढ देहिं सब साखी ॥
रोवँ रोवँ मानुष तन ठाढे। सूतहि सूत बेध अस गाढे ॥
बरुनि-बान अस ओपहँ बेधे रन बन-ढाँख।
सौजहिं तन सब रोवाँ पखिहि तन सब पाँख ॥
नासिक खरग देउँ कह जोगू। खरग खीन, वह बदन-सँजोगू ॥
नासिक देखि लजानेउ सूआ। सूक आइ बेसरि होइ ऊआ ॥
सुआ जो पिअर हिरामन लाजा। और भाव का बरनौं राजा ॥
सुआ सो नाक कठोर पँवारी। वह कोंवर तिल पुहुप सँवारी ॥
पुहुप सुगंध करहिं एहि आसा। मकु हिरकाइ लेइ हम पासा ॥
अधर दसन पर नासिक सोभा। दारिउँ बिंब देखि सुक लोभा ॥
खंजन दुहुँ दिसि केलि कराहीं। दहुँ वह रस कोउ पाव कि नाहीं ॥
देखि अमिय रस अधरन्ह भएउ नासिका कीर।
पौन बास पहुँचावै अस रम छाँड न तीर ॥
अधर सुरंग अमी-रस-भरे। बिंब सुरंग लाजि बन फरे ॥
फूल दुपहरी जानौं राता। फूल झरहिं ज्यों ज्यों कह बाता ॥

हीरा लेइ सो विद्रुम-धारा । विहसत जगत होइ उजियारा ॥
भए मँजीठ पानन्ह रँग लागे । कुसुम-रंग थिर रहै न आगे ॥
अस कै अधर अमी भरि राखे । अबहि अछूत, न काहू चाखे ॥
मुख तँबोल-रँग धारहि रसा । केहि मुख जोग सो अमृत बसा ? ॥
राता जगत देखि रँगराती । रुहिर भरे आछहि विहँसाती ॥
अमी अधर अस राजा सब जग आस करेइ ।
केहि कह कवल बिगासा को मधुकर रस लेइ ॥
दसन चौक बैठे जनु हीरा । औ बिच बिच रँग स्याम गँभीरा ॥
जस भादौं-निसि दामिनि दीसी । चमकि उठै तस बनी बतीसी ॥
वह सुजोति हीरा उपराही । हीरा-जाति सो तेहि परछाहीं ॥
जेहि दिन दसनजोति निरमई । बहुतै जाति जोति ओहि भई ॥
रवि ससि नखत दिपहिं ओहि जोती । रतन पदारथ मानिक मोती ॥
जहँ जहँ बिहसि सुभावहि हँसी । तहँ तहँ छिटकि जाति परगसी ॥
दामिनि दमकि न सरवरि पूजी । पुनि ओहि जोति और को दूजी ? ॥
हँसत दसन अस चमके पाहन उठे छरकि ।
दारिउँ सरि जो न कै सका, फाटेउ हिया दरकि ॥
रसना कहौं जो कह रस बाता । अमृत-बैन सुनत मन राता ॥
हरै सो सुर चातक कोकिला । बिनु बसत यह बैन न मिला ॥
चातक कोकिल रहहिं जो नाहीं । सुनि वह बैन लाज छपि जाहीं ॥
भरे प्रेम-रस बोलै बोला । सुनै सो माति घूमि कै डोला ॥
चतुरवेद-मत सब ओहि पाहाँ । रिग, जजु, साम अथरबन माहाँ ॥
एक एक बोल अरथ चौगुना । इद्र मोह, ब्रह्मा सिर धुना ॥
अमर, भागवत, पिंगल गीता । अरथ बूझि पडित नहिं जीता ॥
भासवती औ ब्याकरन पिगल पढै पुरान ।
बेद-भेद सौं बात कह सुजनन्ह लागै बान ॥
पुनि बरनौं का सुरँग कपोला । एक नारँग दुइ किए अमोला ॥
पुहुप-पक रस अमृत साधे । केइ यह सुरग खिरौरा बाँधे ॥
तेहि कपोल बाँए तिल परा । जेइ तिल देख सो तिलतिल जरा ॥
जनु घुँघची ओहि तिल कर मुहीं । बिरह-बान साधे सामुहीं ॥
अगिनि-बान जानौं तिल सूझा । एक कटाछ लाख दस जूझा ॥
सो तिल गाल मेटि नहिं गयऊ । अब वह गाल काल जग भयऊ ॥
देखत नैन परी परछाहीं । तेहि ते रात साम उपराहीं ॥
सो तिल देखि कपोल पर गगन रहा धुव गाड़ि ।
खिनहि उठै खिन बूड़ै डोलै नहि तिल छाँड़ि ॥
स्रवन सीप दुइ दीप सँवारे । कुंडल कनक रचे उजियारे ॥

मनि-कुंडल झलकैं अति लोने । जनु कौंधा लौकहिं दुइ कोने ॥
दुहुँ दिसि चाँद सुरुज चमकाहीं । नखतन्ह भरे निरखि नहिं जाहीं ॥
तेहि पर खूँट दीप दुइ बारे । दुइ धुव दुऔ खूँट बैसारे ॥
पहिरे खुभी सिंघलदीपी । जनौ भरी कचपचिआ सीपी ॥
खिन खिन जबहि चीर सिर गहै । काँपति बीजु दुऔ दिसि रहै ॥
डरपहिं देवलोक सिंघला । परै न बीजु टूटि एक कला ॥
करहिं नखत सब सेवा स्त्रवन दीन्ह अस दोउ ।
चाँद सुरुज अस गोहने और जगत का कोउ ? ॥
बरनौं गीउ कंबु कै रीसी । कंचन-तार-लागि जनु सीसी ॥
कुंदै फेरि जानु गिउ काढ़ी । हरी पुछार ठगी जनु ठाढ़ी ॥
जनु हिय काढ़ि परेवा ठाढ़ा । तेहि तें अधिक भाव गिउ बाढ़ा ॥
चाक चढ़ाइ साँच जनु कीन्हा । बाग तुरंग जानु गहि लीन्हा ॥
गए मयूर तमचूर जो हारे । उहै पुकारहिं साँझ सकारे ॥
पुनि तेहिं ठाँव परी तिन रेखा । घूँट जो पीक लीक सब देखा ॥
धनि ओहि गीउ दीन्ह बिधि भाऊ । दहुँ का सौं लेइ करै मेराऊ ॥
कंठसिरी मुकुतावली सोहै अभरन गीउ ।
लागै कंठहार होइ को तप साधा जीउ ? ॥
कनक-दंड दुइ भुजा कलाई । जानौं फेरि कुँदेरै भाई ॥
कदलि-गाभ कै जानौ जोरी । औ राती ओहि कँवल-हथोरी ॥
जानौ रकत हथोरी बूड़ी । रवि-परभात तात, वै जूड़ी ॥
हिया काढ़ि जनु लीन्हेसि हाथा । रुहिर भरी अँगुरी तेहि साथा ॥
औ पहिरे नग-जरी अँगूठी । जग बिनु जीउ, जीउ ओहि मूठी ॥
बाहूँ कंगन, टाड़ सलोनी । डोलत बाँह भाव गति लोनी ॥
जानौ गति बेड़िन देखराई । बाँह डोलाइ जीउ लेइ जाई ॥
भुज उपमा पौनार नहि खीन भएउ तेहि चिंत ।
ठाँवहि ठाँव बेध भा ऊबि साँस लेइ निंत ॥
हिया थार, कुच कंचन लारू । कनक कचोर उठे जनु चारू ॥
कुंदन बेल साजि जनु कूँदे । अमृत रतन मनो दुइ मूँदे ॥
बेधे भौंर कंट केतकी । चाहहिं बेध कीन्ह कंचुकी ॥
जोबन बान लेहिं नहि बागा । चाहहिं हुलसि हिये हठि लागा ॥
अगिनि-बान दुइ जानौं साधे । जग बेधहिं जौं होहिं न बाँधे ॥
उतंग जँभीर होइ रखवारी । छुइ को सकै राजा कै बारी ॥
दारिउँ दाख फरे अनचाखे । अस नारँग दहुँ का कहँ राखे ॥
राजा बहुत मुए तपि लाइ लाइ भुइँ माथ ॥
काहू छुवै न पाए गए मरोरत हाथ ॥

पेट परत जनु चंदन लावा । कुहँ कुहँ केसर बरन सुहावा ॥
खीर अहार न कर सुकुवाँरा । पान फूल के रहै अधारा ॥
साम भुअंगिनि रोमावली । नाभी निकसि कँवल कँह चली ॥
आइ दुऔ नारँग बिच-भई । देखि मयूर ठमकि रहि गई ॥
मनहुँ चढी भौंरन्ह कै पाँती । चंदन खाँभ बास कै माती ॥
की कालिंदी बिरह-सताई । चलि पयाग अरइल बिच आई ॥
नाभि-कुंड बिच बारानसी । सौंह को होइ, मीचु तहँ बसी ?॥
सिर करवत, तन करसी बहुत सीझ तेहि आस ॥
बहुत धूम घुटि घुटि मुए उतर न देइ निरास ॥

बैरिनि पीठि लीन्ह वह पाछे । जनु फिरि चली अपछरा काछे ॥
मलयागिरि कै पीठि सँवारी । बेनी नागिनि चढी जो कारी ॥
लहरैं देति पीठि जनु चढी । चीर-ओहार केंचुली मढी ॥
दहुँ का कहँ अस बेनी कीन्हीं । चंदन बास भुअंगै लीन्ही ॥
किरसुन करा चढा ओहि माथे । तब तौ छूट, अब छुटै न नाथे ॥
कारे कँवल गहे मुख देखा । ससि पाछे जनु राहु बिसेखा ॥
को देखै पावै वह नागू । सो देखै जेहि के सिर भागू ॥
पन्नग पंकज मुख गहे खंजन तहाँ बईठ ॥
छत्र, सिंघासन, राज, धन ताकहँ होइ जो डीठ ॥

लंक पुहुमि अस आहि न काहू । केहरि कहौं न ओहि सरि ताहू ॥
बसा लंक बरनै जग झीनी । तेहि तें अधिक लंक वह खीनी ॥
परिहँस पियर भए तेहि बसा । लिए डंक लोगन्ह कहँ डसा ॥
मानहुँ नाल खंड दुइ भए । दुहुँ बिच लंक-तार रहि गए ॥
हिय कै मुरे चलै वह तागा । पैग देत कित सहि सक लागा ? ॥
छुद्रघंटिका मोहहिं राजा । इंद्र अखाड आइ जनु बाजा ॥
मानहुँ बीन गहे कामिनी । गावहिं सबै राग रागिनी ॥
सिंघ न जीता लंक सरि हारि लीन्ह बन बासु ॥
तेहि रिस मानुस-रकत पिय, खाइ मारि कै माँसु ॥

नाभिकुंड सो मलय-समीरू । समुद-भँवर जस भवै गँभीरू ॥
बहुतै भँवर बवंडर भए । पहुँचि न सके सरग कहँ गए ॥
चंदन माँझ कुरंगिनि खोजू । दहुँ को पाउ, को राजा भोजू ॥
को ओहि लागि हिवंचल सीझा । का कहँ लिखी, ऐस को रीझा ?॥
तीवइ कवँल-सुगंध सरीरू । समुद लहरि सोहै तन चीरू ॥
झूलहिं रतन पाट के झोपा । साजि मैन अस का पर कोपा ? ॥
अबहिं सो अहै कवँल कै करी । न जनौ कौन भौंर कहँ धरी ॥

बेधि रहा जग बासना परिमल मेद सुगंध।
तेहि अरघानि भौंर सब लुबुधे तजहि न बंध ॥
बरनौ नितंब लंक कै सोभा। औ गज-गवन देखि मन लोभा ॥
जुरे जंघ सोभा अति पाए। केरा-खंभ-फेरि जनु लाए ॥
कवँल-चरन अति रात बिसेखी। रहैं पाट पर, पुहुमि न देखी ॥
देवता हाथ हाथ पगु लेहीं। जहँ पगु धरै सीस तहँ देहीं ॥
माथे भाग कोउ अस पावा। चरन-कँवल लेइ सीस चढ़ावा ॥
चूरा चाँद सुरुज उजियारा। पायल बीच करहिं झनकारा ॥
अनवट बिछिया नखत तराईं। पहुँचि सकै को पायन ताईं ॥
बरनि सिंगार न जानेउ नखसिख जैस अभोग ॥
तस जग किछुइ न पाएउँ उपमा देउँ ओहि जोग ॥

प्रेम-खंड

सुननहि राजा गा मुरझाई। जानौ लहरि सुरुज कै आई॥
प्रेम-घाव-दुख जान न कोई। जेहि लागै जानै पै सोई॥
परा सो पेम समुद्र अपारा। लहरहि लहर होइ बिसँभारा॥
बिरह-भौर होइ भाँवरि देई। खिन खिन जीउ हिलोरा लेई॥
खिनहिं उसास बूडि जिउ जाई। खिनहि उठै निसरै बौराई॥
खिनहि पीत, खिन होइ मुख सेता। खिनहि चेत, खिन होइ अचेता॥
कठिन मरन ते प्रेम-बेवस्था। ना जिउ जियै न दसवँ अवस्था॥
जनु लेनिहार न लेहि जिउ हरहि तरासहि ताहि।
एतनै बोल आव मुख करै 'तराहि तराहि'॥
जहँ लगि कुटुंब लोग औ नेगी। राजा राय आय सब बेगी॥
जावत गुनी गारुडी आए। ओझा, बैद, सयान बोलाए॥
चरखहि चेष्टा, परिखहि नारी। नियर नाहि ओषद तहँ बारी॥
राजहि आहि लखन कै करा। सकति-बान मोहा है परा॥
नहि सो राम, हनिवँत बडि दूरी। को लेइ आव सजीवन-मूरी?॥
बिनय करहि जे जे गढपाती। का जिउ कीन्ह, कौन मति मती?॥
कहहु सो पीर, काह पुनि खाँगा?। समुद सुमेरु आव तुम्ह माँगा॥
धावन तहाँ पठावहु देहि लाख दस रोक।
होइ सो बेलि जेहि बारी, आनहि सबै बरोक॥
जब भा चेत उठा बैरागा। बाउर जनौ सोइ उठि जागा॥
आवत जग बालक जस रोआ। उठा रोइ 'हा ज्ञान सो खोआ'॥
हौ तौ अहा अमरपुर जहाँ। इहाँ मरनपुर आएउ कहाँ?॥
केइ उपकार मरन कर कीन्हा। सकति हँकारि जीउ हरि लीन्हा॥
सोवत रहा जहाँ सुख-साखा। कस न तहाँ सोवत बिधि राखा?॥
अब जिउ उहाँ, इहाँ तन सूना। कब लगि रहै परान-बिहूना॥
जौ जिउ घटहि काल के हाथा। घट न नीक पै जीउ निसाथा॥
अहुठ हाट तन-सरवर हिया कवँल तेहि माहँ।
नैनहि जानहु नीयरे, कर पहुँचत औगाह॥
सबन्ह कहा मन समुझहु राजा। काल सेति कै जूझ न छाजा॥
तासौं जूझ जात जो जीता। जानत कृस्न तजा गोपीता॥
औ न नेह काहू सौं कीजै। नाँव मिटै, काहे जिउ दीजै॥
पहिले सुख नेहहि जब जोरा। पुनि होइ कठिन निबाहत ओरा॥

अहुठ हाथ तन जैस सुमेरू। पहुँचि न जाइ परा तस फेरू ॥
ज्ञान-दिस्टि सौ जाइ पहूँचा। पेम अदिस्ट गगन ते ऊँचा ॥
धुव ते ऊँच प्रेम-धुव ऊआ। सिर देइ पाँव देइ सो छूआ ॥

तुम राजा औ सुखिया करहु राज-सुख भोग।
एहि रे पथ सो पहुँचै सहै जो दुःख वियोग ॥

सुए कहा मन बूझहु राजा। करब पिरीति कठिन है काजा ॥
तुम राजा जेईं घर पोई। कवँल न भेटेउ, भेटेउ कोई ॥
जानहि भौर जो तेहि पथ लुटे। जीउ दीन्ह औ दिएहु न छूटे ॥
कठिन आहि सिंघल कर राजू। पाइय नाहि जूझ कर साजू ॥
ओहि पथ जाइ जो होइ उदासी। जोगी, जती, तपी, सन्यासी ॥
भोग किए जौ पावत भोगू। तजि सो भोग कोइ करत न जोगू ॥
तुम राजा चाहहु सुख पावा। भोगिहि जोग करत नहि भावा ॥

साधन्ह सिद्धि न पाइय जौ लगि सधै न तप्प।
सो पै जानै बापुरा, करै जो सीस कलप्प ॥

का भा जोग-कथनि के कथे। निकसै घिउ न बिना दधि मथे ॥
जौ लहि आप हेराइ न कोई। तौ लहि हेरत पाव न सोई ॥
पेम-पहार कठिन बिधि गढा। सो पै चढै जो सिर सौ चढा ॥
पथ सूरि कर उठा अकूरू। चोर चढै की चढ मसूरू ॥
तू राजा का पहिरसि कथा। तोरे घरहि माँझ दस पथा ॥
काम, क्रोध, तिस्ना, मद, माया। पाँचौ चोर न छाँडहि काया ॥
नवौ सेंध तिन्ह क दिठियारा। घर मूसहि निसि, की उजियारा ॥

अबहू जागु अजाना होत आव निसि भोर।
तब किछु हाथ न लागिहि मूसि जाहि जब चोर ॥

सुनि सो बात राजा मन जागा। पलक न मार पेम, चित लागा ॥
नैनन्ह ढरहि मोति औ मूँगा। जस गुर खाइ रहा होइ गूँगा ॥
हिय कै जोति दीप वह सूझा। यह जो दीप अँधियारा बूझा ॥
उलटि दीठि माया सौ रूठी। पलटि न फिरी जानि कै झूठी ॥
जौ पै नाहीं अहथिर दसा। जग उजार का कीजिय बसा ॥
गुरू बिरह-चिनगी जो मेला। जो सुलगाइ लेइ सो चेला ॥
अब करि फनिग भृंग कै करा। भौर होहुँ जेहि कारन जरा ॥

फूल फूल फिरि पूँछौ जो पहुँचौ ओहि केत।
तन नेवछावरि कै मिलौ ज्यों मधुकर जिउ देत ॥

बधु मीत बहुतै समुझावा। मान न राजा कोउ भुलावा ॥
उपजी पेम-पीर जेहि आई। परबोधत होइ अधिक सो आई ॥

अमृत बात कहत बिष जाना। पेम क बचन मीठ कै माना ॥
जो ओहि बिषै मारि कै खाई। पूँछहु तेहि सन पेम मिठाई ॥
पूँछहु बात भरथरिहि जाई। अमृत राज तजा बिष खाई ॥
औ महेस बड़ सिद्ध कहावा। उनहूँ बिषै कंठ पै लावा ॥
होत आव रवि किरिन बिकासा। हनुवँत होइ को देइ सुआसा ॥
तुम सब सिद्धि मनावहु होइ गनेस सिधि लेव ।
चेला को न चलावै तुलै गुरु जेहि भेव ॥

जोगी खंड

तजा राज, राजा भा जोगी । औ किंगरी कर गहेउ बियोगी ॥
तन बिसंभर मन बाउर लटा । अरुझा पेम, परी सर जटा ॥
चँद्र-बदन औ चदन-देहा । भसम चढाइ कीन्ह तन खेहा ॥
मेखल, सिंघी, चक्र, धँधारी । जोगबाट, रुदराछ, अधारी ॥
कथा पहिरि दड कर गहा । सिद्ध होइ कहँ गोरख कहा ॥
मुद्र स्रवन, कठ जपमाला । कर उदपान, काँध बघछाला ॥
पाँवरि पाँव, दीन्ह सिर छाता । खप्पर लीन्ह भेस करि राता ॥

चला भुगुति मागै कहँ साधि कया तप जोग ।
सिद्ध होइ पदमावति जेहि कर हिये बियोग ॥

गनक कहहि गनि गौन न आजू । दिन लेइ चलहु, होइ सिध काजू ॥
पेम-पथ दिन घरी न देखा । तब देखै जब होइ सरेखा ॥
जेहि तन पेम कहाँ तेहि माँसू । कया न रकत नैन नहि आँसू ॥
पडित भूल, न जानै चालू । जीउ लेत दिन पूछ न कालू ॥
सती कि बौरी पूछहि पाँडे । औ घर पैठि कि सैंतै भाँड़े ॥
मरै जो चलै गग-गति लेई । तेहि दिन कहाँ घरी को देई ? ॥
मै घर बार कहाँ कर पावा । घरी क आपन, अत परावा ॥

हौ रे पथिक पखेरू जेहि बन मोर निबाहु ॥
खेलि चला तेहि बन कहँ तुम अपने घर जाहु ॥

चहुँ दिसि आन साँटिया फेरी । भै कटकाई राजा केरी ॥
जावत अहहि सकल अरकाना । साँभर लेहु, दूरि है जाना ॥
सिंघलदीप जाई अब चाहा । मोल न पाउब जहाँ बेसाहा ॥
सब निबहै तहँ आपनि साँठी । साँठि बिना सोर ह मुखमाटी ॥
राजा चला साजि कै जोगू । आजहु वेगि चलहु सब लोगू ॥
गरब जो चढे तुरय कै पीठी । अब भुइँ चलहु सरग कै डीठी ॥
मतर लेहु होहु सँग-लागू । गुदर जाइ सब होइहि आगू ॥

का निचित रे मानुस ! आपन चीते आछु ।
लेहि सजग होइ अगमन मन पछिताव न पाछु ॥

बिनवै रतनसेन कै माया । माथे छात, पाट निति पाया ॥
बिलसहु नौ लख लच्छि पियारी । राज छाँडि जिनि होहु भिखारी ॥
निति चदन लागै जेहि देहा । सो तन देख भरत अब खेहा ॥

सब दिन रहेहु करत तुम भोगू । सो कैसे साधब तप जोगू ?॥
कैसे धूप सहब बिनु छाहाँ । कैसे नींद परिहि भुई माँहाँ ?॥
कैसे ओढब काथरि कथा । कैसे पाँव चलब तुम्ह पथा ?॥
कैसे सहब खिनहि खिन भूखा । कैसे खाब कुरकुटा रूखा ?॥
राजपाट, दर, परिगह तुम्ह ही सौं उजियार ॥
बैठि भोग रस मानहु कै न चलहु अँधियार ॥

मोहिं यह लोभ सुनाव न माया । काकर सुख काकर यह काया ॥
जो निआन तन होइहि छारा । माटिहि पोखि मरै को मारा ?॥
का भूलौं एहि चंदन चोवा । बैरी जहाँ अंग कर रोवाँ ॥
हाथ, पाँव, सरवन औ आँखी । ए सब उहाँ भरहिं मिलि साखी ॥
सूत सूत तन बोलहि दोखू । कहु कैसे होइहि गति मोखू ॥
जौं भल होत राज औ भोगू । गोपिचंद नहि साधत जोगू ॥
उन्ह हिय-दीठि जो देख परेवा । तजा राज कजरी-बन सेवा ॥
देखि अंत अस होइहि गुरू दीन्ह उपदेस ।
सिंघलदीप जाब हम माता देहु अदेस ॥

रोवहि नागमती रनिवासू । केइ तुम्ह कंत दीन्ह बनबासू ॥
अब को हमहि करहि भोगिनी । हमहूँ साथ होब जोगिनी ॥
की हम लावहु अपने साथा । की अब मारि चलहु सेइ हाथा ॥
तुम्ह अस बिछुरै पीउ पिरीता । जहँवाँ राम तहाँ संग सीता ॥
जौ लहि जिउ संग छाँड न काया । करिहौं सेव पखरिहौं पाया ॥
भलेहि पदमिनी रूप अनूपा । हम ते कोइ न आगरि रूपा ॥
भँवै भलेहि पुरुखन कै डीठी । जिनहि जान तिन्ह दीन्ही पीठी ॥
देहि असीस सबै मिलि तुम्ह माथे निति छात ।
राज करहु चितउरगढ राखहु पिय अहिबात ॥

तुम्ह तिरिया मति हीन तुम्हारी । मूरुख सो जो मतै घर नारी ॥
राघव जो सीता सँग लाई । रावन हरी, कौन सिधि पाई ?॥
यह संसार सपन कर लेखा । बिछुरि गए जानौं नहि देखा ॥
राजा भरथरि सुना जो ज्ञानी । जेहि के घर सोरह सै रानी ॥
कुच लीन्हें तरवा सहराई । भा जोगी, कोउ संग न लाई ॥
जोगिहि काह भोग सौं काजू । चहै न धन घरनी औ राजू ॥
जूड़ कुरकुटा भीखहि चाहा । जोगी तात भात कर काहा ?॥
कहा न मानै राजा तजी सबाई भीर ।
चला छाँड़ि कै रोवत फिरि के देइ न धीर ॥

रोवत माय न बहुरत बारा। रतन चला, घर भा अँधियारा ॥
बार मोर जो राजहि रता। सो लै चला, सुआ परबता ॥
रोवहिं रानी, तजहि पराना। नोचहिं बार, करहि खरिहाना ॥
चूरहि गिउ, अभरन-उर हारा। अब का पर हम करब सिंगारा।
जा कहँ कहहि रहसि कै पीऊ। सोइ चला, काकर यह जीऊ ॥
मरै चहहि, पर मरै न पावहि। उठै आगि सब लोग बुझावहि ॥
घरी एक सुठि भएउ अँदोरा। पुनि पाछे बीता होइ रोरा ॥

टूटै मन नै मोती फूटे मन दास काँच।
लीन्ह समेटि एक अभरन होइगा दुख कर नाच ॥

निकसा राजा सिंगी पूरी। छाँड़ नगर मेलि कै धूरी ॥
राय रान सब भये बियोगी। सोरह सहस कुँवर भए जोगी ॥
माया मोह हरा सेइ हाथा। देखेन्हि बूझि निआन न साथा ॥
छाँड़ेन्हि लोग कटुँब सब कोऊ। भए निनार सुख दुख तजि दोऊ ॥
सँवरै राजा सोइ अकेला। जेहि के पथ चले होइ चेला ॥
नगर नगर औ गाँवहि गाँवाँ। छाँडि चले सब ठाँवहि ठावाँ ॥
का कर मढ, का कर घर माया। ता कर सब जाकर जिउ माया ॥

चला कटक जोगिन्ह कर कै गेरुआ सब भेसु।
कोस बीस चारिहु दिसि जानौ फूला टेसु ॥

आगे सगुन सगुनियै ताका। दहिने माछ रूप के टाँका ॥
भरे कलस तरुनी जल आई। 'दहिउ लेहु' ग्वालिनि गोहराई ॥
मालिनि आव मौर लिए गाँथे। खजन बैठ नाग के माथे ॥
दहिने मिरिग आइ बन धाएँ। प्रतीहार बोला खर बाएँ ॥
बिरिख सँवरिया दहिने बोला। बाएँ दिसा चाषु चरि बोला ॥
बाएँ अकासी धौरी आई। लोवा दरस आइ दिखराई ॥
बाएँ कुररी दहिने कूचा। पहुँचै भुगुति जैस मन रुचा ॥

जा कहँ सगुन होहि अस औ गवनै जेहि आस।
अस्ट महासिधि तेहि कहँ जस कवि कहा बियास ॥

भएउ पयान चला पुनि राजा। सिंग-नाद जोगिन कर बाजा ॥
कहेन्हि आजु किछु थोर पयाना। काल्हि पयान दूरि है जाना ॥
ओहि मिलान जौ पहुँचै कोई। तब हम कहब पुरुष भल सोई ॥
है आगे परबत कै बाटा। बिषम पहार अगम सुठि घाटा ॥
बिच बिच नदी खोह औ नारा। ठाँवहि ठाँव बैठि बटपारा ॥
हनुवंत केर सुनब पुनि हाँका। दहुँ को पार होइ, को थाका ॥
अस मन जानि सँभारहु आगू। अगुआ केर होहु पछलागू ॥

करहि पयान भोर उठि पथ कोस दस जाहि ।
पथी पथी जे चलहिं ते का रहहिं ओठाहि ॥

करहु दीठि थिर हाइ बटाऊ । आगे देखि धरहु भुइँ पाऊ ॥
जो रे उवट होइ परे भुलाने । गए मारि, पथ चलै न जानै ॥
पाँयन पहिरि लेहु सब पौरी । काँट धसै, न गड़ै अँकरौरी ॥
परे आइ बन परबत माहाँ । दडाकरन बीझा-बन जाहा ॥
सघन ढाँख बन चहुँ दिसि फूला । बहु दुख पाव उहाँ कर भूला ॥
झाँखर जहाँ सो छाँडहु पथ । हिलगि मकोइ न फारहु कथा ॥
दहिने बिदर, चँदेरी बाएँ । दहुँ कहँ होइ बाट दुइ ठाएँ ॥
एक बाट गइ सिघल, दुसरि लक समीप ।
है आगे पथ दूऔ दहुँ गौनब केहि दीप ॥

ततखन बोला सुआ सरेखा । अगुआ सोइ पथ जेइ देखा ॥
सो का उडै न जेहि तन पाँखु । लेइ सो परासहि बूडत साखू ॥
जस अधा अधै कर सगी । पथ न पाव होइ सहलगी ॥
सुनु मत, काज चहसि जौ साजा । बीजानगर बिजयगिरि राजा ॥
पहुंचौ जहाँ कुड औ गोला । तजि बाएँ अँधियार खटोला ॥
दक्खिन दहिने रहहि तिलगा । उत्तर बाएँ गढ-का गा ॥
माँझ रतनपुर सिघदुवारा । झारखड देइ बाँव पहारा ॥
आगे पाव उडैसा बाएँ दिये सो बाट ।
दहिनावरत देइ कै उतरु समुद कै घाट ॥

होत पयान जाइ दिन केरा । मिरिगारन महँ भयउ बसेरा ॥
कुस-साँथरि भइ सौर सुपेती । करवट आई बनी भुइँ सेती ॥
चलि दस कोस ओस तन भीजा । काया मिलि तेहि भसम मलीजा ॥
ठाँव ठाव सब सोअहि चेला । राजा जागै आपु अकेला ॥
जेहि के हिए पेम रँग जामा । का तेहि भूख नींद बिसरामा ॥
बन अँधियार, रैनि अँधियारी । भादों बिहर भएउ अति भारी ॥
किंगरी हाथ गहे बैरागी । पाँच ततु धुनि ओही लागी ॥
नैन लाग तेहि मारग पदमावति जहि दीप ।
जैस सेवातिहि सेवै बन चातक जल सीप ॥

———

बोहित खंड

सो न डोल देखा गजपती । राजा सत्त दत्त दुहुँ सँती ॥
अपनेहि कया, अपनेहि कथा । जीउ दीन्ह अगुमन तेहि पथा ॥
निहचै चला भरम जिउ खोई । साहस जहाँ सिद्धि तहँ होई ॥
निहचै चला छाँडि कै राजू । बोहित दीन्ह, दीन्ह सब साजू ॥
चढा बेगि, तब बोहित पेले । धनि सो पुरुष पेम जेइ खेले ॥
प्रेम-पथ जौ पहुँचै पारा । बहुरि न मिलै आइ एहि छारा ॥
तेइ पावा उत्तिम कैलासू । जहाँ न मीचु, सदा सुख-बासू ॥

एहि जीवन कै आस का? जस सपना पल आधु ।
मुहमद जियतहि जे मुए तिन्ह पुरुषन्ह कै साधु ॥

जस बन रेगि चलै गज-ठाटी । बोहित चले, समुद गा पाटी ॥
धावहि बोहित मन उपराहीं । सहस कोस एक पल महँ जाहीं ॥
समुद अपार सरग जनु लागा । सरग न घाल गनै बैरागा ॥
ततखन चाल्हा एक देखावा । जनु धौला गिरि परबत आवा ॥
उठी हिलोर जो चाल्ह नराजी । लहरि अकास लागि भुइँ बाजी ॥
राजा सेती कुँवर सब कहहीं । अस अस मच्छ समुद महँ अहहीं ॥
तेहि रे पथ हम चाहहि गवना । होहु सँजूत बहुरि नहीं अवना ॥

गुरु हमार तुम्ह राजा, हम चेला तुम्ह नाथ ।
जहाँ पाँव गुरु राखै चेला राखै माथ ॥

केवट हँसे सो सुनत गवेजा । समुद न जानु कुवाँ कर मेजा ॥
यह तौ चाल्ह न लागै कोहू । का कहिहौ जब देखिहौ रोहू ?॥
सो अबहीं तुम्ह देखा नाहीं । जेहि मुख ऐसे सहस समाहीं ॥
राजपखि तेहि पर मेडराहीं । सहस कोस तिन्ह कै परछाहीं ॥
तेइ ओहि मच्छ ठोर भरि लेहीं । सावक-मुख चारा लेइ देहीं ॥
गरजै गगन पखि जब बोला । डोल समुद्र डैन जब डोला ॥
तहाँ चाँद औ सूर असूझा । चढै सोइ जो अगुमन बूझा ॥

दस महँ एक जाइ कोइ करम, धरम, तप, नेम ।
बोहित पार होइ जब तबहि कुसल औ खेम ॥

राजै कहा कीन्ह मै पेमा । जहाँ पेम कहँ कूसल खेमा ॥
तुम्ह खेवहु जौ खेवै पारहु । जैसे आपु तरहु मोहि तारहु ॥
मोहि कुसल कर सोच न ओता । कुसल होत जौ जनम न होता ॥

धरती सरग जाँत-पट दोऊ। जो तेहि बिच जिउ राख न कोऊ॥
हौं अब कुसल एक पै माँगौं। पेम-पंथ सत बाँधि न खाँगौं॥
जौं सत हिय तौ नयनहिं दीया। समुद न डरै पैठि मरजीया॥
तहँ लगि हेरौं समुद ढँढोरी। जहँ लगि रतन पदारथ जोरी॥
सप्त पतार खोजि कै काढौं बेद गरंथ।
सात सरग चढ़ि धावौं पदमावति जेहिं पंथ॥

सात समुद्र खंड

सायर तरै हिये सत पूरा । जौ जिउ सत, कायर पुनि सूरा ।।
तेइ सत बोहित कुरी चलाए । तेइ सत पवन पख जनु लाए ।।
सत साथी सत कर ससारू । सत्त खेइ लेइ लावै पारू ।।
सत्त ताक सब आगू पाछू । जहँ जहँ मगर मच्छ औ काछू ।।
उठै लहरि जनु ठाढ पहारा । चढै सरग औ परै पतारा ।।
डोलहि बोहित लहरै खाहीं । खिन तर होहि, खिनहिं उपराहीं ।।
राजै सो सत हिरदै बाँधा । जेहि सत टेकि करै गिरि काधा ।।

खार समुद सो नाँघा आए समुद जह खीर ।
मिले समुद वै सातौ बेहर बेहर नीर ।।

खीर समुद का बरनौ नीरू । सेत सरूप पियत जस खीरू ।।
उलथहि मानिक, मोती, हीरा । दरब देखि मन होइ न थीरा ।।
मनुआ चाह दरब औ भोगू । पथ भुलाइ बिनासै जोगू ।।
जोगी होइ मनहि सो सँभारै । दरब हाथ कर समुद पवारै ।।
दरब लेइ सोई जो राजा । जो जोगी तेहि के केहि काजा ?।।
पथिहि पथ दरब रिपु होई । ठग, बटपार, चोर सग सोई ।।
पथी सो जो दरब सौ रूसे । दरब समेटि बहुत अस मूसे ।।

खीर-समुद सो नाँघा, आए समुद-दधि माँह ।
जो हैं नेह क बाउर तिन्ह कहँ धूप न छाँह ।।

दधि-समुद्र देखत तस दाधा । पेम क लुबुध दगध पै साधा ।।
पेम जो दाधा धनि वह जीऊ । दधि जमाइ मथि काढै घीऊ ।।
दधि एक बूँद जाम सब खीरू । काँजी-बूँद बिनसि होइ नीरू ।।
साँस डाँडि मन मथनी गाढी । हिये चोट बिनु फूट न साढी ।।
जेहि जिउ पेम चदन तेहि आगी । पेम बिहून फिरै डर भागी ।।
पेम कै आगि जरै जौ कोई । दुख तेहि कर न अँबिरथा होई ।।
जो जानै सत आपुहि जारै । निसत हिये सत करै न पारै ।।

दधि-समुद्र पुनि पार भे, पेमहि कहा सभार ?।
भावै पानी सिर परै, भावै परै अँगार ।।

आए उदधि समुद्र अपारा । धरती सरग जरै तेहि झारा ।।
आगि जो उपनी ओही समुदा । लका जरी ओहि एक बुदा ।।
बिरह जो उपना ओहि ते गाढा । खिन न बुझाइ जगत महँ बाढा ।।
जहाँ सो बिरह आगि कह डीठी । सौह जरै, फिरि देइ न पीठी ।।

जग महँ कठिन खड़ग कै धारा। तेहि तें अधिक बिरह कै झारा ॥
अगम पथ जो ऐस न होई। साध किए पावै सब कोई ॥
तेहि समुद्र महँ राजा परा। जरा चहै पै रोवँ न जरा ॥
तलफै तेल कराह जिमि इमि तलफै सब नीर।
यह जो मलयगिरि प्रेम कर बेधा समुद समीर ॥

सुरा-समुद पुनि राजा आवा। महुआ मद-छाता देखरावा ॥
जो तेहि पियै सो भाँवरि लेई। सीस फिरै, पथ पैगु न देई ॥
पेम-सुरा जेहि के हिय माहाँ। कित बैठे महुआ कै छाहाँ ॥
गुरु के पास दाख-रस रसा। बैरी बबुर मारि मन कसा ॥
बिरह के दगध कीन्ह तन भाठी। हाड़ जराइ दीन्ह जस काठी ॥
नैन-नीर सौ पोता किया। तस मद चुवा बरा जस दिया ॥
बिरह सरागन्हि भूजै माँसू। गिरि गिरि परै रकत कै आँसू ॥
मुहमद मद जो पेम कर गए दीप तेहि साध।
सास न देइ पतग होइ तौ लगि लहै न खाध ॥

पुनि किलकिला समुद महँ आए। गा धीरज, देखत डर खाए ॥
भा किलकिल अस उठै हिलोरा। जनु अकास टूटै चहुँ ओरा ॥
उठै लहरि परबत कै नाई। फिरि आवै जोजन सौ ताई ॥
धरती लेइ सरग लहि बाढा। सकल समुद जानहुँ भा ठाढा ॥
नीर होइ तर ऊपर सोई। माथे रभ समुद जस होई ॥
फिरत समुद जोजन सौ ताका। जैसे भँवै कोंहार क चाका ॥
भै परलै नियराना जबहीं। मरै जो जब परलै तेहि तबहीं ॥
गै औसान सबन्ह कर देखि समुद कै बाढि।
नियर होत जनु लीलै रहा नैन अस काढि ॥

हीरामन राजा सौ बोला। एही समुद आए सत डोला ॥
सिंघलदीप जो नाहि निबाहू। एही ठाँव साँकर सब काहू ॥
एहि किलकिला समुद्र गभीरू। जेहि गुन होइ सो पावै तीरू ॥
इहै समुद्र-पंथ मँझधारा। खाँडे कै असि धार निनारा ॥
तीस सहस्र कोस कै पाटा। अस साँकर चलि सकै न चाँटा ॥
खाँड़ै चाहि पैनि बहुताई। बार चाहि ताकर पतराई ॥
एही ठाँव कहँ गुरु सँग लीजिय। गुरु सँग होइ पार तौ कीजिय ॥
मरन जियन एही पथहि एही आस निरास।
परा सो गयउ पतारहि, तरा सो गा कैलास ॥

राजै दीन्ह कटक कहँ बीरा। सुपुरुष होहु, करहु मन धीरा ॥
ठाकुर जेहिक सूर भा कोई। कटक सूर पुनि आपुहि होई ॥
जौ लहि सत। न जिउ सत बाँधा। तौ लहि देइ कहाँर न काँधा ॥

पेम-समुद महँ बाँधा बेरा। यह सब समुद बूँद जेहिं केरा ॥
ना हौं सरग न चाहौ राजू। ना मोहिं नरक सेति किछु काजू ॥
चाहौं ओहि कर दरसन पावा। जेइ मोहिं आनि पेम-पथ लावा ॥
काठहि काह गाढ का ढीला? । बूड न समुद, मगर नहि लीला ॥
कान समुद धँसि लीन्हेसि भा पाछे सब कोइ।
कोइ काहू न सँभारै आपनि आपनि होइ ॥
कोइ बोहित जस पौन उडाहीं। कोई चमकि बीजु अस जाहीं ॥
कोई जस भल धाव तुखारू। कोई जैस बैल गरियारू ॥
कोई जानहुँ हरुआ रथ हाँका। कोई गरुअ भार बहु थाका ॥
कोई रेंगहि जानहुँ चाँटी। कोई टूटि होहि तर माटी ॥
कोई खाहिं पौन कर झोला। कोई करहि पात अस डोला ॥
कोई परहिं भौंर जल माहा। फिरत रहहि, कोइ देइ न बाहाँ ॥
राजा कर भा अगमन खेवा। खेवक आगे सुआ परेवा ॥
कोइ दिन मिला सबेरे कोइ आवा पछ-राति।
जा कर जस जस साजु हुत सो उतरा तेहि भाँति ॥
सतएँ समुद मानसर आए। मन जो कीन्ह साहस, सिधि पाए ॥
देखि मानसर रूप सोहावा। हिय हुलास पुरइनि होइ छावा ॥
गा अँधियार, रैनि-मसि छूटी। भा भिनसार किरिन-रवि फूटी ॥
'अस्ति अस्ति' सब साथी बोले। अँध जो अहे नैन बिधि खोले ॥
कवँल बिगस तस बिहँसी देही। भौंर दसन होइ कै रस लेहीं ॥
हँसहिं हंस औ करहिं किरोरा। चुनहिं रतन मुकुताहल हीरा ॥
जो अस आव साधि तप जोगू। पूजै आस, मान रस भोगू ॥
भौंर जो मनसा मानसर लीन्ह कँवलरस आइ।
घुन जो हियाव न कै सका झूर काठ तस खाइ ॥

पद्मावती–वियोग खंड

पद्मावति तेहि जोग सँजोगा । परी पेम-बस गहे बियोगा ।।
नींद न परै रैनि जौ आवा । सेज केवाच जानु कोइ लावा ।।
दहै चंद और चंदन चीरू । दगध करै तन बिरह गंभीरू ।।
कलप समान रैनि तेहि बाढी । तिल तिल भर जुग जुग जिमि गाढी ।।
गहै बीन मकु रैनि बिहाई । ससि बाहन तहँ रहै ओनाई ।।
पुनि धनि सिंघ उरेहै लागै । ऐसिहि बिथा रैनि सब जागै ।।
कहँ वह भौंर कँवल रस-लेवा । आइ परै होइ घिरिनि परेवा ।।

से धनि बिरह-पतंग भइ, जरा चहै तेहि दीप ।
कंत न आव भिरिंग होइ, का चंदन तन लीप ।।

परी बिरह बन जानहुँ घेरी । अगम असूझ जहाँ लगि हेरी ।।
चतुर दिसा चितवै जनु भूली । सो बन कहँ जहँ मालति फूली? ।।
कँवल भौंर ओही बन पावै । को मिलाइ तन-तपनि बुझावै? ।।
अंग अंग अस कँवल सरीरा । हिय भा पियर कहै पर-पीरा ।।
चहै दरस, रबि कीन्ह बिगासू । भौंर-दीठि मनो लागि अकासू ।।
पूँछै धाय, बारि कहु बाता । तुइँ जस कवँल फूल रँग राता ।।
केसर बरन हिया भा तोरा । मानहुँ मनहिं भएउ किछु भोरा ।।

पौन न पावै संचरै, भौंर न तहाँ बईठ ।
भूलि कुरंगिनि कस भई, जानु सिंघ तुइँ दीठ ।।

धाय सिंघ बरु खातेउ मारी । की तसि रहति अही जसि बारी ।।
जोबन सुनेउँ कि नवल बसंतू । तेहि बन परेउ हस्ति मैमंतू ।।
अब जोबन-बारी को राखा । कुंजर-बिरह बिधंसै साखा ।।
मैं जानेउँ जोबन रस भोगू । जोबन कठिन सँताप बियोगू ।।
जोबन गरुअ अपेल पहारू । सहि न जाइ जोबन कर भारू ।।
जोबन अस मैमंत न कोई । नवैं हस्ति जौं आँकुस होई ।।
जोबन भर भादौं जस गंगा । लहरैं देइ, समाइ न अंगा ।।

परिउँ अथाह, धाय ! हौं, जोबन-उदधि गँभीर ।
तेहि चितवौं चारिहु दिसि जो गहि लावै तीर ।।

पद्मावति तुइँ समुद सयानी । तोहि सरि समुद न पूजै, रानी ।।
नदी समाहिं समुद महँ आई । समुद डोलि कहु कहाँ समाई? ।।
अबहीं कँवल-करी हिय तोरा । आइहि भौंर जो तो कहँ जोरा ।।
जोबन-तुरी हाथ गहि लीजिय । जहाँ जाइ तहँ जाइ न दीजिय ।।

जोबन जोर मात गज अहै। गहहु ज्ञान-आकुस जिमि रहै॥
अबहिं बारि तुइँ पेम न खेला। का जानसि कस होइ दुहेला॥
गगन दीठि करु नाइ तराहीं। सुरुज देखु कर आवै नाहीं॥
जब लगि पीउ मिलै नहि साधु पेम कै पीर।
जैसे सीप सेवाति कहँ तपै समुद मंझ नीर॥
दहै, धाय जोबन एहि जीऊ। जानहुँ परा अगिनि महँ घीऊ॥
करवत सहौं होत दुइ आधा। सहि न जाइ जोबन कै दाधा॥
बिरह समुद्र भरा असँभारा। भौंर मेलि जिउ लहरिन्ह मारा॥
बिरह नाग होइ सिर चढि डसा। होइ अगिनि चदन महँ बसा॥
जोबन पखी, बिरह बियाधू। केहरि भएउ कुरगिनि-खाधू॥
कनक-पानि कित जोबन कीन्हा। औटन कठिन बिरह ओहि दीन्हा॥
जोबन-जलहि बिरह मसि छूआ। फूलहि भौंर, फरहि भा सूआ॥
जोबन चाँद उआ जस बिरह भएउ सँग राहु।
घटतहि घटत छीन भइ, कहै न पारौं काहु॥
नैन ज्यों चक्र फिरे चहुँओरा। बरजै धाय, समाहि न कारा॥
कहेसि पेम जौं अपना, बारी। बाँधु सत्त, मन डोल न भारी॥
जेहि जिउ महँ होइ सत्त पहारू। परै पहार न बाँकै बारू॥
सती जो जरै पेम सत लागी। जौं सत हिय तौ सीतल आगी॥
जोबन चाँद जो चौदस-करा। बिरह के चिनगी सो पुनि जरा॥
पौन बाँध सो जोगी जती। काम बाँध सो कामिनी सती॥
आव बसत फूल फुलवारी। देव बार सब जैहैं बारी॥
तुम्ह पुनि जाहु बसत लेइ पूजि मनावहु देव।
जीव पाइ जग जनम है पीउ पाइ कै सेव॥
जब लगि अवधि आइ नियराई। दिन जुग जुग बिरहिनि कहँ जाई॥
भूख नींद निसि दिन गै दोउ। हियै मारि जस कलपै कोऊ॥
रोवँ रोवँ जनु लागहि चाँटे। सूत सूत बेधहि जनु काँटे॥
दगधि कराह जरै जस घीऊ। बेगि न आव मलयगिरि पीऊ॥
कौन देव कहँ जाइ कै परसौं। जेहि सुमेरु हिय लाइय कर सौं॥
गुपुत जो फूलि साँस परगटै। अब होइ सुभर दहहि हम्ह घटै॥
भा सँजोग जो रे भा जरना। भोगहि गए भोगि का करना?॥
जोबन चँचल ढीठ है, करै निकाजै काज।
धनि कुलवति जो कुल धरै कै जोबन मन लाज॥

———

पद्मावती सुआ भेंट खंड

तेहि बियोग हीरामन आवा । पदमावति जानहुँ जिउ पावा ॥
कठ लाइ सूआ सौं रोई । अधिक मोह जौं मिलै बिछोही ॥
आगि उठे दुख हिये गँभीरू । नैनहिं आइ चुवा होइ नीरु ॥
रही रोइ जब पदमिनि रानी । हँसि पूछहिं सब सखी सयानी ॥
मिले रहस भा चाहिय दूना । कित रोइय जौं मिलै बिछूना? ॥
तेहि क उतर पदमावति कहा । बिछुरन दुख जो हिए भरि रहा ॥
मिलत हिए आएउ सुख भरा । वह दुख नैन-नीर होइ ढरा ॥

बिछुरता जब भेंटै सो जानै जेहि नेह ॥
सुक्ख सुहेल उग्गवै दुःख झरै जिमि मेह ॥

पुनि रानी हँसि कूसल पूछा । कित गवनेहु पींजर कै छूँछा ॥
रानी तुम्ह जुग जुग सुख पाटू । छाज न पखिहि पींजर ठाटू ॥
जब भा पख कहाँ थिर रहना । चाहै उड़ा पखि जौं डहना ॥
पींजर महँ जो परेवा घेरा । आइ मजारि कीन्ह तहँ फेरा ॥
दिन एक आइ हाथ पै मेला । तेहि डर बनोवास कहँ खेला ॥
तहाँ बियाध आइ नर साधा । छूटि न पाव मीचु कर बाँधा ॥
वै धरि बेचा बाम्हन हाथा । जबूदीप गएउँ तेहि साथा ॥

तहाँ चित्र चितउरगढ चित्रसेन कर राज ।
टीका दीन्ह पुत्र कहँ आपु लीन्ह सिव साज ॥

बैठ जो राज पिता के ठाऊँ । राजा रतनसेन ओहि नाऊँ ॥
बरना काह देस मनियारा । जहँ अस नग उपना उजियारा ॥
धनि माता औ पिता बखाना । जेहि के बस अस अस आना ॥
लछन बतीसौ कुल निरमला । बरनि न जाइ रूप औ कला ॥
वै हौं लीन्ह, अहा अस भागू । चाहै सोने मिला सोहागू ॥
सो नग देखि हींछा भइ मोरी । है यह रतन पदारथ जोरी ॥
है ससि जोग इहै पै भानू । तहाँ तुम्हार मैं कीन्ह बखानू ॥

कहाँ रतन रतनागर, कचन कहाँ सुमेरु ।
दैव जो जोरी दुहुँ लिखी मिलै सो कौनेहु फेर ॥

सुनत बिरह चिनगी ओहि परी । रतन पाव जौं कचन-करी ॥
कठिन पेम बिरहा दुख भारी । राज छाँड़ि भा जोगि भिखारी ॥
मालति लागि भौंर जस होई । होइ बाउर निसरा बुधि खोई ॥
कहेसि पतग होइ धनि लेऊँ । सिघलदीप जाइ जिउ देऊँ ॥

पुनि ओोहि कोउ न छाँड़ अकेला । सोरह सहस कुँवर भए चेला ॥
और गनै को सग सहाई? । महादेव मढ मेला जाई ॥
सूरुज पुरुष दरस के ताईं । चितवै चद चकोर के नाईं ॥
तुम्ह बारी रस जोग जेहि, कँवलहि जस अरघानि ।
तस सूरुज परगास कै भौंर मिलाएउ आनि ॥
हीरामन जो कही यह बाता । सुनिकै रतन पदारथ राता ॥
जस सूरुज देखे होइ ओपा । तस भा बिरह, कामदल कोपा ॥
सुनि कै जोगी केर बखानू । पदमावति मन भा अभिमानू ॥
कचन करी न काँचहि लोभा । जौं नग होइ पाव तब सोभा ॥
कंचन जौं कसिए कै ताता । तब जानिय दहुँ पीत कि राता ॥
नग कर मरम सो जड़िया जाना । जड़ै जो अस नग देखि बखाना ॥
को अब हाथ सिंघ मुख घालै । को यह बात पिता सौं चालै ॥
सरग इद्र डरि काँपै बासुकि डरै पतार ।
कहा सो अस बर प्रिथिमी मोहिं जोग ससार ॥
तू रानी ससि कचन करा । वह नग रतन सूर निरमरा ॥
बिरह-बजागि बीच का कोई । आगि जो छुवै जाइ जरि सोई ॥
आगि बुझाइ परे जल गाढे । वह न बुझाइ आपु ही बाढै ॥
बिरह के आगि सूर जरि कापा । रातिहि दिवस जरै ओहि तापा ॥
खिनहिं सरग, खिन जाइ पतारा । थिर न रहै एहि आगि अपारा ॥
धनि सो जीउ दगध इमि सहै । अकसर जरै, न दूसर कहै ॥
सुलगि सुलगि भीतर होइ सावाँ । परगट होइ न कहै दुख नावाँ ॥
काह कहौं हौ ओोहि सा जेइ दुख कीन्ह निमेट ।
तेहि दिन आगि करै वह बाहा जेहि दिन होइ सो भेट ॥
सुनि कै धनि, 'जारी अस कया' । तब भा मयन, हिये भै मया ॥
देखौं जाइ जरै कस भानू । कंचन जरे अधिक होइ बानू ॥
अब जौ मरै वह पेम-बियोगी । हत्या, मोहिं जेहि कारन जोगी ॥
सुनि कै रतन पदारथ राता । हीरामन सौं कह यह बाता ॥
जौ वह जोग संभारै छाला । पाइहि भुगुति, देहुँ जैमाला ॥
आव बसत कुसल जौ पावौं । पूजा मिस मडप कहँ आवौं ॥
गुरु के बैन फूल हौं गाँथे । देखौ नैन, चढावौं माथे ॥
कवल भँवर तुम्ह बरना मैं माना पुनि सोइ ।
चाँद सूर कहँ चाहिय जौ रे सूर वह होइ ॥
हीरामन जो सुना रस बाता । पावा पान भएउ मुख राता ॥
चला सुआ, रानी तब कहा । भा जो परावा कैसे रहा? ॥
जो नीति चलै सँवारे पाखा । आजु जो रहा, कालिह को राखा' ॥

न जनौ आजु कहाँ दुहुँ ऊआ। आएहु मिलै, चलेहु मिलि, सूआ ॥
मिलि कै बिछुर मरन कै आना। कित आएहु जौं चलेहु निदाना? ॥
सुनु रानी हौं रहतेउँ राधा। कैसे रहौं बचन कर बाँधा ॥
ता करि दिस्टि ऐसि तुम्ह सेवा। जैसे कुँज मन रहै परेवा ॥
बसै मीन जल धरती अबा बसै अकास।
जौ पिरीत पै दुवौ महँ अंत होहि एक पास ॥
आवा सुआ बैठ जहँ जोगी। मारग नैन, बियोग बियोगी ॥
आइ पेम रस कहा सँदेसा। गोरख मिला, मिला उपदेसा ॥
तुम्ह कहँ गुरू मया बहु कीन्हा। कीन्ह अदेस, आदि कहि दीन्हा ॥
सबद, एक उन्ह कहा अकेला। गुरु जस भिंग फनिग जस चेला ॥
भिंगी ओहि पाँखि पै लेई। एकहि बार छीनि जिउ देई ॥
ताकहँ गुरु करै असि माया। नव औतार देइ, नव काया ॥
होइ अमर जो मरि कै जीया। भौंर कवँल मिलि कै मधु पीया ॥
आवै ऋतु बसंत जब तब मधुकर, तब बासु।
जोगी जोग जो इमि करै सिद्धि समापत तासु ॥

———

पार्वती-महेश खंड

ततखन पहुँचे आइ महेसू। बाहन बैल-कुस्टि कर भेसू॥
काथरि कया, हड़ावरि बाँधे। मुंड-माल औ हत्या काँधे॥
सेसनाग जाके कंठमाला। तनु भभूति, हस्ती कर छाला॥
पहुँची रुद्र कवँल कै गटा। ससि माथे औ सुरसरि जटा॥
चँवर, घंट औ डँवरू हाथा। गौरा पारबती धनि साथा॥
औ हनुवंत बीर संग आवा। धरे भेस बाँदर जस छावा॥
अवतहि कहेन्हि न लावहु आगी। तेहि कै सपथ जरहु जेहि लागी॥
की तप करै न पारेहु, की रे नसाएहु जोग?।
जियत जीउ कस काढहु? कहहु सो मोहि बियोग।
कहेसि मोहि बातन्ह बिलँभावा। हत्या केरि न डर तोहि आवा॥
जरै देहु, दुख जरौं अपारा। निस्तर पाइ जाउँ एक बारा॥
जस भरथरी लागि पिंगला। मो कहँ पदमावति सिंघला॥
मै पुनि तजा राज औ भोगू। सुनि सो नावँ लीन्ह तप जोगू॥
एहि मढ सेएउँ आइ निरासा। गइ सो पूजि, मन पूजि न आसा॥
तैं यह जिउ डाढे पर दाधा। आधा निकसि रहा घट आधा॥
जो अधजर सो बिलँब न लावा। करत बिलंब बहुत दुख पावा॥
एतना बोल कहत मुख उठी बिरह कै आगि।
जौं महेस न बुझावत जाति सकल जग लागि॥
पारबती मन उपना चाऊ। देखौं कुँवर केर सत भाऊ॥
ओहि एहि बीच, कि पेमहि पूजा। तन मन एक कि मारग दूजा॥
भइ सुरूप जानहुँ अपछरा। बिहँसि कुँवर कर आँचर धरा॥
सुनहु कुँवर मो सौं एक बाता। जस मोहि रंग न औरहि राता॥
औ बिधि रूप, दीन्ह है तोका। उठा सो सबद जाइ सिव-लोका॥
तब हौं तोपहँ इंद्र पठाई। गइ पदमिनि, तैं अछरी पाई॥
अब तजु जरन, मरन, तप, जोगू। मोसौं मानु जनम भरि भोगू॥
हौं अछरी कैलास कै जेहि सरि पूज न कोइ।
मोहि तजि सँवरि जो ओहि मरसि, कौन लाभ तोहि होइ?॥
भलेहि रंग अछरी तोर राता। मोहिं दुसरे सौं भाव न बाता॥
मोहि ओहि सँवरि मुए तस लाहा। नैन जो देखसि पूछसि काहा?॥
अबहि ताहि जिउ देइ न पावा। तोहि असि अछरी ठाढि मनावा॥
जौं जिउ देइहौं ओहि कै आसा। न जानौं काह होइ कैलासा॥

हौं कैलास काह लै करऊँ। सोइ कैलास लागि जेहि मरऊँ॥
ओहि के बार जीउ नहि वारौं। सिर उतारि नेवछावरि सारौं॥
ताकर चाह कहै जो आई। दोउ जगत तेहि देहुँ बड़ाई॥
ओहि न मोरि किछु आसा हौं ओहि आस करेउँ।
नेहि निरास पीतम कहँ जिउ न देउँ का देउँ॥
गौरइ हँसि महेस सौं कहा। निहचै एहि बिरहानल दहा॥
निहचै यह ओहि कारन तपा। परिमल पेम न ओछे छपा॥
निहचै पेम पर यह जागा। कसे कसौटी कचन लागा॥
बदन पियर जल डभकहि नैना। परगट दुवौ पेम के बैना॥
यह एहि जनम लागि ओहि सीझा। चहै न औरहि ओही रीझा॥
महादेव देवन्ह के पिता। तुम्हरी सरन राम रन जिता॥
एहूँ कहँ तस मया करेहू। पुरवहु आस कि हत्या लेहू॥
हत्या दुइ के चढाए काँधे बहु अपराध।
तीसर यह लेउ माथे जौ लेवै कै साध॥
सुनि कै महादेव कै भाखा। सिद्ध पुरुष राजै मन लाखा॥
सिद्धहि अग न बैठे माखी। सिद्ध पलक नहि लावै आखी॥
सिद्धहि सग होइ नहि छाया। सिद्धइ होइ भूख नहि माया॥
जेहि जग सिद्ध गोसाईं कीन्हा। परगट गुपुत रहै को चीन्हा॥
बैल चढा कुस्टी कर भेसू। गिरजापति सत आहि महेसू॥
चीन्है सोइ रहै जो खोजा। जस बिक्रम औ राजा भोजा॥
जो ओहि तत सत्त सौं हेरा। गएउ हेराइ जो ओहि भा मेरा॥
बिनु गुरु पथ न पाइय भूलै सो जो मेट।
जोगी सिद्ध होइ तब जब गोरख सौं भेट॥
ततखन रतनसेन गहबरा। रोउब छाँड़ि पाँव लेइ परा॥
मातै पितै जनम कित पाला। जो अस फाँद पेम गिउ घाला॥
धरनी सरग मिले हुत दोऊ। केइ निनार कै दीन्ह बिछोऊ॥
पदिक पदारथ कर हुँत खोवा। टूटहि रतन रतन तस रोवा॥
गगन मेघ जस बरसै भला। पुहुमी पूरि सलिल बहि चला॥
सायर टूट सिखर गा पाटा। सूझ न बार पार कहुँ घाटा॥
पौन पानि होइ होइ सब गिरइ। प्रेम के फद कोइ जनि परई॥
तस रोवै तस जिउ जरै गिरै रकत औ आँसु।
रोवँ रोवँ सब रोवहि सूत सूत भरि आँसु॥
रोवत बूडि उठा ससारू। महादेव तब भयउ मयारू॥
कहेन्हि न रोव बहुत तैं रोवा। अब ईसर भा दारिद खोवा॥
जो दुख सहै होइ सुख ओका। दुख बिनु सुख न जाइ सिवलोका॥

अब तै सिद्ध भएसि सिधि पाई। दरपन कया छूटि गइ काई ॥
कहौ बात अब हौ उपदेसी। लागु पथ भूले परदेसी ॥
जौ लगि चोर सेंधि नहि देई। राजा केरि न मूसै पेई ॥
कहौ सो तोहि सिंघलगढ है खँड सात चढाव।
फिरा न कोई जियत जिउ सरग पथ देइ पाव ॥
गढ तस बाँक जैसि तोरि काया। पुरुख देखु ओही के छाया ॥
पाइय नाहिं जूझ हठि कीन्हे। जेइ पावा तेइ आपुहि चीन्हें ॥
नौ पौरी तेहि गढ मझियारा। औ तहँ फिरहि पाँच कोटवारा ॥
दसवँ दुवार गुपुत एक ताका। अगम चढाव बाट सुठि बाँका ॥
भेदै जाइ कोइ ओहि घाठी। जो लह भेद चढे छोइ चाँटी ॥
गढ तर कुँड सुरँग तेहि माहाँ। तँह वह पथ कहौ तेहि पाहाँ ॥
चोर बैठ जस सेंध सवारी। जुआ पैंत जस लाव जुआरी ॥
जस मरजिया समुद धँस हाथ आव तब सीप।
ढूँढि लेइ जो सरग-दुआरी चढै सो सिंघलदीप ॥
दसव दुआर ताल कै लेखा। उलटि दिस्टि जो लाव सो देखा।
जाइ सो तहाँ साँस मन बधी। जस धसि लीन्ह कान्ह कालिंदी ॥
तू मन नाथु मारि कै साँसा। जो पै मरहि आपु करि नासा ॥
परगट लोकचार कहु बाता। गुपुत लाउ मन जासौ राता ॥
हौ हौ कहत सबै मति खोई। जौ तू नाहिं आहि सब कोई ॥
जियतहि जुरै मरै एक बारा। पुनि का मीचु को मारै पारा।
आपुहि गुरु सो आपुहि चेला। आपुहि सब औ आपु अकेला ॥
आपुहि मीच जियन पुनि आपुहि तन मन सोइ।
आपुहि आपु करे जो चाहै कहाँ सो दूसर कोइ ॥

पद्मावती-रत्नसेन-भेंट

सात खंड ऊपर कैलासू । तहवाँ नारि-सेज सुख बासू ॥
चारि खंभ चारिहु दिसि खरे । हीरा- रतन - पदारथ जरे ॥
मानिक दिया जरावा मोती । होइ उजियार रहा तेहि जोती ॥
ऊपर राता चँदवा छावा । औ भुइँ सुरँग बिछाव बिछावा ॥
तेहि महँ पालक सेज सो डासी । कीन्ह बिछावन फूलन्ह बासी ॥
चहुँ दिसि गेंडुआ औ गल सूई । काँची पाट भरी धुनि रूई ॥
बिधि सो सेज रची केहि जोगू । को तहँ पौढि मान रस भोगू ॥

अति सुकुवाँरि सेज सो डासी छुवै न पारै कोइ ।
देखत नवै खिनहि खिन पावँ धरत कसि होइ ॥

राजै तपत सेज जो पाई । गाँठि छोरि धनि सखिन्ह छपाई ॥
कहैं कुँवर हमरे अस चारू । आज कुँवरि कर करब सिंगारू ॥
हरदि उतारि चढाउब रंगू । तब निसि चाँद सुरुज सौं संगू ॥
जस चातक मुख बूँद सेवाती । राजा चख जोहत तेहि भाँती ॥
जोगि छरा जनु अछुरी साथा । जोग हाथ कर भएउ बेहाथा ॥
वै चातुरि कर लै अपसईं । मंत्र अमोल छीनि लेइ गईं ॥
बैठेउ खोंइ जरी औ बूटी । लाभ न पाव मूर भइ टूटी ॥

खाइ रहा ठग-लाडू तंत मंत बुधि खोइ ।
भा धौराहर बनखंड ना हँसि आव न रोइ ॥

अस तप करत गएउ दिन भारी । चारि पहर बीते जुग चारी ॥
परी साँझ पुनि सखी सो आई । चाँद रहा अपनो जो तराईं ॥
पूँछहि गुरु कहाँ रे चेला । बिनु ससि रे कस सूर अकेला ॥
"धातु कमाय सिखे तैं जोगी । अब कस भा निर्धातु बियोगी ? ॥
"कहाँ सो खोएहु बिरवा लोना । जेहि तें होइ रूप औ सोना ॥
"का हरतार पार नहिं पावा । गंधक काहे कुरकुटा खावा ॥
"कहा छपाए चाँद हमारा ? । जेहि बिनु रैनि जगत अँधियारा "॥

नैन कौडिया हिय समुद गुरु सो तेहि महँ जोति ।
मन मरजिया न होइ परे हाथ न आवै मोति ॥

का पूछहु तुम धातु निछोही । जो गुरु कीन्ह अँतरपट ओही ॥
सिधि गुटिका अब मो सँग कहा । भएउ राँग सत हिए न रहा ॥
सो न रूप जासौं दुख खोलौं । गएउ भरोस तहाँ का बोलौं ॥
जहँ लोना बिरवा कै जाती । कहि कै सँदेस जान को पाती ॥

कै जो पार हरतार करीजै। गधक देखि अबहि जिउ दीजै॥
तुम्ह जोग कै सूर मयकू। पुनि बिछोहि सो लीन्ह कलकू॥
जो एहि घरी मिलावै मोहीं। सीस देउँ बलिहारी ओही॥
होइ अबरक ईगुर भया फेरि, अगिनि महँ दीन्ह।
काया पीतर होइ कनक जौ तुम चाहहु कीन्ह॥
का बसाइ जौ गुरु अस बूझा। चकाबूह अभिमनु ज्यौं जूझा॥
बिष जो दीन्ह अमृत देखराई। तेहि रे निछोही को पतियाई॥
मरै सोइ जो होइ निगूना। पीर न जानै बिरह बिहूना॥
पार न पाव जो गधक पीया। सो हत्यार* कहौ किमि जीया॥
सिद्धि-गुटीका जा पहँ नाहीं। कौन धातु पूछहु तेहि पाहीं॥
अब तेहि बाज राँग भा डोलौ। होइ सार तौ बर के बोलौं॥
अबरक कै पुनि ईगुर कीन्हा। तो मन फेरि अगिनि महँ दीन्हा॥
मिलि जो पीतम बिछुरहि काया अगिनि जराइ।
की तेहि मिले तन तप बुझै की अब मुए बुझाइ॥
सुनि कै बात सखी सब हसी। जनहुँ रैनि तरईं परगसीं॥
अब सो चाँद गगन महँ छपा। लालच कै कित पावसि तपा॥
हमहुँ न जानहिं दहुँ सो कहाँ। करब खोज औ बिनउब तहाँ॥
औ अस कहब आहि परदेसी। करहि मया हत्या जनि लेसी॥
पीर तुम्हारि सुनत भा छोहू। दैउ मनाउ होइ अस ओहू॥
तू जोगी फिरि तपि करु जोगू। तो कहँ कौन राजसुख भोगू॥
वर रानी जहवाँ सुख राजू। बारह अभरन करै सो साजू॥
जोगी ढिढ आसन करै अहथिर धरि मन ठाँव।
जो न सुना तौ अब सुनहिं बारह अभरन नाव॥
प्रथमै मज्जन होइ सरीरू। पुनि पहिरै तन चदन चीरू॥
साजि माँग सिर सेंदुर सारै। पुनि लिलाट रचि तिलक सँवारै॥
पुनि अजन दुहुँ नैनन्ह करै। औ कुडल कानन्ह महँ पहिरै॥
पुनि नासिका भल फूल अमोला। पुनि राता मुख खाइ तमोला॥
गिउ अभरन पहिरै जहँ ताईं। औ पहिरे कर कँगन कलाई॥
कटि छुद्रावलि अभरन पूरा। पायन्ह पहिरै पायल चूरा॥
बारह अभरन अहै बखाने। ते पहिरै बरहौ अस्थाने॥
पुनि सो रहे सिंगार जस चारिहु चौक कुलीन।
दीरघ चारि चारि लघु चारि सुभर चौ खीन॥

---

*पाठांतर—हरतार।

पदमावति जो सवारै लीन्हा। पुनिउँ राति दैउ ससि कीन्हा॥
करि मज्जन तन कीन्ह नहानू। पहिरे चीर गएउ छपि भानू॥
रचि पत्रावलि माँग सेंदूरू। भरे मोति और मानिक चूरू॥
चंदन चीर पहिर बहु भाँती। मेघ घटा जानहूँ बग-पाँती॥
गूँथि जो रतन माग बैसारा। जानहुँ गगन टूट निसि तारा॥
तिलक लिलाट धरा तस दीठा। जनहुँ दुइज पर सुहल बईठा॥
कानन्ह कुँडल खूँट औ खूटी। जानहुँ परी कचपची टूटी॥
पहिरि जराऊ ठाढ़ि भइ कहि न जाइ तस भाव।
मानहूँ दर्पन गगन भा तेहि ससि तार देखाव॥

बाँक नैन औ अंजन रेखा। खंजन मनहुँ सरद ऋतु देखा॥
जस जस हर फेर चख मोरी। लरै सरद महँ खंजन जोरी॥
भौंहैं धनुक धनुक पै हारा। नैनन साधि बान बिष मारा॥
करनफूल कानन्ह अति सोभा। ससि मुख आइ सूर जनु लोभा॥
सुरँग अधर औ मिला तमोरा। सोहै पान फूल कर जोरा॥
कुसुमगंध अति सुरँग कपोला। तेहि पर अलक भुअंगिनि डोला॥
तिल कपोल अलि कवँल बईठा। बेधा सोइ जेइ वह तिल दीठा॥
देखि सिंगार अनूप विधि बिरह चला तब भागि।
काल कस्ट इमि ओनवा सब मोरे जिउ लागि॥

का बरनौं अभरन औ हारा। ससि पहिरे नखतन्ह कै मारा॥
चीर चारु औ चंदन चोवा। हीर हार नग लाग अमोला॥
तेहि झाँपी रोमावलि कारी। नागिनि रूप डसै हत्यारी॥
कुच कंचुकी सिरीफल उभे। हुलसहि चहहि कंत हिय चुभे॥
बाहन्ह बहुँटा टाँड सलोनी। डोलत बाँह भाव गति लोनी॥
तरवन्ह कवँल करी जनु बाँधी। बसा लंक जानहुँ दुइ आधी।
छुद्र घंट कटि कंचन तागा। चलतै उठहि छतीसौ रागा॥
चूरा पायल अनवट पायन्ह परहि बियोग।
हिए लाइ टुक हम कहँ समदहु मानहु भोग॥

अस बारह सोरह धनि साजे। छाज न और ओहि पै छाजे॥
बिनवहि सखी गहरु का कीजै। जेइ जिउ दीन्ह ताहि जिउ दीजै॥
सँवरि सेज धनि मन भइ संका। ठाढ़ि तेवानि टेकि कर लंका॥
अनचिन्ह पिउ काँपौ मन माहाँ। का मै कहब गहब जौ बाहाँ॥
बारि बैस गइ प्रीति न जानी। तरुनि भई मैमत भुलानी॥
जोबन गरब न मै किछु चेता। नेह न जानौ साव कि सेता॥
अब सो कंत जो पूछिहि बाता। कस मुख होइहि पीत कि राता॥

हौं बारी औ दुलहिनी पीउ तरुन सह तेज।
ना जानौ कस होइहि चढत कँस के सेज॥

सुनु धनि डर हिरदय तब ताई। जौ लगि रहसि मिलै नहि साई॥
कौन कली जो भौर न राई। डार टूट पुहुप गरु आई॥
मातु पिता जौ बियाहै सोई। जनम निबाह कन सँग होई॥
भरि जीवन राखै जहँ चहा। जाइ न मेंटा ताकर कहा॥
ताकहँ बिलब न कीजै बारी। जो पिउ-आयसु सोइ पियारी॥
चलहु बेगि आयस भा जैसे। कत बोलावै रहिये कैसे॥
मान न करसि पोढ करु लाडू। मान करत रिस मानै न चाँडू।

साजन लेइ पठावा आयसु जाइ न मेट।
तन मन जीवन साजि कै देइ चली लेइ भेट॥

पदमिनि गवन हस गए दूरी। कुजर लाज मेल सिर धूरी॥
बदन देखि घटि चद छपाना। दसन देखि कै बीजु लजाना॥
खजन छपे देखि कै नैना। कोकिल छपी सुनत मधु बैना॥
गीव देखि कै छपा मयूरू। लक देखि कै छपा सदूरू॥
भौहन्ह धनुक छपा आकारा। बेनी बासुकि छपा पतारा॥
खड़ा छपा नासिका बिसेखी। अमृत छपा अधररस देखी॥
पहुँचहि छपी कवँल पौनारी। जघ छपा कदली होइ बारी॥

अछरी रूप छपानी जबहिं चली धनि साजि।
जावत गरब गहेली सबै छपी मन लाजि॥

मिली गोहने सखी तराई। लेइ चाँद सूरुज पहँ आई॥
पारस रूप चाँद देखराई। देखत सूरुज गा मुरछाई॥
सोरह कला दिस्टि ससि कीन्ही। सहसौ कला सुरुज कै लीन्हीं॥
भा रवि अस्त तराई हसी। सूर न रहा चाद परगसी॥
जोगी आहि न भोगी होई। खाइ कुरकुटा गा पै सोई॥
पदमावति जसि निरमल गगा। तू जो कत जोगी भिखमगा॥
आइ जगावहि चेला जागै। आवा गुरू पाय उठि लागै॥

बोलहि सबद सहेली कान लागि गहि माथ।
गोरख आइ ठाढ भा, उठु रे चेला नाथ॥

सुनि यह सबद अमिय अस लागा। निद्रा टूटि सोइ अस जागा॥
गही बाँह धनि सेजवाँ आनी। अचल ओट रही छपि रानी॥
सकुचै डरै मनहिमन बारी। गहु न बाँह रे जोगि भिखारी॥
ओहट होसि, जोगि! तोरि चेरी। आवै बास कुरकुटा केरी॥
देखि भभूति छूति मोंहि लागै। काँपै चाँद सूर सौं भागै॥

जोगि तोरि तपसी कै काया । लागि चहै मोरे अंग छाया ॥
बार भिखारि न माँगसि भीखा । माँगै आइ सरग पर सीखा ॥
जोगि भिखारी कोई मदिर न पैठै पार ॥
मागि लेहु किछु भिच्छा जाइ ठाढ होइ बार ॥
मैं तुम्ह कारन पेम पियारी । राज छाँड़ि कै भएऊ भिखारी ॥
नेह तुम्हार जो हिये समाना । चितउर सौं निसरेउँ होइ आना ॥
जस मालति कहँ भौर बियोगी । चढा बियोग, चलेउ होइ जोगी ॥
भौर खोजि जस पावै केवा । तुम्ह कारन मै जिउ पर छेवा ॥
भएउँ भिखारि नारि तुम्ह लागी । दीप लग होइ अगएउँ आगी ॥
एक बार मरि मिलै जो आई । दूसरि बार मरै कित जाई ॥
कित तेहि मीचु जो मरि के जीया । भा सो अमर अमृत मधु पीया ॥
भौर जो पावै कँवल कहँ बहु आरति, बहु आस ।
भौर होइ नेवछावरि कँवल देइ हँसि बास ॥
आपने मुह न बड़ाई छाजा । जोगी कतहुँ होहि नहिं राजा ॥
हौ रानी, तू जोगि भिखारी । जोगिहिं भोगिहि कौन चिन्हारी ॥
जोगी सबै छुद अस खेला । तू भिखारि तेहि माहिं अकेला ॥
पौन बाँधि अपसवहि अकासा । मनसहि जाहि ताहिके पासा ॥
एही भाँति सिस्टि सब छरी । एही भेख रावन सिय हरी ॥
भौरहिं मीचु नियर जब आवा । चपा बास लेइ कहँ धावा ॥
दीपक जोति देखि उजियारी । आइ पाँखि होइ परा भिखारी ॥
रैनि जो देखै चदमुख ससि तन होइ अलोप ।
तुहुँ जोगी तस भूला करि राजा कर ओप ॥
अनुधनि तू निसियर निसि माहाँ । हौ दिनिअर जेहि कै तू छाहाँ ॥
चाँदहि कहाँ जोति औ करा । सुरुज के जोति चाँद निरमरा ॥
भौर बास चपा नहि लेई । मालति जहाँ तहाँ जिउ देई ॥
तुम्ह हुँत भएउँ पतग कै करा । सिंघलदीप आइ उडि परा ॥
सेएउँ महादेव कर बारू । तजा अन्न भा पवन अहारू ॥
अस मै प्रीति गाँठि हिय जोरी । कटै न काटे छुटै न छोरी ॥
सीतै भीखि रावनहि दीन्ही । तूँ असि निठुर अतरपट कीन्ही ॥
रँग तुम्हारेहि रातेउ चढेउँ गगन होइ सूर ॥
जँह ससि सीतल तहँ तपौ मन हींछा धनिपूर ॥
जोगि भिखारि करसि बहु बाता । कहसि रग देखौ नहि राता ॥
कापर रगे रँग नहिं होई । उपजै औटि रग भल सोई ॥
चँद के रग सुरुज जस राता । देखै जगत साँझ परभाता ॥
दगधि बिरह निति होइ अँगारा । ओही आच धिके ससारा ॥

जौ मजीठ औटै बहु आँचा । सो रँग जनम न डोलै राँचा ॥
जरै बिरह जस दीपक-बाती । भीतर जरै उपर होइ राती ॥
जरि परास होइ कोइल भेसू । तब फूलै राता होइ टेसू ॥

पान सुपारी खैर जिमि मेरइ करै चकचून ।
तौ लगि रग न राँचै जौ लगि होइ न चून ॥

का, धनि पान रग का चूना । जेहि तन नेह दाध तेहि दूना ॥
हौ तुम्ह नेह पियर भा पानू । पेजी हुँत सोनरास बखानू ॥
सुनि तुम्हार ससार बडौना । जोग लीन्ह तन कीन्ह गडौना ॥
करहिं जो किगरी लेइ बैरागी । नौती होइ बिरह कै आगी ॥
फेरि फेरि तन कीन्ह भुजैना । औटि रक्त रग हिरदय औना ॥
सूखि सोपारी भा मन मारा । सिरहि सरौना करवत सारा ॥
हाड़ चून भा बिरहहि दहा । जानै सोइ जो दाध इमि सहा ॥

सोइ जान वह पीरा जहि दुःख ऐस सरीर ।
रकत पियासा होइ जो का जानै पर पीर ॥

जोगिन्ह बहुत छंद न ओराहीं । बूद सेवाती जैस पराही ॥
परहि भूम पर होइ कचूरू । परहि कदलि पर होइ कपूरू ॥
परहि समुद्र खार जल ओही । परहि सीप तौ मोती होहीं ॥
परहि मेरु पर अमृत होई । परहि नाग मुख विष होइ सोई ॥
जोगी भौर निठुर ए दोऊ । केहि आपन भए कहै जौ कोऊ ॥
एक ठाँव ए थिर न रहाहीं । रस लेइ खेलि अनत कहुं जाहीं ॥
होइ गही पुनि होइ उदासी । अत काल दूवौ बिसवासी ॥

तेहि सौ नेह को दिढ करै ! रहहि न एकौ देस ।
जोगी भौर भिखारी इन्ह सौ दूरि अदेस ॥

थल थल नग न होहि जेहिं जोती । जल जल सीप न उपनहिं मोती ॥
बन बन बिरिछ न चदन होई । तन तन बिरह न उपनै सोई ॥
जेहि उपना सो औटि मर गएऊ । जनम निनार न कबहूँ भयऊ ॥
जल अबुज रवि रहै अकासा । जौं इन्ह प्रीति जानु एक पासा ॥
जोगी भौर जो थिर न रहहीं । जेहि खोजहिं तेहि पावहि नाहीं ॥
मै तोहि पाएँउ आपन जीऊ । छोंड़ि सेवाति न आनहिं पीऊ ॥
भौंर मालती मिलै जौ आई । सो तजि आन फूल कित जाई ॥

चपा प्रीति न भौंरहि दिन दिन आगरि वास ।
भौंर जो पावै मालती मुएहु न छोंड़हि पास ॥

ऐसे राजकुँवर नहि मानौं । खेलु सारि पासा तब जानौं ॥
काँचे बारह परा जो पाँसा । पाके पैंत परी तनु रासा ॥
रहै न आठ अठारह भाखा । सोरह सतरस रहैं न राखा ॥

सत जो धरै सो खेलन हारा । ढारि इग्यारह जाइ न मारा ॥
तूँ लीन्हें आछसि मन दूवा । औ जुग सारि चहसि पुनि छूवा ॥
हौं नव नेह रचौ तेहि पाहाँ । दसवँ दाँव तोरे हिय माहाँ ॥
तौ चौपर खेलौ करि हिया । जौ तरहेल होइ सौतिया ॥
जेहि मिलि बिछुरन औ तपनि अंत होइ जौ नित ।
तेहि मिलि गाजन को सहै बरु बिनु मिले निचित ॥
बोलौ रानि बचन सुनु साँचा । पुरुष न बोल सपथ औ बाचा ॥
यह मन लाएँउ तोहि अस नारी । दिन तुइ पासा औ निसि सारी ॥
पौ परि बारहि बार मनाएउ । सिरसौं खेलि पैंत जिउ लाएउ ॥
हौं अब चौक पंज ते बाची । तुम्ह बिन गोट न आवहि काँची ॥
पाकि उठाएउ आस करीता । हौं जिउ तोहि हारा तुम्ह जीता ॥
मिलि कै जुग नहि होहु निनारी । कहाँ बीच दूती देनहारी ॥
अब जिउ जनम जनम तोहि पासा । चढेउ जोग आएउँ कैलासा ॥
जाकर जीउ बसै जेहि तेहि पुन ताकरि टेक ।
कनक सोहाग न बिछुरै औटि मिलै होइ एक ॥
बिहँसी धनि सुनि कै सत बाता । निहचय तू मोरे रँग राता ॥
निहचय भौंर कँवल रस रसा । जो जेहि मन सो तेहि मन बसा ॥
जब हीरा मन भएउ सँदेसी । तुम्ह हुँत मँडप गएउँ परदेसी ॥
तोर रूप तस देखिउँ लोना । जनु जोगी तू मेलेसि टोना ॥
सिधि गुटिका जो दिस्टि कमाई । पारहि मेलि रूप बैसाई ॥
भुगुति देइ कह मैं तोहि दीठा । कँवल नैन होइ भौंर बईठा ॥
नैन पुहुप तू अलि भा सोभी । रहा बेधि अस उडा न लोभी ॥
जाकरि आस होइ जेहि तेहि पुनि ताकरि आस ।
भौंर जो दाधा कँवल कह कस न पाव सो बास ॥
कौन मोहनी दहुं हुति तोही । जो तोहि बिथा सो उपनी मोही ॥
बिनु जल मीन तलफ जस जीऊ । चातकि भइउ कहत पिउ पीऊ ॥
जरिउँ बिरह जस दीपक बाती । पथ जोहत भई सीप सेवाती ॥
डाढि डाढि जिमि कोइल भई । भइउ चकोरि नींदि निसि गई ॥
तोरे पेम पेम मोहि भएऊ । राता हेम अगिनि जिमि तयऊ ॥
हीरा दिपै जौ सूर उदौती । नाहित कित पाहन कहँ जोती ॥
रवि परगासे कँवल बिगासा । नाहित कित मधुकर कित बासा ॥
तासौं कौन अँतरपट जो अस पीतम पीउ ।
नेवछावरि अब सारौं तन, मन, जोबन जीउ ॥
हँसि पदमावत माना बाता । निहचय तू मोरे रंग राता ॥
तू राजा दुहुँ कुल उजियारा । अस कै चरचिउँ मरम तुम्हारा ॥

पै तू जबू दीप बसेरा । किमि जानेसि कस सिघल मेरा ॥
किमि जानेसि सो मानस केवा । सुनि सो भौंर भा जिउ पर छेवा ॥
ना तुइ सुनी न कबहूँ दीठी । कैस चित्र होइ चितहि पईठी ॥
जौ लहि अगिनि करै नहि भेदू । तौ लहि औटि चुवै नहि मेदू ॥
कहँ सकर तोहि ऐस लखावा । मिला अलख अस पेम चखावा ॥

जेहि कर सत्य सँघाती तेहि कर डर सोइ मेट ।
सो सत कहु कैसे भा दुवौ भाँति जो भेट ॥

सत्य कहौ सुनु पदमावती । जह सत पुरुष तहाँ सुरसती ॥
पाएउ सुवा कही वह बाता । भा निहचय देखत मुख राता ॥
रूप तुम्हार सुनेउँ अस नीका । जेहि चढा काहु कह टीका ॥
चित्र किएउ पुनि लेइ लेइ नाऊ । नैनहि लागि हिये भा ठाऊँ ॥
हौ भा साँच सुनत ओहि घडी । तुम होइ रूप आइ चित चढी ॥
हौ भा काठ मूति मन मारे । चहै जो कर सब हाथ तुम्हारे ॥
तुम्ह जौ डोलाइहु तबहीं डोला । मौन साँस जौ दीन्ह तौ बोला ॥

को सोवै को जागै अस हौं गएउ बिमोहि ।
परगट गुपुत न दूसर जह देखौ तह तोहि ॥

बिहँसी धनि सुनि कै सत भाऊ । हौं रामा तू रावन राऊ ॥
रहा जो भौंर कँवल के आसा । कस न भोग मानै रस बासा ॥
जस सत कहा कुँवर तू मोही । तस मन मोर लाग पुनि तोही ॥
जब हूँत कहि गा पखि सँदेसी । सुनिउ कि आवा है परदेसी ॥
तब हुँत तुम्ह बिन रहै न जीऊ । चातकि भइउँ कहत पिउ पीऊ ॥
भइउँ चकोरि सो पथ निहारी । समुद सीप जस नैन पसारी ॥
भइउ बिरह दहि कोइल कारी । डार डार जिमि कूकि पुकारी ॥

कौन सो दिन जब पिउ मिलै यह मन राता जासु ।
वह दुख देखै मोर सब हौ दुख देखौ तासु ॥

कहि सत भाव भई कठँ लागू । जनु कचन औ मिला सोहागू ॥
चौरासी आसन पर जोगी । खट रस बधक चतुर सो भोगी ॥
कुसुम माल असि मालति पाई । जनु चपा गहि डार ओनाई ॥
कली बेधि जन भँवर भुलाना । हना राहु अरजुन के बाना ॥
कचन करी जरी नग जोती । बरमा सौ बेधा जनु मोती ॥
नारँग जानि कीर नख दिये । अधर आमरस जानहुँ लिए ॥
कौतुक केलि करहिं दुख नसा । खूँदहिं कुरलहि जनु सर हसा ॥

रही बसाइ बासना चोवा चदन मेद ।
जेहि अस पदमिनि रानी सो जानै यह भेद ॥

रतनसेन सो कंत सुजानू । खटरस-पंडित सोरह बानू ॥
तस होइ मिले पुरुष औ गोरी । जैसी बिछुरी सारस जोरी ॥
रची सारि दूनौ एक पासा । होइ जुग जुग आवहिं कैलासा ॥
पिय धनि गही दीन्हि गलबाहीं । धनि बिछुरी लागी उर माहीं ॥
ते छकि रस नव केलि करेहीं । चोका लाइ अधर रस लेहीं ॥
धनि नौ सात सात औ पाँचा । पूरुष दस तेरह किमि बाँचा ॥
लीन्ह बिधाँसि बिरह धनि साजा । औ सब रचन जीत हुत राजा ॥

जनहुँ औटि कै मिलि गए तस दूनौ भए एक ।
कंचन कसत कसौटी हाथ न कोऊ टेक ॥

चतुर नारि चित अधिक चिहूँटी । जहाँ पेम बाढ़ै किमि छूटी ॥
कुरला काम केरि मनुहारी । कुरल जेहि नहिं सो न सुनारी ॥
कुरलहि होइ कंत कर तोखू । कुरलहि किए पाव धनि मोखू ॥
जेहि कुरला सो सोहाग सुभागी । चंदन जैस साम कंठ लागी ॥
गेंद गोद कै जानहु लई । गेंद चाहि धनि कोमल भई ॥
दारिउ दाख बेल रस चाखा । पिय के खेल धनि जीवन राखा ॥
भएउ बसंत कली मुख खोली । बैन सोहावन कोकिल बोली ॥

पिउपिउ करत जो सूखि रहि धनि चातक की भाँति ।
परी सो बूंद सीप जनु मोती होइ सुख साँति ॥

भयउ जूझ जस रावन रामा । सेज बिधाँसि बिरह संग्रामा ॥
लीन्हि लंक कंचन गढ़ टूटा । कीन्ह सिंगार अहा सब लूटा ॥
औ जोबन मैमंत बिधाँसा । बिचला बिरह जीउ जो नासा ॥
टूटे अंग अंग सब भेसा । छूटी माँग भंग भए केसा ॥
कंचुकि चूर चूर भइ तानी । टूटे हार मोति छहरानी ॥
बारी टाँड सलोनी टूटी । बाहूँ कँगन कलाई फूटी ॥
चंदन अंग छूट अस भेंटी । बेसरि टूटि तिलक गा मेटी ॥

पुहुप सिंगार सँवार सब जोबन नवल बसंत ।
अरगज जिमि हिय लाइ कै मरगज कीन्हेउ कंत ॥

बिनय करै पदमावति बाला । सुधि न सुराही पिएउ पियाला ॥
पिउ आयसु माथे पर लेऊ । जो माँगै नइ नइ सिर देऊ ॥
पै पिय एक बचन सुनु मोरा । चाखु पिया मधु थोरै थोरा ॥
पेम सुरा सोई पै पिया । लखै न कोई कि काहू दिया ॥
चुवा दाख मधु जो एक बारा । दूसरि बार लेत बेसँभारा ॥
एक बार जो पी कै रहा । सुख जीवन सुख भोजन लहा ॥
पान फूल रस रंग करीजै । अधर अधर सौ चाखा कीजै ॥

जो तुम चाहौ सो करौ न जानौ भल मद ।
जो भावै सो होइ मोहि तुम्ह पिउ चहौ आनद ।।

सुनु धनि प्रेम सुरा के पिए । मरन जियन डर रहै न हिए ।।
जेहि मद तेहि कहाँ ससारा । की सो धूमि रह की मतवारा ।।
सो पै जान पियै जो कोई । पी न अघाई जाइ परि सोई ।।
जा कह होइ बार एक लाहा । रहै न ओहि बिनु ओही चाहा ।।
अरथ दरब सो देइ बहाई । की सब जाहु न जाइ पियाई ।।
रातिहु दिवस रहै रस भीजा । लाभ न देख न देखै छीजा ।।
भोर होत तब पुलह सरीरू । पाव खुमारी सीतल नीरू ।।

एक बार भरि देहु पियाला बार बार को माँग ?।
मुहमद किमिन पुकारै ऐस दाँव जो खाँग ।।

भा बिहान ऊठा रवि साईं । चहुँ दिसि आई नखत तराईं ।।
सब निसि सेज मिला ससि सूरु । हार चीर बलया भए चूरू ।।
सो धनि पान चून भइ चोली । रँग रँगीलि निरँग भइ भोली ।।
जागत रैनि भएउ भिनसारा । भई अलस सोवत बेकरारा ।।
अलक सुरगिनि हिरदय परी । नारँग छुव नागिनि विष भरी ।।
लरी मुरी हिय हार लपेटी । सुरसरि जनु कालिदी भेंटी ।।
जनु पयाग अरइल बिचमिली । सोभित बेनी रोमावली ।।

नाभी लाभु पुन्नि कै कासी कुड कहाव ।
देवता करहि कलप सिर आपुहि दोष न लाव ।।

बिहँसि जगावहि सखी सयानी । सूर उठा, उठु पदमिनि रानी ।।
सुनत सूर जनु कँवल बिगासा । मधुकर आइ लीन्ह मधु बासा ।।
जनहुँ भाति निसयानी बसी । अति बेसँभार फूलि जनु अरसी ।।
नैन कवंल जानहुं दुइ फूले । चितवन मोहि मिरिग जनू भूले ।।
तन न सँभार केस औ चोली । चित अचेत जन बाउरि भोली ।।
भइ ससि हीन गहन अस गही । बिथुरे नखत सेज भरि रही ।।
कँवल माँह जनु केसरि दीठी । जोबन हुत सो गवाइ बईठी ।।

बेलि जो राखी इद्र कहँ पवन बास नहि दीन्ह ।
लागेउ आइ भौंर तेहि कली बेधि रस लीन्ह ।।

हँसि हँसि पूछहि सखी सरेखी । मानहुँ कुमुद चद्र मुख देखी ।।
रानी तुम ऐसी सुकुमारा । फूल बास तन जीव तुम्हारा ।।
सहि नहि सकहु हिये पर हारु । कैसे सहिउ कत कर भारू ।।
मुख अंबुज बिगसै दिन राती । सो कुँभिलान कहहु केहि भाँती ।।
अधर कवँल जो सहा न पानू । कैसे सहा लाग मुख भानू ।।

लंक जो पैग देत मुर जाई। कैसे रही जौ रावन राई ॥
चंदन चोव पवन अस पीऊ। भइउ चित्र सम कस भा जीऊ ॥
सब अरगज मरगज भएउ, लोचन बिंब सरोज।
सत्य कहहु पदमावति सखी परीं सब खोज ॥
कहौं सखी आपन सत भाऊ। हौ जो कहति कस रावन राऊ ॥
काँपी भौंर पुहुप पर देखे। जनु ससि गहन तैस मोहिं लेखे ॥
आजु मरम मैं जाना सोई। जस पीयर पिउ और न कोई ॥
डर तौ लगि हिय मिला न पीऊ। भानु के दिस्टि छूटि गा सीऊ ॥
जत खन भानु कीन्ह परगासू। कवँल कली मन कीन्ह बिगासू ॥
हिये छोह उपना औ सीऊ। पिउ न रिसाउ लेउ वरु जीऊ ॥
हुत जो अपार बिरह दुख दूखा। जनहुँ अगस्त उदय जल सूखा ॥
हौ रग बहुतै आनति लहरैं जस समुद।
पै पिउ कै चतुराई खसेउ न एकौ बुंद ॥
करि सिंगार तापहँ का जाऊँ। ओही देखहुँ ठाँवहि ठाऊँ ॥
जौ जिउ महँ तौ उहै पियारा। तनमन सौं नहिं होइ निनारा ॥
नैन माँह है उहै समाना। देखौं तहाँ नाहि कोउ आना ॥
आपन रस आपुहि पै लेई। अधर सोइ लागे रस देई ॥
हिया थार कुच कंचन लाडू। अगमन भेंट दीन्ह कै चाडू ॥
हुलसी लंक लंक सौं लसी। रावन रहसि कसौटी कसी ॥
जोबन सबै मिला ओहि जाई। हौं रे बीच हुत गइउ हेराई ॥
जस किछु देइ धरै कहँ आपन लेइ सँभारि।
रसहि गारि तस लीन्हेसि कीन्हेसि मोहिं ठँठारि ॥
अनु रे छबीली तोहि छबि लागी। नैन गुलाल कंत संग जागी ॥
चंप सुदरसन अस भा सोई। सोन जरद जस केसर होई ॥
बैठ भौंर कुच नारँग बारी। लागे नख उछरी रँग धारी ॥
अधर अधर सों भीज तमोरा। अलका उर मुरि मुरि गा तोरा ॥
रायमुनी तुम औ रतमुहीं। अलिमुख लागि भई फुलचुही ॥
जैस सिंगार हार सौं मिली। मालति ऐसि सदा रहु खिली ॥
पुनि सिंगार करु कला नेवारी। कदम सेवती बैठु पियारी ॥
कुंद कली सम बिगसी ऋतु बसंत औ फाग।
फुलहू फरहु सदा सुख औ सुख सुफल सोहाग ॥
कहि यह बात सखी सब धाई। चंपावति पहँ जाइ सुनाई ॥
आजु निरँग पदमावति बारी। जीवन जानहुँ पवन अधारी ॥
तरकि तरकि गइ चँदन चोली। धरकि धरकि हिय उठै न बोली ॥
अही जो कली कवँल रस पूरी। चूर चूर होइ गई सो चूरी ॥

देखहु जाइ जैसि कुँभिलानी। सुनि सोहाग रानी बिहँसानी॥
लेइ सँग सबही पदमिनि नारी। आई जहँ पदमावति बारी॥
आइ रूप सो सबही देखा। सोन बरन होइ रही सो रेखा॥
कुसुम फूल जस मरदै निरंग देख सब अग।
चपावति भइ बारी चूम केस औ मग॥
सब रनिवस बैठ चहुँ पासा। ससि मडल जनु बैठ अकासा॥
बोली सबै बारि कुँभिलानी। करहु सँभार देहु खँड़वानी॥
कवँल कली कोमल रग भीनी। अति सुकुमारि लक कै छीनी॥
चाँद जैस धनि हुत परगासा। सहस करा होइसूर बिगासा॥
तेहि के झार गहन अस गही। भइ निरग मुख जोति न रही॥
दरब बार किछु पुन्न करेहूँ। औ तेहि लेइ सन्यासिहि देहू॥
भरि कै थार नखन गज मोती। बारा कीन्ह चद कै जोती॥
कीन्ह अरगजा गरदन औ सखि दीन्ह नहानु।
पुनि भइ चौदसि चाँद सो रूप गएउ छपि भानु॥
पुनि बहु चीर आन सब छोरी। सारी कचुकि लहर पटोरी॥
फुँदिया और कसनिया राती। छायल बँद लाए गुजराती॥
चिकवा चीर मघौना लाने। मोति लाग औ छापे सोने॥
सुरँग चीर मल सिंघल दीपी। कीन्ह जो छाया धनि वह छीपी॥
पेमचा डोरिया औ चौधारी। साम सेत पीयर हरियारी॥
सात रग औ चित्र चितेरे। भरि के दीठि जाहि नहि हेरे॥
चँदनौता औ खरदुक भारी। बाँसपूर झिलमिल कै सारी॥
पुनि अभरन बहु काढा अनबन भाँति जराव।
हेरि फेरि निनि पहिरै जब जैसे मन भाव॥

षट् ऋतु वर्णन

पदमावति सब सखी बुलाई । चीर पटोर हार पहिराई ॥
सीस सबन्ह के सेंदुर पूरा । औ राते सब अग सेंदूरा ॥
चदन अगर चित्र सब भरीं । नए चार जानहु अवतरीं ॥
जनहुँ कवँल सँग फूलीं कूई । जनहुँ चाँद सँग तरईं ऊई ॥
धनि पदमावति धनि तोर नाहू । जेहिं अभरन पहिरा सब काहू ॥
बारह अभरन सारह सिंगारा । तोहि सौंह नहिं ससि उजियारा ॥
ससि सकलक रहै नहि पूजा । तू निकलक न सरि कोइ दूजा ॥

काहू बीन गहा कर काहू नाद मृदग ।
सबन्ह अनद मनावा सहसि कूदि एक सग ॥

पदमावति कह सुनहु सहेली । हौं सो कवल कुमुदिनि-बेली ॥
कलस मानि हौं तेहि दिन आई । पूजा चलहु चढावहिं जाई ॥
मँझ पदमावति कर जो बेवानू । जनु परभात परै लखि भानू ॥
आस पास बाजत चौडोला । दुदुभि, झाझ, तूर, डफ, ढोला ॥
एक सग सब सोंधे-भरी । देव दुवार उतरि भइ खरी ॥
अपने हाथ देव नहवावा । कलस सहस इक घिरित भरावा ॥
पोता मडप अगर औ चदन । देव भरा अरगज औ बदन ॥

कै प्रनाम आगे भई विनय कीन्हि बहु भाँति ।
रानी कहा चलहु घर सखी होति है राति ॥

भइ निसि धनि जस ससि परगसी । राजै देखि भूमि फिर बसी ॥
भइ कटकई सरद ससि आवा । फेरि गगन रवि चाहै छावा ॥
सुनि धनि भौंह धनुक फिर फेरी । काम कटाछन्ह कोरहि हेरा ॥
जानहु नाहि पैज पिय खाँचौ । पिता सपथ हौं आजु न बाँचौ ॥
कालिह न होइ रही महि रामा । आजु करहु रावन सग्रामा ॥
सेन सिंगार महूँ है साजा । गज गति चाल अचल गति धजा ॥
नैन समुद औ खड़ग नासिका । सखरि जूझ को मो सहुँ टिका ॥

हौं रानी पदमावति मै जीता रस भोग ।
तू सरवरि करु तासौं जो जोगी तोहि जोग ॥

हौं अस जोगि जान सब काऊ । बीर सिंगार जीते मै दोऊ ॥
उहाँ सामुहें रिपु दल माहाँ । यहाँ त काम कटक तुम्ह पाहाँ ॥
उहाँ न हय चढ़ि कै दल मडौं । इहाँ न अधर अमिय रस खडौं ॥
उहाँ न खड़ग नरिंदहि भारौं । इहा त बिरह तुम्हार सघारौं ॥

उहाँ त गज पेलौ होइ केहरि। इहवाँ काम कामिनी हिय हरि॥
उहाँ त लूटौ कटक खँधारू। इहाँ त जीतौ तोर सिंगारू॥
उहाँ त कुंभस्थल गज नावौं। इहाँ त कुच कलसहिं कर लावौं॥
परै बीच धरहरिया प्रेम राज को टेक।
मानहि भोग छवौ ऋतु मिलि दूवौ होइ एक॥
प्रथम बसंत नवल ऋतु आई। सुऋतु चैत बैसाख सोहाई॥
चंदन चीर पहिरि धनि अंगा। सेंदुर दीन्ह बिहँसि भरि मंगा॥
कुसुम हार औ परिमल बासू। मलयागिरि छिरका कैलासू॥
सौर सुपेती फूलन डासी। धनि औ कंत मिले सुख बासी॥
पिउ सँजोग धनि जोबन बारी। भौंर पुहुप सँग करहिं धमारी॥
होइ फाग भलि चाँचरि जोरी। बिरह जराइ दीन्ह जस होरी॥
धनि ससि सरिस तपै पिय सूरू। नखत सिंगार होहिं सब चूरू॥
जिन घर कंता ऋतु भली आव बसंत जो नित्त।
सुख भरि आवहिं देहरै दुःख न जानै कित्त॥
ऋतु ग्रीषम कै तपनि न तहाँ। जेठ असाढ़ कंत घर जहाँ॥
पहिरि सुरंग चीर धनि झीना। परिमल मेद रहा तन भीना॥
पदमावति तन सिअर सुबासा। नैहर राज कंत घर पासा॥
औ बड जूड़ तहाँ सोवनारा। अगर पोति सुख तनै ओहारा॥
सेज बिछावन सौर सुपेती। भोग बिलास करहिं सुख सेंती॥
अगर तमोर कपुर भिमसेना। चंदन चरचि लाव तन बेना॥
भा अनंद सिंघल सब कहूँ। भागवंत कहँ सुख ऋतु छहूँ॥
दारिउँ दाख लेहि रस आम सदाफर डार।
हरियर तन सुअटा कर जो अस चाखन हार॥
ऋतु पावस बरसै पिउ पावा। सावन भादौं अधिक सोहावा॥
पदमावति चाहति ऋतु पाई। गगन सोहावन भूमि सोहाई॥
कोकिल बैन पाँति बग छूटी। धनि निसरी जनु बीर बहूटी॥
चमक बीजु बरसै जल सोना। दादुर मोर सबद सुठि लोना॥
रँग राती पीतम सँग जागी। गरजे गगन चौंकि गर लागी॥
सीतल बूँद ऊँच चौपारा। हरियर सब देखाइ संसारा॥
हरियर भूमि कुसुंभी चोला। औ धनि पिउ सँग रचा हिंडोला॥
पवन झकोरे होइ हरष लागे सीतल बास।
धनि जानै यह पवन है पवन सो अपने पास॥
आइ सरद ऋतु अधिक पियारी। आसिन कातिक ऋतु उजियारी॥
पदमावति भइ पुनिउँ कला। चौदसि चाँद उई सिंघला॥
सोरह कला सिंगार बनावा। नखत भरा सूरज ससि पावा॥

भा निरमल सब धरति अकासू। सेज सँवारि कीन्ह फुल-बासू॥
सेत बिछावन औ उजियारी। हँसि हँसि मिलहि पुरुष औ नारी॥
सोन-फूल भइ पुहुमी फूली। पिय धनि सौं, धनि पिय सौं भूली॥
चख अंजन दइ खंजन देखावा। होइ सारस जोरी रस पावा॥

एहि ऋतु कंता पास जेहि, सुख तेहि के हिय माँह।
धनि हँसि लागै पिउ गरै, धनि-गर पिउ कै बाँह॥

ऋतु हेमंत संग पिएउ पियाला। अगहन पूस सीत सुख-काला॥
धनि औ पिउ महँ सीउ सोहागा। दुहुँन्ह अंग एकै मिलि लागा॥
मन सौं मन, तन सौं तन गहा। हिय सौं हिय बिच हार न रहा॥
जानहु चंदन लागेउ अंगा। चंदन रहै न पावै संगा॥
भोग करहिं सुख राजा रानी। उन्ह लेखे सब सिस्टि जुडानी॥
जूझ दुवौ जोबन सौं लागा। बिचहुँत सीउ जीउ लेइ भागा॥
दुइ घट मिलि एकै होइ जाहीं। ऐस मिलहिं तबहूँ न अघाहीं॥

हंसा केलि करहिं जिमि, खूँदहि कुरलहिं दोउ।
सीउ पुकारि कै पार भा जस चकई क बिछोउ॥

आइ सिसर ऋतु तहाँ न सीऊ। जहाँ माघ फागुन घर पीऊ॥
सौंर सुपेती मंदिर रानी। दगल चीर पहिरहिं बहु भाँती॥
घर घर सिंघल होइ सुख भोजू। रहा न कतहुँ दुःख कर खोजू॥
जहँ धनि पुरुष सीउ नहिं लागा। जानहुँ काग देखि सर भागा॥
जाइ इंद्र सौं कीन्ह पुकारा। हौं पदमावति देस निसारा॥
एहि ऋतु सदा संग महँ सोवा। अब दरसन तें मोर बिछोवा॥
अब हँसि कै ससि सूरहि भेंटा। रहा जो सीउ बीच सो मेटा॥

भएउ इंद्र कर आयसु, बड़ सताव यह सोइ।
कबहुँ काहु के पौर भइ, कबहुँ काहु के होइ॥

———

गोरा-बादल-युद्ध खंड

मतैं बैठि बादल औ गोरा। सो मत कीज परैं नहिं भोरा ॥
पुरुष न करहिं नारि मति काँची। जस नौशाबा कीन्ह न बाँची ॥
परा हाथ इसकदर बैरी। सो कित छोड़ि कै भई बदेरी ॥
सुबुधि सौ ससी सिघ कहँ मारा। कुबुधि सिघ कूआँ परि हारा ॥
देवहि छरा आइ अस आँटी। सज्जन कचन दुरजन माटी ॥
कचन जुरै भए दस खडा। फूटि न मिलै काँच कर भडा ॥
जस तुरकन्ह राजा छर साजा। तस हम साजि छोड़ावहि राजा ॥

पुरुष तहाँ पै करै छर, जहँ बर किए न आँट।
जहाँ फूल तह फूल है, जहाँ काँट तहँ काँट ॥

सोरह सौ चडोल सँवारे। कुवर सजोइल कै बैठागे ॥
पदमावति कर सजा बिवानू। बैठ लोहार न जाने भानू ॥
रचि बिवान सो साजि सँवारा। चहुँ दिसि चँवर करहि सब ढारा ॥
साजि सबै चडोल चलाए। सुरँग ओहार, मोति बहु लाए ॥
भए सँग गोरा बादल बली। कहत चले पदमावति चली ॥
हीरा रतन पदारथ झूलहिं। देखि बिवान देवता भूलहि ॥
सोरह सै सग चलीं सहेली। कँवल न रहा, और को बेली ?॥

राजहि चलीं छोड़ावै, तहँ रानी होइ ओल।
तीस सहस तुरि खिंची, सँग सोरह सै चडोल ॥

राजा बँदि जेहि के सौंपना। गा गोरा तेहि पहँ अगमना ॥
टका लाख दस दीन्ह अँकोरा। बिनती कीन्हि पायँ गहि गोरा ॥
बिनवा बादसाह सौं जाई। अब रानी पदमावति आई ॥
बिनती करै आइ हौं दिल्ली। चितउर कै मोहि स्यो है किल्ली ॥
बिनती करै जहाँ है पूजी। सब भँडार कै मोहि स्यो कूँजी ॥
एक घरी जौ अज्ञा पावौं। राजहि सौंपि मदिर महँ आवौं ॥
तब रखवार गए सुलतानी। देखि अँकोर भए जस पानी ॥

लीन्ह अँकोर हाथ जेहि, जीउ दीन्ह तेहि हाथ।
जहाँ चलावै तहँ चलै, फेरे फिरै न माथ ॥

लोभ पाप कै नदी अँकोरा। सत्त न रहै हाथ जौ बोरा ॥
जहँ अकोर तहँ नीक न राजू। ठाकुर केर बिनासै काजू ॥
भा जिउ घिउ रखवारन्ह केरा। दरब-लोभ चडोल न हेरा ॥

जाइ साह आगे सिर नावा। ए जगसूर! चाँद चलि आवा॥
जावत हैं सब नखत तराईं। सोरह सै चडोल सो आईं॥
चितउर जेति राज कै पूँजी। लेइ सो आइ पदमावति कूँजी॥
बिनती करै जोरि कर खरी। लेइ सौंपौं राजा एक घरी॥
इहाँ उहाँ कर स्वामी, दुऔ जगत मोहि आस।
पहिले दरस देखावहु, तौ पठवहु कैलास॥
आज्ञा भई, जाय एक घरी। छूँछि जो घरी फेरि बिधि भरी॥
चलि बिवान राजा पहँ आवा। सग चडोल जगत सब छावा॥
पदमावति के भेस लोहारू। निकसि काटि बंदि कीन्ह जोहारू॥
उठा कोपि जस छूटा राजा। चढा तुरग, सिंघ अस गाजा॥
गोरा बादल खाँडे काढे। निकसि कुँवर चढि चढि भए ठाढ़े॥
तीख तुरग गगन सिर लागा। केहुँ जुगुति करि टेकी बागा॥
जो जिउ ऊपर खड्ग सँभारा। मरनहार सो सहसन्ह मारा॥
भई पुकार साह सौं, ससि औ नखत सो नाहिं।
छर कै गहन गरासा, गहन गरासे जाहिं॥
लेइ राजा चितउर कहँ चले। छूटेउ सिंघ, मिरिग खलभले॥
चढा साहि, चढि लाग गोहारी। कटक असूझ परी जग कारी॥
फिर गोरा बादल सौं कहा। गहन छूटि पुनि चाहै गहा॥
चहुँ दिसि आवै लोपत भानू। अब इहै गोइ, इहै मैदानू॥
तुइ अब राजहि लेइ चलु गोरा। हौ अब उलटि जुरौं भा जोरा॥
वह चौगान तुरुक कस खेला। होइ खेलार रन जुरौं अकेला॥
तौ पावौं बादल अस नाऊँ। जौ मैदान गोइ लेइ जाऊँ॥
आजु खड्ग चौगान गहि, करौं सीस-रिपु गोइ।
खेलौं सौंह साह सौं, हाल जगत महँ होइ॥
तब अगमन होइ गोरा मिला। तुइ राजहि लेइ चलु, बादला!॥
पिता मरै जो सँकरे साथा। मीचु न देइ पूत के माथा॥
मैं अब आउ भरी औ भूँजी। का पछिताव आउ जौ पूजी?॥
बहुतन्ह मारि मरौं जौ जूझी। तुम जिनि रोएहु तौ मन बूझी॥
कुँवर सहस सँग गोरा लीन्हे। और बीर बादल सँग कीन्हे॥
गोरहि समदि मेघ अस गाजा। चला लिए आगे करि राजा॥
गोरा उलटि खेत भा ठाढा। पुरुष देखि चाव मन बाढ़ा॥
आव कटक सुलतानी गगन छपा मसि माँझ।
परति आव जग कारी होति आव दिन साँझ॥
होइ मैदान परी अब गोई। खेल हार दहुँ का करि होई॥
जोबन-तुरी चढी जो रानी। चली जीति यह खेल सयानी॥

कटि चौगान, गोइ कुच साजो। हिय मैदान चली लेइ बाजा॥
हाल सो करै गोइ लेइ बाढा। कूरी दुवौ पैज कै काढा॥
भइ पहार वै दूनौ कूरा। दिस्टि नियर पहुँचत सुठि दूरा॥
ठाढ बान अस जानहु दोऊ। सालै हिये अन काढै काऊ॥
सालहि हिय, न जाहि सहि ठाढे। सालहिं मरै चहै अनबाढ़े।
मुहमद खेल प्रेम कर, कठिन चौगान।
सीस न दीजै गोइ जिमि, हाल न होइ मैदान।

फिरि आगे गोरा तब हाँका। खेलौं करौं आजु रन-साका॥
हौं कहिए धौलागिरि गोरा। टरौं न टारे अंग न मोरा॥
सोहिल जैस गगन उपराहीं। मेघ-घटा मोहि देखि बिलाहीं॥
सहसौ सीस सेस सम लेखौं। सहसौ नैन इन्द्र सम देखौं॥
चारिउ भुजा चतुरभुज आजू। कंस न रहा और को साजू?॥
हौं होइ भीम आजु रन गाजा। पाछे घालि डुंगवै राजा॥
होइ हनुवँत जमकातर ढाहौं। आजु स्वामि साँकरे निबाहौं॥
होइ नल नील आजु हौं देहुँ समुद महँ मेड़।
कटक साह कर टेकौं, होइ सुमेरु रन बेड़॥

ओनई घटा चहूँ दिसि आई। छूटहिं बान मेघ झरि लाई॥
डोलै नाहिं देव जस आदी। पहुँचे आइ तुरुक सब बादी॥
हाथन्ह गहे खडग हरद्वानी। चमकहिं सेल बीजु कै बानी॥
सोझ बान जस आवहिं गाजा। बासुकि डरै सीस जनु बाजा॥
नेजा उठे डरै मन इंदू। आइ न बाज जानि कै हिंदू॥
गोरै साथ लीन्ह सब साथी। जस मैमन्त सूँड़ बिनु हाथी॥
सब मिलि पहिलि उठौनी कीन्ही। आवत आइ हाँक रन दीन्ही॥
रुंड मुंड अब टूटहिं, स्यो बखतर औ कूँड़।
तुरय होहिं बिनु काँधे, हस्ति होहिं बिनु सूँड़॥

ओनवत आइ सेन सुलतानी। जानहुँ परलय आव तुलानी॥
लोहे सेन सूझ सब कारी। तिल एक कहूँ न सूझ उघारी॥
खडग फोलाद तुरुक सब काढे। धरे बीजु अस चमकहिं ठाढ़े॥
पीलवान गज पेले बाँके। जानहुँ काल करहिं दुइ फाँके॥
जनु जमकात करहिं सब भवाँ। जिउ लेइ चहहिं सरग अपसवाँ॥
सेल सरप जनु चाहहिं डसा। लेहिं काढि जिउ मुख बिष-बसा॥
तिन्ह सामुहँ गोरा रन कोपा। अंगद सरिस पावँ भुँइ रोपा॥
सुपुरुष भागि न जाने, भुइँ जौ फिरि फिरि लेइ।
सूर गहे दोऊ कर स्वामि काज जिउ देइ॥

भइ बगमेल, सेल घनघोरा। औ गज-पेल; अकेल सो गोरा॥
सहस कुँवर सहसौ सत बाँधा। भार-पहार जूझ कर काँधा॥
लगे मरै गोरा के आगे। बाग न मोर घाव मुख लागे॥
जैस पतंग आगि धसि लेई। एक मुवै, दूसर जिउ देई॥
टूटहिं सीस, अधर धर मारै। लोटहि कधहिं कध निरारै॥
कोई परहिं रुहिर होइ राते। कोई घायल घूमहि माते॥
कोई खुरखेह गए भरि भोगी। भसम चढाइ परे होइ जोगी॥

घरी एक भारत भा, भा असवारन्ह मेल।
जूझि कुँवर सब निबरे, गोरा रहा अकेल॥

गोरै देख साथि सब जूझा। आपन काल नियर भा, बूझा॥
कोपि सिंघ सामुहँ रन मेला। लाखन्ह सौं नहिं मरै अकेला॥
लेइ हाँकि हस्तिन्ह कै ठटा। जैसे पवन बिदारै घटा॥
जेहि सिर देइ कोपि करवारू। स्यों घोड़े टूटै असवारू॥
लोटहिं सीस कबध निनारे। माठ मजीठ जनहुँ रन ढारे॥
खेलि फाग सेंदुर छिरकावा। चाँचरि खेलि आगि जनु लावा॥
हस्ती घोड़ धाइ जो धूका। ताहि कीन्ह सो रुहिर भभूका॥

भइ अग्या सुलतानी, "बेगि करहु एहि हाथ।
रतन जात है आगे, लिए पदारथ साथ"॥

सबै कटक मिलि गोरहि छेका। गूँजत सिंघ जाइ नहिं टेका॥
जेहि दिसि उठै सोइ जनु खावा। पलटि सिंघ तेहि ठावँ न आवा॥
तुरुक बोलावहिं बोलै बाहाँ। गोरै मीचु धरी जिउ माहाँ॥
मुए पुनि जूझि जाज जगदेऊ। जियत न रहा जगत महँ केऊ॥
जिनि जानहु गोरा सो अकेला। सिंघ के मोंछ हाथ को मेला?॥
सिंघ जियत नहिं आपु धरावा। मुए पाछ कोई घिसियावा॥
करै सिंघ मुख-सौंहहि दीठी। जौ लगि जियै देइ नहिं पीठी॥

रतनसेन जो बाँधा, मसि गोरा के गात।
जौ लगि रुहिर न धोवौं, तौ लगि होइ न रात॥

गरजा बीर सिंघ चढि गाजा। आइ सौंह गोरा सौं बाजा॥
पहलवान सो बखाना बली। मदद मीर हमजा औ अली॥
लँधउर धरा देव जस आदी। और को बर बाँधै को बादी?॥
मदद अयूब सीस चढि कोपे। महामाल जेइ नाव अलोपे॥
औ ताया सालार सो आए। जेइ कौरव पडव पिंड पाए॥
पहुँचा आइ सिंघ असवारू। जहाँ सिंघ गोरा बरियारू॥
मारेसि साँग पेट महँ धसी। काढ़ेसि हुमुकि आँति भुइँ खसी॥

भाँट कहा धनि गोरा, तू भा रावन राव।
आँति समेटि बाँधि कै, तुरय देत है पाव॥
कहेसि अंत भा अब भुइँ परना। अन्त न खसे खेह सिर भरना॥
कहि न गरजि सिंघ अस धावा। सरजा सारदूल पहँ आवा॥
सरजै लीन्ह साँग पर घाऊ। परा खड़ग जनु परा निहाऊ॥
बज्र न साँग बज्र कै डाँड़ा। उठी आगि तस बाजा खाँड़ा॥
जानहु बज्र बज्र सौं बाजा। सब ही कहा परी अब गाजा॥
दूसर खड़ग कंध पर दीन्हा। सरजै ओहि ओड़न पर लीन्हा॥
तीसर खड़ग कूँड़ पर लावा। काँध गुरुज हुत घाव न आवा॥
तस मारा हठि गोरै, उठी बज्र कै आगि।
कोई नियरे नहि आवै, सिंघ सदूरहि लाग॥
तब सरजा कोपा बरिबंडा। जानहु सदूर केर भुजदंडा॥
कोपि गरजि मारेसि तस बाजा। जानहु परी टूटि सिर गाजा॥
ठाँठर टूट फूट सिर तासू। स्यो सुमेरु जनु टूट अकासू॥
धमकि उठा सब सरग पतारू। फिरि गइ दीठि फिरा संसारू॥
भइ परलय अस सबही जाना। काढा खड़ग सरग नियराना॥
तस मारेसि स्यों घोड़े काटा। धरती फाटि सेस-फन फाटा॥
जौ अति सिंह बरी होइ आई। सारदूल सौं कौनि बड़ाई ?॥
गोरा परा खेत महँ, सुर पहुँचावा पान।
बादल लेइगा राजा, लेइ चितउर नियरान॥

कवि नूरमहम्मद कृत
इंद्रावती

स्तुति खंड

धन्य आप जग सिरजन हारा। जिन बिन खभ अकास सँवारा ॥
होऊ जग को आपुहिं राजा। राज दोऊ जग को तेहि छाजा ॥
दीन्हा नैन पंथ पहिचानों। दीन्हा रसना ताहि बखानों ॥
बात सुनै कहँ सरवन दीन्हा। दीन्हा बुद्धि ज्ञान तेहि चीन्हा ॥
गगन कि सोभा कीन्हे सितारा। धरती सोभा मनुष सवारा ॥

आप गुपुत औ परगट, आप आद औ अंत।
आप सुनै औ देखै, कीन्ह मनुष बुधवत ॥

अहइ अकेल सो सिरजन हारा। जानत परगट गुपुत हमारा ॥
कीन्ह गगन रवि ससि महि मेरा। कोउ नाहीं जोरी तेही केरा ॥
कीन्हा राति मिले मुख तासो। कीन्हा दिन कारज है जासो ॥
घन सो महि पर भेजत नीरा। पलुअत सूखी भूमि सरीरा ॥
सब बिलाय जाइहि एक बारा। रहे तेहिक मुख रवि उँजियारा ॥

है स्त्रोता औ दिष्टा, तेहिं सम कोउ न आहि।
जो कुछ है महि गगन महँ, सब सुमिरत है ताहि ॥

अरे दोऊ जग के करतारा। कित कै सकउं बखान तुम्हारा ॥
रसना होइ रोम सब मोहीं। तबहूं बरन न पारउँ तोहीं ॥
है अपार सागर भौ केरा। मोहि करनो को नाव न बेरा ॥
कै किरपा मोहि पार उतारो। दया दृष्टि मोहि ऊपर डारो ॥
है हमकहँ आलम्म तुम्हारी। तोहि दाया सो मुकुत हमारी ॥

है मगु बहुत जगत्त महँ, तिन मगु की नहिं चाव ॥
आपन पंथ देखावहु, राखौं तापर पाँव ॥

सुमिरों चेत धरें मन ठाऊ। अरबी नबी मुहम्मद नाऊं ॥
जा कहँ करता दरस देखाएउ। कै किरपा सब भेद बताएउ ॥
जेहिक बखान अहै लौ लाका। ताहि बखानत दोउ जग थाका ॥
चार यार चारिउ जस तारे। दीन गगन ऊपर उजियारे ॥
अबूबकर औ उमर बखानौं। उस्मा बहुरि अली कहँ आनौं ॥

अहदहुतें अहमद भएउ, एक जोत दुइ नाउं।
भएउ जगत के कारने, परेउ मोहम्मद नाउ ॥

कहौ मोहम्मद साह बखानूं। है सूरज दिहली सुलतानूं ॥
धरम पन्थ जग जग बीच चलावा। निबरन सबरे सौं दुख पावा ॥

पहिरे सलातीनु जग केरे। आए मुहाँस बने हैं चेरे॥
उहै साह नित धरम बढावै। जेहि पहराँ मानुष सुख पावै॥
सब काहू पर दाया धरई। धरम सहित सुलतानी करई॥
धरम भलो सुलतान कहँ, धरम करै जो साह।
सुख पावै मानुष सबै, सबको होइ निबाह॥
कवि अस्थान कीन्ह जेहि ठाऊँ। सो वह ठाऊँ सबरहद नाऊँ॥
पूरब दिस कइलास समान। अहै नसीरुद्दीं कोन थान॥
है भल जग महँ पथिक रहना। लेहु इहासो आगम लहना॥
जग औ आपुहि कस पहिचानों। तरिवर और बटोहिय जानों॥
चला जात जस होइ बटोही। आइ छँहाइ विरिछ तर वोही॥
जबा जुडाइ तरिवरतर, धरै पथ पर पाँव।
बास हमार जगत महँ, बूझो तेही सुभाव॥
आज रहन यह चाँद न ऊआ। आनन्द हरन जगत कर हूआ॥
साह करबला को दुख सोगू। समुझि समुझि रोवै सब लोगू॥
रोएउ गमन सेंदुरी नाहीं। रकत आँस है मुख उपराहीं॥
रोवैं बादशाह जग साईं। हम ना रहे करबला ठाईं॥
देतेउँ सीस दीनपति कारन। करतेउँ जिउ तन मन सब वारन॥
रोवै अच्छर सीस धुनि, सल्स सविल भाखार।
आज छिपान जगत रवि, जगत भएउ अँधियार॥
वावैला प्यासा गा मारा। आल रसूल बतूल पियारा॥
उठा चहूं दिस तें वावैला। महि सिर परेउ सोग का सैला॥
पहिरेउ गगन मातमी बागा। परेउ चद के हियरें दागा॥
औ ससि कहुँ दुख राहु गराहा। सूरज कहँ उपनेउ उर दाहा॥
इनके बीच हसन का प्यारा। सेहरा लीन्ह रकत के धारा॥
नूर मोहम्मद जीभ ते, कहै न मातम होइ।
जिय सों कहूँ मातम कथा, मन आखिन सो रोइ॥
मन हगसों एक रात मझारा। सूझि परा मोहिं सब ससारा॥
देखेउँ एक नीक फुलवारी। देखेउँ तहाँ पुरुष अउ नारी॥
दोउ मुख सोभा बरनि न जाई। चद सुरुज उतरेउ भुइँ आई॥
तपी एक देखेउँ तेहि ठाऊँ। पूछेउँ तासों तिन कर नाऊँ॥
कहा अहैं राजा अउ रानी। इद्रवति औ कुअरो गेयानी॥
आगमपुर इद्रावती, कुँवर कलिंजर राय।
प्रेम हुते दोऊ कहँ, दीन्हा अलख मिलाय॥
सरब कहानी दीन्ह सुनाई। कहा दया सेती हो भाई॥

इद्रावति औ कुँवर कहानी। कहु भाषा मों हो कवि ज्ञानी ॥
गाढी गाढ परै जहा तोहीं। छुटि जाय सुमिरेहु तुम मोहीं ॥
आज्ञा दीन्हा तपिय सेयाना। मन जिउ सों आज्ञा मैं माना ॥
होत भोर लिखनी मै लीन्हा। कहै लिखै ऊपर चित दीन्हा ॥
सन इग्यारह सौ रहेउ, सत्तावन उपराह।
कहे लगेउ पोथी तबै, पाय तपी कर बाह ॥

कवि है नूर मोहम्मद नाऊँ। है पछलग सब को जग ठाऊँ ॥
चुनि कविजन खेतन सों बाला। करै चहत खरिहान बिसाला ॥
है कवि समै नई तरुनाई। छूट न अबहीं कवि लरिकाई ॥
जाके हिए लरिक बुधि होई। बहुतै चूक कहत है सोई ॥
बिनवत कविजन कहँ कर जोरी। है थोरी बुधि पूजिय मेरी ॥
चूका देखि सम्हारि कै, जोरेहु अच्छर टूट।
दाया कर मोहि दीन पर, दोस न लायहु कूट ॥
हौ हीना बिद्या बुधि सेतीं। गरब गुमान करौं केहि नेतीं ॥
हौं मैं लरिकाई को चेला। कहौं न पोथी खेलउ खेला ॥
गुरुजन यह सों बिनतिय मोरी। कोप न मानहि भौंह सिकोरी ॥
दोस बहुत खेलत महँ होई। दाया करेहु न कोपेहु कोई ॥
दोस करै जो छोटा आही। मया करै गुरजन कहँ चाही ॥
मोहि विवेक कछु नाहीं, नहिं विद्या बल आहि।
खेलत हौ यह खेल एक, दिष्टा देइ निबाहि ॥
एक रात सपना मैं देखा। सिंधु तीर वह तपिय सरेखा ॥
अहै ठाढ मोहि लीन्ह बुलाई। कहेसि कि सिधु मे बूडहु भाई ॥
त्रसा छाड़ पोढा के होया। मोती काढहु होइ मरजीया ॥
ससि गोती को हार सवारहु। इद्रावति की गीउ महँ डारहु ॥
लै मोती दोउ हाथन माहा। झारू रतन सीर उपराहा ॥
अस सपना मै देखेउँ, जागि उठेउँ अकुलाइ।
बहुत बूझ सचारेउँ, सपन न बूझा जाइ ॥
चित औ चेत बहुत मै धरा। तब वह सपन बूझि मोहिं परा ॥
सिंधु समा मन को पहिचानेउ। मोती समा बचन कहँ जानेउ ॥
हार गुहन बूझेउँ चउपाई। रतन ग्रीव कह रतन बड़ाई ॥
मनुष सुबचन कहे सों लहई। बचन सरस मोती सों अहई ॥
बचन एक करतार निसारा। भा तेहि बचन हुते ससारा ॥
बचन हसावै मनुष्य कह, बचन रोवावै ताहि।
बचनहु ते यह जगत मों, कीरत परगट आहि ॥

है मन फुलवारी हो भाई। फूल समाँ यह बचन सोहाई॥
बचन अरथ है बास समाना। कवि स्त्रोता है भवर सयाना॥
अचरज ऐस फूल पर अहई। बारी माँह कली नित रहई॥
जब वह फूल तजत फुलवारी। बिकसत बास देत अधिकारी॥
जुगजुग रहत न तनु कुम्हिलाई। दिन दिन बास बढत अधिकाई॥
मन चाहत सों अस पुहुप, आज चुनौं भरि गोद।
हार गूथि के पहिरेउँ, मनमों बाढै भोद॥
हिया कहा दुइ हार सवारहु। रवि औ कमल गले मह डारहु॥
बुद्धि कहा दुइ हार बनावहु। मालति मधुकर कह पहिरावहु॥
तेहि पल तपसी दरस देखाएउ। मोहि सग एहि बात सुनाएउ॥
राजकुअर रानी इद्रावती। हैं रवि कमल औ भँवर मालती॥
चुनि परसन दुइ हार सवारहु। तिनके ग्रीव बीच लै डारहु॥
आशा मान तपी कर, चलेउँ जहा फुलवार।
खुला न पायउ द्वार को, मालिहि दिएउ पुकार॥
आएउ माली सुनत पुकारा। खोलेउ फुलवारी का द्वारा॥
पैठेउं फुलबारी महँ जाई। रहसेउ देखत फूल निकाई॥
तन पलुहा बारी को नाई। मन भा फुलवारी तेहि ठाई॥
माली कहा जएत मन होई। लेहु फूल नहि बरजत कोई॥
जब आशा मालिहि सों पाएउ। तब मै फूल चुनै पर आएउ॥
किरपा सों बारी महँ, माली दीन्हा साथ।
आड़े कोउ न आएउ, मै फुलवारी हाथ॥
रहत न आगर रूप छिपाना। आपुहिं परगट करै निदाना॥
जों रस रूप सों बाधहु द्वारा। जाइ झरोखे चितवै प्यारा॥
सिरजनहार छिपा ना रहा। आपुहि फेर चिन्हावै चहा॥
तब यह जग करतार सवारा। चीन्ह पड़ा वह सिरजन हारा॥
मानुष फूल सुरस सी नाऊँ। धरि धरि भा परगट सब ठाऊँ॥
आपुहि भोगि रूप धरि, जगमो मानत भोग।
आपुहि जोगी भेस होइ, निस दिन साधत जोग॥
अलष प्रेम कारन जग कीन्हा। धन जो सीस प्रेम महँ दीन्हा॥
जाना जेहिक प्रेम महँ हीया। मरै न कबहूं सो मर जीया॥
प्रेम खेत है यह दुनियाई। प्रेमी पुरुष करत बोवाई॥
जीवन जाग प्रेम को कहई। सोवन मीचु वो प्रेमी कहई॥
आग तपन जल चाल समूझो। पुनि टिकान माँटी कहँ बूझो॥
हो प्रेमी है प्रेम को, चचलताइ बाय।
जा मन जामा प्रेम रस, भा दोउ जग को राय॥

स्वप्न खंड कुँवर

एक रात महँ कुर सरेखा। सपच बीच दर्पन एक देखा ॥
रहा अमल दरपन उजियारा। जिव मुख को निर्खावन हारा ॥
दरपन मो एक सुदर नारी। देखहु चदहु ते उँजियारी ॥
रही तइस सुदर जस चही। दरपन देह बीच जिउ रही ॥
रही न तेहि सग सखीय सहेली। रहिउ मुकुर मह आप अकेली ॥
ससि बदनी मनु रवि रही, रहा मुकुर जिमि धूप।
तेहि रूपवन्ती रूप सों, दरपन पाएउ रूप ॥
जागा भोर कुअर कहँ पावा। सपन चित मे देवस गँवावा ॥
दुसर रात कस्तूरिय झारा। तासों सुगध कीन्ह ससारा ॥
तेहि त्रिजमा राग सरेखा। पहिली रात कि मूरत देखा ॥
रहेउ न मूरत दरपन माही। दरपन बहुत रहे अगुवाही ॥
कालिंजरी निर्प नर नाहा। तासो बदन देखा सप माहा ॥
जस दर्पन निर्मल रहे, तस देखा अधिकार।
दरसन एकै नारि को, सब आदरस मझार ॥
पहिली रात महीप सरेखा। मुख पर लठ विथुरी नहिं देखा ॥
दूसर रात महीपति ज्ञानी। देखा मुख पर लट छितरानी ॥
देखि बदन लट सुदरताई। सपने बीच रहा मुरुझाई ॥
मोंहि अचरज हिरदय मों आहीं। कैसे मुकुर न देखा ताही ॥
यह सपने को को पतिआई। मुकुर सौह बिनु देखि न जाई ॥
यह सपने की बात पर, अचरज करै न कोइ।
सपने मोसी होत है, जो सौतुके न होई ॥
राजा देखि सपन अस जागा। लागा ग्रीव प्रेम की तागा ॥
तागा पाइ प्रेम को राजा। मा प्रेमी छाड़ा सुखु काजा ॥
का जाने सुख भोग भुलाना। प्रेम मरम जब लग अनजाना ॥
जाना जात प्रेम तब भाई। जब मन भीतर प्रेम समाई ॥
कालिजर को राय सयाना। वह नारी के रूप भुलाना ॥
दग सों बिछुरी मूरत, हिंदय आइ समान।
जब हिय बीच समान, हरिगै चिंता आन ॥
राजै राज काज तज दीन्हा। चिता वह मूरत की लीन्हा ॥
काहै कहाँ वह चन्द लिलाटी। बरु तेहि आगे है ससि घाटी ॥
कहा धनुक भौही वह नारी। बरुनी बान चोख जेई मारी ॥

कहवां मृग नैनी वह बाला। प्रेमद दीन्ह कीन्ह मतवाला ॥
होतेउँ दरपन ता मुख केरा। मो महँ ता मुख लेत बसेरा ॥
राजकुअर भा बाउर, छाड़ेउ सुख रस भोग।
परे सकल सह मों, कालिजर के लोग ॥
राज कुँअर छाड़ा सुख भोगू। असुखी भए नगर के लोगू ॥
दस सघातिय राजा केरे। रहे सो रहे आठ जस चेरे ॥
परै चिंत मों आठ सँघाती। आठों कहँ दिन भा जस राती ॥
काहु बात सुनवत जी दीन्हा। कोउ कौतुक पर दिष्ट न कीन्हा ॥
रस सुगध कह छाड़ा काहू। आठो परे बहुत दुख माहूँ ॥
राजा के अनमन भए, अनमन भा सब कोइ ॥
माँगहिं सब करतार सों, मोंद कुअर कह होइ ॥
आठो मों मत्री एक रहा। राजा मानै ताकर कहा ॥
बुद्धसेन रह ताको नाऊँ। जन्म भूमि तेहि मनपुर ठाऊँ ॥
तेहि बिनु सात मित्र अवटाहीं। ताहि मिले सातो सुघराहीं ॥
सुख छाड़ा सब राय सयाना। बुद्ध सेन मन ससै माना ॥
कहा कुअर सो अहो नरेसू। दिवस चार सों कस तोहि मेसू ॥
औरै तन मन देखऊ, औरै चिता चाव।
सुख अनन्द को छाड़ेऊ, कहौ कुँअर केहि भाव ॥
कहा बुद्ध सों राय सरेखा। रानी एक सपन मै देखा ॥
पहिल रात अस देखउँ ज्ञानी। दरपन बीच रही वह रानी ॥
दूसर निस बहु दरपन देखेउँ। सब दरपन ता रूप परेखेउँ ॥
सोवत रहिउ नयन के नियरे। जागत आइ समानिउ हियरे ॥
अमल रूप वह नारी केरा। मन हरि लीन्ह कीन्ह मोहि चेरा ॥
तामुख दुति के आगें, अहै सूर ससि छाँह।
काहु नृप की है सुता, जेहि देखेउँ निस माँह ॥
सुनि बुद्ध राजा कहँ समुझावा। तोहि सपने महँ कौतुक आवा ॥
सपन रूप पर का विसवासू। तज मन चिन्त बढाव हुलासू ॥
कुअर कहा यह सपन न होई। मोहि लेखे सैतुक है सोई ॥
दरपन मों दरपन मुख ताको। भा जिउ लाग मुकुर सोभा को ॥
मोहि नृप वह प्रान पियारी। करै चहत है दरस भिखारी ॥
बिथुरी प्यारी नेन सों, हियरे आइ समान।
हिया हाथ मों कीन्हा, भएउ परान परान ॥
मत्री मरम कुअर को पाएउ। गुनी चितेरा एक बोलाएउ ॥
अस गुनवन्त चितेरा रहा। जल पर चित्र बनावे चहा ॥
बुद्ध कहा लिखि आनु चितेरा। सुघर रूप इस्तिरीन केरा ॥

निर्प सपने एक नारिय देखा। रीझा तापर निर्प सरेखा ॥
होइ अहेर फाद मो आवै। देखे कुअर बोध मन पावै ॥
बहु नारिन की मूरते, लिखा चितेरा जाइ।
बुद्ध बाह सो राजही, सकल देखाएउ आइ ॥
देखि सकल राजै मुख फेरा। कहा कहा वह अरे चितेरा ॥
कहा लिखै आवै वह प्यारी। सपने बीच बान जेई मारी ॥
ताको मूरत को लिखि पारै। दिर्ग बान बरुनी को मारै ॥
अधर तेहिक जो लिखै चितेरा। मीठ होइ लिखनी नहि केरा ॥
सुनि अस बात चितेरा हंसा। कहा प्रेम महिपति मन बसा ॥
कहि बुध साथ चितेरा, गएउ सदन कहँ सोइ।
पहिले प्रेम न गाढा, अत गाढ पुनि होइ ॥
आना बुद्ध मनुष दस ज्ञानी। राजा नियरे कहै कहानी ॥
रूप बखान करै बहुतेरा। होइ फिरै मन राजा केरा ॥
राजा के मन बोध न होई। सपन कहानी कहेउ न कोई ॥
जा द्दग लागेउ जो रँग नीका। नीको वही आन रँग फीका ॥
जा मन आइ बसै जो कोई। ता कहँ पीन पियार सोई ॥
रचिक ताहि न भावै, कहै कहानी जेत।
परम दवात कहै जत, दुखद होइ तेहि तेत ॥
राजा की फुलवारिय जहाँ। लीन्ह बसेरा तपी एक तहाँ ॥
मौन रहा गहि तपिय सयाना। सकत तिहिक सब काहुब जाना ॥
रात होत मन मों धरि आसा। गएउ कुँअर तापस के पासा ॥
राजा तपी चरन गहि परा। तापस हाथ पीठ पर धरा ॥
राजहि दाया सहित उठावा। मुख सो बहुत असीस सुनावा ॥
तपी कहा केहि कारन, आवन भएउ तोहार।
राजैं सपन सुनावा, चाहा सपन बिचार ॥
तपी कहा अस पार न मोही। सपन बिचार सुनावउ तोही ॥
पै तेहि कारन राजा ज्ञानी। सत्त लिहैं एक कहउ कहानी ॥
होइ सुनत उपजय तेहि हियरे। सत्त सनेह होसि तेहि नियरे ॥
कुअर पाय गहि अस्तुति गावा। दरसन पाइ बोध मे पावा ॥
जो बच भाषै अधर तुम्हारा। उहई ओषध होय हमारा ॥
तब ज्ञानी राजा सो, कहा तपी मुसकात।
सुद्ध स्रव के स्रोता, सुनिए बकता बात ॥
है एक देस अगमपुर नाऊ। मानहुं सरग बसेउ महि ठाऊ ॥
देस बड़ो आगमपुर आही। राजदीप पुनि कहिये ताही ॥
है वह देस सिंधु के पारा। होत धरम नित ताहि मझारा ॥

सुभग रूप आगमपुर होई। धरती सरग कहावत सोइ ॥
जैत फूल फल पत्रिय चाही। तावत आगमपुर मों आही ॥
अगम पथ मों सात बन, और समुद्र अथाह।
होत न कैसेहु मग मो, अगुवा बिना निवाह ॥
सिंधु पार है आगमपूरू। पारते नियर वारते दूरू ॥
है आगमपुर जस फुलवारी। तामे फूल पुरुष अरू नारी ॥
नार पदुमिनी कचन वरनी। होहिं तहा सब मन की हरनी ॥
हरनि होइ जग को मन हरई। बोलत काज सुधा को करई ॥
है इस्सर कर मडप तहा। पूजा होत रात दिन जहा ॥
जोगी तपी सनासी, बैरागी तेहि ठावँ।
भोर साझ निस वासर, जपहि अलल को नावँ ॥
ऐसे धरम नगर के ठाउ। अहै महीपति जगपति नाऊँ ॥
धरति गगन तेहिक जस मानी। इद्रपुरी सुर कीत बखानी ॥
है धीमान महीपति ज्ञानी। दायावत सुसील सुबानी ॥
आप धरम देही है राजा। नगर न होत धर्म को काजा ॥
है गज कटक अहै अनकूता। ऊच भाग को है तेहि बूता ॥
एक हाथ के बल सों, कर समुद्र सों लेत।
एक हाथ सों महीपति, दान जगत को देत ॥
राजै गढ नौ खड बनावा। ऊच गगन लग ताहि उठावा ॥
पहिल खड जगमग मनियारा। निस मों दीख चद उजियारा ॥
चौथे खड दीप है भानू। ज्ञान मद किमि कहों बखानू ॥
मदिर एक, अहै तेहि ठाऊ। तीरथ मदिर मदिर नाउ ॥
तासों लोग बहुत फल पावै। सत्तर सहस नए नित आवैं ॥
मठ के ऊपर ठीक ही, घडियाली घड़ियाल।
निस दिन बैठे साधै, घड़ी मुहूरत काल ॥
का बरनो सुख मदिर ठाऊ। आठ सदन आठों कर नाऊ ॥
तिन भीतर बइठइ जे कोई। ता कह भूख प्यास ना होई ॥
सुदर नारी रहँइ घनेरी। भई न कामिन काहु अकेरी ॥
है आनद नाम एक ज्ञानी। ताकर सब मदिर दरबानी ॥
बिछै एक अस डार पसारा। सब निकेत पर पहुँचे डारा ॥
वह सुख बास महीप को, है उत्तम कइलास।
सुख जीवन तामो मिलै, पूजत मन की आस ॥
बरनो आगमपूर की हाटा। भूलहि ननुष देखि सै बाटा ॥
कतहुँ तमोलिय पान भुलाने। कहुँ पटवा पाटहि अरुझाने ॥
रूप कनक कहुँ गढइ सोनार। कहुँ लोहे की ताव लोहार ॥

कहुँ जौहरिये कतहु चितेरा। कतहुं कुँदेरा कतहुँ ठठेरा ॥
सब भूले अपने जग धधा। का डिढियारू का जो अधा ॥
सब तो अहैं बटाऊ, पै पाए सुख भोग।
आपुहि कोइ न जानत, हैं पथिक हमलोग ॥
पुनि बखान सुनु मन तारा को। बसुधा बीच सुधा जल ताको ॥
जो मनताए मम्बर पीग्रै। सुख जीवन पावै म जीग्रै ॥
आवैं नीर भरै पनिहारी। सुदर आगमपुर की नारी ॥
औउर नदी नीर जस छीरू। मद अस भेद सरोवर नीरू ॥
मधु अस मीठ जीउ सर पानी। यह बखान समझै नर ज्ञानी ॥
जो मानुष अनुरागबल, अचवे चारो नीर।
निर्मल होइ सरीर तेहि, व्याध न रहै सरीर ॥
पुनि बखान सुनु मत के चेरा। आगमपुर के जोगिन केरा ॥
बैरागी सन्यासिय जोगी। साधू सजम तपिय वियोगी ॥
कोउ ठाढा है ध्यान लगाए। कोउ धरती पर सीस नवाए ॥
कोउ महिपर माथा धरि रहा। जोग लाग सुख भोग न चहा ॥
बहुतन कह जगसों सुधि नाही। रीझि रहे करता उपराहीं ॥
रसना एक न कहि सकौं, आगमपुर की बात।
धरम धनी है राजा, सुखी छतीसौ जात ॥
रहा महीपति घर उँजियारा। बालक दीपक बिनु अँधियारा ॥
जाइ ग्रीस मडप महँ पूजा। बहुत कीन्ह सँग लीन्ह न दूजा ॥
सिव सपने मों दरस देखावा। दरस दान देइ बात सुनावा ॥
बालक एकौ लिखा न राजा। देइ न बालक अपचित काजा ॥
राजैं कहा पुत्र जो ताहीं। होइ सुता तो मन अनदाहीं ॥
आतमजा जो होत एक, होत सदन उँजियार।
कन्यादान दिहैं सो, होतै मुकुत हमार ॥
कहा महेस काज एक करहू। रतन एक मडप मों धरहू ॥
निसमों राखहु भोरे आएहु। बिर्ज धरे जैसो फल पाएहु ॥
जैसो इस्सर अज्ञा दीन्हा। तैसो मानि महीपति कीन्हा ॥
सिव दाता कह बहुत मनावा। तुम करता त्रीलोक बनावा ॥
धरती गगन पवन जल आगी। सिर्जेउ सिर्जत बेर न लागी ॥
होइ रतन सों कन्या, यह मनसा है मोर।
राज सदन अँधियारो, तासो होइ अँधजोरा ॥
सिवा अलखसों बिनती कीया। जस है रतन जोत सों दीया ॥
दीप रतन सम कन्या होई। करइ निकेत अजोरा सोई ॥
भा दयाल दाता तेहि घरी। वोहि रतन कन्या अवतरी ॥

भै महेस मडप उंजियारी। उतरी मनहुँ इद्रपुर नारी ॥
भोर होत राजा चलि आएउ। मडप बीच चद्र सम पाएउ ॥
परमद सो मडप मों, पुलकेउ राजा देह।
कन्या कह अति आदरे, आनेउ अपने गेह ॥
पुन सिवरात होत सपनावा। गौरिहु आपहुँ दरस देखावा ॥
कहा धरेउ अवतार सुभाऊ। रतन जोत कन्या कर नाऊ ॥
मोती एक बटामों कीजे। जलधिम भार डार तेहि दीजे ॥
वह मोती काढ़ै जो राजा। सोई वर कन्या कर छाजा ॥
मोती काढ न पारै कोई। काढे सोई बर जो होई ॥
सिव भाबित के पाछे, सिवा कहा तेहि ठाउ।
होत भलो इद्रावति, वह कन्या को नाउ ॥
राजै दोऊ नाम तेहि राखा। रतन जोत इद्रावति भाखा ॥
रूपम्मा बाई तेहि पाला। लाग चलै महि ऊपर चाला ॥
भइ जो सयान भई चितगरी। पढि विद्या भई विद्याधरी ॥
लागीं साथ अगमपुर बारी। जोरेउ स्यामा राज दुलारी ॥
जगपति मरम सुता कर पावा। कीन्हा परन जो ईस बतावा ॥
बूड़े बहुत समुद्र मों मोती चढेउ न हाथ।
नहिं जानौ को देइ हैं, सेंदुर ताकी माथ ॥
मडप मों जाते ऊघ भागे। बरस देवस पर तीरथ लागे ॥
जब आगमपुर कह मैं गयऊ। पूजा नित मडप मह भयऊ ॥
तति खन भय चहु ओर पुकारी। आवत है जगपति की बारी ॥
पथ देउ कोउ रहइ न आगे। जात मडप कह पूजा लागें ॥
पंथ छाड़ भा सब कोउ ठाढा। सबके हिये प्रेम रस बाढा ॥
पथ छाड़ सब ठाढ भा, नैन भएउ सब देह।
इद्रावति दरसन नित, सब मन बढेउ सनेह ॥
सब मानुष मन प्रीत घनेरी। उपजी इद्रावति मुख केरी ॥
मुकुर बने चाहा सब कोई। जामों आइ परै मुख सोई ॥
सखिन साथ इद्रावति आई। बरनि न पारौ सुदरताई ॥
रहि न सखी सुदर जहाँ ताई। जिउ अस लिहें रतन कह आई ॥
देह भई सब आगम वारी। जीउ रही इद्रावति प्यारी ॥
✓ सखी रहीं अतर पट, देखा बिरलै कोइ।
मडप बीच गई वह, सब को मति नग खोई ॥
रचिक तेहि देखा जो कोई। कीन्ह बखान आप मों सोई ॥
कहुव कहा अहे अपछरा। नहि चितएउ ऐसे मन हरा ॥
काहुव कहा दिष्ट जो देती। मन औ प्रान दोऊ हर लेती ॥

रूप गगन जग काया वारी। है जिउ है जिउ है जिउ प्यारी ॥
वो वहि मुख को परगट देखा। गूँग भएउ भा बाउर भेखा ॥
तेहि अस आपुहि होइ रहा, रहा न ताहि विवेक।
जातें जानैं एक मैं, औ इद्रावति एक ॥
इद्रावति घर कीन्ह बहोरा। ससि होइ लै नछत्र चहुँ ओरा ॥
आप गई मदिर कह प्यारी। बहुतन को कइ गई भिखारी ॥
जो रचिक ता दरसन पावा। हाथ मलेउ मानेउ पछतावा ॥
कहा सहेलिन बैरिन भई। वोटै वोट किहें लै गईं ॥
आज आइ वह परगट भई। मिला न दरस गुपुत होइ गई ॥
सुमिरेउ सिरजनहारहीं, जब देखेउ असरूप।
ऐसो रूप सवारहू, धन्य त्रिविष्टपभूप ॥
है पदुमिनि इद्रावति प्यारी। ताको बदन रूप फुलवारी ॥
कोमलताइ सुदरताई। से रना सों बरनि न जाई ॥
दिर्गन हरा मान मृग केरा। मन लजाइ बन लीन्ह बसेरा ॥
ना अति लाब न छोटी आही। है तस इद्रावति जस चाही ॥
यह बखान का बरने होई। जो देखा जानहि पाइ सोई ॥
कै बखान जोगी कहा, मोहि जाने होराय।
चद्र बदन इद्रावती, तोहि सपनाएउ आय ॥
पहिले इद्रावति सुकुमारी। रहिल रतन दरपन मों प्यारी ॥
जब जगमों अवतरी नवेली। ताको दरपन भई सहेली ॥
है वह दीप सिखा उँजियारी। आपन जोत सखिन मों डारी ॥
हैं वह रतन खान आभा को। जोत सुरूप रूप है ताको ॥
है आनद बदन वह प्यारी। छवि तापर है लट सटकारी ॥
इद्रावति है •पद्मिनी, रम्भा तुलै न ताहि।
एक जीभ सों कित मै, ताको सको सराहि ॥
सुनत बखान कलिजर ईसू। तपिय चरन पर डारेउ सीसू ॥
कहा कुवर हो सिद्ध सरीरा। ओषद दे काटेहु मन पीरा ॥
सपन विचारेहु मोर गोसाईं। पीरा हरेहु रही जह ताईं ॥
जेहि रानी के करहु बखानू। निसचै हरा सोई मन ज्ञानू ॥
तजि कइ राज होब मै जोगी। इद्रावति पर होउँ बियोगी ॥
हौ मैं चेला तुम गुरू, बिनै करत हौं तोहि।
आगम पथ देखावहु, लै पहुँचावहु मोहि ॥
तपिय कहा तोहि जोग न छाजा। बैठे राज करीजे काजा ॥
अहै कठिन आगम को बाटा। गहिर समुद्र न थाह न घाटा ॥
औ है गुलिक काढिबो गाढ़ा। सिधु न जानै तट जो ठाढ़ा ॥

है हम कहू तीरथ बहु करना। कासिय पथ उपर पग धरना॥
जाय पयाग करउ अस्नानों। पुनि महेस को देखेउ थानों॥
तपी भेस मैं मानुष, नाम मोर गुरु नाथ।
तब गुरु नाथ कहावउ, जब आनउ तप हाथ॥
कुवर कहा गुरुनाथ गुसाई। राज रहा मीठा अवताईं॥
अब निसचै मै होब भिखारी। तहाँ चलि जाउं जहाँ वह प्यारी॥
जिउ को लोभ कछुहु मोहिं नाहीं। ता नित पैठउ पावक माहीं॥
अगुवाई जो कीजे नाथा। तो वह मूल होइ मोहि हाथा॥
ना तो सुमिरत दया तुम्हारी। जाउ तहाँ होइ तपसि भिखारी॥
राज पाट सब छाड़उ, लेउँ अगम को पथ।
पथिक होऊ अगम को, पहिर जोग को कथ॥
जाना तपी तजहि सुख पाटा। हिये सुधान अगम की बाटा॥
सकल आपनो परगट कीन्हा। देव दिष्टि राजा कह दीन्हा॥
माया रहित कीन्ह मनुसाई। उपबन सों कीन्हा अगुवाई॥
फुलवारी मों राय सरेखा। पथ सहित आगमपुर देखा॥
देखा देस अगमपुर केरा। रीझि रहा राजा भा चेरा॥
अगम पथ मन मो बसेउ, भूला दूसर बात।
हिर्दे चिन्त सोउ तरिगा, राज मुकुट औ पाट॥
तपिय कहा राजा कुछ सूझा। राजा सुनत मरम सब बूझा॥
कहा भएउ कृपाल गोसाई। सूझी बाट रही जहाँ ताई॥
सूझा इद्रवनी कर देसू। होएउ निमचै जोगिय भेसू॥
मुनि गुरनाथ ऋषेश्वर जाना। पथ अगम राजहि पहिचाना॥
गुपुत भएउ पुनि कुवर न देखा। आएउ मदिर राय सरेखा॥
गुरू जानि गुरुनाथहों, चेला आपुहि जानि।
आगम जोत धरा चित, मन परान सा मानि॥
कालिजर. सों भएउ उदासा। भएउ नरक मदिर-कविलासा॥
सुदर कहा कत कस जीऊ। कस उदास तेहि देखेउ पीऊ॥
परेउ सीस ऊपर कछु भारा। ऊदासे है जीउ तुम्हारा॥
दीन्हा ऊतर सुदर केरा। सैतुक बीच सपन भा मेरा॥
सुनेउ आज मै तेहिक बखानू। सपन देखाइ हरा जेइ ज्ञानू॥
राजपाट वन भोग सुख सब तजि साधौं जोग।
जाउं वोही के देस कह, होइ सजोग वियोग॥
सुनि कै कहा सुदरी राजा। तुम्हैं भोग तजि जोग न छाजा॥
सुख सपन सब दीन्हा दाता। मारु न छीर भात मों लाता॥

कहा रहेउं अबलग मैं भोगी। अब मैं होउ अगम को जोगू॥
जोगी होउ अगमपुर केरा। लेउ जाइ तेहि गलिय बसेरा॥
भोगै बीच रहउ जउ भोला। कित मोंहिं हाथ चढइ वह मूला॥
तुम कामिनी मत हीनी, भोग सुपावहु मोहि।
प्रेम खींच है मो कह, सूझ बूझ नहि तोहि॥
राजैं राजपाट सुख तजा। प्रेम आइ मति सो अरबजा॥
मनमों प्रेम बसेरा लीन्हा। बरबस राजा प्रेमिय कीन्हा॥
प्रेम अगिन मन मो उदगरी। तामो दारु बुद्धि कर जरी॥
भार वोही राजा सिर परा। जो नभ औ महि को बल हरा॥
निबर मनुष को धन मनुसाई। जा अस भारिय भार उठाई॥
प्रेम आग के बाढे, मेधा भयो मलीन।
सूर किरिन के आगे, है मयक दुति हीन॥
रे कलवार आव चलि बेगें। हौ मै ठाढ सिधु जा नेगें॥
है निर्मल मद सदन तुम्हारा। मोहि लेखे सज ठाकुर द्वारा॥
दे मदिरा भर प्याला पीवो। होइ मतवार काथरा सीवों॥
सो काधर काधे पर डारउं। जोगी होइ जग चाहत मारउ॥
होइ जोगी तेहि देसहि जाऊ। है जेहि देस सुप्रीतम ठाऊ॥
मोहिं यह देस न भावत, छन है बरष समान।
अब तेहि देस सिधारउ, जहाँ रहत वह प्रान॥

———— —

मालिन खंड

जब राजा फुलवारिय आयेउ । तजि पर चिन्ता ध्यान लगायेउ ॥
मालिन सुदर चेता नाऊँ । आइउ मन फुलवारिय ठाऊँ ॥
भइ सोहैं राजा के ढाढी । मनु समुद्र सो मोतिय काढी ॥
अहो बियोगी प्रेम भिखारी । इद्रावति की यह फुलवारी ॥
इहाँ न कोऊ जोगिय आवै । जो आवैं तो जीउ गँवावैं ॥

कबहूँ कबहूँ आवै, इहाँ पियारिय सोई ।
चार दिष्ट होइ जाइही, जाउ जीउ सा खोइ ॥

है मनोरमा जगत कर सोई । है ससि जौं ससि बोलत होई ॥
कुमुम उसीसा लाइ बईठै । मान समेत जगत दिस दीठै ॥
धन के नैन दिष्टि जेहि डारा । सो आतिथ भा भा मतवारा ॥
मुख है फूल कपोल कली है । है छबि औ सोभा बिमली है ॥
फूल अहै पै कलिय समानू । कलिय अहै पै है विकसानू ॥

है सुकुवार पियारी, है प्यारी सुकुवार ।
है फुलवारिय रूप को, अहै रूप फुलवार ॥

राजा कुँवर कहा सुनु प्यारी । आयेउँ भलो लाग फुलवारी ॥
जग मे मरन हुतें का डरऊँ । एक दिन मरो छार होइ परऊँ ॥
जो इद्रावति के दोउ नैना । प्रान लेत हैं करि कै सयना ॥
तो मोहि सोच जीउ कर नाहीं । होइ सुधा तेहि अधरन माही ॥
बहुर प्रान देई मोहि सोई । नित जीवन पुन मरन न होई ॥

दरस देखि जो जिय तजौ, याते भलो न और ।
एहि कारन मै लीन्हेंउ, मन फुलवारी ठौर ॥

अहो यह नित बरजेउँ जोगी । जिय न तजहु पै होहु बियोगू ॥
जोग तोर औ गुरू तुम्हारा । जाइहि भूल जासि ठग मारा ॥
जाकी चितवन भए बेहाथा । नाथ मुछुदर गोरख नाथा ॥
तेहि देखत मुधि भूलै तोही । भूलै जोग बो मन वोही ॥
निदा नौके फेर भुलाहू । सौके देस न बेगहिं जाहू ॥

अबहीं अहसि सरेखा, जहँ चाहसि तहँ जासि ।
ना तो दरसन पाइकै, सुधि गवाइ बौरासि ॥

ससि कारन तुस लायहु फाँदू । फाँदे बीच न आवइ चाँदू ॥
जोउ चलाउ जहाँ लग हाथा । गगन चढ़ावइ चाहसि माथा ॥

पट बाहर जेइ पाव पसारा। जाडा कठिन अत तेहि मारा ॥
जो पखी बित बाहर धावा। सो निदान महि ऊपर आवा ॥
अपने जोग ठाव जेइ लीन्हा। सब कोऊ तेहि आदर कीन्हा ॥
सब काहूँ कहँ ठाउँ है, अपने अपनै मान।
रानी राजा जोग है, ससि जोग है मान ॥
हौ मै ता दरसन नित जोगी। भसम चढाए भेग वियोगी ॥
ताको प्रेम गुरू है मेरो। जोग सिखाय कीन्ह मोहि चेरो ॥
जब मन बसी धरेउ तब जोगू तजि कै सकल जगत सुख भोगू ॥
वहि उत्तम दरसन के कारन। आएउ नाघि मेरु दधि आरन ॥
जा दिन मै दरसन वह पावउ। होइ आप आपुहि हेरवावउ ॥
दरसन देखै कारनहि रोम रोम भये नैन।
नींद न आवत निस कहँ, वासर परत न चैन ॥
चैन कहाँ चिन्ता जेहि जीऊ। जीउ दुग्ध भा चिंता घीऊ ॥
जब चिता तब नीद न आवै। आवै तव जब चिता आवै ॥
प्रेमी पर चिंता कहँ मारै। मारे मन चाहुत जिथ वारै ॥
हेरै प्रीतम मुख नहिं फेरै। कोरे मित्र मित्र कहँ हेरै ॥
रोवै रकत आस नहि सोवै। दरसन लाग रात दिन रोवै ॥
सत्तर सिर मन तीस सै, पाव एक सं जाहि।
प्रेमी को दुख देत सो, प्रेम अथ यह आहि ॥
हौ जोगी पै उत्तिम भीखा। प्रेम पाइ मागै मै सीखा ॥
जहि मन ऊँच उँच भा सोई। जेहि मन नीच नीच सो होई ॥
कहाँ चाँद कहँ रहइ चकोरा। प्रीत लाग चितवत तेहि ओरा ॥
औ अरबिद रहै जल माही। रवि सेवत तेहि जोग नाहीं ॥
दादुर कवल सनेह न पावै। बनसो मधुकर तेहि नित धावै ॥
दूर देस की दिष्टि सो, है समीप गुन मूर।
बिना नैन औ दिष्ट के, नियरे के है दूर ॥
मालिन कहा बहुत तुम बूझा। प्रेम पथ उजियारा सूझा ॥
कवन जात है का है नाऊ। कहाँ जनम भुम्मी का ठाऊ ॥
कहा रहेउ मै जात चदेला। अब सम जात धूर सिर मेला ॥
जनम भुम्मि कालिंजर ठाऊ। राजकुवर है मेरो नाऊ ॥
प्रेम तेहिक मोहि चेला कीन्हा। राज छोड़ाय जोग गुन दीन्हा ॥
हौ जोगी तेहि पथ कों, नहि चाहौ कविलास।
चाहउ दरसन भिच्छा, राखत हौ नित आस ॥
हो जागी मुख आभा तेरी। साखि देत है राजा केरी ॥
पै तोहि साथ न सेवक कोई। राजा पर विस्वास न होई ॥

औ मोती का ढब हैं गाढा। बूडे बहुत न काहुअ काढा॥
भीख मिलन गाढी है जोगी। भाग जो होइ ता होहु सजोगू॥
याहू पर बहुतै तुम कीन्हा। तजि सुख भोग जोग दुख लीन्हा॥
जेहि दरसन के दीप पर, है पतग ससार।
प्रेम तेहिक तुम लीन्हा मरै न नाम तोहार॥
है इद्रावति विद्याधरी। विद्याधरी आप अवतरी॥
है पदमिनि मृगसावक नैनी। ज्ञानवत औ कोकिल बैनी॥
जो काहुअ पर ढारै डीठी। सो जन देइ जगत दिस पीठी॥
अस रूपवती सुदर आहै। बिनु देखे सब ताहि सराहै॥
खोलै मुख परभात देखावै। खोलै केस मॉझ होइ आवै॥
है तेहि चद्र बदन लखि जगत नयन उँजियार।
गगन सहस लोचन सा, निरखैं तेहिक सिगार॥
धन दृग मतवारे पैरारे। चितवन बीच सिधु जा ढारे।
अधरन मों मुसुकान सोहाई। बात कहत सो झरत मिठाई॥
सखी अहैं दरपन तेहि माहीं। डारा सुदर मुख परछाहीं॥
तासों सखी भई छबि धारी। छबि दाता है प्रान पियारी॥
सै मन अलक बीच है बाँधे। तेहि सहस जिउ हत्या काँधे॥
बहुतन तजि जग धधा, तप साधा तेहि लाग।
अरुझि रहा मन अलकै जिउ मारा अनुराग॥
है तेहि अस ताक मो दीया। भा उजियारो मदिर हीया॥
सीसा बीच दिया है धरा। मनु सीसा तारा निर्मरा॥
है मदिर सोभित फुलवारी। अहै सुगध मालति वह बारी॥
तेहि रहैं आखिन पर चोरी। अहैं सखी छाया तेहि केरी॥
दिष्ट न आवत ताकी छाया। मानहुँ जीव धरे है काया॥
वोहि डोलैं सब डोलैं, थिरै थिरै सब कोइ।
काया सों जो होत है, सो छाया मों होइ॥
सात अतर पट भीतर सोई। रिहत न देखत अचिन्ह कोई॥
बारह मदिर मो वह प्यारी। रहत सदा है सेज सवारी॥
हीरा सात सात जस तारे। हैं मदिर भीतर उजियार॥
दुइ सै औ अढतालिस करी। लागे रतन पदारथ भरी॥
है मदिर मो तेरह द्वारा। नौ द्वारा नित रहत उघारा॥
बाय तेज जल पृथिवी, मानहुँ कैयक ढाउ।
बारह मदिर सवारा, जगपत जाको नाउ॥
आवै जाइ पवन दुइ द्वारे। सगी सोहु न सबद सवारें॥
दसई द्वार खोलत कोई। तब खोलै जब मरमी होई॥
दस चेरी धन की गुन भरीं। सेवा बीच रहैं नित खरीं॥

पाँच मँदिर के बाहर रहई। पाँच मँदिर भीतर गुन गहई ॥
एक सुध पाँचों सो नित लेई। सुध चारों चेरिन कहँ देई ॥
है सरूप वह रानी, रहै सात पट माँह।
सखियन सों वह प्रगटै, अहै सखी सब छाँह ॥
सुनि इद्रावति रूप बखानो। राजकुँवर हिदैं रहसानो ॥
कहा लेहिउ तेहि कारन जोगू। है महिमानस प्रीत वियोगू ॥
भायउ आवत इहाँ अकेला। गुरु न भयउ का राखउ चेला ॥
होउ अबिध मो होइ मर जीया। तजि जिउ भय पोढा कइ हीया ॥
भाग जो होइ जलज निसाराऊँ। ते जिउ जिउ कारन वारऊँ ॥
प्रेम फाँद मो हौ परा, नहि छूटै की आस।
मिलबो चाहौं प्रान को, अहै न भूख पियास ॥
जो चाहत सजोग बियोगी। जो मै कहहुँ से साधहु जोगी ॥
खोटे काज के नियर न जाहूँ। निरमल कथा होइ जस चाहूँ ॥
पर चिंता तजि सुमिरहु ताके। होइ सो भरता मन आभा के ॥
ना रहिये आपा गुन साथा। निरमलता आवै जिउ हाथा ॥
मन जिउतें सुमिरहु वह नाऊ। बूझहु प्रान मों ताके ठाऊं ॥
दूसर चिंता छाडि कै, तापर लावहु ध्यान।
मन फुलवारी मों रहै पावहु दरस निदान ॥
आपन है नाही कर जोगी। पुनि है होसिहोसिहै भोगी ॥
नाहीं होइ नाहि तै हेरा। ना ते मिलत नियर तेहि केरा ॥
नियर मिले ते दरसन होई। जोग भूल है तीनउ सोई ॥
जो मर जिया सो भामोर जीया। मोती लिया दिया भा दीया ॥
मरिके जिउ पुनि मीचु न आवै। प्रानपियारी बदन दिखावै ॥
छिन अतरपट होइ रही, फुलवारी के फूल।
देखु रग प्यारी कर, दे रगन के मूल ॥
कहि राजा सो भेद कहानी। गइल जहाँ इद्रावति रानी ॥
मै ब्याकुल प्यारी तब ताई। जोगी आइ बसा मन ठाई ॥
बाढेउ प्रीति जोगेश्वर केरी। मन पद परी प्रेम की बेरी ॥
कहै कहाँ वह रावल प्यारा। है दरसन मन हरा हमारा ॥
सोइब रहेउ जाय सों भला। जामों मिला दरस निर्मला ॥
मिला दरस जेहि सपन मों, तापर वाग जाउ।
जागब मोहि बैरी भयेउ, कीन्ह दूर दुइ ठाँउ ॥
वोही समै मों मालिनि गई। प्यारी कहँ सुख दाता भई ॥
पूछे लाग परान पियारी। है कस आज काल्ह फुलवारी ॥
बीता फागुन औ पतिझारा। जो निर्पात कीन्ह कुँज डारा ॥

जो पच्छिम को जीउ सतावा । पत्र को छारिके छाँह नसावा ॥
सो तो अब न रहेउ जग माहीं । फुलवारी पलुही की नाहीं ॥
बदन उघारा है पुहुप, अली भँवहिं उपराह ।
की समुझत पतिझार कों, अहैं छिपी पट माँह ॥
चेता नारी उतर निसारी । हो फुलवारी प्यारी फूली ॥
मान पाट पर बैठे फूले । फूल बास मधुकर मन भूले ॥
देइ के उतर कुसुम को हारा । इद्रावति के गल मो डारा ॥
फेरि कहा दिन बहुत न गयऊ । सपन तुम्हारो सैतुक भयऊ ॥
फुलवारी मो है एक जोगी । रानी दरसन लाग वियोगी ॥
है कालिजर महिपति, राजकुअर है नाउ ।
नाम तिहारो जपत हैं, मन फुलवारी ठाउ ॥
ए रानी का बरनउ ताही । धूर लपेटा मानिक आही ॥
बहुत सरूप अहइ वह तपा । कथा बीच रतन है छुपा ॥
होइ दृग जिय जो देखनहारी । तो मुख ताको लखै पियारी ॥
जावत राजा लच्छन चाहीं । है सब दृग रतनारी आही ॥
अर्द्ध चद सम भाल सोहाई । रेखा तीन दिष्ट मोहिं आई ॥
धनुक समा है भ्रिकुटी, बरुना चोखी बान ।
कीर समा है नासिका, सबद मोर परमान ॥
लवर करन को सीर न आहै । राजा सिद्ध होन कस चाहै ॥
कुअो बियोगी उपबन ठाऊ । निस दिन सुमिरत रानी नाऊ ॥
अहै प्रेम मदिरा मतवारा । जपत सास मों नाम तुम्हारा ॥
लेत न एकउ सूझै सासा । दरसन लाग देह सुख नासा ॥
जोगी भेस न सकउ सराही । गोपाचद्र दूसरो आही ॥
होत जियत को भरथरी, ताको चेला होत ।
आइ बसा फुलवारी, सुनहु खोलि मनस्त्रोत ॥
इन्द्रावति सुनि जोगी नाऊ । जोगिन होइ चहा तेहि ठाऊ ॥
कहा सपन को जोगी प्यारा । होई वही मनहरा हमारा ॥
सकल आक तुम आइ सुनावा । सपन तमी लच्छन मै पावा ॥
एक अचभे आवत हियरे । है न कहूँ कालिंजर नियरे ॥
मो मुनरूप कहां ते पावा । जोगी होइ अगमपुर आवा ॥
भेट न होइ न गुन सुनै, प्रेम कहा सो होइ ।
कैसे मोशि कारन भयउ, आगम जोगी सोइ ॥
अहो पियारी बूझन तोका । तोर बखान गयउ सुर लोका ॥
तहा सदा सब निर्जर नारी । चरचा तेरो करइ पियारी ॥
धरती पर कालिजर देसू । सुनि बखान भा जोगी भेसू ॥

तें धन कली समा पट माहीं । सैकी लालप तोहि उपराही ॥
नहि जानो कस परत पुकारा । जो परगट मुख होत तुम्हारा ॥
तुम धन प्यारी पदुमिनि, सुधा मरे अधरान ।
बहुत अमी अधरन पर, दिहेनि सुन्धु मों प्रान ॥
हो धन जाको नाग सुनायहु । फुलवारी मों दरसन पायहु ॥
मन औ ज्ञान हरा है सोई । होत भलो जो दसन होई ॥
मै सकुचाउ जात फुलवारी । भइउ नयन सों मै हत्यारी ॥
चार दिष्टि काहुब सों होई । जात चेत सों मुरछेइ सोई ॥
औ परगट मोहि चलत न भावै । अब मोहि लज्या जिउ सकुचावै ॥
गयेउ सखी वह सामै, आखिन रहो न लाज ।
अब यह नैन हमारो, प्रायेउ लाज सभाज ॥
लाज नहीं जेहि आखिन माहीं । है वह पसु है मानुष नाहीं ॥
घुघरू पहिरि लाज यह आही । पगु कहँ धीमे राख बचाही ॥
औ धन ऊँची सबद न बोलै । सुनत बिराने को मन डोलै ॥
औंधे नैन लाज सों कीजै । औ मुख ऊपर घूघट लीजै ॥
हो प्यारी अब पहिरहु गहना । पुरुष बिराने सों छिप रहना ॥
हौ बारी अलबेली, बारी कैसे जाउँ ।
भेट होइ काहुअ सों, खोर और मग ठाउँ ॥
जो जोगी तुम देखै चाहा । जोगहि मिलै जोग सों लाहा ॥
परगट तुम्है चलै को कहई । तो पट भलो पवन रथ अहई ॥
तेहि पर चढि कै चलिये प्यारी । चारो दिस पट लीजै खडारी ॥
जोगी साथ न दूसर कोई । है अकेल बारी मों सोई ॥
है भिच्छुक तेहि दाया कीजै । उत्तम दरसन भिच्छा दीजै ॥
दर निखाइ कै दरसन, आपुहिं लेहु छिपाइ ।
अधिक बढे अभिलाख तेहि, दूसर पथ न जाइ ॥
चलहँ चलहुँ निसचै फुलवारी । देखउँ जोगी कहँ मन बारी ॥
आज देवस औ रैन बितावउँ । प्रात सबै फुलवारी आवउ ॥
जोगी पास अहै मन मोरा । भयेउ सीस पर प्रान झकोरा ॥
होइ गयें खापन मन पावउँ । मन पाये आनद मनावउँ ॥
पहिले आपन दरस दिखायेउ । पाछे सों मोहि जोग सिखायेउ ॥
रहिउँ अचेत भुलानी, लाग राग को बान ।
प्रेम निबाहीं जो जियउँ, तेहि के मरउं निदान ॥
ना ले मरन का नाम पियारी । तोहि मरत मरिहैं बहु नारी ॥
जहँ लग हैं नारी रज दीपी । का बिछुरानी काह समीपी ॥
तोहि जिय सों जीयत सब कोई । कहु न मरन तो पर लो होई ॥

है जहँ लगरजदीपी नारी। जीउ तिन्हे है प्रीत तुम्हारी ॥
भलो भयेउ जो बाढा प्रेमू। मिलि है प्रीतम होइहै खेमू ॥
अति समीप है प्रीतम, अहै न एको बाट।
एक पाव दे आप पर बैठु, मिलन के पाट ॥
काहे न लेउ मरन के नाऊँ। मरब एक दिन धरती ठाऊँ ॥
केतिको प्रीत जगत महँ होई। देत न साथ मरन महँ कोई ॥
जावत जिया जतु जग रहई। करता बस सबको जिय अहई ॥
है समीप वह मित्र हमारा। पै जग धंध दूर मोहि डारा ॥
काम क्रोध तिस्ना मन माया। है रिपु कछहु उपाय न पाया ॥
किछु उपाय नहिं आवै, जाते जाहि नेवारि।
हैं बैरी मोहि गाढे, सकों न यह सब मारि ॥
अहो तुम राजा कर बारी। अरुझि रहिउ सुख बीच पियारी ॥
सुखमों काम क्रोध अधिकाई। तिस्ना मया करइ अगुवाई ॥
चारि पखेरू तोहि तन माहीं। चारों चारा नित उड़ि जाहीं ॥
रेत ग्रीउँ चारों कर प्यारी। मरिकै जियहि होहि गुनधारी ॥
मन दरपन ऊपर चित दीजै। नाहीं है सो निर्मल कीजै ॥
माज सजो मन दरपन, रात देवस चित लाइ।
स्याम रग अतरपट, उठि आगे सों जाइ ॥
बोलब सोइब खाइब थोरा। होइ होइ तौ कारज तोरा ॥
औ चिहार प्रीतम की लीजै। जो सिखवै सो कारज कीजै ॥
औ निसबासर अकसर रहना। सुमिरन जाप बीच दुख सहना ॥
पै यह मन है सत्रु समाना। जात न मारा सुख लुबुधाना ॥
मन बरजे कहँ काको करई। मन न मरै बरु पारा मरई ॥
मालिन हिता उपाय दै, गई आपने ग्रेह।
इद्रावति के मान से, भयउ समस्त सनेह ॥
चलु मन तहा जहा फुलवारी। तहा बसा है दरस भिखारी ॥
मित्रहि भेटहु देखहु फूलू। है फुलवारी परमद मूलू ॥
धन सो मानुष धन तेहि भागू। जेहि मधु मिलेउ खेलि कै फागू ॥
जेतो तेहि पतिझार सतावा। तेतो सो बसन्त सुख पावा ॥
धन जग माली सिर्जन हारा। कुल पलुहावत है पतिझारा ॥
भागवंत सो मानुष, है तेहि धन धन हाथ।
मित्र बदन औ फूल मुख, देखै एकै साथ ॥

फुलवारी खंड

इद्रावति दिन रात बितावा। भोरहि सखियन कह हकरावा ॥
भै न बिलब सखी सब आई। तारा समा रही जइ ताई ॥
आई ससि बदनी थोर दीनी। सकल राज दीपी पदुमीनी ॥
आई समुदे कुल की सुता। बहु ब्याहीं बहु अब्याहुता ॥
घोर समय वह नपत सहेली। धन मयक घेरेन अलबेली ॥

रानी की सब सहचरीं, आइ जुरीं तेहि पास।
सब अपछरा समा रहि, भवन भयउ कबिलास ॥

इद्रावति सखियन सों कहा। सो दिन गयउ बिछुं जो दहा ॥
जग सो पतिझारी रितु गई। पलोहे बिछुं नवल रितु भई ॥
काल्ह जनायेउ चेता नारी। फूल रही है मन फुलवारी ॥
चलहु गवन बारी दिस कीजे। फूल देखि परमद रस लीजै ॥
नहि जानहि सिर परिहै कैसो। खेलहु होइ खेलना जैसो ॥

फुलवारी चाहत है, मन बैरागी मोर।
चलहु देखिये उपवनै, है बसत रितु थोर ॥

थोरा है कुसुमाकर बेला। चलि देखिहु औ खेलहु खेला ॥
बीतो बेला छूटा बानू। हाथ न आवै झँखै परानू ॥
सकल समै को भेद छुपाना। है हम लोगन ताको जाना ॥
भटत आ राखत करतारा। जो चाहै है सिरजनहारा ॥
समय खरग है काटन हारी। जात चलछि तेहि भेटु पियारी ॥

मधु मीठो है मधु समा, मधु दरसन को लेहु।
हार सरीर ग्रीव को, हार कुसुम को देहु ॥

सब काहू धन आज्ञा माना। फुलवारी दिस कीन्ह पयाना ॥
इद्रावति रथ ऊपर चढी। दूनो बढी रूप को बढी ॥
चली मानसों ब्राम्हन बारी। बनियाइन नाइन पटिहारी ॥
चली सोनारिन कचन बरनी, रजपूती खतिरिन मनहरनी ॥
लोनी धन हलवाइन भली। अधर मिठाई बाटत चली ॥

चली सहेली सुदरी इद्रावति के सग।
गीत बसती गावतै, पहिरे दकुल सुरग ॥

मन फुलवारी मों सब गई। देखि सुमन को सुमना भई ॥
वेता मालिन भेटेउ आई। चद्रबदन देखै दुति पाई ॥
सुगँध कुसुम को हार सवारा। सब सुदरि के गीउ मों डारा ॥

देखि भँवर गन गुजत तहा। एक सखी बोली गन महा ॥
धन यह मधुकर धन यह फूलै। किन के ऊपर अलि मन भूलै ॥
जगत मझार सराहिये, भवर फूल के हेत।
भवरहि चिता फूल की, फूल बास रस देत ॥
सुनि सचेत इद्रावति रानी। बोली सुनिए सखी सयानी ॥
जग मो प्रीति बखानहु सोई। जीबन मरन एक सँग होई ॥
खोटी प्रीति भवर की आहै। भवर आपनो कारज चाहै ॥
आइ भवात बास रस आसा। लै रस तजत फूल को पासा ॥
लै रस बास भवर उडि जाई। मरत न जब सुमनस कुम्हिलाई ॥
प्रेमी ताको जानिये, देह मित्र पर प्रान।
मित्र पथ पर जिउ दिहैं, जुग जुग जिए निदान ॥
धन जो प्रीतम पर जिउ वारा। सिर पर चला प्रेम का आरा ॥
धन जो परा हुतासन माही। और सहायक चाहा नाहीं ॥
दया दिष्ट प्रीतम तब धरा। पावक फूल भयेउ नहि जरा ॥
धन जो मित्र आपनौ चीन्हा। पुत्र जीउ आगे कै दीन्हा ॥
मुवा न कहो जियत है सोई। अलख पथ जो जूझा होई ॥
मित्र जो हैं करतार के, मरत नाहि हैं सोइ।
एक मदिर तजि दूसरे, गवनत हैं वै लोइ ॥
गायउ गीत एक धन प्यारी। जग है करता की फुलवारी ॥
आपुहि माली आपुहि फूला। आपुहि भवर फूल पर भूला ॥
आपुहि रूपवत सो होई। प्रेमी होइ रिझत है सोई ॥
आपुहि परगट गुपुत अकेला। गुरू होइ कहुँ कहुँ होइ चेला ॥
आपुहि दाता करता होई। दिष्टा स्रोता बकता सोई ॥
सुनि सरवन दै चेत सो, सपन बखाना गीत।
उपजी सब के हिर्दै, चतुर सखी की प्रीति ॥
एक कहा हो राजदुलारी। है आनद ठाउ फुलवारी ॥
खेल एक खेलहु सब कोई। जासों स्रात बीच मुद होई ॥
एक कहा आनद न चहऊ। निस दिन आगम सोचमो रहऊ ॥
बहुत अनद न चाहीं प्यारी। ना तो परै आइ दुख भारी ॥
एक कहा चिता भल नाहीं। तरुनी चिंता सांझ बिरधाहीं ॥
खेलि लेहु नैहर मो, सब मिलि परमद खेल।
पुनि नैहर के छाडतैं, सासुर होब अकेल ॥
हम अज्ञात न सासुर चीन्हा। यह नैहर ऊपर चित दीन्हा ॥
है जग जीवन खेल समानू। ऊमर नहीं है मरन निदानू ॥
हम कह पार मीचु सो नाहीं। निसरि गगन महि तट ते जाहीं ॥

जानत मरम हमारो सोई । जाको सुमिरत है सब कोई ॥
मूरत अलख नहीं जग ठाऊ । हम तुम राखा है तेहि नाउ ॥
यह मूरत को तजि कै, चित्त अमूरत देहु ।
जाहि अमूरत ध्यान सों, स्वर्ग लोक फल लेहु ॥
राजकुअर फुलवारी माहीं । धन को आवन बूझा नाहीं ॥
चातुर चेता की चतुराई । सब काहू सो बात जनाई ॥
है फुलवारी मो एक जोगी । है काहू को प्रेम वियोगी ॥
है यह ठौर बहुत दिन सेती । नहि जानउ बाउर केहि नेती ॥
सुनि के सखिन कहा चलु रानी । देखै हैं कस जोगिय ध्यानी ॥
बात सुधानी सखिन कह, चली सखिन के सग ।
एक एक सब काहू, लीन्हे फूल सुरग ॥
बरजा एक अगम की नारी । तुम सुरूप राजा की बारी ॥
अलबेली लागहु भल देखे । तुम नियजिय अस जिय के लेखे ॥
हसितै बारी बिना वियाही । जोगी देखै तोहि न चाही ॥
लागहु तपी नयन मो मीठी । यह जिनि होइ लगै ताहि डीठी ॥
नहि जानहि जोगी कस अहई । आपन कथा केहि नित दहई ॥
देखहु मन फुलवारी, जाहु न तपी समीप ।
होत पतग तपी वह, देखि बदन के दीप ॥
जब यह बात सखी वह कही । सुनि मलीन रानी वह रही ॥
औरन कहा चलहु वहि बोरा । जग करता है रच्छक तोरा ॥
रच्छक आप अलख है जाको । एकहु बार न वाकै ताकहु ॥
पै अबहीं देखहु फुलवारी । फेर चलेहु जेहि ओर भिखारी ॥
सुखी भई यह बात सयानी । लीन्ह सुरग फूल एक रानी ॥
देखत रहिगै रानी, लीन्हे फूल के हाथ ।
एक सखी हसि बोली, इद्रावति के साथ ॥
हसि कै मालिन कै गुन गावा । धन चेता अस फूल लगावा ॥
उतर दीन्ह सुनि चेता रानी । मोहि न सराही अहो पियारी ॥
सुमिरहु तेहि जो है सुख दाता । जे यह फूल कीन्ह रग राता ॥
जो हमार दोउ हाथ बनावा । जेहि करते मै फूल लगावा ॥
जग मों जावत है सब बना । तावत करता का दरपना ॥
दीठ होइ तो देखऊ, तन आदरस मझार ।
बदन विराजत है तेहिक, जेहिक सकल ससार ॥
है वह एक जगत उपराजा । जो दोइ होत बनत नहि काजा ॥
धरती गगन सवारा सोई । तासो जोत अउर तम होई ॥
करता तीन अउर दुइ नाही । एकै है दोऊ जग माहीं ॥

जो किछु करत न पूछा जाई। पूछा जाइ जनम जेइ पाई ॥
कीन्हा निस दिन औ रवि चदा। तेहि सुमिरन मा सबहि अनदा ॥
रात दिवस दुइ चीन्ह है, रात मिटत दिन होत।
याही सो लेखा बरस, जानत है सब कोइ ॥
इद्रावति धन कमल सुबासा। आइ भवर गूजे चहुं पासा ॥
कहा सखिन सो डर जिव पावै। भवरन मो तन डक लगावै ॥
कहेन सखिन तुम कमल पियारी। लेत भवर हैं बास तुम्हारी ॥
मोहें बास पाइ कै तेरी। कहा तिन्हे सुधि बिन्धै केरी ॥
फूल भवर होइ आइ भ वाही। तोहि ऊपर तो अचरज नाहीं ॥
भवर बास के कारने, चहुं दिस आइ भ वाहि ।
पोढा मजकरू रानिया, बिन्धै की डर नाहि ॥
जह' लग सुदर रही सयानी। फुलवारी देखे रह सानी ॥
कहा एक आगम की बारी। धन नइहर जामो फुलवारी ॥
फुलवारी औ फूल बिलाकें। बहुत अनद बडी है मोकै ॥
फेर न देखब अस फुलबारा। जब गवनै जाबै ससुरारी ॥
परै सीस पर भारी भारा। कैसे राखिही कन्त हमारा ॥
नइहर अहै पियारा, चक चूहट जिय होइ।
सुमिर गवन सासुर को, दूर परै सब कोइ ॥
सुनि इद्रावति सासुर नाऊ। मन मो सोच कीन्ह तेहि ठाऊ ॥
कहा जाब निश्चय ससुरारी। नइहर तजब तजब फुलवारी ॥
छूटि परै सब सखी सहेली। जाबै सासुर अन्त अकेली ॥
अहो सखी आगम मोहि सूझा। सासुर गवन आजु मै बूझा ॥
अस फुलवारी पाउब कहा। सासुर नगरी होइह जहा ॥
तुम्हे समा कित पाऊ, एक बैस की नार।
नइहर खेल ना पाइब, जब जाबै ससुरार ॥
समुझा सखिन सोच मो रानी। बोली सरब बोध की बानी ॥
अहो पियारी सोच न करहू। जेहि प्रीतम प्यारे सग रहऊ ॥
ठाउ देइ सुख मन्दिर प्यारी। लाइ देखावहि तोहि फुलवारी ॥
देइहै बहुत हमै अस चेरी। करइ रात दिन सेवा तेरी ॥
प्रीतम जिउ सम राखै तोही। तोहि सग खेलै खेलइ वोही ॥
अस दुख देइहै सासुरे, तोहि कामिन कह सोइ।
वैसो सुख नइहर मो, मिला न कबहू होइ ॥
इद्रावति फिर बात निसारा। तो सुख देइहै कन्त हमारा ॥
जो नइहर मो जोरब नेहा। होबै एक जीव दुइ देहा ॥
चलब मान तजि सूधी चाला। तो सासुर अचउब सुख हाला ॥

रहबै सत्त सनेह सम्हारे। काम क्रोध त्रिसना कह मारे॥
राखब प्रीत सिखब गुन नीका। सुमिरन करब पियारे पीका॥
तो पाइब सासुर सुख, प्रीतम होइह साथ।
सुख अनन्द नित मानब, पिया पियारे साथ॥
धन की करनी जोखइ पीऊ। एहि समुझ डर मानत जीऊ॥
जाकर भारी होइहै तूला। सुख मंदिर द्वारा तेहि खूला॥
जेहि हलुका होइहैं दुख सहई। औ दुख अगिन मँदिर मो रहई॥
करनी सिखा जान सब कोई। दाहिन सो पाये भल होई॥
देहि लिखा बाउ सो जाको। बहुत कलेस परै सिर ताकों॥
करनी सेतीं छोट बड, सब किछु पूछे जाहि।
सतवती गुनवत पर, डर एकों कछु नाहि॥
सखी एक आँसू कह ढारा। पूछेन कहाँ परान तुम्हारा॥
कहा गवन को दिन मै बूझा। सकट दुख ता दिन को सूझा॥
जब सासुर गवने मै जाऊ। देहि सकेत मदिर मोहि ठाऊ॥
दुइ जन पूछहि को पिय तेरा। को है जासो मगु तैं हेरा॥
पूछहि कवन पथ तै लीन्हा। डरे सो उत्तर जाइ न दीन्हा॥
उत्तर देउँ तो बाचऊ, ना तो मारी जाउ।
यही बूझि मै रोई, कैसे होइ वह ठाउ॥
रानी कहा रहइ जिउ कहाँ। पूछहि जदिन गवन घर महा॥
एक कहा यह जीउ पियारा। तापल रहइ सरीर मझारा॥
एक कहा जिउ पूछा जाइहि। पूछे बीच न काया आइहि॥
एक कहा दुइ बात न अहई। का पर कया बीच जिउ रहई॥
एक कहा कछु लइ तन कहना। कहना सो लहना चुप रहना॥
गवन मदिर मा सुख दुख, डर सो टूटै हाड।
अहै सरग फुलवारी, अहै नरक को गाड॥
बोल उठी एक सुदर नारी। रहत फूल निन झरत न प्यारी।
रग सलोन फूल झरि जाई। चक चूहट उपजत अधिकाई॥
सुमन सुबर्न सुगन्ध सोहाहीं। अत झरे माटिन मिलि जाहीं॥
उतर निसारा बूझन हारी। नित जो एकै रहत पियारी॥
जग माली गुन रहत छिपाना। बहुत बरन गुन जात न जाना॥
यह जग है फुलवारी, माली सिरजन हार।
एक एक सो सुदर, लावत ताहि मझार॥
जीरन यह जगती हम पाई। नितु एक आवै नितु एक जाई॥
केतिक बरन के फूलन फूले। केतिक की लालय मन भूले॥
केतिकन रुपवत अवतरे। केतिक विरस आग सो जरे॥

केतिकन भइन सलोनी नारी । केतिकन तिन पर भयेन भिखारी ॥
केतिकन विद्यावती भयऊ । केतिकन धनी बली होइ गयऊ ॥
अब हेरे नहि पाइये, तेन सरीर को चीन्ह ।
केतिक रतन पदारथ, मीचु चोर हरि लीन्ह ॥
हम हूँ चलब अवध के पूजे । फेर न जग मां आइब दूजे ॥
फूल दखि का झँखहु पियारी । हम तुम सबकी आइहि पारी ॥
एक कहा वैरागिन होहू । अहै मरन हम कह औ तोहू ॥
होइकै बैरागिन तप करहू । जासो मरग सदन मह परहू ॥
कहकी भेस न फेरै चाही । फेरे भेस भलो नहिं आही ॥
पिय की सेवा नित करहु, रहहु सम्हारे नेह ।
याते दाता देइहै । आगम दिन सुख गेह ॥
कहेन बहुत अब आगम सूझा । परमारथ सब का हुअ बूझा ॥
अब रानी चलि देखहु जोगी । कैसे राखन भेप बियोगी ॥
चद्र नखत सँग पाव उठायउ । जाइच कोरहिं दरस देखायउ ॥
सकल सखिन कह जोगी भेगा । जिउ दरसन पायउ जिउ देखा ॥
इन्द्रावति औ सखिय सयानी । जोगी रूप बिलोकि लोभानी ॥
मन लोचन मों चद दिस, रहिगा चितै चकोर
चद बिलोकत रहि गयउ, निज चकोर की ओर ॥
जब लग नैन चार रहु चारी । राजकुवर कह ठग अस भारी ॥
दामिन चमक चाह अधिकाई । हुअऊ चितै रहे चित लाई ॥
बहेउ पवन लट पर अनुरागे । लट छितिरान पवन कै लागे ॥
परी बदन पर लट सटकारी । तपी दवस भा निस अँधियारी ॥
मोहि परा दरसन कर चेरा । हना बान धन आखिन केरा ॥
प्रेम पथ को पथिक, पहरे जोग दुकूल ।
परी साझ तेहि मगुमो, गएउ बाट सो भूल ॥
हा हा सखिन कहा पछिताई । काहें तपी परा मुरझाई ॥
नहि मुरछा मुख देखि सयाना । लट परतहि मुख पर मुरछाना ॥
एक कहा जठ सो मुख सोभा । होत अधिक लखि मुरछा लोभा ॥
एक कहा लट नागिन कारी । डसा गरल सों गिरा भिखारी ॥
एक कहा लट जामिनि होई । रात जानि जोगीगा सोई ॥
एक कहा निसि जानि के, तपी गयउ जो सोइ ।
का जोगी के जोग सों, तप पुरषारथ होइ ॥
जोगी सो जो जागै रयना । मन पर धरै ध्यान की नयना ॥
ध्यान समेत रयन जो जागै । ताको हाथ मनोरथ लागै ॥
पहरू जागत ध्यान न लावा । याते तेहि कछु हाथ न आवा ॥

मन जागै तब जागव नीको । चित फिरि आवै धरती जीको ॥
एकै बार न जागै कोई । थोरे दिन कों बाउर होई ॥
जाके मन औ नैन मों, दरसन रहा समाइ ।
ताको नींद कहा परै, चिन्ता आवै जाइ ॥
बोली एक सहचरी सयानी । जब मुख ऊपर लट छितिरानी ॥
यह मुख यह तिल यह लटकारी । ये तो कहि कै गिरा भिखारी ॥
नहिं जानहि आगे कम कहते । चेत समेत तपी जो रहते ॥
आवहु आगे अरथ लगावें । सब कोउ अरथ पथ पर पावैं ॥
सुनि सब सखी चेत दउडावा । जोगी हु तें समस्या पावा ॥
एक कहा मुख लट तिल, मुकुर फाँद है चार ।
जग मनसूआ फँदै कह, है एतो उपकार ॥
आपुहि देखि मुकुर मो भूलें । दूसर सुआ जानि मन फूलैं ॥
दूसर देखि देखि कै चारा । कहैं तुरत यह फाद मझारा ॥
एक कहा मुख तिल लटकारी । सबुल भवर अहै फुलवारी ॥
एक कहा मुख ससिहि लजावा । लट जोगी को मन अरुझावा ॥
तिल इद्रावति मुख पर सोहै । तिल नाहीं जासो जग मोहै ॥
इद्रावति हग लिखित कै, भा विरच मतवार ।
मसि लगाउ लेखनी गिरेउ, सोभा भै अधिकार ॥
एक कहा का कोउ सराहै । रूप गरन्थ रानि मुख आहै ॥
तिल है सुन्न गरन्थ मझारा । लट स्यामल सोहत मसिधारा ॥
सबन बखाना जो जस बूझा । इन्द्रावति कह आगम सूझा ॥
कहा तपी अस कहते आगे । गरब न करु सुन्दर डर त्यागे ॥
यह मुख यह तिल यह लटकारी । अत होइ एक दिन सब छारी ॥
कहेन सखी सब आपमो, धन इद्रावति बूझ ।
धन अधीनता धन वचन, धन धन धन धन सूझ ॥
लाया सखी गुलाब मगायउ । छिरिकि कुअर कह बहुत जगायउ ॥
मोह गये अधि को नहिं जागा । वह गुलाब सीतल तेहि लागा ॥
एक कहा यह भी मतवारा । धन के नैन बारुनी ढारा ॥
सखिन कहा हो प्रान पियारी । मारेहु चखुसर गिरा भिखारी ॥
फेर जिउ जो जोगी यह पावै । तोहि तजि औरहि ध्यान न लावै ॥
सखिन न जानहि जागी, है बाउर तेहि लाग ।
तजा राज कालिंजर, लीन्ह जोग बैराग ॥
नाह नाह में आपन मारा । काहे बूझहु दोष हमारा ॥
कहेन दोष नाहीं धन तेरा । दोष तुम्हारी आखिन केरा ॥
तेहि चितवे तेहि मारहि बानू । सुमिरि सुमिरि तोहि देइ परानू ॥

फेर सखी सब बात सम्हारा। दोष नैन नहिं दोष तुम्हारा ॥
रूप दरब मुख तोर पियारी। अम्बुक जमल करहि रखवारी ॥
चाहा लेइ तपी हग, होइ के चोर समान।
नैन तुम्हारे तस करैं, मारा बरुनी बान ॥
कर तसकर को काटा चाही। जीउ न मार दोष धन आही ॥
हैं हत्यारे नैन यह तेरे। खजन मिर्ग अहैं दोउ चेरे ॥
अहै नयन सो उत्तम कानू। तासो बात सुना यह प्रानू ॥
यह नित जो दोऊ जग कीन्हा। रसना एक करन दुइ दीन्हा ॥
की कहु एक बात मति सानी। सुनि दुइ बात आन सो रानी ॥
बहुतन के संसार मो, जो सिर्जा दिन रैन।
छाप दिन मन ऊपर, औ सरवन पट नैन ॥
मसि औ पत्र सखी एक आनी। जीउ कहानी लिखा सयानी ॥
बहुरि लिखा हो जोगी भेषा। जोग तोर इन्द्रावति देखा ॥
ताको दरसन पाय भिखारी। मुरछानेउ नहि सकेउ सम्हारी ॥
अबही तेरो जोग न पूजा। जोग छोडि करु काज न दूजा ॥
लिखा सोधान सखिन के हियरे। चली राखि राजा के नियरे ॥
जीउ कहानी लिख कै, राखि चलीं तेहि पास ॥
छोडि तपी को आईं, जहाँ सदन सुख बास ॥
जब राजा जागा सुधि पावा। जागि चहूँदिस दिष्ट लगावा ॥
पत्र उठाइ बिलोकेउ ज्ञानी। पढा संपूरन जीउ कहानी ॥
जब बाचा इन्द्रावति नाऊ। भखा बहुत अपन मन ठाऊ ॥
उपजी प्रेम भाव डर दाहा। बहुतै पछताना कहि हा हा ॥
सो रानी आई मोहि आगे। पहिरेउँ यह कथा जेहि लागे ॥
मोहि लेखे एक पल भर, उपबन भएउ बहार।
अब देखेउ फुलवारी, आइ बसेउ पतझार ॥
कहा गई वह प्रान पियारी। जेहि कारन मै भयउ भिखारी ॥
कहा गई वह दीप सिखा सी। जाको मै रम्भा सी दासी ॥
दिष्ट घरी तनु पुनि का भई। देखिन परी परी सम गई ॥
रे जिउ कमल सुगधित अगू। गयेउ न लागेउ अलि होइ सगू ॥
गोरी वह गोरी सम गोरी। नैन नैन सो स्यामा जोरी ॥
गहा धिर्ज मन भीतर, लिहें मिलन की आस।
भा कालिंजर राजा, बिप्र योग को दास ॥

नहान खंड

इद्रावति मन प्रेम पियारा । पहुँचा आइ तीज तेवहारा ॥
रहिल जहाँ इन्द्रावति प्यारी । आइन राजदीप की बारी ॥
होइ कष्ट मन रहा समाना । पै आनन्द सखी नित माना ।
कहेनि सहेलिन है डर मानू । मन तारा चलि करहि नहानू ॥
रतरु हितू जन के बस भई । सखिन साथ मन तारा गई ॥
केस सुगधित खोलि कै, राखि चीर सब तीर ।
पहिरि नहान दुकुल सकल, कीन्हा सजल सरीर ॥
अब जूरा इन्द्रावति छोरा । भयउ घटा मो चाद अजोरा ॥
पैठिहु जब जल भीतर रानी । पानिय पायउ तारा पानी ॥
झुलना झूलेउ करत नहानू । लहकि चहेउ चुम्बे अधिरानी ॥
लखि नथ मोती की अमलाई । सुक्र छपाना आप लजाई ॥
मनु तारा भा गगन समानू । भयेउ मयक समा वह प्रानू ॥
सुरज उआ आकासही, चद्र उआ जल माह ।
कुमुद तामरस फूले, दोउ मित्र के पाह ॥
कहा रतन सों एक सहेली । वरनि न पारों तोहि अलबेली ॥
केस कस्तुरी हिर्दे फादू । अहै लिलाट अजोरा चाँदू ॥
अहै भिर्कुटी धनुक समानू । है बरनी जिसनू कै बानी ॥
नैन सलोन जगत मन हरा । करन सीप मोतों सों भरा ॥
नासिक मनहुँ कीर बैठो है । बरुक अकार कला निधि को है ॥
चिबुक कूप को पानी, चाहत कीर घरान ।
फूल गुलाब कपोल है, तिल है भँवर समान ॥
सीरन लाल अधर रतनारा । दसन पाँत मोती को हारा ॥
मन मेरो लालहि चित धरा । जाइ चिबुक गाड़ा मों परा ॥
रेखा एक ग्रीउ मों सोहै । का बरनों सोभा मन मोहै ॥
निर्मल बदन आरसी छाजै । गल कचन की डाडी राजै ॥
अमल कनक सों भुजा बनावा । सुन्दर हाथ कमल मन भावा ।
यह सामै हो रानी, जल औ मुख रवि तोर ॥
पाइ होऊ कर वारिज, बिकस चलें मुख वोर ॥
उरज बीर दुइ मनमथ कोहैं । छवि उपवन दुइ श्रीफल सोहैं ॥
नाहीं नाहीं चुप यह जानहु । बटा जमल जोत के मानहु ॥
का बरनो रोमावलि हेरी । सेल्है मदन बाहनी केरी ॥

पातर लक केस की नाई। नाहीं सों सिरजा जग साई ॥
जघ चरन सो आचम्भो है। रम्भा खम्भ कमल पर सोहै ॥
मानहु खम्भा रूप के, जुगल जघ है तोर।
चरन बखान न कै सकों, नित परसै चित मोर ॥
सुदरता को लच्छन जेते। प्यारी चेरे तेरे तेते ॥
लट कुतल अति स्यामल आहै। भौह स्याम जैहि इद्र सराहै ॥
स्याम अधिक लोचन सँवराई। स्यामल बरुनी जिश्नु डेराई ॥
ललित अधर औ रसना तोरे। अँगुली सीस ललित रग बोरे ॥
ललित कपोल गुलाब लजाहीं। जग मन मधुकर समा लोभाहीं ॥
तरवा और हथोरी, आनन रसना छोट।
गल कुतल दिर्गलाब है, बानन मिलै न वोट ॥
दसन सेत औ नैन सेताई। अधिक सेन कछु बरनि न जाई ॥
गोल सीस औ बदन तुम्हारा। गल एडी बिधि गोल सँवारा ॥
ऊँच नासिका ऊँची भौहैं। बरुनी ऊच बात सम सोहैं ॥
करन छिद्र पायउ सकराई। साकर नासिक छिद्र सोहाई ॥
आहै साकरि नाम तुम्हारी। तोहि बिधि सौंपै सानि सवारी ॥
एतो सुघराई पर, रचिक गरब न तोहिं।
सुदर सील तेहारो, लागत नीको मोहि ॥
निज बखान इद्रावति पाए। रही लजाइ सीस औधाए ॥
कहा बखान करहु का मेरा। है मनाक जीवन जग केरा ॥
का अभिमान देह पर करहूँ। एक दिन होइ छारे होइ परऊँ ॥
गरब सखी सब ताकह छाजा। जो त्रैलोक बीच है राजा ॥
जे निधनी को सग न चाहा। भयेउ न तेन्हे अगम सों लाहा ॥
परगट रग देह को, देखि न गरबै कोइ।
आवै एक देवस अस, छार कलेवर होइ ॥
बोलिन राजदीप की नारी। आवहु जलमों रचैं धमारी ॥
जब लग सीस पिता को छाहा। खेलहि कोउ करहि जगमाहा ॥
जब चल जाहि कँत के देसू। कैसो कैसो सहैं कलेसू ॥
नइहर देस कहा फिर आवन। कहँ यह पथ चलै यह पावन ॥
सो गुन एकउ हाथ न आया। जासों होई प्रीतम दाया ॥
जानों नहि पिय प्यारा, राखे कौनै मान।
एकौ गुन नहि सीखा, हम बाउर अज्ञान ॥
रानी कहा भेद अब कहना। केहि गुन होइ कत सों लहना ॥
एक कहा सेवा नित कीन्हेउ। चित मूरत सम पिय पर दीन्हेउ ॥
एक कहा लहना तब होई। पिय जो कहै करै धन सोई ॥

एक कहा नित करत सिंगारा। चाहै धन कहँ कंत पियारा ॥
एक कहा जो सूघर होई। पावै लाभ कंत सों होई ॥
इंद्रावति प्यारी कहेउ, ताकहँ चाहै पीउ।
जो पिय की सेवा किहैं, गरब न राखै जीउ ॥
समुझ बन्दमों प्रीतम प्यारा। इंद्रावति अबुक जल ढारा ॥
नहि जानो केहि भाते सोई। दिन औ रात बितावत होई ॥
आगे जीउ दाया तोहि नाहीं। तेरो जीउ परेउ बँद माहीं ॥
जलमो रानी ठाढ तवानी। सखिन सात रसमों पहिचानी ॥
पूँछे आगमपुर की बारी। सजल नयन केहि लाग पियारी ॥
आन अनद देवस है, अहै तीज तेवहार।
केहि कारन चिन्ता मो, प्यारी जीउ तोहार ॥
सकल सखिन सो मरम छिपावा। आनहि भाँति कि बात सुनावा ॥
वह दिन समुझ सखी मै रोई जा दिन नइहर बिछुरन होई ॥
वह दिन समुझ सखी मै रोई। जा दिन नइहर बिछुरन होई ॥
बिछुरहु तुम सब सखी सहेली। सब अलबेलि रूप अलबेली ॥
मिलै कहाँ तुम समों पियारी। कहाँ अलिबेल कहाँ फुलवारी ॥
रहै न सासुर आदर मोरा। सासुर लोग करै नक तोरा ॥
सो दिन समुझि परै सों जल महँ ठाढ तवाउ।
नहि जानों कस होइ है, हम कहँ सासुर ठाउ ॥
रंग न फीको करिये जी को। पी को संग पियारी नीको ॥
तब लग नइहर देस पियारा। जब लग मूरखता को पारा ॥
जब हीं खुलै से मुखी नैना। सासुर सोच बढे दिन रैना ॥
सासुर देस मिलै सब प्यारी। हिंतू तड़ाग राग फुलवारी ॥
पीउ अनन्द मूल जब पावा। सब सुख राज हाथ मो आवा ॥
तुम का आपुहि को डरहु, है हमहूँ कहँ त्रास।
पै सासुर कविलास है, रहैं जो प्रीतम पास ॥
खेलै लागिन तारा माहा। कोउ धरि काध कोऊ धरि बाहा ॥
सुन्दरता सागर वह नारी। मन तारा मौ रचा धमारी ॥
लै जल मुख कै ऊपर मारै। नरम कलोल देहि जब हारै ॥
रानी साथ कहा एक नारी। गहिरे पाँव न धरहु पियारी ॥
जो गहिरे पग राखइ कोई। नीर सीस तें ऊपर होई ॥
गहिर बहुत है आगे, डूबि मरै जनि कोई।
ना तो खेल कोउ मो, महा दन्द दुख होइ ॥
सुनि यह बात सखी एक रोई। आसु गुलिक जल ऊपर वोई ॥
पूछैं और आसु कस ढारे। खेल के बीच अनन्द नेवारे ॥

उतर दीन्ह सासुर मगु ठाऊँ। है सागर औ सागर नाऊँ॥
होइ है जा दिन गवन हमारा। नहिं जानौ किम उतरउ पारा॥
यह नइहर तारा है जाना। जेहि आगे पगु धरत डेराना॥
वह न जान कस होइ है, गहिर गम्हीर अथाह।
इहै समुझि मै रोइउँ, केहि बिधि होइ निबाह॥
सुनि सब राज दीप की बारी। तजि आनद समुझा ससुरारी॥
आगम सोच कीन्ह सब कोई। सासुर पथ बीच कम होई॥
बोलिन फेर सोच यह काहै। प्रीतम दाया पथ निबाहै॥
होइ जलधि तो सेवक लेई। धन कह जलधि पार कै देहीं॥
जा सग ब्याह होत जग माहाँ। पथ निबाहत सो धरि बाहाँ॥
जनम सँघाती होत सो, जाके सग बियाह।
जैस परै तस अगवै, धन को करै निबाह॥
कै नहान सब बाहर आई। निर्मल अग परी की नाई॥
लटकी लट इद्रावति केरी। दोऊ दिस ते मुख कहँ घेरी॥
मुख लट सों सोहै वह रामा। एक चद्रमा दूइ त्रिजागा॥
लट कपोल पर सोहै कैसे। बैठा नाग बित्त पर जैसे॥
सोन बिनावट दुकुल रँगीला। कीन्हा अग सो परगट लीला॥
कै नहान घर कहँ चली, वै सब कनक सरीर।
उनकी निर्मलताइ सो, भा निर्मल मन नीर।
मन तारा केती रहि रानी। दिउरी एक देखि बिथकानी॥
प्रान बाटिका की वह स्यामा। पूछा कवन सती यह ठाना॥
सखियन कहा सती यह ठाऊँ। रानी कहा सती है नाऊँ॥
तब की बात हमै सुनि परी। अपने कत लाग धन जरी॥
जस तोहार तस ता गल नीका। खात तमोल देखावै पीका॥
अब धन जरिकै छार भै, रहे न एकौ चीन्ह।
दिउरी साखी करत है, अगिन छार तेहि कीन्ह॥
इद्रावति करुना मै रोई। एक दिन छार होइ सब कोई॥
दिउरी के समीप होइ कहेऊ। हहुँ कैसो यह रानी रहेऊ॥
हहुँ कस रही चाल नारी की। दयावन्ति की मानिनि जी की॥
कहाँ गई धन मिलै न हेरै। है ता जिउ दिउरी के नेरै॥
हहुँ कस रहा चरन औ हाथा। कैसो रहा ग्रीउ औ माथा॥
मन तेवान के ठाढी, रही घरी भर आप।
हिर्दै सात रस डूबा, बुझि जगत कहँ स्वाप॥
इद्रावति जब ध्यान लगावा। सबद एक एक दिस ते आवा॥
मैं का रहिउ रहीं बहुतेरी। जिनकी रहीं अपछरा चेरी॥

सोऊ जगत छाड़ि कै गई। मिलि धरती मों माटी भई॥
इहा न लहत सिंगारी काया। लहत न गरब लहत है दाया॥
लहत न काया सुन्दरताई। लहत पुन्य मन की निर्मलाई॥
सबद पाइ इद्रावति, अधिकौ रही तवाइ।
चिन्ता बहुतै कीन्हा, अपने मंदिर आइ॥
हौ मै पाप भरी जग माहीं। आस मुकुत की है किछु नाहीं॥
है मोहि बीच दोष जहँ ताई। डरउँ करै कैसो जग साई॥
साहस देत परान हमारा। अहै रसूल निबाहन हारा॥
निस दिन सुमिरु मोहम्मद नाऊँ। जासों मिलै सरग मों ठाऊँ॥
करता तोहि मोहमदि कीन्हा। माथ सुभाग अंस तोहि दीन्हा॥
ना करु सोच अगम को, राखु हिर्दै मों आस।
जाके दीन बीच तैं, सो देइ है सुख बास॥
अरे प्रीतम तै मन हरा। अहों बियोग बन्दमों परा॥
आइ बद सों मोहि छुड़ावहु। दोऊ जगत भलो फल पावहु॥
मोहि पाछे बैरी बहुतेरे। चेरे साथी सेवक मेरे॥
खरग काढि बैरी कहँ मारहु। बद कूप ते मोहि निसारहु॥
अलख सँवारा तुम कहँ वली। चलै जगत मौ कीरत भली॥
दूसर बद न भावत, जहाँ प्रेम को बद।
जगत बद दुखदायक, प्रेम बद आनन्द॥

---

*

जुद्ध खंड

बुद्ध सेन क्रीपा कहँ सेवा । जैसे मानुष सेवै देवा ॥
राज कुवर को बद सुनावा । सुनि क्रीपा क्रीपा पर आवा ॥
तब सहाय जगपति सों माग । सब पायव कछु एक न खाग ॥
क्रीपा चला कटक लै भारी । गोंहन सुभट चले बलधारी ॥
पानहु दीन्ह समुद्र हलोरा । लहर मनुज तबेरम घोरा ॥
तबेरम दल सोहै, कज्जल गिर के रूप ।
रहेउ अचल कज्जल गिर, ताहि चलायउ भूप ॥
कहत न पारउँ तुरै बखानू । रहे चलत महँ पवन समानू ॥
औ थिराय कै सामै माहीं । माटी चाह सो अधिक थिराहीं ॥
नीचे जल सम पाव उठावै । अगिन समा ऊपर कहँ धावैं ॥
बाजी सकल पवन के जाये । मानहु चेत भेस धर आये ॥
वै सवार है पर केहि मानन । मनहुँ पवन ऊपर पउचानन ॥
यह समीर तेन आगे, चलत थकित होइ जाइ ।
आगे वै पगु राखहीं, पाछे पवन थिराइ ॥
क्रीपा आवागढ़ नियराया । आया पति दुर्जन सुधि पावा ॥
गढ भारेउ औ कटक बटोरा । धरेनि अलग बीर चहुं ओरा ॥
तिस्ना कोप सहायक आयउ । आयेउ गरब अधिक बल पायेउ ॥
गढ सों छूटन लागेउ गोला । डोला सात अकासहि डोला ॥
क्रीपा दिस छूटत अरि चोटा । भयेउ जगत करता की ओटा ॥
बाजहिं बाला सजुगी, चहुँ दिस परेउ पुकार ॥
चार मास तहँ बीता, होत सत्रु से मार ॥
जो करतार पथ पर जूझा । ताकहँ चिरज्जीत हम बूझा ॥
करता मगु पर जे रन लायेउ । ताहि सहाय गगन सौ आयेउ ॥
आयेउ नभबासी की सैना । दीख न पारा ता कहँ नैना ॥
करता की सेवा के बेरा । होंइ जहाँ डर दुर्जन केरा ॥
सुमिरन सेवा आधे करहीं । आधे लोग सत्रु सँग लड़हीं ॥
धन जो सिरजनहार मगु, गहि कै राखेउ पाव ।
पाव न टारा जुद्ध सों, आय उरद मो घाव ॥
गढ़ मों गरब राय मुख खोला । गरब बचन दुर्जन सों बोला ॥
जैसो जगपति तस तुम राजा । गढ सों निसरि जुद्धि तेहि छाजा ॥
एकै एक करहिं मिलि जूझा । जाय सुभट जन को गुन बूझा ॥

तब दुर्जन गढ सों निसराना । हलकी रज तिमिरार छपाना ॥
चढि मैदान कोप मा ठाढा । छमा खरग यह दीसों काढा ॥
भयेउ खेत के ऊपर, सीधै सींघ भिड़ाव ।
आइ सरीरन सचरेउ, काहे करसों धाव ॥
सुमिरि हियें करता कर नाऊँ । मारा छमा कोप सिर ठाऊँ ॥
जब वह कोप गिरा गा मारा । आयउ मदनसिंह बरियारा ॥
धरम राय यह दिसते धायेउ । मदन सिंह कहँ बाधि लियायेउ ॥
मदन विमद होइ सेवक भायेउ । आपा सुरा उतरि तेहि गायेउ ॥
दुर्जन कटक सहित तब धावा । अतरन रकत समुद्र बहावा ॥
एकै भये दोऊ दल, जमल जलधि मै एक ।
कठिन परगटेउ सजुग, मन सों गयेउ विबेक ॥
भयेउ घटा ढालन सों कारी । खरगन भये बीज चमकारी ॥
गेंदा सीस खरग चौगानू । खेलहिं बीरहिं चढि मैदानू ॥
हाल आपनों आपनों चाहैं । अरि को शस्त्र चलाव सराहैं ॥
भाला खरग हनै सब कोई । वोड़न खरग ठनाठन होई ॥
गगन खरग सों ठनठन गयेउ । हिन हिन औ धुन हन हन भयेउ ॥
वोनई घटा धूर सों, दिन मनि रहा छिपाय ।
तहा महाभारथ भा, सबद परेउ हू हाय ॥
साहस राय गयद सरीरा । औ मन सिंह धरम रन वीरा ॥
खरग हनै जाके उपराहीं । बिनु बिलगें सो बाचै नाहीं ॥
कोउ भये घायल कोउ मारे । भाला खरग सुरा मतवारे ॥
छुछाबान सों भयेउ निखगू । भयेउ निखग बान को अगू ॥
बढेउ कमठ कहँ दाह कराहू । चकाचाक भा धाधक हाहू ॥
जुद्ध करत दोऊ कटक, थाके रहे अघाय ।
दुर्जन रिपु मारा परा, ता दल गयेउ पराय ॥
क्रीपा जब दुर्जन कहँ मारा । जाइ के बद सों कुँवर निसारा ॥
कुँवर कहा क्रीपा जस लीजे । जलज सिंधु दिस गवन करीजे ॥
क्रीपा कुँवर सहित गा तहाँ । रहा समुद्र गुलिक को जहाँ ॥
कहा बहुत राजा जिउ दीन्हा । काहु अ मोती हाथ न कीन्हा ॥
बहुत महीप भये मर जीया । मोती काढे नित जिउ दीया ॥
दीन्ह कुँवर कहँ क्रीपा, मोती ठउर बताइ ।
औ खेवक हकरायेउ, राहहिं दीन्ह चिन्हाइ ॥
राजा जगपति यह सुधि पावा । मरमी जन सों मरम जनावा ॥
एक मनुष राजा सों कहा । ना जानहिं जोगी कस अहा ॥
राजन ऊपर परन तुम्हारा । नाहीं सबै निसारन हारा ॥

यह मोती तेहि काढ़ब छाजा। राजा पुत्र होइ जो राजा॥
बरजि पठावहु बेर न कीजै। जात खोजि कै आशा दीजै॥
भायेउ बात निर्प कहँ, भेजा तुरत बसीठ।
फेलि लियाई कुँवर कहँ, दीन्ह जलज दिस पीठ॥
बैठा बिर्छ तरें अनुरागी। चिन्ता कथन हुतासन लागी॥
कहै कवन उपकार बनावउँ। जाते प्रान बल्लभा पावउ॥
जावक होउँ होइ दुख मेटउ। तो वह कमल चरन कहँ भेंटउ॥
कजल होउ नयन लगि रहऊं। होउ पवन लट ऊपर बहऊ॥
होइ मोती बेसर महँ परऊँ। होइ प्रतिबिम्बी छाया धरउँ॥
जेहि प्रान प्यारी के, अमी भरे अधरान।
ता पगु रज के ऊपर, वारों आपन प्रान॥

———

मधुकर खंड

इद्रावति चिन्ता महँ परी। रहै न बिनु चिन्ता एक घरी ॥
आंइ रैन तेहि बहुत सतावै। कल न सुपेती ऊपर पावै ॥
कलगै गलगै जलगै काया। तेहि वियोग को पीर सतावा ॥
सखिन मता आपुस मों कीन्हा। सब मिलि कै ऐसो मत लीन्हा ॥
निस कहँ जहाँ रहै वह रानी। सदा सुनावहु एक कहानी ॥
होइ बहोरै जीउ को, सुनत कहानी बात ॥
चिन्ता जाय सरीर सों, नीद परे वहि रात ॥
एक सखी निस होतहिं आई। मधुरी बचन असीस सुनाई ॥
कहा कहत हौं एक कहानी। सरवन दै कै सुनियो रानी।
बहुत बचन करतार पठावा। जेहि सुनि कै बहुतेन मनु पावा ॥
कहा बहुत जेन की मति फेरी। अहै कहानी आगेहि केरी ॥
अहे कहानी पै सुन रानी। है अमृत सानी रस बानी ॥
कहा कहानी कहिये, सुनो कान दे ताहि।
जीउ बिरह सों तन महँ, उठत कराहि कराहि ॥
मन रानी को पाय सयानी। धन सों लाग सो कहै कहानी ॥
मोहनपुर रहा एक गाऊँ। तहाँ महीपत मधुकर नाऊँ ॥
जस मधुकर रस रहै सोभाना। तैसे वह रस महँ लपटाना ॥
जग रस बीच परा जो कोई। आगम रस नहिं पावहि सोई ॥
रस पावै जो जेहि करतारा। दहय दिष्ट सो हया उघारा ॥
मधुकर के मन्दिर मों, रहै बहुत रनिवास ॥
सघत करै भँवर सम, लब अम्बुज के पास ॥
एक दिन राजा गयेउ अहेरें। देखा एक मिर्ग कहँ नेरे ॥
मिर्ग चला मधुकर है हाका। मिर्ग पवन दईं रहै कहा का ॥
चला मिर्ग के पाछे सोई। छुटा लोग ना पहुँचा कोई ॥
जात जात एकै बन महँ परा। देखा बिर्छ एक अति हरा ॥
भयेउ कुरग कुरग हेराना। तरिवर तरे आइ पछताना ॥
ऊँचा तरिवर देखि कै, और गम्हीरो छांह।
सुख पायेउ दुख भूला, भउ अनद मन माह ॥
सीतल छाहा सो सुख पाई। पौढा भुई पर बसन छिपाई ॥
ततिखन दुइ सुक आइ बईठे। बोले बचन आप महँ मीठे ॥
पूछा एक कुसल हो प्यारे। केहि धरती सुख वास तुम्हारे ॥

जब से हम तुम बिछुरे होऊ। मिला न तुम्हें समाँ हित कोऊ ॥
जेहि भेटेउ अपकारी पायेउँ। तासो मागेंउ प्रीत न लायउँ ॥
सुभ बेला यह सुभ देवस, दरसन मिला तोहार।
समाचार आपन कहो, जीउ थिराय हमार॥
दूसर सुआ अधर कहँ खोला। समाचार की बानिय बोला॥
जा दिन छूटा सग तुम्हारा। जाइ परेउँ एक विपिन मझारा॥
तरिवर पर निर्चिन्त बईठेउ। छल पहरा को एक न डीठेउँ॥
सब अनजान न जानत कोई। गुपुत अतर पट सों का होई॥
जिनि यह कहौ करौं असि मोरे। दहुँ अस प्रगटे भोर अँजोरे॥
मै निचित अपने मन, आइ एक चिरिमार।
खोंचा मारि बझायउ, डारेउ बद मझार॥
लै मोहि प्रेम नगर के हाटा। बेचेसि चलिगा दूसर बाटा॥
परेउँ रूप राजा घर माहीं। जहाँ दरब कछु खागा नाहीं॥
तेहि के घरे सुन्दर एक बारी। तेहि की सुता सुदर सुकुमारी॥
अति सुगध मालति की काया। जनुविधि सुगध मिलाइ बनाया॥
मोहिं राजा मालति कहँ दीन्हा। बचननसों सेवा मै कीन्हा॥
कीन्ह पियार बहुत मोहि, दायावन्ती होइ।
सेवा किहे पियारा, होइ अत सब कोइ॥
मालति रूप न बरनै पारउँ। केतिको अर्थ न चित सँचारहु॥
अबहीं तेहि सग भँवर न लागा। मिर्ग नयन लखि आनन भागा॥
मालति बास सालती बासा। मालति पास मालती पासा॥
जानहुँ ससि भुई पर अवतारा। पुहुमी पर उचरी अपछरा॥
है सुकुमार बहुत वह रानी। बोलत बानी अमृत सानी॥
है मालती सुवासित, सुगध भरे जनु अग।
ज्ञान भरी सुदर सखी, रहैं सदा तेहि सग॥
एक देवस धन रूप निधानू। निर्मल तारा गइल नहानू॥
सून मँदिर मो पिजर मोरा। रेवाँ रहा मजारिय तोरा॥
बाचेउँ रिपु सों हिये डेराना। पिंजर से मैं निसरि पराना॥
बद छुटे आनद मैं पावा। अत पखेरू अहइ परावा॥
जेहि के छलें छुटा सुखवासू। तेहि बैरी कर का बिसवासू॥
अब बन बन फेरा करउँ, समुझि पिजर के बद।
काहू कर सेवक नहीं, मन मों रहत अनन्द॥
सुनि मधुकर मालति कै नाऊँ। भा मालति मधुकर तेहि ठाऊँ॥
उठि के कहा बिहंग पियारे। बात न बान प्रेम कर मारे॥
तुम पंडित बुधवत गरेवा। उतरहु आइ करउँ मैं सेवा॥

हहु नियरें पै करमों नाहीं । रहेउ समाइ सकल तन माहीं ॥
आवहु सीस देउँ तेहि ठाऊँ । तोहि लै चलहु अपाने गाऊँ ॥
जिउ अस राखऊं तुम कह , धरउ न पिंजर माह ।
जल चारा आगे कै , रहौ जोरि दोउ बाह ॥
कहा सुवा तुम मानुष होऊ । तुम धरती पर ढारहु लोहू ॥
आगे अब मानुष नहिं आवा । बहुतन औगुनता पर लावा ॥
है मानुष निर्दै हत्यारा । सकै अनुज कहँ जिउ सों मारा ॥
सात देह मानुष कर जारै । सात नरक द्वारे महँ डारै ॥
चाम जरै तब दूसर देहीं । मानुष बार बार दुख लेहीं ॥
हौ पंडित औ चातुर , कहाँ चलौं तेहि संग ।
जिउ पखी नहि पालै , पाले अंग बिहंग ॥
तुम मोहि यह सत बात सुनावा । मानुष परसै ऐगुन आवा ॥
पै मानुष बुध कै बउसाऊं । सकलो सिष्ट को जाना नाऊँ ॥
मानुष पर दाता की दाया । सकलो सिष्ट को नाम सिखाया ॥
करता की नेव मानुष अहई । का जो दोष पाप मों रहई ॥
प्रेम नगर औ मालति बाते । फेर सुनाउ चतुर महाते ॥
एक एक कै बरनहु , वह मालति की बात ।
सुनउ जीउ सरवन दै , हो पंडित मुखरात ॥
कहा मोहि प्रान समो जेइ पाला । मन भा तेहि की प्रीत को माला ॥
मरमी भयउँ सदा कइ सेवा । तोहि बेरान से भाषउँ भेवा ॥
सरवन सुनै जोग तेहि नाही । भूल न देखेसि देखेसि छाही ॥
नरक बीच बहुतन कहँ भरई । मन राखहि पै बूझि न करई ॥
नैना होइ न देखइ नैना । सरवन रखहि सुनहि नहि बैना ॥
वे सब पसु के मान हैं , बरू पसु चाह अचेत ।
जेहि के मन नहि चेत हैं , तेहि को भेद न देत ॥
कहा कहा तुम मेरो मेटा । नहि जानो का ऐगुन भेंटा ॥
बिनती एक करउँ कर जोरी । मानु दया सो विनतियँ मोरी ॥
मोर संदेस कान कै लीजै । प्रेम नगर कहँ गवन करीजे ॥
जायेहु जहँ वह मालति प्यारी । तासो भाखेहु विथा हमारी ॥
सपत तेहिक जेइ जनमा नोही । प्रेम हमार जनायहु वोही ॥
मोहनपुर मँ मधुकर , कहहुँ निर्प एक आह ।
बहुत बेयाकुल कीन्हा , प्रेम तेहारो ताह ॥
कहा तेहारो बिनती मानेउ । मालति कर मधुकर तोहि जानेउ ॥
एक बार तोहि कारन जाऊँ । धन सो कहऊं तेहारो नाऊँ ॥
आनक सपत दिहा नहिं काही । सपत भलो करता कर आही ॥

बहुत सपत जो मानुष खाई। ते जिन रहु तेहि आशा जोही ॥
कहौ नाम सुनि कै तोहि लोभा। बिनु देखै मूरत औ सोभा ॥
यह सब कहि उड़िगा सुवा, मधुकर मन पछतान।
पखी सम चंचल है, काया बीच परान ॥
हेरत सकल लोग और दासू। आए सब मधुकर के पासू ॥
लोग समेत निर्प घर पर आए। मन महँ प्रेम बसेरा पाएउ ॥
परगट राज करै औ बोलै। गुपुत दिष्ट मालति पर खोलै ॥
परगट सब के जाने भोगी। गुपुत भएउ मालति कर जोगी ॥
परगट रहइ आपने गाऊ। गुपुत रहै मालति के ठाऊ ॥
परगट सब सो बोलै, गुपुत जपै वह नाम।
मन मह रहै व्याकुल, हरिगा सुख बिसराम ॥
मालति उहाँ बहुत दुख देखा। जा दिन सो गा सुआ सरेखा ॥
कहै कहाँ वह पडित सुवा। कादहु हुआ जियत की मुआ ॥
छूछा पिंजर रहिगा रेवा। उड़िगा प्यारा प्रान परेवा ॥
जो पिजर की भीतर बोला। औ जानों यह पिजर डोला ॥
सो चलिगा केहि बन ठहराना। रहा आपना भयेउ बिराना ॥
सुवा आनि को मेरवे, पिजर देइ जियाइ।
का औगुन दहुँ देखा, तजि के गयउ पराइ ॥
सखिन बुझावहि सुवा पियारा। ठहरा जब लग रहा तुम्हारा ॥
उड़िकै गा रहिगा पछतावा। कहाँ थिरै जब भएउ परावा ॥
जों पछताने आवइ हाथा। हम पछताई सकल तुम साथा ॥
पिजर देह रहा तेहि भारी। हलुक देह उड़ि लीन्हेसि प्यारी ॥
उड़ि कै पन करि भयेउ अहेरी। तेहि डर छूट मजारिन केरी ॥
पिजर बीच रहा सुवा, चारा चिन्त मझार।
अब ऐसे तब मै गएउ, सुख सो मिलै अहार ॥
दिन दस बीते सोच मों गयऊ। सुवा जाइ कै परगट भयऊ ॥
मालति देखि जीउ जन पावा। प्रान मिलै कहँ आगेहँ धावा ॥
कहा प्रान अस नियरे होहू। तोहि नित बहुत पिया मै लोहू ॥
कहा सुवा बाचा मोहि दीजै। मोहि पिजर के बीच न कीजै ॥
मै बन बीच रहेउ जब भागा। नरक समा अब पिजर लागा ॥
बाचा दीन्हा मालती, सुवा नियर भा आइ।
कठ सुवा कहँ लायेउ, प्रान पियारी धाइ ॥
कहा कुसल कुछु प्यारे सुवा। तोहि नित आसु नैन सो चुवा ॥
कहो कवन औगुन मोहिं लागे। जेहि नित छाड़ हमै तुम भागे ॥
केहि बन भीतर रहेउ बसेरा। कहा कहा तुम कीन्हा फेरा ॥

सुनि कै सुवा असीस सुनावा। देइ असीस सीस पुनि नावा ॥
तुम औगुन सो निर्मल प्यारी। औगुन भरी सरीर हमारी ॥
तुम तो निर्मल तारा, गइहु करै अस्नान।
पिंजर धरा मजारी, गा वह टूट निदान ॥
पिंजर टूटा मिला दुवारा। बाहर निकसि पख मै भारा ॥
रहत न भावा बैरी राखे। रिपु नित रहै घात सर साधे ॥
परोस जहाँ सत्रु को होई। तहाँ निचिन्त रहै का कोई ॥
जाइ परेउँ ऐसे बन माहीं। खाग जहाँ चारा कर नाहीं ॥
हम तुम छूटि गये तेहि ठाऊँ। इहाँ अहै हम तुम सब नाऊँ ॥
आयेउँ दरसन कारने, औ राखउँ एक बात।
सूनो मंदिर होइ जब, बात कही तब जात ॥
सुन मंदिर तब मालति कीन्हा। सुवा सयान भेद तब दीन्हा ॥
उडि उड़ि सब कानन महँ भयऊँ। औ सब तरिवर ऊपर गयऊँ ॥
मिला एक दिन एक परेवा। मित्र रहा कीन्हा मोर सेवा ॥
दोऊ एक बिर्छ पो गयऊँ। छाहा पाय सुखी मन भयऊँ ॥
सुवा साथ मै तुम्हें बखाना। जस तोहार सब वोनहूँ जाना ॥
बिर्छ तरे एक मानुष, सुना सकल गुन तोर।
बिनु आज्ञा अब आगे, कहि न सकै मुख मोर ॥
कहा पियारे बात तुम्हारी। जीउ देत हैं कहु बलिहारी ॥
तुम पंडित जो पंडित होई। अब सकु बात न भाषै सोई ॥
सिद्ध रूप तुम सुवा गेयानी। बात तोहार अमीरस सानी ॥
सिद्ध बात लाभा की कहई। का जो उलटी बातैं रहई ॥
स्वानौ कोकरा जो मरि जाहीं। सिद्ध कहै भल है भल माहीं ॥
आज्ञा का मागत हौ, भाषहु जो मन होय।
मिलबो लूट तुम्हारो, मरम न राखौ गोइ ॥
कहत बखान नाम गुन तेरो। सुनि कै वह मानुष भा चेरो ॥
बिनती बहुत कीन्ह मोहि साथा। नग संदेस को दीन्हा हाथा ॥
कहा जाइ मालति के गाऊँ। प्यारी साथ कहेउ मन भाऊँ ॥
मोहनपूर देस है मेरो। मै मधुकर राजा हित तेरो ॥
मोहि राजा कहँ प्रेम तुम्हारा। व्याकुल कीन्ह सोच मे डारा ॥
एहि संदेस तेही कहे, कछु बसीठ पर नाहि।
जो संदेस ले आवहीं, पहुँचावै चलि जाहि ॥
यह सुनि कै मालति सुकुमारी। चुप होइ रही न बात निसारी ॥
बिनती कीन्ह सुवा कहँ राता। दीन्हा ठाव बिर्छ कहँ राखा ॥
पिंजर भीतर सुवा न आवा। लाग रहै छूटा सुख पावा ॥

रहे सुवा फुलवारी माहा। जहँ फल फूल औ सीतल छाहाँ ॥
जस बैकुंठ बीच फल नियरे। तस नियरे अनदाना हियरे ॥
उड़ि बैठहि तेहि डार पर, जहाँ चलावै जीउ।
मन काया के छौर महँ सुख अनद भै घीउ ॥
मालति मन पर मधुकर नाऊँ। लिखिगा देखि परै मन ठाऊँ ॥
कवल समा मन प्यारी केरी। होइ मधुकर भा मधुकर चेरा ॥
प्रेम फाद प्यारी मन परा। मधुकर मन मालति मनहरा ॥
मन सो का कहँ सुमिरे कोऊ। सुमिरै ता कहँ मन सों सोऊ ॥
कहा अलख सुमिरौ तुम मोही। सुमिरे सो सुमिरौ मै तोही ॥
रही सुगधित मालती, प्रेम भँवर तेहि कीन्ह।
व्याकुल भई जीउ महँ, भेद न काहू दीन्ह ॥
दुर्बल भइ जब मालति बारी। धाई धाइ कहा बलिहारी ॥
कवन कलेस समान सरीरा। कहत सरीर सो आपन पीरा ॥
कहा कलेस न एकौ मोही। कवन कलेस सुनावउ तोही ॥
कहा भई दुर्बल तै बारी। बिनु दुख दुर्बल होत न प्यारी ॥
हो री मात समा है तोरी। मोरी मरम न गोवहु गोरी ॥
जो दुख होई पिंड महँ, सो मोसे कहि देहु।
धाइ करौ उपकार सै, दुख कर औषद लेहु ॥
कहा सुवा वोही दिन जो आवा। मोसे मधुकर नाँव सुनावा ॥
है जो एक देस मोहनपुर। मधुकर राय तहाँ जस सुर ॥
सुवा सुनायेउ तेहिक सदेसू। हौ तेहि कारन प्रेमी भेसू ॥
हों माता सुनि मधुकर नाऊँ। भा गन मधुकर उडि कै जाऊँ ॥
मोहि मालति कहँ मधुकर नेहा। कीन्हा मधुकर नेही देहा ॥
तुम माता दाया भरो, दाया ऊपर आउ ॥
मोहि मालति कहँ मधुकर, कै उपकार मोराउ ॥
सुनि धाई दाया पर आई। मालति सो उपकार सुनाई ॥
सौपहु काज आपनो ताको। सिरजनहार नाम है जाकौ ॥
पुरुब पछुम को पालन हारा। है सो पुरवै काज तुम्हारा ॥
सुमिरहु ताहि बिसारहु नाहीं। सुमिरन बड़ो अहै दिन माहीं ॥
बहुरि सुवा सो बिनती कीजै। बिनती कै जिउ कर महँ लीजै ॥
भेजहु तेहि कोहनपुर, मधुकर आनै आस।
आने प्रेम बढाइ कै, तेहि मालति कै पास ॥
एक दिवस मालति मति पागी। बिनती करै सुवा सो लागी ॥
कोमल बात जीभ सो खोला। फाँद भलो है कोमल बोला ॥
कोमल बात कहै कहँ दाता। कहा अहै भल कोमल बाता ॥

धरती ऊपर जाउ परावा। कोमल कहैं हाथ महँ आवा ॥
तुम हौ सुवा प्रान जस प्यारा। जैसे प्रेम बान तुम मारा ॥
तैसें महि घायल कहँ, ओषद फाहा देहु।
लैआवहु मधुकर कहँ, यह पूरा जस लेहु ॥
सुवा कहा सुन बारो भोरी। अहै सीस पर आज्ञा तोरी ॥
मैं पखी वह मानुष आही। मनुष बसीठ मनुष दिस चाही ॥
सो जेई कीन्हा जगत अजोरा। मानुष भेजा मानुष बोरा ॥
मानुष मानुष बचन समूझै। सुवा सुवा की बातैं बूझै ॥
औ मोहनपुर देखेउँ नाहीं। अकस जाउँ भूल बन माहीं ॥
होइ साध जो मानुप, जाउँ मोहनपुर देस।
दोऊ मिलि समुझावैं, आवै इहा नरेस ॥
दुई समुझाये समुझई सोई। दुइ जन मिले बूत भल होई ॥
जेहि बसीठ कै जीउ डेराई। लीन्ह सहायक आपन भाई ॥
गा तेति दिस जासो डर माना। भाषा साची बात सयाना ॥
दुइ मन एक होइ गिर तोरैं। कटक बिदारत बदन न भोरैं ॥
जेइ मन तोरा सोगा तोरा। मन तोरा कहि तोरा मोरा ॥
प्रेम नाम बन जारा, बसै तुम्हारे गाउ।
ताके सग पठावहु, मोहनपुर कहँ जाउं ॥
माना बात मालती रानी। धाई साथ जनायसि ज्ञानी ॥
धाई गई प्रेम दिस धाई। बिनै सुनाई बात जानई ॥
दीन दरब औ आसा दीन्हा। प्रेम सीस पर आज्ञा लीन्हा ॥
दरब करै सब कारज पूरा। उद्दित करै दरब जिमि सूरा ॥
जो न दरब को निर्मल करई। अगिन होम होइ गल मो परई ॥
करता अपने पथ पर, दरब कहा है देइ।
जो नहि देई सो एक दिन, लाछ्र दरब सो लेइ ॥
सग ले सुवा प्रेम बनिजारा। मोहनपूर पथ पगु ढारा ॥
अहै बनिज को उद्दम भलो। पै जो करै बनिज निर्मलो ॥
सरिजनहार आप को बेला। आवत तजै बनिज को खेला ॥
बेचब लेब कहा है भलो। अहै बियाज नहीं निमलो ॥
सुन्दर रिन करता कहँ देहू। वह जग मूल लाभ सग लेहू ॥
बिनु पद दरब जों आन को, जो कोइ अगमों खात।
आनहु अगिन सो खात है, है यह साची बात ॥
काटत पथ सुवा बनिजारा। पहुँचे मोहनपूर मझारा ॥
मधुकर उहाँ बियनकुल हिये। ध्यान रहै मालति पर दीयें ॥
बेकल बहुत भा मधुकर राजा। गा सब छूट राज को काजा ॥

मरम की कली फूल विकसाना। बास पाय सब काहुअ जाना ॥
छपि ये प्रेम कस्तूरी दोऊ। अत बास पावै सब कोऊ ॥
लोगन बहुत बुझावा, फिरा न मधुकर प्रान।
भयेउ प्रेम के बाढ़े, बाउर भेम निदान ॥
सुवा प्रेम कह मरम सिखावा। बेचहु हम कह जानि परावा ॥
हाट चढाइ मोल करु भारी। लै न सकै बैठै सब हारी ॥
तब राजा मधुकर मोहिं लेई। भारी मोलि बेगि तोहि देई ॥
मित्र जो होई सो मोल बढावै। बैरी जान से औगुन लावै ॥
अति सुंदर कहं बैरी लोगू। बेचा थंारै पर बिनु जोगू ॥
मधुर बचन मैं बोलऊ, मधुकर लेइ निदान।
रहि राजा के सग मह, करों हाथ मों प्रान ॥
प्रेम अबै दूसर दिन पावा। लैकै सुवा हाट मह आवा ॥
हाट नगर मों भयेउ पुकारा। पेम नगर का है बनिजारा ॥
बेचत है एक सुवा सरेखा। वैसों पडित कीर न देखा ॥
गाहक आये मोल उधारा। भारी मोल सुनत सब हारा ॥
मधुकर प्रेम नगर कर नाऊ। सुनि आनन्दित भा मन ठाऊ ॥
आएउ मधुकर हाट मों, लीन सुवा कह मोल।
सुवा अधर कह खोला, बोला कोमल बोल ॥
मनिमय पिंजर बीच परेवा। राखा मधुकर कीन्हा सेवा ॥
भयउ अहार सुवा की बातैं। मधुकर राजा कह दिन रातैं ॥
एक दिन प्रेमहिं पास हकारा। सून सदन कै बात निसारा ॥
है मालति रानी वह देसा। रूप विहाय कला निधि भेसा ॥
वह रानी कर सुनत बखानू। सुरत सनेही भयेउ परानी ॥
तुम आवहु वहि नगर सों, ताकर कहौ बखान।
एक सुवा सो मै सुना, उडिगा सुवा निदान ॥
सुनि यह बात प्रेम तब हँसा। हँसा फूल मानहुं महि खसा ॥
जो एक मोल निर्प तुम लीन्हा। मोल गुलिक नग मानिक दीन्हा ॥
येही सुवा मालति गुन कहा। अब अनचीन्ह तुम सों होइ रहा ॥
उहइ सुवा है तुम नहिं चीन्हा। पडित जान मोल तुम लीन्हा ॥
सुवा का पिंजर नियरें राखौ। तब रसाल बच को रस चाखौ ॥
सुनि रहसाना मधुकर, पिंजर लीन्ह उतार।
पूछा कुल कहा कुसल है, है जब कुसल तुम्हार ॥
प्रेम सुवा दोऊ गुन गावा। एकै मुख होइ बात सुनावा ॥
हम मालति के भेजे आये। दरसन देखि बहुत सुख पाये ॥
मालति तुम्हैं दिन रात संवारा। भा अब मन तोहि उपर भँवारा ॥

तुम कह आनै हमै पठावा। प्रेमहि निर्ष को ताहि जनावा॥
बनिज हमार तुम्हीं हो राजा। अब वह देश गवन तोहि छाजा॥
रटत चातकी होइ रही, चलि दरसन जल लेहु।
ना तो प्रान लेइ धन, यह अपराध न लेहु॥
सुनि मधुकर जानहु जिउ पावा। कहा तुम्हं मोहि लाग पठावा॥
छाजत सीस अकास लगावउ। सीम चरन कै तेहि दिस धावउ॥
अबलग रहेउ भरम मदमाहीं। रही पथ की सुधि मां नाहीं॥
तुम हुइ अगुवा चतुर सयाने। मिलेहु करेउ तेहि ओर पयाने॥
है धन दिष्ट भाग को सोहीं। सुमिरन मोर चढे चित वोहीं॥
रोवत दिन मोहिं बीता, अब हसि करेउ अनन्द।
सोइ रावाइ हसावै, जेइ कीन्हा रवि चद॥
तजा राज कह मधुकर राजा। सकल समाज चलै को साजा॥
पिंजर सों बाहेर भा सूआ। प्रेम आप मिलि अगुवा हूआ॥
बहुत लोग राजा संग लागे। मानहुं सावत कै सब जागे॥
सोअत है जग मह सब कोई। जब मरि जाहि जाग तब होई॥
यह जीवन कह छोटा जानहु। जीवन बडो अगम पहिचानहु॥
जस जियहू तैसें मरहू, उठहु मरहु जेहि भात।
जग चाहुत के ऊपर, काह दिहे हौं दात॥
बहुत देवस को करत पयाना। एक समुद्र आइल नियराना॥
चढे पीत ऊपर सब कोई। गाढी प्रेम नगर मगु होई॥
बोडय बूड भये मब कोऊ। सुवा उड़ा जनि बिछुडन होऊ॥
जाको राखत सिर्जनहारा। जल सुखाई मगु लाइ उतारा॥
यह जनि जानहु नीर डुबावै। चाहै धरती बीच धसावै॥
एक बार जल थल भवा, राखा चाहा जाहि।
आगे कहि कै भेजेउ, नाव बनावै ताहि॥
बड़े गरब कोप औ माया। भरमित और काम की माया॥
एक दिस बहै बुद्ध औ बूझा। मधुकर प्रेम बहे नहि सूझा॥
मन पछिताइ सुवा गा तहा। चितवत पथ मालती जहा॥
मिली कहा कहु कुसल पियारे। पथ निहारा नैन हमारे॥
कहा कुसल का बूडी पोता। होत कुसल जो जन मन होता॥
मधुकर आवत तेहि दिस, बहा सिन्धु के धार।
बूड़े सकल संघाती, कोउ न लाग गोहार॥
सुनि यह बात मालती रानी। मन पछितानी सोच सयानी॥
धन लेखैं जनु परलै आई। यह परलै केहि दिसते धाई॥
काहें यह परलै परगटे। आयो द्वाय ब्रम्हा के छूटे॥

की बिरच को एक दिन बीता। सोयेउ भै परलै की रीता ॥
नहि सिसरे वै हुइ बरियारा। जाकर अवध लिखा करतारा ॥
बीचहिं देखउ परलै, धरती भयउ असिष्ट।
की मन मोर फिरा है, उलटि बिलोकन दिष्ट ॥
सुवा बुझावै बूझहु रानी। जीवन हार न बूड़ै पानी ॥
करै जो किछु करता कोई। अन्त काज वह सुदर होई ॥
भेद छिपा तोहि कारन माहीं। सो जानहि हम जानहिं नाहीं ॥
ज्ञानी एक एक बालक मारा। औ एक नाव जलधि मो फारा ॥
साथी ताकर भेद न जाना। भेद रहा तेहि बीच छिपाना ॥
धर धीरज मन भीतरे। होइ जियत वह होइ।
जो मति सो छूछा अहै, छाडै धीरज सोइ ॥
मालति कहा देहु तुम बोधू, मोहि पहरा पर आवत क्रोधू ॥
कहा करत पहरा कछु नाहीं। वह करता नाहीं जग माहीं ॥
जेई पहरा को करता जाना। सो मूरख जग बीच भुलाना ॥
सो करता जो सब पर बली। दीन्ह मनुष्य को काया भली ॥
वह पूरब सो सूर निसारै। को पच्छुम सों आनै पारै ॥
कोप न करु पहरा पर, धरु धीरज मन माह।
देखु जगत मों करता, कम बिस्तारा छाह ॥
धीरज बात कहत है सुवा। मोहिं वियोग सों आसू चुवा ॥
अब अस करहु बहोरह ताही। मन औ ध्यान बीच को आही ॥
कहा बहोरन हारा सोई। जेहि आशा जीवै सब कोई ॥
पै तोहि लाग फेर उड़ि जाऊ। हेरों बन परबन सब ठाऊ ॥
जियन होई तो हेरि निसारउ। ना तो बैठ रहउ चुप मारउ ॥
जियत मिलत है एक दिन, सुवा मिलत है नाहिं।
मानुष्य सुवा मिलै तब, जब निर्मल होइ जाहिं ॥
इडा नाउ लै उड़ा परेवा। हेरा इड़ा अड़ाह मेवा ॥
मधुकर वहि तट ऊपर भयऊ। चलि सैरगपूर मो गयऊ ॥
हेरत ताको सुवा सरेखा। तेहि सैरगपूर मह देखा ॥
रोये ऐसे दोउ दुख भरे। तेन रोवत कुज के दिल झरे ॥
जो दिल झरै अलख तेहि जानै। दूसर पत्र विर्छ मह जानै ॥
रोये मधुकर औ सुवा, बहुत मानि मन हान।
साथी कारन भा बेकल, मधुकर निर्प सयान ॥
सुवा भयेउ अगुवा औ चला। पाछें चला बिरह कर जला ॥
मगु मों मिला प्रेम बनिजारा। और लोग जो रहा पियारा ॥
प्रेम नगर मों मधुकर गयऊ। जनु तप साधि सरग मों भयऊ ॥

है तेहि नित बैकुंठ सँवारा । जो भल काज कीन्ह मद जारा ॥
पहिरैं कनक कडा औ बागा । बोटगै पाट उपर मनि लागा ॥
मालनि फुलवारी रही, रहेउ सनेही नाउं ।
सुवा कहा मधुकर सो, लेहुँ इहा तुक ठाउ ॥
मधुकर लीन्ह बास फुलवारी । सूआ आप गवा जह प्यारी ॥
पूछा धन कहु कुसल पियारे । देखि जुड़ाने नैन हमारे ॥
कहा कुसल जब कुसल तुम्हारी । नीको भाग तेहारो बारी ॥
मधुकर राजा को मै जाना । फुलवारी मों दीन्हेउ थाना ॥
है दरसन का भूखा राजा । अब तेहि दरस देखाउब छाजा ॥
तुम मालती वह मधुकर, दोऊ एक सजोग ।
रहसे देखी निर्प को, प्रेम नगर के लोग ॥
दरस देखावै कह तुम कहा । मोहि वहि दरसन पर चित रहा ॥
दरसन जोग कियेहु वहि काजू । राजा रहा तजा सब राजू ॥
जो दरसन दाता को चाहै । काज करै भल सत्त निबाहै ॥
औ करता की सेवा माहीं । दूसर साझें मेरवं नाहीं ॥
वह सुमिरेउ है एकहि मोही । छाजत दरस दोबाहु वोही ॥
पै अबहीं नहीं उचित, परगट देउ देखाय ।
देखै मेरो छाया, ऐसो करहु उपाय ॥
कहा बात भाषा तुम भली । अबही लाज लिहे रहु लली ॥
है फुलवारी बीच अटारी । जाइ अटारी चढिये प्यारी ॥
मधुकर हाथ देउ मै दरपन । छाया डारि देखावहु दरसन ॥
तैं परगट तेहि लखु उरबसी । वह देखै तोहि ममि की ससी ॥
परगट दरमन को दिन औरै । है प्यारी केतो दिर्म दवरे ॥
इहइ उपाय भलो है, यह दिन देहु बिताय ।
मोर होइ जब दूसर, दरसन दीजै आइ ॥
दुसरे देवस मालती प्यारी । सखियन सग आई फुलवारी ॥
चढिल अटारी सखियन साथा । दुइज चद सोहा वह माथा ॥
आप दुच्छ वह सुवा सयाना । अटा तरे मधुकर कह आना ॥
दरपन दीन्ह हाथ मह लीन्हा । मालति बदन झरोखहिं कीना ॥
झाका दरपन मो परछाहीं । परी बदन की बिछुरी नाहीं ॥
देखि बदन की छाया, मधुकर भये अचेत ।
मालति कली भवर, लखि बिकसि रही सकेत ॥
जब सचेत भा मधुकर ज्ञानी । मन्दिर गइ तब मालति रानी ॥
दरसन दैकै गई पियारी । तेहि दोहाग भई अधिकारी ॥
मीलन लाग दोऊ दुख माहीं । परी हाय सुख एकौ नाहीं ॥

सुवा संदेश दोऊ कर आनै। दोऊ संग सनेह बखानै ॥
कबहुँ व पाती कबहुंव बातें। आनै सुवा चतुर दिन रातें ॥
प्रेम विरह बैराग मो, बहुत मास गा बीत।
कबहूं दुख कबहुं सुख, कठिन प्रेम की रीति ॥
रूप जनि मालति बरजोगू। नेवता राज बस के लोगू ॥
रचा सयम्बर ठौर बनाये। राजकुमार देश के आये ॥
एक एक सुन्दर राजकुमारा। कोऊ रवि कोऊ ससि तारा ॥
मधुकर बिनु नेवते गा तहा। रहे राज बली सब जहा ॥
मधुकर देखि रूप मन लोभा। सोगा तहा सभा को सोभा ॥
मड़िमाला मालति लिहे, आई सभा मझार।
बहुत सहेली गोहने, भयेउ सभा उंजियार ॥
लगी आस सब के मन साथा। यह चचला चढै केहि हाथा ॥
वह चचला चँचला के समा। चहुँ दिसि फिरी लिहे मन छमा ॥
ताकर ग्रीउ डली वह माला। टारेउ जो मातेउ नेहि हाला ॥
गये सकल निर्प अपने घर को। मालति व्याह भई मधुकर को ॥
दुख सहि के सुख पायन दोऊ। बस सुख तुम्हे पियारी होऊ ॥
सखी कहानी कहि गई इन्द्रावति के लाग।
कल ना परै प्यारी को, बाढै अधिक दोहाग ॥

— —

बिरह अवस्था खंड

धन सो धन जेहि बिरह बियोगू । प्रीतम लाग तजे सुख भोगू ॥
नेह बीज मन धरतिय बोवै । रैन न सोवै दिन कहँ रोवै ॥
धन जेहि जीउ होइ अनुरागी । वारै प्रान सो प्रीतम लागी ॥
तजै भोग सुख सुमिरन नाही । जागै निसि कहँ सोवइ नाहीं ॥

धन सो जन धन मन तेहिक, जागे मन दोहाग ।
परै दोह की आग सों, मानस भोमै दाग ॥

रोइ दीप सुन डारै धोई । अभिलाषिन अनुरागिन होई ॥
इद्रावति सुकुवार कुमारी । भार बियोग परा तेहि भारी ॥
प्रेम सरीर बेयाध बढाया । दूबर पीत भयेउ धन काया ॥
पान न खाय न पीवै पानी । भूख पियास भुलायेउ रानी ॥
ब्याकुल भई रात दिन रोवै । बदन करेज रकत सो धोवै ॥
प्रेम आग तन काढिय जारा । मारै चाहा मन चे पारा ॥

भइउ दूबरी रानी, भै बिबरन तन रग ।
बैरिन होइकै लागेउ, ब्याध अग के सग ॥

दुर्बल भइउ ब्याध सों नारी । बल घटि गा भा जीवन भारी ॥
चित ध्यान प्रीतम पर राखा । चाखा प्रेम बढेउ अभिलाखा ॥
बैरागिन कीन्हा बैरागू । अनुरागिन कीन्हा अनुरागू ॥
सुमिरै सोवत बैठी ठाढी । मन असमर्थ अवस्था बाढी ॥
प्रेम झकोर भयऊ तेहि सीसू । बैरी बूझै निस रजनीसू ॥

सुक्ख भयउ दुख दायक, सुध मति रहेउ न साथ ।
परी जगत प्रानेसरी, जड़ता केरी हाथ ॥

सुदर बाक मनाक न भावै । गगन चाक उदबेग सतावै ॥
बिरह आग सो भै उर दाहू । धन ससि कहँ भा मदिर राहू ॥
भावर लाय न सिच्छा मानी । छिन छिन कहै आन की बानी ॥
उन्नमाद सों रोवइ हँसई । आसू धरती मोती खसई ॥
जियत रहइ धेयान के बाहा । ना तो होत मरन पल माहा ॥

धन कहँ अतरपट भयेउ, गगन ऊँच महि नीच ।
छाड़ि सकल धधा कहँ, परि गुन कत्थन बीच ॥

वह रावल जग मित्र नवेला। मन परान कहँ कान्हा चेला ॥
वह विदग्ध सुकुमार पियारा। रूप गगन सविता उँजियारा ॥
चिंता कथन बीच धन परी। चिता करै घरी औ घरी ॥
केहि उपकार दरस वहि पावउ। केहि उपकारे के ढिग धावहुँ ॥
होत भलो होतिउ जरि छारा। देह चढावत रावलु प्यारा ॥

बड़ो भाग सारंगी, रहती प्रीतम पास।
मोहि कलेस बिछुड़न को, है प्रछन्न परकास ॥

ब्याह खंड

धन्य ब्याह जासों धन प्यारी। होइ कत सँग खेलन हारी॥
होइ सुहागिन प्रीतम पाये। पिय ढिग जाइ सीस निहुरायें॥
माजें बइठि सरीर बनावै। पिउ रस लेइ पीउ रस पावै॥
निर्मल होइ होइ सुकुवारू। पानो फूल का करइ अहारू॥
माजे मह पर चिन्त नेवारै। नित प्रीतम को जाप सँवारै॥
सत्त सहित धन जो धरै, प्रीतम को अनुराग।
प्रीतम अपने हाथ सों, धन कह देइ सोहाग॥
निर्प सयम्बर लगन धरावा। सब काहू कह नेवत पठावा॥
भयेउ अनद अगमपुर नगरी। भइ मुद चरचा नगरी सगरी॥
बाजै लाग बियाहुत बाजा। जन परजन मन परमद बाजा॥
रचा चित्र सों मदिर द्वारा। लगेउ होन सो मगल चारा॥
सुभ मॉडव छायन उपराहा। जासों होइ सुबर सिर छाहा॥
ससि बदनी सब कामिनी, गावै मगल चार।
लीन्ह अनद बसेरा, जगपत सदन मझार॥
इद्रावति माजे मॅह भई। चेता मालिन नियरें गई॥
पूछा हियँ लजानिय नाहीं। कैसे रहिये माजेय माहीं॥
कहा रहो मन निर्मल कीहैं। चित प्रीतक प्यारे पर दीहैं॥
मन सों दूसर चिन्त नेवारी। पिउ पर ध्यान लगावहु प्यारी॥
निस दिन मन को खेत बनावहु। पिय की प्रीत को बीरौ लावहु॥
अलप अहारिहु जीयै, सुमिरहु पिय को नाउ।
रहौं अकेली रात दिन, प्यारी माजे ठाउ॥
माजे मों इद्रावति रानी। आइ असीसहि सखिय सयानी॥
देहि असीस सखी हित प्यासी। रमा निरत्र रहै तोहि दासी॥
हो प्यारी बिलसहु पिय प्यारा। पिय मेरवत है सिर्जन हारा॥
जो सजोग चहा तुम रानी। भेंट तेहिक अब आइ तुलानी॥
ब्याहु नसेनी मिलन सदन को। मिलै सिघर अब मिलन सजन को॥
सुख अनद सों रानी, बेलसहु पिया सजोग।
भये कत सजोगिनि, आवै कर सुख भोग॥
सखिन असीस बचन सुनि रानी। कहा पिता घर रहिउ भुलानी॥
खेलौ कोड़ में देवस बितायेउ। कुछहूँ प्रीतम मरम न पायेउ॥
खेलहि बीति गई लरिकाई। बाढेउ दरप होत तरुनाई॥

भूलिउ खेल सखी के साथा । चढेउ गगुन कर मानिकहाथा ॥
गुन नहि एक त्रास मोहि हियर । कैसे होब कन्त के नियरे ॥
हौ अजान औ निर्गुनी, ज्ञान रूप वह पीउ ।
हाथ छूछ गुन ज्ञान सों, सखी सोच मह जीउ ॥

मोहि गुन बुद्ध सखी है नाहीं । यह नित सोचत हौ मन माहीं ॥
जेहि गुन बुद्धि हाथ मह होई । तापर प्यार करै सब कोई ॥
रहत न बुद्धि पिये मद हाथा । या नित दोष लाग मन साथा ॥
सत्रु चतुर जो जिउ कर होई । है भल मूढ मित्र सो सोई ॥
गुन सों मानुष होत पियारा । गुन कर गाहक है ससारा ॥
विष कह अमिय करत है, है ज्ञानी जो कोइ ।
मूरख जन के हाथ सों, अमृत विष सम होइ ॥

मानमती वह सखिय पियारी । बोली सुनिये राज दुलारी ॥
यह जग बीच अहो रुपवन्ती । पिय जेहि रीझा सो गुनवन्ती ॥
तुम पर अस रीझा पिय सोई । चाहा एक बार एक होई ॥
पै यह लट औ आंख तुम्हारी । धरा बियोग बीच तेहि प्यारी ॥
गुनि मति कोंत सहज औ रूपा । सब तोहि रीझ कत गुन भूपा ॥
प्रीतम भै का भै हियें, तोहि नित बाउर पीउ ।
तो लट औ अधरन मों, प्रीतम मन औ जीउ ॥

रतन जोत पुनि बात निसारा । भयउ रतन सों मम अवतारा ॥
एक सोच मोहि आवत सजनी । तासों सोचत हौ दिन रजनी ॥
पिय औगुन लावै मोहि रामा । मानुष जन मन तेरो बामा ॥
मानव मानुज उदर सों होई । मनुज उदर बिनु मनुज न कोई ॥
पितु को बरमद अमु जब आजै । मात उदर तब नर भौ पावै ॥
जनम मोर अस नाहीं, सखी सोच मैं लेउ ।
पिय ऐगुन जो लावे, कौन उतर मे देउ ॥

कहा सखी कछु सोच न कीजे । ध्यान अमूरत ऊपर दीजै ॥
तोहि करतार रतन सों कीन्हा । कर मह रतन ज्ञान कर दीन्हा ॥
जो करता कह करबेइ होई । हौ तेहि कहै होइ तब सोई ॥
बिर्ध पुरुष औ बन्ध्या नारी । तासों सुत पायन सत धारी ॥
बाज पिता सों बालक कीन्हा । अमृत बचन जीभ मों दीन्हा ॥
कीन्ह बिमल माटी सों, बहुर बुद तेहि कीन्ह ।
तासों रकत मास करि, हाड फेर जिउ दीन्ह ॥

अलख अमूरत सिर्जन हारा । मूरख जगत अलेख सवारा ॥
तेहि छाजत सिर्जै जस चाहै । दोऊ जग आपुहि करता है ॥
जनक जननि बिन सिर्जै पारै । जातें चाहै जनम सँवारै ॥

आद पिता के पिता न माता। ऐसे सिर्जा वह जिउ दाता ॥
प्रीतम तोहि गुन ऐसो लोभा। लखै न ऐगुन देखै सोभा ॥
मित्र मित्र को ऐगुन, पहिचानत गुनमान।
तेरो सकल अवस्था, गुन बूझै पिय प्रान ॥
दायावत है कत तुम्हारा। है अपराध छिपावन हारा ॥
जो गुनवत अहै जग माहीं। सो ऐगुन हेरत है नाहीं ॥
जेहि गुन सो गाहक गुन केरा। जेहि ऐगुन सो ऐगुन हेरा ॥
आपुहि बीच जो ऐगुन पावा। सो न कहा अपराध परावा ॥
जो अपराध छिपावइ कहा। जोग बमन ताके तन रहा ॥
जो मुख पर ऐगुन कहै, महा मित्र है सोइ।
ताको मित्र न जानिये, ऐगुन राखै गोइ ॥
राजकुवर जब मोतिय पावा। मात सखा कहँ नेवत पठावा ॥
मिर्तक रहे जीउ उन पाये। धाये सकल अगमपुर आए ॥
सात मित्र राजा कह भेटा। दरसन बिछुरन सकट मेटा ॥
राजा के कालिजर ठाऊ। मित्र पराक्रमा प्रेम तेहि नाऊ ॥
रहा बहुत दिन सों परदेसा। आये नगर धनी होइ भेसा ॥
देखि सून कालिजरै, मरम कुवर को पाइ।
रहि न सका राजा बिनु, लीन्ह जोग चित लाइ ॥
सुनि के राजकुवर के जोगू। भा जोगी त्यागा सुख भोगू ॥
प्रेम के साथ लगै बैसगी। रावल भेस लिहैं सारगी ॥
आगम सचर राखेन पाऊ। आगमपुर के भयेउ बटाऊ ॥
सीस जटा धरि खप्पर हाथा। आये मिले राज के साथा ॥
भेटेन प्रेम राय कह राजा। भा मन मुदित मोद उपराजा ॥
भयेउ जोग का राजा, राजा वह गन माह।
जगपत दाया दुर्म को, सब सिर आयेउ छाह ॥
सीतल छाहा पावइ सोई। जो तप किहे जगत मह होई ॥
जेहि मन करता की डर भागी। तेहि नित लागै दुइ फुलवारी ॥
दोऊ बीच दुइ झरना बहई। सब फल फले दोऊ मह रहई ॥
औ सूघर नारी तेहि ठाई। बनी रतन मोती की नाई ॥
दूसर फल भल को है नाहीं। भल कोमल फल दोउ जग माहीं ॥
जो आवै करता दिसि, एक भलाई साथ।
वोही भलाई के सम, दस आवै तेहि हाथ ॥
कुवर पास क्रीपा चलि आयेउ। जगपति दुकल समेन पठायेउ ॥
आइ कुवर सग क्रीपा बोला। क्रीपा रस भै भाषित बोला ॥
अहो लला जत साधेउ जोगू। तत अब मानहु परमद भोगू ॥

धरु सारगी गहु कीपाँनू । उदित भयेउ मनोरथ भानू ॥
कथा काढहु पहिरहु बागा । जोग मुकुट धरि बाधहु पागा ॥
काढहु माला जोग को, पहिरहु मानिक हार ।
दैव दिष्ट सनमुख भयेउ, होहु तुरग सवार ॥
काढत माला कथा राजा । चकचूहत मन मों उपराजा ॥
माला गनि सुमिरेउ वह नाऊ । काढत छोह भयेउ तेहि ठाऊ ॥
जोग चिन्ह वह कथा पाया । कढत उपेजेउ करुना माया ॥
कीपा बूझि कहा हो राजा । नन कथा मन माला छाजा ॥
जोग न पूजै तजै न जोगू । पूजा जोग लेहु अब भोगू ॥
जल में दूहद आप गा, मारै मोद तरग ।
दुख को सागर बीतेऊ, अब सुख दिन को रग ॥
दुकुल अहै मानुष की सोभा । चीर बाज सोभाधर को भा ॥
बिनु गुन काया अबर घाले । काठ कि खरग अहै परयाले ॥
तत औ जोग के आहसि चेरा । करु पवित्र अबर तन केरा ॥
बस्तर लेहु भोग के जोगू । जोग जोग अब है भल भोगू ॥
सुमिरन पूजा है तब ताई । जब लग नहि निश्चै मन ठाई ॥
है सब वस्तर मनिमय, मन मों करहु अनद ।
पहिरहु लखि के सोभा, लाजै रवि औ चद ॥
पहिरेउ असुक कुवर सयाना । सुना सीर लखि रूप लोभाना ॥
औ सो सुदर असुक सोहा । दूलह देख तजत मन मोहा ॥
जडिता सेहरा सैं छबि लहई । चौका चमकि चौधि चखु रहई ॥
ऐसे रूप बिराजा राजा । देखि मयक अरज मा लाजा ॥
चेल पहिर सब चेला सोहै । अस्व सवार भये मन मोहै ॥
सब साथी राजा सँग, भयेउ तुरग सवार ।
तारन मों तारापती, भयेउ कुवर सुकुमार ॥
बाजन बाजै साजन साजैं । लाजन लाजैं काजन गाजैं ॥
सग न सोहैं अग न मोहैं । अग न गोहैं भग न होहैं ॥
सबै रीझ देखै बर प्यारा । दृष्टि बिछावन मगु पर डारा ॥
बर के अधर बान रँग राता । लखि मानिक औ लाल लजाता ॥
रहसि कहैं आगमपुर लोगू । धन धन बर इद्रावति जोगू ॥
जो देखा सोइ रीझा, धन धन सब मुख होइ ।
बिनु मोहैं बिनु रीझे, एको रहा न कोइ ॥
सखी एक चितवन तेहि नाऊ । कहा कुवरि सों मैं बलि जाउ ॥
देखेउ हरबर बर मै तेरा । तो बर द्रेइ देव जिउ मेरा ॥
सुनि इद्रावति मन भा चाऊ । धवराहर दिस ढारा पाऊ ॥

सखी सहित वह प्रान पियारी । चढ़ि घबराहट दृष्टि पसारी ॥
कन्यापति सब लोगन माहीं । दृष्टि ताहि दिस आवहि जाहीं ॥
राजकुवर मुख ऊपर, रहेउ सकल छबि छाइ ।
आगमपुर की दारा, देखि रहीं मुरझाइ ॥
चितवन कहेउ कि देखहु रामा । वह तेरो दूलह अभिरामा ॥
पूरन रूप सपदा जाको । करन रहे चित चितवन ताको ॥
आज निबेसन तें सुख पाया । सोभा अधिक चढी तेहि काया ॥
देखत प्रीतम मुख वह रानी । प्रेमा गोद गिरी मुरछानी ॥
मान सखी को रहेउ न प्रानू । कन्यापति चखु मारेउ बानू ॥
छोड़ेउ धीरज धीरजा, चेत न चेता देह ।
आप आप कह वोही मारेउ प्रेम अनेह ॥
देखि अचेत भई सब बाला । अँचयन चोखा दरसन हाला ॥
सबन कहा यह मानुप नाही । अहै महादेवत जग माहीं ॥
रहा न चेत पाव औ माथा । नींबू काटत काटेन हाथा ॥
मानुष रूप देखि अस होई । रहेउ न चेत बीच्च जब कोई ॥
करता जा दिन दरस देखावै । कैसो होइ नहीं कहि आवै ॥
कीन्ह रूप मानुप को, अपने रूप समान ।
याते ज्ञान हरत है, मानुष रूप निदान ॥
प्रेमा जाप चेत जब पायेउ । इद्रावति कह तुरत जगायेउ ॥
पूछा मुरछानी केहि लेखे । कित कुम्हिलाइ कमल रवि देखे ॥
आज अनन्द रूप प्रगटाना । छाजै तुम्हैं कहा मुरछाना ॥
प्रेम उतरि कुवरी तब दीन्हा । रवि सनेह अबुज मय लीन्हा ॥
मित्र बदन सोभा बर सोहै । नहीं अचर इद्री बर मोहै ॥
प्रीतम हित यह जग मो, जा धन के मन प्रान ।
दरस समै आनन्द सो, मुरछै प्रिया निदान ॥
पाय दरस मुदुता भै रानी । तन न समाय चीर हुलसानी ॥
हुलसे नैन देखि पिय सोभा । हुलसे स्वात पाय छबि लोभा ॥
पिय को बदन जीउ अस पाया । हुलसे रतन जोत सब काया ॥
दिनमनि रूप गगन उपराहीं । देखि कमल निकसे जल माहीं ॥
पीउ बदन सोभा सो भावा । जिय दरसन इद्रावति पावा ॥
इद्रावति मन उपवन, आस कली बिकसान ।
मन मों रहेउ न बिसमो, आइ अनन्द समान ॥
सखि एक होइ सचेत पुकारा । धरती उवा सुरुज उजियारा ॥
एक कहा मानुष नहि होई । यह सुर भेस धरे है कोई ॥
एक कहा रजनीपति आही । मेडर अवहि न छेका ताही ॥

एक कहा यह सोभा धारी। जगत कलेवर जिउ है प्यारी ॥
जेहि जस रहेउ दृष्टि औ ज्ञानू। तैसा देखा कीन्ह बखानू ॥
कुवर सनेह सकल मन उपजेउ रूप बिलोकि।
लोचन चितवन मगु सो, एक न पारै रोकि ॥
सखिन बचन सुनि कै वह रानी। समुझा आगम सोच बिचारी ॥
कहा सखिन सो प्रीतम प्यारा। है मोहि सग लगावन हारा ॥
भये बियाह गवन पुनि होई। नइहर के बिछुडे सब कोई ॥
परदेसी की लालप अहई। कहा एक थल पर थिर रहई ॥
परदेसी है कन्त हमारा। देस चलै को राखे पारा ॥
रहनो अन्त न होइ है, नइहर देस मँझार।
परदेसी है सहचरी, लोना पीउ हमार ॥
कहेन सोच रानी केहि लागे। यहि दिन है हम सब के आगे ॥
हम रोये जनमउ सनसारा। जनम देस कित रहन हमारा ॥
नइहर नगर अन्त नहि रहना। सीखु सोइ जेहि सासुर लहना ॥
जनम निबाह भलो पिय पासा। बिनु पीतम न लहै कबिलासा ॥
मिलै नरक जो दरसन पीको। नरक भलो बैकुठ न नीको ॥
मिलै तहा हो प्यारी, नइहर देस पियार।
जेहि अस्थान बसेरा, चाहै पीउ तोहार ॥
जब बनबास राम कहँ भयउ। सीता सती गोहेन मह गयऊ ॥
सदन नरक भा पिय बछुराते। बन बैकुठ भयेउ तेहि जाते ॥
पिय बिनु फीका सुखरग जीका। पिय गोहन नीका सुख तीका ॥
जो प्रीतम सँग प्रीत लगावा। सो दोउ जगत बीच सुख पावा ॥
अज्ञा माथे ऊपर लीन्हा। पिय कर अज्ञा मेट न कीन्हा ॥
पीउ जहा है सुख तहां, जहा न प्रीतम होइ।
तहा सुखद को दरसना, कहा बिलोकै कोइ ॥
बनि बरात द्वारे जब आयेउ। अमल ठाउ बइठै कह पायेउ ॥
बइठेउ कुवर पाट उपराहा। ऊपर सीतल साखो छाहा ॥
सुर नर देखि आसिषा देहीं। निरपे रूप रहसि फल लेहीं ॥
जे तो सुख तजि साधा जोगू। वे तो अलख दिहा सुख भोगू ॥
थोरे दिन का कुवर सलोना। लोना अम्बुक कीन्हेउ टोना ॥
रूपवन्त राजा कुवर, सकल बरातिन माह।
सुन्दरता पति होइ रहा, मान पाट उपराह ॥
जेवन बने सहस परकारा। जेवैं नित भा निर्प हकारा ॥
बइठे लोग आइ सब तहा। दीन्ह ठउर जेवै नित तहा ॥
भोजन केतो सुन्दर होई। उदर भरे पर खाय न कोई ॥

त्रिषा छुधा पर अचवै न्हाई । तब जल जेवन करै भलाई ॥
छुधावन्त कह देहु अहारा । देइ नाक फल सिरजन हारा ॥
कहत न पारै रसना, सब पकवान बखान ।
सै सेवाद एक कवर मों, मिलै खात पकवान ॥
बराबरी सों करइ न पारा । बराबरी सूरज ससि तारा ॥
जत जग बीच भले पकवानू । रहे सकल कित करउ बखानू ॥
बरनत रसना लोनी होई । जानै सो अच्छै जो कोई ॥
बिनै किहेन राजा कै लोगू । है पकवान न तुम सब जोगू ॥
जो पवित्र भोजन करतारा । दीन्ह तुम्हैं सो करहु अहारा ॥
जबै लागे जेवनहि, ले दाता को नाउ ।
एक कवर मे पाव, सै सेवाद तेहि ठाउ ॥
भा अज्ञा जब बाजन बाजा । राजित चला बियाहै राजा ॥
तूर दमामा बाजै लागे । अम्बर गये सबद सुर जागे ॥
माडौ के तर कुवर पहूचा । रहा गगन लग माडौ ऊचा ॥
हरषि गीत नारी सब गावें । घर घर सों सब देखै आवे ॥
पर त्रिय दिष्ट परत भल नाहीं । तैसेइ पर पूरुष उपराहीं ॥
रहा उदित होइ रूप सों । दूलह भान समान ।
वोहि समय माडौ तर, आयेउ चद्र छिपान ॥
उश्नरसम कह देखत नियरे । रहसा नीरज अपने हियरे ॥
लाज मयक देखि सकुचाना । परगट होइ नाहि बिकसाना ॥
तन तन सो तो रहा वियोगू । मन मन सो तो रहा सजोगू ॥
दुइ मन प्रीत रीत सो जानै । अपने नेह जो मन मे आनै ॥
रवि दूलह मुख परगट कीन्हा । ससि दुलहिन मुख पर पट लीन्हा ॥
पढेन वेद बामन सब, बर कन्या के नाउँ ।
रहेउ पर्न नैरित जो, भयेउ सकल तहि ठाउँ ॥
भा बियाह कन्या बर साथा । आयेउ सुख का मानिक हाथा ॥
भयेउ कुवर जगपत को प्यारा । सब काहू मिलि आइ जोहारा ॥
दाया सों आगमपुर ईसू । डारा छाह कुवर के सीसू ॥
जैसे राज त्याग तप कीन्हा । वैसो अलख भोग सुख दीन्हा ॥
पायेउ बहुत दास औ दासी । सेवक भये अगमपुर वासी ॥
भयेउ नगर वासी कह, कुँवर प्रान को प्रान ।
सबते जोरेउ मित्रता, कुँवर सनेह निधान ॥
रहिन सखी सुन्दर जह ताई । इद्रावति के नियरे आई ॥
सकल सखी मिलि दीन्ह असीसा । प्रीतम छाह रहै तोहि सीसा ॥
इहइ लाभ ब्याह सों होई । तोहि लाभ हरषित सब कोई ॥

जुग जुग रहै सोहाग तुम्हारा। चाहै तुम कह कन्त पियारा ॥
तोहि गुन ऊपर रीझा रहई। कोमल बात प्रीत की कहई ॥
सदा रहै तोहि वस मह, करता के परताप।
तोहिं पिय को सुमिरन रहै, पियहि तुम्हारो जाप ॥
अधरन मों मुसकानी रानी। होइ अभिमानी बोली रानी ॥
है मोहि रूप बिमल उजियारा। बस मह रहै सो प्रीतम प्यारा ॥
ऐगुन भये न रूठै देऊ। तनु मुसुकाय हाथ कै लेऊ ॥
अमन होइ करउ असमानू। प्रीतम देइ हाथ मह प्रानू ॥
पाहन समा कठोर जो होई। करउ सिंगार होइ जल सोई ॥
अब किछु चिन्ता है नही, प्रीतम भा मोहि हाथ।
अमन कबहुं न होइ है, नित रहि है मोहि साथ ॥
सखियन अगुरी दातन दाबा। प्यारी गरब न हम कह भावा ॥
मै न भली मै भल जो भाषा। तेहि करतार दूर कै राखा ॥
अगिन सीस जो ऊपर करई। देखहु उनत नीच होइ परई ॥
माटिय सीस नीच कै परई। तबहिं अनेक लाभ सों भरई ॥
नयन आप कह देखत नाहीं। सूझि परा तेहि सब जग माहीं ॥
सो डूबा जो भाषा, मै जग सिर्जनहार।
पार भयेउ जेइ जाना, है एकै करतार ॥
प्रीतम आपन नाहिय प्यारी। अहै समुद्र लहर सों भारी ॥
सेवा नाव चढै जो कोई। पार समुद्र सो उतरै सोई ॥
नाव चढत सुमिरै एक नाऊ। कहै उतारहु मोहि सुभ ठाऊ ॥
करता आयसु बोहित पायेउ। तबहिं समुद्र के ऊपर धायेउ ॥
पिय सो गरब न कब हूं न कीजै। आये सुमाथे ऊपर लीजै ॥
गरब बात तुमत बोलिउ, करता करै न कोप।
फिरु प्यारी अभिमान सों, ऐगुन होइ न लोप ॥
कै घट काज फिरा जो कोई। मनु घट काज न कीन्हा सोई ॥
खुला दुवारा है तब ताईं। रवि न उअै पच्छिम जब ताईं ॥
आवही फिरु मानै करतारा। जब लग खोल फिरै को द्वारा ॥
हम मद पियब तियागा प्यारी। पै तुम्हरी अँखिया मतवारी ॥
हम कहँ खींच सुरा दिस आनै। ताहि कहैं हम नैन न मानै ॥
इद्रावति समुझा बचन, धरती लायेउ भाल।
तुम करतार जगत के, दाता दीनदयाल ॥
ए प्यारी सुमिरत हौं तोही। दरसन वेग देखावहु मोहीं ॥
धन आनन्द राज सुख आही। एकै दाया दरसन चाही ॥
बहुत बियोग सुरा मे पीया। सजोगी मद चाहत हीया ॥

सजोगी प्याला अब दीजै। अधर सुधा सतवाला कीजै॥
आज ठौर आखन मों देऊ। होइ निसक अग भरि लेऊ॥
मोहि सजोग सलील को, है प्रीतिमा पियास।
अनुकम्पा कै दीजै, पूजै मन की आस॥
भइउ सपूरन आधी कथा। मानहुं ज्ञान सिंधु मैं मथा॥
तीन सहस चौपाइय भई। देखु आइ फुलवारिय नई॥
पुनि आगें जो मुख मों रहऊ। तीन सहस चौपाइय कहऊ॥
हौ अबहीं थोरे दिन केरा। बात बहुत दिन कर मैं हेरा॥
विद्या ज्ञान बहुत जेहि होई। अर्थ छिपाने बूझै सोई॥
नूर महम्मद यह कथा, अहै प्रेम की बात।
जेहि मन होई प्रेम रस, पढै सोइ दिन रात॥

उसमानकृत.

चित्रावली

चित्रदर्शन खंड

वै भूले तेहि कौतुक जाई। इहाँ कुँअर जागा अँगिराइ ॥
नैन उघारि देखि चितसारी। रहा अचक उठि बैठ सँभारी ॥
देखा मँदिर एक बहु भाँती। चित्र सँवारे पाँतिन्ह पाँती ॥
कनक खभ औ कनक केवारा। लागे रतन करहि उँजियारा ॥
ऊपर छात अनूप सँवारे। करि कटाव सब कचन-ढारे ॥
कीन्ह उरेह सूर ससि जोती। और नषत सब मानिक मोती ॥
हेठ अपूरब सब डासन डासा। जहं तहँ आउ सुगँध की वासा ॥
भयो कुँअर चित अचक एक, मनहीं माँहि गुनाउ।
काकर लोन मँदिर यह, औ मोहि को लै आउ ॥
बहुरि कुँअर जो पाछे देखा। अपुरुब रूप चित्र एक पेखा ॥
जानि सजीउ जीउ भरमाना। भयो ठाढ उठि कुँअर सुजाना ॥
देखि रूप मुख परचै खरा। बिधि एह चुरइल कै अपछरा ॥
किए सिगार सग नहि कोई। धरे भेष भावन है सोई ॥
जग न होइ मानुष अस रूपा। को पावै अस रूप सरूपा ॥
निहचै अहौ सरग पर आवा। सुरकन्या भौ दिष्टि मेगावा ॥
निहचै एह सुरपति अपछरा। देखत मोर चित्त जिन हरा ॥
हौ तो मडप देव के, सोवत अहा सुभाउँ।
होइ परसन कोउ देवता, लै आवा एहि ठाँउ ॥
भयो भाग्य मम दाहिन आजू। जेहि बिधि दीन्ह आनि यह साजू ॥
के वहि जन्म पुन्य कछु कीन्हा। तेहि परसाद दरस इन्ह दीन्हा ॥
कै बेनी सिर करवट सारा। कै कासी तन तप महँ जारा।
कै मथुरा बसि हरि जस गावा। ताहिं पुन्य यह दरसन पावा ॥
कै काहू की इछा पूरी। बल बौसाउ कीन्ह दुख दूरी ॥
कै सुदिष्ट अपने बिधि देखा। आनि देख वह रूप सुरेखा ॥
सुनत अहा कबिलास होहावा। सो विधि मोहिं आन देखरावा ॥
मन रहसहि चितो चितहि, रहा मौन होइ भूप।
रसना मरम न बोलई, लाएन भूले रूप ॥
छिन एक गुनि मन महँ बहुभावा। पुनि ठाढस कै आगे आवा ॥
नियरे होइ जो बदन निहारा। रहे निहारि मीन जिम तारा ॥
तब जानेसि यह चित्र अनूपा। हस्यो चित्र लखि बदन सरूपा ॥
नैन लगाय रहेउ मुख वोरा। चित्र चाँद भा कुँअर चकोरा ॥

सुधि बिसरी बुधि रही न हिये। गा बौराइ प्रेम मद पीए ॥
कबहूँ सीस पाइ तर धरही। कबहुँ ठाढ होइ विनती करई ॥
कबहुँ परै अचेत मुईं, कबहूँ होइ सचेत।
रूप अपार हिए समुझि, मुख जोवै करि हेत ॥
निरखत जोति नैन जो पाई। परी डीठ आला पर जाई ॥
देखा आहि लिखै कर साजू। जाते होइ चित्रकर काजू ॥
साँवर अरुन पीन औ हरा। जो रँग चाहिये सो सब धरा ॥
कहेसि विचारि बूझि मन माहीं। कालहि आजु अस होइ कि नाहीं ॥
आपन चित्र लिखौं एहि ठाऊँ। मुकुरहि जोति जोति कछु पाऊँ ॥
अपनि जोति सूर उँजियारा। सूर कि जोति चंद मनियारा ॥
हिएँ विचारि चित्र तब लिखा। वहि न चरन तर आपन सिखा ॥
साजि सो मूरति आपनी, ले सब रँग वहि केर।
कै सुजान सो जानई, कँ सुजान यह फेर ॥
चित्र लिखा पूजी पुनि धरी। निद्रा आइ कुँअर चखु भरी ॥
कुँअरक चाहत पलक न लावा। बरबस बेरिन नींद सो आवा ॥
रहै नीद जामौ धन खोवा। इहै नींद जो करै बिछोवा ॥
इहै नींद मगु चलै न देई। इहै नींद सरबस हरि लेई ॥
इहै नींद जेहि नैन समानी। पलकन्ह भीतर दृष्टि समानी ॥
जो जग माँह नीद बस होई। रहै बीच मग सरबस खोई ॥
जे यहि नींद आपु बस कीन्हें। रहै नीद तोहि नौ निधि दीन्हे ॥
मान गवाए सोइ सब, जो संपति हुति साथ।
अजहूँ जागु न घर बसे, भकुरे है कछु हाथ ॥
देवन्ह कौतुक अति जिय भाया। चित्रिनि दरस अमर भइ काया ॥
होत भोर आदित परगासा। उठी सभा औ नाँच उडासा ॥
चित्रावलि कहँ निद्रा आई। ले पलग पर सखिन सोआई ॥
औ जहँ तहँ सब सोवन लागीं। सगरी रैनि अही सुख जागीं ॥
देवन्ह कहा होत है बारा। चित्रसारि जनु काऊ उघारा ॥
चलहु कुँअर लै चलहि सवेरा। मगु कोई आइ मढी महँ हेरा ॥
एहि न पाउ औ तुरै जो पावा। जानइ कुअर जन्तु कोउ खावा ॥
जन पुरजन माता पिता, जह लहु हित सुनि पाउ।
मरिहहिं छाती फाटि सब, तब कछु हाथ न आउ ॥
पुनि दोउ एक संग चितसारी। आइ उघोरन्हि पौरि के वारी ॥
सोवत कुअर आन तह पावा। लीन्ह उठाइ बार सेहिं लावा ॥
निमिष माँह ले मढी उतारा। गए छाड़ि सोवत दुख मारा ॥

सुरुज किरन जब कुँअरहिं लागी। करवट लेत उठा तब जागी ॥
देखै कहाँ चहूँ दिसि हेरी। भई आनि रचना बिधि केरी ॥
ना वह मंदिर नहिं कबिलासू। ना वह चित्र न वह सुख बासू ॥
सपन जान चित उठा मरोहू। औटि करेज पानि भा लोहू ॥
पुनि जो निहारे आपु तन, चिन्ह आह सो संग।
बस्तर औ कर पर वही, लिखत लाग जो रंग ॥
षन एक कुँअर अचक मन रहा। कौतुक सपना जाइ न कहा ॥
पुनि जो बिरह लहरि तन आई। थाँभि न सकेउ गिरेउ मुरझाई ॥
दोउ नैनन जनु समुँद्र अपारा। उमड़ि चले राखै को पारा ॥
फारै झँगा औ लोटै परा। बधुन कोऊ हाथ को धरा ॥
भरि गै खेह सीस औ देहा। सेवक नाहिं जो झारै खेहा ॥
संग न कोऊ हितू पियारा। को उठाइ बैठाइ सँभारा ॥
षिन चेतै षिन होइ बेसँभारा। घरी घरी सिर भुइँ दइ मारा ॥
बिरह दहनि कोउ किमि कहै, रसना कहि जरि जाइ ॥
सोइ हिय माँहि सँभारै, जेहि तन लागै आइ ॥
कटक जो आइ नगर नियराना। देखिन्ह संग न कुँअर सुजाना ॥
वह औ कहँ वह औ कहँ पूँछा। कटक जानु विनु जिउ तन छूँछा ॥
सब मिलि कहा कुँअर जो नाहीं। राजा पास काह लै जाहीं ॥
पूछत उतर देब हम काहा। छूँछ लजाइ रहब मुँह चाहा ॥
जोहिं बिनु तब जाइहि मुँह गोवा। कसन अबहि जो खोजिअ खोवा ॥
सोवत जानु सबै सुनि जागे। आपु आपु कहँ ढूँढन लागे ॥
जल जल थल थल मेरु पहारा। एक एक तरु तर सौ सौ बारा ॥
स्याम रैन बिनु पथ पुनि, अगुवा संग न कोइ।
दूरि दूरि सब धावाहिं, नियर जाहिं नहिं कोइ ॥
खोजत खोजि कटक सब हारा। बीती रैनि भयो भिनुसारा ॥
सूरज उदै पथ तब सूझा। भयो दिवस पर आपन बूझा ॥
बाजी चरन खोज पुनि पाए। खोजत खोज मढी महँ आए ॥
देखहि कुँअर परा बिकरारा। हाथ पाँव सिर कछु न सँभारा ॥
ऊभ उसास लेइ औ रोवा। देखत सैन प्रान जुन खोवा ॥
खेह झारि ले बैसे कोहा। रोवै कटक देखि मुख ओरा ॥
पूछे बातन उतर न देई। षिन षिन ऊभ साँस पै लेई ॥
अरुन बदन पिराइगा, रुहिर सूखि गा गात।
रहा झाँपि लोयन दोऊ, कहै न पूछे बात ॥
कोऊ कहै मृगी एहि आई। होइ अचेत परा मुरझाई ॥
कोउ कह डसा साप एहि मढी। सूरज उदय लहरि है चढ़ी ॥

कोउ कहै अहा राति का भूखा। ताँवरि आइ रुहिर तन सूखा ॥
कोउ कह रैनि रहा एकसरा। कै दानौ कै चुरइलि छरा ॥
इहवाँ घरी विलँब भल नाहीं। बेगहि होहु नगर लै जाहीं ॥
तत्खन राज सुखासन आना। लै पौढाए कुँअर सुजाना ॥
नाउँ सुखासन लै दुखवाहा। बिरह क जरा दून कै डाहा ॥
जाइ सुखासन आसुभा, बाजु गीत औ नाद।
चला पाछु सब आवै, कटक भरा बिसमाद ॥

केउ कहा जाइ जहँ राजा। कुँअर आव कछु औरै साजा ॥
सगन सुनिय गीत औ दाना। सिगरी कटक देखि बिसमाना ॥
सुनि औगुन राजा उठि धावा। व्याकुल होइ भुँइ पाव न लावा ॥
रानी सुनि सिर परी बिजागी। सुनतहि जरी कोप की आगी ॥
आई धाइ कुँअर जहाँ आवा। रोइ सुखासन लेइ कँठ लावा ॥
देख षीन तन मुख पियराना। राजा रानी तजहि पराना ॥
कठ लगावहिं पूछहि बाता। उतर न देइ बिरह मद माता ॥
पुनि ते पूछा बोलि कै, जे सँग हुते सयान।
जहँवा कुँअर बिछुरि मिला, तिन्ह सब कीन्ह बखान ॥

राजमदिर महँ कुँअर उतारा। जानहु आनि अगिन मह डारा ॥
कल न परै पल अति बिकरारा। हाथ पाँव सिर दै दै मारा ॥
राजैं तनखन जन दौराए। वैद सयान गुनी लै आए ॥
गहहिँ नाड़िका बूझहिँ पीरा। नारि माँह निरदोष सरीरा ॥
ससि सूरज दोऊ निरदोषी। अपुने अपुने घर सतोषी ॥
अब नाडिका माँह नहि पीरा। प्रगट पियर मुख षीन सरीरा ॥
कहि न आव हम हिए बिचारा। ई जस बिरह घाउ कर मारा ॥
पीर सोई जो नहीं कछु, औषद मूरि उपाय।
एहि कर हितू जो होइ कोइ, सो पूछै फुसिलाय ॥

उठि अकुलाइ मात दुखभरी। कुँअर पास आई एकसरी ॥
सीस लाइ के बैठी कोरा। पूछै बात देखि मुख ओरा ॥
नैन उघारु पूत कहु पीरा। केहि कारन भा षीन सरीरा ॥
काहे पीत भयो मुख राता। कहहु बात बलिहारी माता ॥
तहीं एक दिनमनि कुलकेरा। नैन मूँदि कस करहि अँधेरा ॥
हम सब घट तुम जीव सनेही। कस कुँभिलाइ देसि दुख देही ॥
पूत परि कहु कस जिउ तोरा। नैन खोलु करु जगत अँजोरा ॥
तोरे पीर कि औषद, जौ एहि जग महँ होइ।
अर्थ द्रव्य जिउ दइ कै, बेगि मँगावों सोइ ॥

कहुँ जो उपजी विथा सरीरा। करौ सोई जेहि नेवरइ पीरा॥
जो है मढी देव कर भाऊ। लै पूजा सो दैव मानऊ॥
जो काहू के दरसन भूला। मागौ होइ दुनो कर फूला॥
और जो मन कछु ईछा होई। कहु सो बेगि लै पुरवौं सोई॥
दुहु जग माह तुहीं एक आसा। आस तोरि का करसि निरासा॥
को काटै इह दुख दिन राती। अबहीं मरब फाटि मैं छाती॥
सुन कै कुअर मातु कै बोला। ऊभि साँस लीन मुख खोला॥

माता पीर सो ऊपजा, ताहि न मूरि उपाइ।
लोयन अटके तहाँ पै, मन न सकै जह जाइ॥

कहि कै कुअर मौन भै रहा। लोयन दुहू गिरे जल बहा॥
बहुत पूँछि रानी जब हारी। कहि न बात नहि पलक उघारी॥
एहि मँह बिरह लहरि पुनि आई। थाँभि न सका परा मुरछाइ॥
धाह मेलि तब रानी रोई। सुनत लोग धावा सब कोई॥
राजा रोवै डारि सिर पागा। जन परिजन सब रोवइ लागा॥
राज मँदिर कर सुनत अँदोरा। घर घर परा नगर मह रोरा॥
जो जैसहि तैसहि उठि धावा। हाथ हाथ लै कुअर उठावा॥

कोई मेलै पानी मुख, कोऊ मूँदै नाक।
मेटे कैसेहु नहिं मिटै, माथ लिखा जो आँक॥

विद्याधर गुरु पडित महा। तेहि कुल सुमति पूत एक अहा॥
नाउ सुबुधि सकल गुन जाना। पढा पाठ सग कुअर सुजाना॥
विद्या जानु जहाँ लगि गुनी। नाटक चेटक आखर घनी॥
मानत हेत कुअर तेहि सेती। कहत सुनत जिय बातै जेती॥
सुनि कै विथा कुँअर पहँ आवा। कुअर अचेत आइ तहँ पावा॥
नारी देखि विचारेसि पीरा। दोष न पाइस कुँअर सरीरा॥
बदन पियर लोचन न उघारा। निहचै कहेसि बिरह कर मारा॥

प्रेय मत्र बोला सुबुधि श्रवनन लागि पुकारि।
सोवत जागा कुअर पुनि, देखिसि पलक उघारि॥

तब एकसर भै पूछेसि बाता। कहहु कहाँ कासों मन राता॥
कौन रूप देखा तुम जाई। देखत जाहि परे मुरझाई॥
मै तोर हितू जान सब कोई। कौन बात तुम मोसों गोई॥
औ मै गुन आकरषन पढा। स्वर्ग बसै सोऊ कर चढा॥
नाउ ठाउ जाकर जौ होई। करि उपाउ पुनि आनउ सोई॥
जौ तुम्ह काज आज नहि आवौ। बुधि विद्या सब कुलहि लजावौं॥
प्रम पहार स्वर्ग ते ऊचा। बिनु रेघे कोउ तहँ न पहूँचा॥

कहु सो बात अब जीव की, बेगहि करौं उपाइ।
ना तो बौरे कुँअर निज, सब मरिहैं बौराइ॥
सुनि सुनि मन सब बात बिचारी। रोइ रोइ कहन कथा अनुसारी॥
जैसे खेलै गए अहेरा। आँधि आइ औ भयो अँधेरा॥
औ जैसे सब चले पराई। पर्‌यो आपु जस एकसर जाई॥
औ जैसे बीती सो आँधी। सोवा मढ़ी तुरै तरु बाँधी॥
औ जैसे वह सपना देखा। अपुरब रूप चित्र जस पेखा॥
औ जैसें मन गा बउराई। दिष्टि परत चित लीन्ह चोराई॥
आपन चित्र लिखा रँग लागा। सोवत मढी माँह जस जागा॥
जैसें देखा सपन सब, सौमुह पाए चीन्ह।
कुँअर कहा सब सुबुधि सों, जस कौतुक बिध कीन्ह॥
कहा कहौं कछु कही न जाई। हिय सौरत बुधि जाइ हेराई॥
कहत न बनै जो कछु मैं देखा। गूँग क सपन भयो मोर लेखा॥
नाउँ न जानौ पूछौं काही। पटतर नाहिं देखावौ जाही॥
देस न जानौ केहि दिसि आही। पथ न जानौ पूछौं काही॥
मन चहुँ दिसि धावै बैरागा। फिरि आवै बोहित ज्यों कागा॥
करहु उपाय करै जो पारहु। नाहि तो कहा मुए कहँ मारहु॥
गहिरे सिंधु जाइ जिउ खोवा। अब मै हाथ आपु सो धोवा॥
मोहि जियत नहिं सूझइ, पुनि वह रूप मिलाउ।
मुएँ कबहुँ सुरभौन महँ, हाथ आउ तौ आउ॥
जबहि कुँवर यह बात सुनाई। सुबुधि-बुद्धि सब गई हेराई॥
परेउ जाइ मन तेहि अवगाहा। तीर ने देखि पाव नहि थाहा॥
कछू विचार हिए नहि आवै। कुँअर पीर जेहि औषद जावै॥
कहेसि कुँअर यह पथ दुहेला। निराधार खेलैं तिन्ह खेला॥
कहेसि उपाइ एक मति मोरी। मूँदिय और बाट चहुँ ओरी॥
जहवाँ सोइ सपन अस दीसा। ओही ठाँव धनहुँ पुनि सीसा॥
मकु बिधि सोवन कर्म लगावै। बहुरि सोइ सपना सो पावै॥
लेहु कुँअर उपदेस यह, चेतहु चेत सँभारि।
आन पथ नहि दूसरा, दीख न हिए विचार॥

परेवा खंड

कै सिंव साज निपुसक चारी । जिन्ह सों आहिं सों चित्र चिन्हारी ॥
बेगि चलाए चारिहु ओरा । ढूढन चले सूर ससि जोरा ॥
औ समुझाइ कीन्ह पुनि बाता । जानत अहौ जाहि मन राता ॥
ताकर चाह कहै जो आई । जो माँगहि सो देउँ बँधाई ॥
चारौ चले चारि दिस भए । आपु आपु कहँ ढूँढन गए ॥
जल थल सागर मेरु सुमेरा । रन बन पुर पाटन सब हेरा ॥
जहँ तहँ भवहि गेह बैरागा । दहुइन मह कोइ होइ सुभागा ॥
बन घन गिरि सायर पटन, जहाँ सुनहि नर नाम ।
फिरि फिरि हेरहि रैनि दिन, छिन न लेहि बिसराम ॥
तिन्ह मँह अहा जो नाम परेवा । हिए सँवरि चित्रावलि सेवा ॥
उत्तर दिसा दीप अति भला । धौलागिरि पर्वत कह चला ॥
प्रथमहिं नगर कोट कर फेरी । काशमीर पुनि तिब्बत हेरी ॥
हरद्वार गै गग अन्हावा । माँगी ईछा सिभु मनावा ॥
सिरीनगर गढ देखि कुमाऊँ । खसिया लोग बसहि तेहिं गाऊ ॥
पुनि बदरी केदार सिधारा । ढूँढा फिरि फिरि सकल पहारा ॥
दुरगम देखि मगन कर देसा । चला ताकि नैपाल नरेसा ॥
बाक कोट बसगित बहुत । औ चारिहुँ दिसि ताल ॥
अमर पुरी जानहुँ बसी । नाउ धरा नैपाल ॥
अतिहि अपूरब ताल सुहावा । इसिकदर जुलकरन खनावा ॥
घाट बँधाये गच चिनकाई । चहुँ दिसि फेर आरसी लाई ॥
तिरहिँ होइ पानी कर धोखा । देखि पिआस पाव सतोखा ॥
पुनि दुइ नदी सुहावनि बहीं । उत्तम वेदब्यास जस कही ॥
नागमती अहि मुख ते आई । बागमती नाहरमुख पाई ॥
तीरथ जानि जगत चलि आवा । अग धोई सब पाप नसावा ॥
बारह मास पटन पुनि घिरी । बरहौ मास जातरा भिरी ॥
नर नारी सुदर सबै, ससि मुख अधर रसाल ।
नैन परेवा चकित रह, देखि नगर नैपाल ॥
घर घर नगर लीन्ह तहँ फेरी । राउ रक देखे तहँ हेरी ॥
रूप सरूप लोग सब आहा । सो न मिलै जा कहँ चित चाहा ॥
जह न होइ सो प्रान पियारा । बसत देस सब जानु उजारा ॥
चला नगर तजि पर्वत ओटा । परी द्रिष्ट एक कचन कोटा ॥

हीरा रतन पदारथ मोती। जगमगाइ सब मानिक जोती॥
कहेसि जाइ देखौं एहि ठाऊँ। लागत अतिहि सुहावन गाऊँ॥
हिए चाउ भइ पाव न लावा। जोगी जाइ न नगर नियरावा॥
आइ सींव दिन नयर भो, लीन्ह अतीथ बोलाइ।
धरमसाल जह हुत रचा, तह ले गए लिवाइ॥
गै जोगी तह देखै काहा। अतिथि सहस एक बैठे आहा॥
ठाढे सबै राउ औ राना। सेवा करहि जैस मन माना॥
भाँति भाँति पकवान जेवावहि। औ अपनै कर पान खिवावहिं॥
जो इच्छा मन माँगै कोई। बेगिहि आन पुरावै सोई॥
देखि अतीथ सबै रहसाए। सेवा कहँ चलि आगे आए॥
आदर सहित आनि बैसारा। पहिलें लै जल पाँव पखारा॥
ता पाछे लाए पकवाना। जेउ गोसाई जो मन माना॥
जोगी कछू न जेवई, पूछे कहै न बैन।
चरचै आनन चहूँ दिस, कीन्हें चचल नैन॥
जोगि न जेवा रहे जेवाई। काहू कहा कुअर पहँ जाई॥
धरमसाल एक जोगी आवा। चित चचल बैराग जनावा॥
नहिं जानहि दुहुँ का चित जानी। अन्न न खाइ पियै नहि पानी॥
पूछे कहे न एकौ बाता। पियर बदन जस काहुक राता॥
चचल नैन चहूँ दिस हेरा। चरचै पुर आनन सब केरा॥
पलक न लाउ जानु नहिं सोवा। ढूढत फिरै जानु कछु खोवा॥
धरमसाल की नीत न होई। भूखा जाइ इहा हुत कोई॥
भइ आयसु ऐसी कहा, बेगिहि आनहु सोइ।
मै चूक्यों सेवा कछू, ताते रिसि जिय होइ॥
कुअर पास तब जोगी आना। जोगी कुँअर देखि पहिचाना॥
चित रहसा जानहुँ निधि पाई। कथा महँ जोगी न समाई॥
पोत बरन जु अहा भा राता। अति हुलास कपेउ सब गाता॥
देखि कुँअर आदर बहु कीन्हा। निकट पाट बैठन कहँ दीन्हा॥
बिनती कीन्ह सुनौ हो देवा। कस न धरम कै मानहु सेवा॥
हम सेवक तुम्ह देव गोसाई। सेवक हुते चूक बहु टाईँ॥
रिस तजि जेवहु जेवन देवा। होउ सनाथ आज तुम्ह सेवा॥
कहेसि कुअर सुनु धरम तरु, अस लगेउ तुअ भाग।
जरि पताल पालो सरग, हींछा फल तेहि लाग॥
जा दिन ते हम गुरु बिछोवा। अन्न न जेवा नींद न सोवा॥
भूख नाहिँ औ नाहिँ पियासा। नाउँ अधार रहइ घट साँसा॥
दक्खिन देस जान जिन्ह देखा। रूपनगर कबिलास बिसेखा॥

बसे गुरू तेहि नगर सोहावा । चेला देस बिदेस फिरावा ॥
जोग अगिनि जब हिए प्रचारी । पल महँ कीन्ह भसम रिसि जारी ॥
काया जोग अहै रिसि रोगू । जो रिसि करै सो नासै जोगू ॥
कुँअर कहा कस देस तुम्हारा । औ को देस बसावन हारा ॥
मो सौं देस बखान करु, कैस नगर कस भूप ।
कौन लोग तहवाँ बसैं, पुनि गुन कौन अनूप ॥
जोगी कथा कहन अनुसारी । सुनहु कुँअर यह बात रसारी ॥
रूपनगर सो उत्तिम देसा । चित्रसेन जहँ राउ नरेसा ॥
ऊँच नीच घर ऊँच उँचाए । चित्र कटाउ अनेक बनाए ॥
धन सो नग्र धन उत्तिम देसा । चित्रसेन जहँ राउ नरेसा ॥
राउ रक घर जानि न जाई । एक ते एक चाह अछवाई ॥
बेल चँबेली कुद नेवारी । घर घर आँगन फुलि फुलवारी ॥
लीपे चदन मेद अवासा । भीत बैठि लेहिं अलि बासा ॥
मृगमद चोवा कुमकुमा, खोरि खोरि महकाइ ।
सुर नर मुनि गधरव सब, रहे सुबास लुभाइ ॥
चित्रसेन अति राउ भुवारा । जस रवि तपै तेज मनियारा ॥
जेहि घर विषम दिष्टि परि राई । बैरी तम जिमि जाइ बिलाई ॥
बड़ परताप अखडित राजू । अगनित हस्ति घोर दल साजू ॥
गुन बिद्या सरि भोज न पावा । पँडितन्ह हिएँ हेत बहु लावा ॥
दुखी न कोई सब सुख राता । जहँ तहँ चलै धरम की बाता ॥
सब सुखिया कोउ दुःख न जाना । ढूँढत फिरहिं लेइ को दाना ॥
देस देस के राजा आवहिं । ढाड तँवाहि बार नहिं पावहि ॥
महथ गरब अति मान तहँ, रहै न एकौ अक ।
रूप नगर की खोरि महँ, राउ होहि सब रक ॥
तेहि घर पुनि चित्रावलि बारी । मात पिता की प्रान पियारी ॥
रूप सरूप बरनि नहि जाई । तीनिहुँ लोक न उपमा पाई ॥
दिनकर दिन पावै नहि जोरा । इद्र लजाइ देखि मुह ओरा ॥
अमर कोष गीता पुनि जाना । चौदह विद्या करे निधाना ॥
सतति आन न तेहि घर आवा । वाही एक ते सब चित लावा ॥
भौह चढाइ जो कबहुँ रिसाई । मात पिता कर जिउ निसराई ॥
औ जो चाह करै पुनि सोई । लेत देत कछु बरज न कोई ॥
दखिन दिसा पुनि नगर के, सखर एक खनाइ ।
सखिन साथ चित्रावली, तहँ नित जाइ नहाइ ॥
कहा सराहौ सखर तीरा । पानि मोती तहँ काँकर हीरा ॥
अति औगाह थाह नहि पाई । विमल नीर जहँ पुहुमि देखाई ॥

अति अमोघ औ अति बिस्तारा । सूझ न जाइ वारहु त पारा ॥
घाट बँधाऐ कंचन ई टा । सरग जाइ जनु लाग्यो भीटा ॥
ऊपर ताल पानि जहँ ताई । ठाँव ठाँव चौखडि बनाई ॥
औ जहँ तहँ चौरा कै लीन्हे । निसि दिन रहहिँ बिछावन कोन्हें ॥
जहाँ एक छिन करै नवासा । सोई ठाँव होइ कबिलासा ॥
सुख समूह सरवर सोई, जग दूसर कोउ नाहि ।
मानुष कर का पूछिये, देवता देखि लोभाहिँ ॥

भीतर सरवर पुरइन पूरी । देखत जाहिँ होइ दुख दूरी ।
फूले कँवल सेत औ राते । अलिमकरद पियहि रस माते ॥
बासर पदुम कुमुद रह फूला । सब निसि नषत चाँद रह भूला ॥
तोरि कँवल केसर झहराहीं । केसरि बास आव जल माहीं ॥
हस झुड कुरिलहि चहुँ ओरा । चकइ चकवा पौरहिँ जोरा ॥
सवरत ताहि सिरायो हीया । चातक आइ पाने सो पीया ॥
औ जित पछी जल के आए । केलि करत अति लाग सोहाए ॥
रहसहि क्रीडा बृन्द बस, भौर कँवल फहराहिँ ॥
निसि दिन होंहिँ अनद तह, देखत नैन सिराहिँ ॥

सॅरवर तीर पछिम दिसि जहाँ । चित्रावलि की बारी तहाँ ॥
सीतल सघन सुहावन छाहीं । सूर किरिन तहँ सँचरै नाहीं ॥
मजुल डार पात अति हरे । औ तहँ रहहिँ सदा कर फरे ॥
तुरँज जँभीरी अति बहुताई । नेबू डारन गलगल जाई ॥
अमिरित फर औ दाड़िम दाखा । सतति जियै निमिष जो चाखा ॥
नरियर और सोपारी लाई । कटहर बडहर कोऊ न खाई ॥
आँव जमुनि लै एक दिसि लाए । बर पीपर तहँ गवन न आए ॥
मूर सजीवन कलपतरु, फल अमिरित मधु पान ॥
देउ दइत तेहि लगि भजहिं, देखत पाइय प्रान ॥

कोकिल निकर अमिरित बोलहिँ । कुँज कुँज गुँजत बन डोलहिँ ॥
सारी सुआ पढै बहु भाषा । कुरलहिँ बैठि बैठि तरु साखा ॥
पखई आपन आपन जोरी । छकी फिरहि कुरलहि चहुँ ओरी ॥
खजन जहँ तहँ फरकि देखावैँ । दहिअल मधुर बचन अति भावैं ॥
मोर मोहनी निरतहिँ बहुताई । ठौर ठौर छवि बहुत सोहाई ॥
चलहिँ तरहिँ तहँ ठमुकि परेवा । पडुक बोलहि मृदु सुख-देवा ॥
बहु करनास रहहिँ तेहि पासा । देखि सो संग भाग जेहि बासा ॥
भगराज औ भृंगी, हारिल चात्रिक जूह ।
निसि बासर तेहि बारि महँ कुरलहि पछि समूह ॥

औ पुनि रहै माँझ जहँ बारी। चित्रावलि लाई फुलवारी ॥
सोन जरद नागेसर फूले। देखि सुदर्सन दिस्ट जो भूले ॥
जाही जूही अति बहुताई। अनबन भाँति सेवती लाई ॥
बनबेला सतबर्ग चमेली। रायबेल फूली सुखबेली ॥
करना केतलि बाम नेवारी। चपकली जनु कुंदि उतारी ॥
कदम गुलाब लाग बहु भाँती। औ बसाइ बकुचन की पाँती ॥
मौलसिरी फूली औ मूँदी। जनु सिंगार हरावलि गूदी ॥
पौन बसेरा लेहि निसि, तेहि फुलवारी पास।
भोर भए जग प्रगटइ, तिन्ह फूलन्ह की बास ॥

ललित लवग लता जहँ फूली। भौरा भौरि कुसुम तेहि भूली ॥
नगर नगर तहँ डगरै जूही। गधराज फूलहिँ सबूही ॥
कस्तूरी सुगध बिगसाहीं। ठौर ठौर सो अधिक बसाहीँ ॥
भुइँ चपा फूली बहु रगा। मानहु दरसा रूप अनगा ॥
सूरज भाँति भाँति अति राते। देखत बनै बरनि नहिँ जाते ॥
उड़हिँ पराग भौर लपटाहीं। जनु बिभूति जोगिनि लपटाहीं ॥
मरकडी भौरन सँग खेली। जोगिन सग लागि जनु चेली ॥
केलि कदम नवमल्लिका, फुल चपा सुरतान ॥
छ ऋतु बारह मास तहँ, ऋतु वसत अस्थान ॥

औ पुनि जहाँ माँझ फुलवारी। तहँ चित्रावलि की चित सारी ॥
चदन मेद कपूर मिलावा। इन्ह तिहुँ मिलि कै कीन्ह गिलावा ॥
हीरा ईंट लगाइ उँचाई। देखत बनै बरनि नहिँ जाई ॥
चूनी चूरि कै कीन्हो खोहा। मोती चूरि गच्च जगमोहा ॥
अति निरमल जस दरपन कीन्हा। तहाँ जाइ पुनि आपु न चीन्हा ॥
मँदिर एक तँह चारि दुआरी। नगिन जरी पुनि लागु केवारी ॥
कनक खभ तंह चारि बनाए। हीरा रतन पदारथ लाए ॥
ठौर ठौर सब नग जरित, अस होइ रहेउ अँजोर।
जँह न रैनि दिन जानिए, औ न साँझ नहि भोर ॥

तेहि मँह चित्रावलि गुन ग्यानी। आपु न चित्र लिखै अस जानी ॥
जौ लौ सखी दरस नहिं पावहिँ। भोरहिँ आइ सीस तेहि नावहिँ ॥
और जो चित्र अहहिँ तेहि माहीं। सो चित्रावलि की परछाँहीं ॥
अस विचित्र केहि लावों जोरी। अस्तुति जोग जीभ नहिँ मोरी ॥
वही रग अपने रँग माहीं। ओहि के रंग और कोउ नाहीं ॥
सौंह न जाइ चित्र मुख हेरा। धन सो चित्र औ धन सो चितेरा ॥
मानुष कहा सो देखै पावैं। देवता जाहिँ जो हारे आव ॥

कोटि चित्र चितसारि महँ, देखत एकौ नाहिँ।
जौ दिनकर उद्दोत ही, नषत सबै छिपि जाहिँ॥
लखो लिलाट दूजि कर चदा। दूजि छाड़ि जग वो कहँ बदा॥
भौह धनुष बरुनी बिषबाना। देखि मदन धनु गहत लजाना॥
बरुनी बान गड़े जेहि हीये। बहुरि न निकसै जब लहुँ जीये॥
लोचन विमल जानु सम जोवा। निमिख जो देख जनम भर रोवा॥
अधर सुरग जनु खाए तँबोला। अबहीं जनु चाहै हसि बोला॥
लक छीन जेहि भृग लजाहीं। कोउ कह आहि कोऊ कह नाहीं॥
फीली चरन सराहौ काहा। अबहीं रहसि चलै जनु चाहा॥
गुपुत रहै चित सारि महँ, जग जानै सब कोइ।
सपने जा कोइ देखई, सौतुक जोगी होइ॥

सुनी कुँअर जो चित्र की बाता। हिए हुलास कँपेउ सब गाता॥
सचक भयौ चित औ मन गुना। सपन जो देखा सौतुक सुना॥
सोवत भाग अहे सो जागे। श्रवन भए सुनि जाहि सभागे॥
मोहिँ परतीति करम की नाहीं। कहत आहि कोउ सपने माहीं॥
जौ निहचय हौ सोअत अहौ। जनि जगाउ विधि हा हा कहौ॥
कौन घरी यह आइ सुभागी। देखेउँ सोइ सुनेउँ सो जागी॥
कौन बार यह आइ सरेखा। सखन सुना नैनन जो देखा॥
यहि अतर जनु बिरह अहि, बधन देई छुडाइ।
बिथुरि गयो विष सकल तन, लहरि चढी जनु आइ॥

गुपत पीर परगट पुनि भई। सुलगत आगि फूकि जनु दई॥
उठी आगि सिर पालहु जरा। धाइ कुँअर जोगी पग परा॥
रहि न सकेउ हिय गह भरि रोआ। नैन नीर जोगी पग धोआ॥
बिरह अनल जल भै चखु ढरा। लोचन नीर जोगि तब जरा॥
दुहूँ हाथ गहि सीस उठावा। पूँछत बात बकुर नहिं आवा॥
साँप डसा जनु बिष लहराना। घूमत रहै सुनै नहिँ काना॥
दिष्टी भुअँग बद जनु कीन्हीं। ते पढि मत्र खोलि जनु दीन्हीं॥
तब जोगी कर नीर लै, मुख छिरकेसि करि हेत॥
पहर एक बीते भयौ, बहुरि कुँअर चित चेत॥

बहुरि जो कुँअरउ सोइ कै जागा। बैन सँभारि गहेसि सिर पागा॥
तौ पुनि कहिस ऊभ लै साँसा। ए देनिहार निरासहि आसा॥
वोह सो चित्र जो मोहि दुख दीन्हा। बरबस जीउ मोर हरि लीन्हा॥
जीउ लेइ तन दूरइ डारा। हौं तो वही चित्र कर मारा॥
वही चित्र मैं सपने दीठा। चित्त माँहिँ वहि चित्र बईठा॥

वही चित्र बिनु जीउ बिहीना । जिउ हरि लीन्ह कीन्ह तन सूना ॥
वही चित्र जो नैन समाना । सौं तुक सपन जाइ नहिं जाना ॥
वही चित्र हम हिए महँ, जो तैं कीन्ह बखान ।
हौं अब रहा सरीर होइ, वह भौ जीउ समान ॥
जेहि दिन ते नैनन भा लाहा । बहुरि न पायौ कतहूँ चाहा ॥
पथन पावउँ केहि दिसि जाऊ । पूछौं काहि न जानउँ नाऊँ ॥
मैं निरास औ बिनु जिउ आहा । आस दई तैं जिउ घट बाहा ॥
आजु आस तैं पुरएसि मोरी । तन मन धन नेवछावरि तोरी ॥
अब कहु पथ गवन जेहि पावौं । चलउँ बेगि खिन बिलँब न लावौं ॥
तुम्ह जहँ चहहु सिधारहु तहाँ । मोहि अब कहहु पथ सो कहाँ ॥
कै अब जाइ चित्र सो पावौ । कै अपान वहि पथ लगावौ ॥
जिउ चितसारी महँ रहा, देह रही हम साथ ।
देहु सोई उपदेस मोहिं, जेहिं जिउँ आवै हाथ ॥
जोगी कहा कुँअर सुनु बाता । अबहीं देखि चित्र तूँ राता ॥
वह सो चित्र तैं देखा नाही । जा कर ऐस चित्र परछाहीं ॥
चित्र देखि तैं चित्रै जाना । ता महँ अहा सो नहि पहिचाना ॥
चित्रहि महँ सो आहि चितेरा । निर्मल दिस्टि पाउ सो हेरा ॥
जैसें बूँद माँह दधि होई । गुरु लखाव तौ जानै कोई ॥
जा कहँ गुरू न पथ देखावा । सो अधा चारिहुँ दिसि धावा ॥
मूरख सो जो चित्र मन लावै । सेमर सुआ जैस पछतावै ॥
यह मूरति औ चित्र जग, जो बिधि सरा सुजान ।
परगट देखहि नैन यह, गुपुत जो पूजहि आन ॥
अति सरूप चित्रावलि बारी । जनु बिधिनै कर चित्र सँवारी ॥
चित्रहिं कहाँ जोति छबि ओती । वह सजीव यह बिनु जिउ जोती ॥
चित्र अबोल होइ जनु गूँगा । बोहिक बोल जस मानिक मूँगा ॥
चित्र कटाच्छ भाव बिनु नैना । बोहि क नैन सब मोहन सैना ॥
चित्र अडोल न डोल डोलावा । बोहि गौनत जनु हस सोहावा ॥
सायक बरुनि भौह धनु ताना । सौंरत जाहि लागु उर बाना ॥
चद बदन तन चपक सारी । अलि सँग फिरहिं जानि फुलवारी ॥
काहि लगावों उपम तेहि, अच्छुर पूज न छाँहि ।
सुर नर मुनि गन पचि मरहिं, दरसन पावहिं नाहिं ॥
बदन जोति केहि उपमा लावौ । ससिहर पटतर देत लजावौ ॥
ससि कलक पुनि खडित होई । है निकलक सँपूरन सोई ॥
ससि बदी जब दूजिक दीसा । ओहि बदी नित देहिं असीसा ॥
जो मुख खोलि करै उजियारा । नषत छपाहिं होइ ससि तारा ॥

नैन कुरंग कहे नहिं पारौं। खंजन मीन ताहि पर वारौं॥
तीन रंग जा महँ नित लहिए। तेहि कुरंग कहुँ कैसे कहिये॥
जाकहँ नैन एको छन हेरा। सो बिष बान क भयौ अहेरा॥
ऐसन चित्र अहेरिया, मारि न खोज करेइ।
जेहि उर लागे बान सो, रहसि रहसि जिउ देइ॥
औ तेहि संग अनेग सहेली। सबै सरूप अनूप नवेली॥
उम्हक रूप विधि अपुरुब कीन्हा। करि करि चित्र जान् जिउ दीन्हा॥
कोउ कुमुदिनि कोउ पंकज कली। एकते एक चाहे अति भली॥
अबहीं सबै कली मुँह मूँदी। भौंर चरन ते बेलिन खूँदी॥
सब चित्रिन औ पदुमिनि जाती। सेवा करत रहत दिन राती॥
अग्या होहि करहिँ वै सोई। मेटि न सकैं रजायसु कोई॥
औ जिहि ठाँव करहिँ बिसरामा। जपत रहहिँ चित्रावलि नामा॥
निसि बासर ठाढ़ी रहहिँ, लीन्हें आपन साज।
जौ पठवहिं सिष एक कहँ, धाइ करहिँ दस काज॥
पुनि सो चित्र लिखे भल जाना। उनसों जगत न कोऊ सयाना॥
आपन चित्र आपु पै लीखा। और को लिखै जान नहिँ सीखा॥
जगत चितेर रहे पचि हारी। ओकर चित्र न सकैं सँवारी॥
जो कोई आपन चित आनै। अँतरजामी तबहीं जानै॥
आपन चित्र छीन कै लेई। औ तेहिँ देस निकारा देई॥
आपन चित्र जाहि लिख दीन्हा। ते सो घालि हिये मो लीन्हा॥
एहि डर कोऊ न बीसरैं, अह निसि आठो जाम।
लिये रजायसु नित रहहिं, जपत फिरहि सो नाम॥
औ तेहिँ संग निपुंसक जाती। पठवै जहाँ जाहिँ लै पाती॥
गुन बिद्या सब जाना बूझा। निरमल दिष्टि पथ भल सूझा॥
अन्न न खाहिँ पानि नहिं पीयहिं। नाउँ अधार रैनि दिन जीयहिँ॥
काम क्रोध तिसना मन माया। पँच भूत सौ तिन्ह की काया॥
अग्या काज विलँब न लावा। करहि सोइ जेहिँ दोष न पावा॥
सब की बात जनावहिँ जाई। अग्या होई कहहिँ सो आई॥
अग्या बिना पैग जो धरहीं। अनल तेज सिखा लहि जरहीं॥
दूरि रहहिँ तेहिँ गनत नहिँ, निकट रहहिँ ते चारि
रचना सिरजनहार की, नावै पुरुष न नारि॥
हौं तेहि माहँ परेवा नाऊ। सेव करौं चित्रावलि ठाऊँ॥
वह सो गुरू हौं आकर चेला। वहिक नाउ हम मुँदरा मेला॥
वही पंथ मोहि दीन्ह दिखाई। वेहि के वचन सिद्धि मैं पाई॥
औ सुमिरन दीन्ही वोहि केरी। वेहि क नाउँ सुमिरौं हरि फेरी॥

भूख नाहिँ औ नींद पियासा । चित्रिनि सुरति ध्यान घट आसा ॥
भा अग्या करि साज महेसू । दिन दस फिरहुँ देस परदेसू ॥
जौ लगु फिरत होइ नहिँ रोगी । तौ लगि सिद्ध होइ नहिँ जोगी ॥
भसम अंग पग पाँवरी, सीस कलपि करि केस ।
कंथ पहिरि लै दंड कर, देखन निसरयौं देस ॥
सुनत कुँअर जोगी के बैना । उघरे दोऊ हिये के नैना ॥
मन महँ कहेसि साँचु यह साजा । वह सो कौन जा कर उपराजा ॥
जेहिक चित्र अस जिउ लेनिहारा । दुहुँ कस होइहि सिरजनहारा ॥
साजा होई मेटि पुनि जाई । सिभू सरीर न कोऊ मिटाई ॥
जौ न आपु आपहि पहिचाना । आन क पेम कहाँ हुत जाना ॥
जैसे कुबुध जानि कै देवा । बहुत करहिँ पाहन की सेवा ॥
पाहन पूजि सिद्धि किन पाई । से मर सेइ सुआ पछिताई ॥
कस न बूझि खोजों सोई, जेहिक चित्र सब कीन्ह ।
जीउ देई जो चाहई, लेइ जो चाहै लीन्ह ॥
कुँअर कहा अब सुनहु परेवा । मैं तोर सीख मोर तैं देवा ॥
मैं तजि पंथ जात बौराना । तैं गहि बाँह पथ पर आना ॥
बूड़त मोर नाउ मँझ नीरा । तू खेवक होइ लाइसि तीरा ॥
सोअत हौं जो अहा सो जागा । मन तजि चित्र चितेरहिँ लागा ॥
चित्र देखि न चितेरा जाना । बिनु चितेर अब दिष्टि न आना ॥
अब फिरि कहु चित्रावलि बाता । जेहि के रूप आजु मन राता ॥
सुनतहि नाम दूरि भइ दाहा । दहुँ मुख देखत होइहै काहा ॥
मरत जियाए जोइ कहि, फिरि फिरि कहु सो बात ।
सुनिबे कहँ अमिरित कथा, श्रवन भए सब गात ॥
जोगी सँवरि कहै पुनि बाता । वह चित्रावलि जेहि रँगराता ॥
बदन मयंक मलयगिरि अंगा । चंदन बास फिरहि अलि संगा ॥
जो अलि अंग बास वह पाई । सो तजि आन फूल नहिं जाई ॥
बहुतन्ह सिर करवट गहि सारा । हिछा करि लधुकर औतारा ॥
बहुत नाउँ सुनि जोगी भए । मुडु मुँडाइ देसतर गए ॥
ससि सूरज औ नषतन पाँती । बरने होहिँ दिवस औ राती ॥
भूषन सोभ पाव तेहि अंगा । ताते निसि दिन छाड़ न संगा ॥
चाँद न सरवर पावई, रूप न पूजै भानु ।
अब सुनु तन मन कान दै, नख सिख करौ बखानु ॥
प्रथमहिँ कहौं केस की सोभा । पन्नग जनों मलयगिर लोभा ॥
दीरघ बिमल पीठि पर परे । लहर लेहिं विषधर विष भरे ॥
कच अहि डसा जनम नहिं जागा । मंत्र न मानै मूरि न लागा ॥

बिथुरी अलक भुअगिनि कारी। कै जनु अलि लुबुधे फुलवारी ॥
कै जनु बदन तरनि जौ तपा। सिमिटि सुमेरु पाछु तन छुपा ॥
किमि कच बरनौ राजकुमारा। मति न समाइ देखि अँधियारा ॥
मृग मदवास आव तेहि केसा। पौन जाइ लइ देस बिदेसा ॥
सिरजी तब विधि स्यामता, जब जग सिरजै लीन्ह।
ते कच सिरजे सार लै, सेष बाँटि के दीन्ह ॥
सीस सिंगार माँग बिधि कीन्ही। ताते ठाउं माँग पर दीन्ही ॥
सूर किरन करि बालहि धारा। स्याम रैनि कीन्ही दुइ फारा ॥
पथ अकास विकट जग जाना। को न जाइ वोहि पथ भुलाना ॥
तहाँ देखि अलकावरि फाँसा। पथिन्ह परा जीउ कर साँसा ॥
जिउ परतेजि चलहिं तेहि माही। और बाट नहि केहि दिसि जाहीं ॥
बेनी सीस मलयगिरि सीसा। माँग मोति मनि माथे दीसा ॥
सूर समान कीन्ह बिधि दीया। देखि तिमिर कर फाट्यो हीया ॥
स्याम रैनि मह दीप सम, जेहि अँजोर जग होइ।
अछुज भुअगम माँहि बसि, दिया मलीन न होइ ॥
पुनि लिलाट जस दूजि न चदा। दूजि छाडि जग वह कह बंदा ॥
पटतर दूजि होति जौ होती। दूजि माँह पुन्यों कै जोती ॥
भाग भरा अस दिपै लिलारा। तीनहुँ भुवन होइ उजियारा ॥
होइ मयक खीन जेहि रीसा। सो लिलाट कामिनि पहँ दीसा ॥
कुदन तिलक सोभ कस पावा। मनहुँ दुइज माँ जीउ मिलावा ॥
मुकुता पाँति चहूँ दिसि पाई। मानहु मिली किरितिका आई ॥
जाहि लिलाट भाग मनि होई। अस सँजोग सुभ देखै सोई ॥
सुभ सँजोग वहि एक छिन, जा कहँ सनमुख होइ।
जौ जग लागै गरह जिमि, बार न बाँकै कोइ ॥
कुटिल भौंह जानों धनु ताना। इद्रधनुष तेहि देखि लजाना ॥
जानहु काल जगत कहँ कढा। निसि दिन रहै पयच जनु चढा ॥
भौंह फिराइ जाहि तन हेरा। देखत काल होइ तेहि केरा ॥
एही धनुष जुध मनमथ लीता। कै परनाम काम तन जीता ॥
भौंह धनुष लखि इद्र सँकाना। सब जग जीति सरग कहँ ताना ॥
कौन सो बली जो न गै मारा। तिनहुँ लोक एक हुकारा ॥
ऐस धनुष जग और न दूजा। देवतन्ह आइ बाहुबल पूजा ॥
अहिपुर नरपुर जीति कै, सुरपुर जीतो जाइ।
अब दहु कछू न जानिये, का कहँ धरे चढाइ ॥
बाँके नैन तीष अति दोऊ। जगत जाहि सर पूजि न कोऊ
याते कौल मधुप तेहि माँहीं। कहत लजाउ तेउ सर नाहीं ॥

कौंल देखि ससिहर कुम्हिलाने। ए ससि सग सदा बिगसाने ॥
स्याम सेत अति दोऊ सोहाए। खजन जानु सरद रितु आए ॥
कै दुइ मिरिग लरत सिर नीचे। काजर रेख डोर गहि खींचे ॥
दोउ समुद्र जनु उठहि हलोरा। वह महँ चहत जगत सब बोरा ॥
तीछे हेर जाहिँ चषु आछे। चली मीन जनु आगे पाछे ॥
बर कामिनि चषु मीन सम, निमिष हेर तन जाहि।
बहुरि जनम भरि मीन जिमि, पलक न लागै ताहि ॥
बरुनी बान तीख अरु घने। सोई जानु जाहि उर हने ॥
मद सिराय ते भाल सवारे। जाके हने सबै मतवारे ॥
तापर बिष काजर सों बाँधा। सोई मरै जाहि तन सोधा ॥
लाग न बरुने बान जेहि हीया। सो जग माँह अमिरथा जीया ॥
जेते अहैं जीव जग माहीं। साधन जाइ बान सो खाहीं ॥
जगत आइ होइ रहा निसाना। मकु हो सोंह मारि तेहि बाना ॥
गलि गलि हाड रहे जो आई। बैठ जो लागि जाइ तो जाई ॥
एक मूँठ के छाडते, लागे बान अलेख।
जग महँ ऐसन पारधी, दूसर काहु न देख ॥
सुभग सरूप सुरग अमोला। जनु नारँग बरनारि कपोला ॥
ईगुर केसर जानु पीसाए। दोऊ मिलाइ कपोल बनाए ॥
और सो देखि कपोल लुनाई। मती हीन कछु बरनि न जाई ॥
तेहि पर तिल सो देइ अस सोभा। मधुकर जानु पुहुप पर लोभा ॥
कै बिधि चित्र करत कर धरे। करत उरेह बूँद खसि परे ॥
बदन सिगार गाभ जो पावा। रहेउ न दिन पुनि सो न उचावा ॥
वह तिल जाहि दिष्टि तल परा। भयो स्याम तस तिल तिल जरा ॥
नहि चीन्हत कोउ काहु कहँ, जो जग माहि न होनि।
परछाहीं तिल एक की, सब नैनन्ह महँ जोति ॥
किमि बरनौ नासिका सोहाई। नासिक सुनि मति नियर न जाई ॥
खरग धार कहि आवै हाँसी। कौन खरग जेहि उपमा नासी ॥
तिलक फूल कबितन्ह चित धरा। उहौ लजाइ पुहुमि खस परा ॥
इह रुआर पुनि कीर कठोरा। उपम देत मन मान न मोरा ॥
उह सुर मौन जगत उपराई। ससि सूरज जहँ उदै कराई।
तेहि पर हेरि रही मति मोरी। उपमा नहि कोह लावों जोरी ॥
बेसरि जो पहिरै रहसाई। नग कुदन छबि पाउ सोहाई ॥
मुकुता डोलत निरखि मन, सुर नर इहै गुनाहिं।
कहत सुहागिनि नासिका, तिहुं पुर पटतर नाहिं ॥
अधर सुधा निधि बरनि न जाई। बरनत मति रसना पनियाई ॥

छुए न काहु अछूते राखे। प्रेम दिष्टि मुख अजहुँ न चाखे॥
विद्रुम अति कठोर औ फीके। सुरँग मृदुल दुख दायक जीके॥
बिंब अरुन सो सरि न तुलाना। अति लजान बन जाइ लुराना॥
बदन मयक जगत उँजियारा। अमिरित अधर प्रान देनिहारा॥
का बरनौ का मति भइ मोरी। उत्तम अधम लगाएउँ जोरी॥
ससि अमिरित देवतन्ह कै जूठा। जगत जान यह अधर अनूठा॥
लोयन जाहि कटाच्छ सर, मारि प्रान हरि लीन्ह।
अधर बचन तत खिन दोऊ अमिय सींचि जिउ दीन्ह॥
दसन जानु हीरा निरमरे। बदन आनि मुख सपुट धरे॥
इक इक नग दुहुँ जग कर मोला। जो जिय देइ कहै सो खोला॥
पान खात कछु भए उघारे। दिष्टि परे मजुल रतनारे॥
जनु दुइ लर मुकुता रँग भरे। मजन लागि आइ मुँह धरे॥
कै देवतन्ह ससि कीन्ह कियारी। अमिरित सानि बारि अनुसारी॥
दाडिम बीज तहा लै बोए। रखवारे राखे अहि पोए॥
निसि बासर ते निकट रहाहीं। मकु सुक पिक खजन चुनि जाहीं॥
इक दिन बिहँसी रहसि कै, जोति गई जग छाइ।
अबहूँ सौरत वह चमक, चौंधि चौंधे जिय जाइ॥
तेहि भीतर रसना रस भरी। कौल पाँखुरी अमिरित भरी॥
दसन पाँति मँह रही छिपानी। बोलत सो जनु अमिरित बानी॥
बोलत बैन अमी जनु चूआ। सुनत जिये बरधन कर मूआ॥
जे मन अहि कुतल के खाए। बोलि बोलि धन सबै जियाए॥
जाके सवन बचन उन डारा। ताकर बचन जीउ देनिहारा॥
उकतिन बोलत रतन अमोली। आँब चढी जनु कोइल बोली॥
व्याकरनौ जानै सगीता। पिगल अमर पढहि पुनि गीता॥
रहहि रैनि दिन बाद महँ, चित्रिनि चखु औ बैन।
त्यो त्यो रस न जियावई, ज्यों ज्यों मारहिँ नैन॥
आँब सूल सम ठाढ़ी भई। वह आमिल यह अमिरित भई॥
तेहि तर गाड़ अपूरब जोवा। पाक आँब जनु अँगुरी टोवा॥
पाका आँब गात पियराना। वह कुमकुम जनु ईगुर साना॥
चिबुक कूप अति नीर गँभीरा। बिब अधर सँजीव जेहि नीरा॥
अमिरित कुड अगम औगाहा। जो तहँ परा निकास न चाहा॥
ताहि कूप ढिग रहस न जाहीं। बूडन कहँ मुनि लाल कराहीं॥
परहिँ जाइ मन रहइ न देई। कुतल काँट काढि कै लेई॥
नैन पियासे रूप जल, पावत जेहि न अघाहिँ।
कूप चिबुक जो मन परै, बूड़ि बूड़ि रहसाहिँ॥

सिंधुसुता सम स्वन अमोला । जलसुत बचन लागि विधि खोला ॥
जे अमोल नग जगत बखाने । नारि स्रवन मह सबै समाने ॥
ग्यान बात बिनु आन न सुना । सुनत मोति तबही सिर धुना ॥
निसि दिन मुकता इहै गुनाहीँ । खजन झाँकि झाँकि जिमि जाहीँ ॥
कचन खुटिला जा न बखाना । गुरु सिख देइ लागि ससिकाना ॥
राहु जुद्ध कहँ सपरि निसका । दुहुँ कर लीन्हें सेलि मयंका ॥
औ पुनि सोमै खुमी सोहाई । अबही तरिवन चढा न जाई ॥

कलभ दसन खंभिया दोऊ , सोऊ पट तर नाहिँ
एक छिन देखे जनम भरि , खुभी रहै जिउ माहिँ ॥

अब सुनु बरनौ गींव सुहाई । बिधि कर चाक भँवाइ चढाई ॥
अँगुरिन बीच रही जो रेखा । सोइ चीन्ह रेखा तहाँ जो देखा ॥
केलि समै कौतर की रीसा । तत छिन चलो लाइ भुइँ सीसा ॥
नाचत, मोर गींव सर जोवा । तबही सीस पाइ धरि रोवा ॥
सख न सम भा साँझ सँकारा । ताते जहँ तहँ करे पुकारा ॥
तब ही छुरन जान अपछुरा । भूषन लाग न बाँधै छुरा ॥
वोही कठ जानु जिन्ह दीठी । अमिरित चाहि न पूरै मीठी ॥

सोहत हाँस जराउ गर , बदन हेठ निकलक ।
सर न मयक सूर जनु , दुरत राहु के सक ॥

दीरघ बाहु कलाई लोनी । अति सुन्दर जग भई न होनी ॥
दुहु पौनाल सोऊ सर नाहीं । ताते रध कलेजे माहीं ॥
सुभ्र भुजन पर टाँड सोहाई । टाँड तहाँ छबि पाव सवाई ॥
देखि धुनहि गन गभ्रव माथा । एक सो इद्र वज्र पुनि हाथा ॥
देखि सो मजुलि सुभ्र कलाई । को न गयो बनफलै सिघाई ॥
वहि सग देखु जो जुरा हथोरी । कौल पाखुरी ई गुर बोरी ॥
विद्रुम वेलि सो अँगुरी दीसी । वह कठोर यह मुंगफली सी ॥

अँगुरिन मुँदरी जरित की, सोह छला प्रति पोर ।
अमीकरन नग आँखि जनु, गाँठि कनक कै जोर ॥

होत उतग सिहन निरमरे । एक डारि दोइ नारँगि फरे ॥
कनक कटोरा दुइ गुन भरीं । संकर पूजि उलटि जनु धरीं ॥
झीने पट महँ झलकत दीसी । जनु भीतर द्वै कँवल कली सी ॥
मुकुताहल बिच सोभा कैसी । चकवा छवा बिछुरि जनु बैसी ॥
होत उतग दोऊ अति लोने । जनु द्वै बीर छत्रपति होने ॥
अबहीं छत्र सीस नहि छाजू । छत्रिन जहा तहा कर साजू ॥
दान दुद जोरी गुन भरी । दुई जनु डंका उलटि कै धरी ॥

गढपति हयपति दुरदपति, सुनि कुच कथा अकाथ।
होइ भिखारी सब चहहिं, जाइ पसारन हाथ॥
रोमावलि अबहीं उर छीनी। बरनि न सकै दिष्टि मति हीनी॥
सधि सुमेरु लही अहि पोवा। सीतल ठाव पाइ जनु सोवा॥
अमिरित अधर बास सुनि माती। उर जनु चढी पपील क पॉती॥
द्वै नृप सोंव लागि रिस बाढी। रतिपति आनि लीक जनु काढी॥
सौरत रोमावली सोहाई। हेवर जाइ दरलि सो खाई॥
पाहन हिए जोरि वहि दीसी। होइ लीक वह पाहन कीसी॥
नींद न परी जनम भरि जागा। जिन्ह नैनन्ह होइ रही सरागा॥
खैंची लीक हदीस की, विधिना हिए विचार।
तिहुँपुर रोमावलि सरी, आन न दूजी नार॥
नाभि कुड पुनि अति गहिराई। जब चित चढै बूड़ि जिउ जाई॥
सिधु भौर जह पानि फिरावा। तह परि जनम निकास न पावा॥
बिगसत पकज कली सोहाई। अजहूँ भौर बास नहि पाई॥
छीर सिधु मथनी जब काढी। नाभि भौर आही जह ठाढी॥
नैनू ते कोमल सो ठाऊ। जीभ कठोर लेउ का नाऊ॥
रोमावलि सोभा तेहि पासा। नैनू ते जनु बारि बिकासा॥
जासौ ग्यान हाथ मा हीना। जनमत धाइ नार किमि छीना॥
नारि पेट जेहि अत नहि, बारिधि गहिर गॅभीर।
नाभिकुड मन जो परै, बहुरि न निकसे तीर॥
पातर पेट कहै का कोई। जनु बाधी ईगुर की लोई॥
मनहु महाउर दूध सौ पागा। सतत रहै पीठि सौ लागा॥
छीर न पियै अतिहि सुकुवारा। कै तबोल कै फूल अधारा॥
बिनु रस पान आन नहि खाई। सोऊ बिकल करै अधिकाई॥
तेहि तर त्रिबली अति सुख देई। गढ़ी बिधातै काम पसेई॥
सोभित तीनौ रेख सोहाई। तीन भुवन नहिं उपमा पाई॥
सिसुता जानि तरुनता मिली। तीनौ रेख खाचि कै चली॥
सिरजत भार नितब के, मिलत न कीन्ह सॅबधि।
मनु कटि राखे बाधि के, त्रिवली बधन वधि॥
अति सुकुवारि लक पुनि छीनी। दिष्टि न परै बारहु तब खीनी॥
देखत सकुचै देखनहारा। टूटि न परै दिष्टि कै भारा॥
काम कला दुइ साचै भरी। सकत सोहाग जोरि जनु धरी॥
बिधिन तोरि जोरि पुनि लीन्हे। ताते नाउ निगम कटि कीन्हे॥
अपने थल भूखे केहरी। कोऊ कहै कटि तिन्ह की हरी॥

देखि लंक भृंगी कटि टूटी। भँवति फिरै जनु संपति लूटी॥
तहँ सोहै किंकिनि कटि कसी। काछे जनु आहै उरबसी॥
सोभित किंकिन निकट कटि, मान उपम जी आइ।
हंस पाँति तजि मान सर, परवत बैठे जाइ॥
सुभ्र नितंब नितंबनि केरे। गए हेराइ सोई जनु हेरे॥
जनु संगम दुइ परबत अहहीं। एक बार के बाँधे रहहीं॥
तेहि पर कटि सोभित निरभरी। जनु सिंहिनि गिरि ऊपर धरी॥
दुइ गिरि सम दोउ मगु जह नाहीं। चित के चरन चढ़त बिछलाहीं॥
मति नितंब बरनत झिझकाई। मति की दिष्टि न आगे जाई॥
परगट सो कवि कीन्ह बखाना। गुपत सो अंतरजामी जाना॥
जहाँ जात मन पिंडुरी काँपी। तहँ की बात रही सब झाँपी॥
गुपत जो रचना बिधि रची, परगट नहिं होनिहार।
ग्यान तहाँ नहिं संचरै, जानै सिरजनिहार॥
पुनि जंघा अति सुंदर साजी। जुगल जंघ तिहुं लोक बिराजी॥
केरा खंभ कलभ कर हेरी। जंघ निकट वे दोऊ करेरी॥
अति सुंदर सम तूल सुहाए। जनु बिधि अपने कर चिकनाए॥
सुरति करत सुख संपति हरी। मन की दिष्टि थलकि तहँ परी॥
गौन समै जनु चमकत चूरा। हंस गयंद गरब धरि चूरा॥
सीस धुनै गज लज्जित भए। हंस मानसर बूड़न गए॥
छवाछीन भूषन छबि हरी। पायल आइ पाय लै परी॥
चकइ जराऊ जेहरी, जेहरि जिउ लै जाइ।
सुर नर हैं झाँझर भए, देखि सो झाँझरि पाइ॥
चरन कँवल पर मन बलि गये। जेहि मगु चलै तहाँ रज भए॥
मकु तेहि पंथ गौन पुन करई। भूलि पाँव इन्ह नैनन धरई॥
तरवा ऊधरेख सुभ वाँची। सुरनर हिये लीक जनु खाँची॥
जेहि जेहि पंथ चरन ते चले। लेते हिये पाय तर मले॥
रकत लाग रह पायन संगा। जानहिं लोग महाउर रंगा॥
चलत चरन भुइँ परै न देही। सुर नर मुनि नैनन पर लेहीं॥
अनवट बिछिया अंगुरिन भरे। मैन सोनार रतन नग जरे॥
जेहि चित्र चित्रावलि चरन, चित्र किये बिधि आनि।
ते चषु मगु बाहर कियो, हिये सरोवर पानि॥
वह चित्रावलि आहै सोई। तीन लोक बंदै सब कोई॥
सुर पुर सबै ध्यान ओहि धरहीं। अहिपुर सबै सेव तेहि करहीं॥
मृतुमंडल जो देखा हेरी। घर घर चलै बात तेहि केरी॥
पंछी वहि लगि फिरहिं उदासा। जल के सुत ओहि नाउ पियासा॥

परवत जपहिं मौन होइ नाऊं । आसन मारि बैठि एक ठाऊं ।
पुहुमी दहु जो सरग लहु बढी । सेवा करतहि एक पग ठाढ़ी ॥
जानि बूझिल जो ताहि बिसारा । सो मनु जियतहि मरा अडार ॥
अति सुरूप चित्रावली, रवि ससि सर न करेइ ।
धन सो पुरुष औ धन हिया, ओहि कै पथ जिउ देई ॥
भए सुनत चित्रावलि बरना । कुअर नैन परबत के झरना ॥
गयो चेत चित रहयो न ग्याना । जनु एहि सागर लच्छ हेराना ॥
माथें चढी लहर जनु आई । बिसम्हरि परा पुहुमि मुरझाई ॥
गहि जोगी पुनि कुअर उठावा । खेह झारि सन्मुख बैठावा ॥
कहेसि कुअर कस भए अचेता । बैठु सम्हारि हिये करु चेता ॥
एकौ बात कहै नहि पूछी । जनु गा जीउ देह भर छूछी ॥
मूदे नैन सास पुनि लेई । सुनै न कछू उतर नहिं देई ॥
प्रेम मत्र जोगी कहै, कुअर स्रवन मह तत्व ।
सुनत नाउ चित्रावली, निजन गयौ विष सब्ब ॥
जबहि कुंअर जागा पुनि सोई । गहिसि पाउ जोगी कर रोई ॥
सो तुम रूप बखाना देवा । भइ मनसा होइ उडउ परेवा ॥
पुनि मन मंह अस होइ गियाना । जाउ कहा जो पथ न जाना ॥
कहु सो केहि दिसि नगर अनूपा । जहा बसै वह नारि सुरूपा ॥
चलौं न करौं बिलँब एक घरी । निहफल जाइ घरी जो टरी ॥
और न मोरे हियें विचारा । सीस मोर औ चरन तुम्हारा ॥
किन्चित रैनि जाइ तह ताईं । चरन लाइ लै चलहु गोसाईं ॥
लोचन रहै चकोर होइ, हिया सकल उनमाद ।
मकु ससि मुख चित्रावली, देखौं तुव परसाद ॥
कहेसि कुँअर यह पथ दुहेला । अस जनि जानु हसी औ खेला ॥
अगम पहार विषम गढ घाटी । पखि न जाइ चढै नहि चोंटी ॥
खोह घराट जाइ नहिं लाघी । देखि पतार काँपि नर जाघी ॥
जाइ सोंई जो जिउ पर तेजा । सार पासुली लोइ करेजा ॥
तैं अबहीं घट आप न बूझा । बार देखि पिछवार न सूझा ॥
बैठे देइ न सेंघ पिछवारे । मूसहि तसकर घर अधियारे ॥
तैं दै बार रहा गहि कुजी । रही न एकौ घर मह पूजी ॥
निसिबासर सोवहि परा, जागेसि नहि पल आध ।
घर न सभारसि आपना, का लेवे एहि साध ॥
एहि पगु केर करै जो साधा । चलत निचिंत न होइ पल आधा ॥
चाहै चरन चुभै जो काटा । चलै बराइ मारग नहि छाटा ॥
जो पल एक कोऊ विलमावै । साथ जाइ पुनि पंथ न पावै ॥

एहि मगु माह चारि पुनि देसा । जस जस देस करै तस भेसा ॥
चारिहुँ देस नगर है चारी । पथ जाइ तेहि नगर मँझारी ॥
चारिहु नगर चारि पुनि कोटा । रहहिं छिपे एक एक के ओटा ॥
जो कोऊ जान न चार बिचारा । बीचहि मार लेहि बटमारा ॥
चारि देस बिच पंथ सों, अब सुनु राजकुमार ।
बेगर बेगर बरन गुन, जस कछु तह व्यवहार ॥
प्रथम भोगपुर नग्र सोहाया । भोग बिलास पाउ जह काया ॥
दुइ दुआर कर कोट संवारा । आवागमन यही दुइ बारा ॥
पुनि दूनहुं दिसि अपुरुब हाटा । अनबन भाति पटन सब पाटा ॥
जो बछु चाहिय सबै बिकाई । मिरतक देखि जीभ ललचाई ॥
कहूं पंच अमिरित जेवनारा । कहूं सुगधि करै महकारा ॥
कहूं नाच कहु कथा अनूपा । कहु मिरदुल अति ससिहर रूपा ॥
इंद्रपुरी जनु चहु दिसि छाई । जो आवा सो रहा लुभाई ॥
घर घर मोहन जानहीं, पथहि बस कै लेहि ॥
माया रूप देखाइ कै, आगे चलै न देहि ॥
बसै सोई ओहि नगर मँझारी । लेखा जानि होइ बेपारी ॥
सूधे मारग आवै जाई । माटी लेखैं बिषै पराई ॥
सौं देखै जेहि दोष न पावा । सुनै सोई जो पँडित सुनावा ॥
मिलि कै पाच देहि जेउनारी । भुगतै ताहि सोइ बैपारी ॥
आपन अस मागि कै लेई । राज अस बिनु मागे देई ॥
पाच जूनि कै राज जो हारू । करत रहै जस जग व्यवहारू ॥
धरै छोह चित नेह सौं, रिंस की ठौर रिसाइ ।
ऐसी चलन चलावहि, तेहि भल पाच कहाइ ॥
पथी जेहि आगे है जाना । सो व्यवहार कहौ करु आना ॥
अध होइ तस मूदै नैना । बहिर होइ तस सुनै न बैना ॥
रसना मौन होइ नहिं भाषा । षट रस अमी न पावै चाषा ॥
मूदै नास सास नहिं आवै । काम क्रोध कै छार जरावै ॥
दुष्ट के हनत न पाछे टरई । पगु जो उठाइ आगु मन धरई ॥
बिलँब न लावै मन जग मंदा । निसरै तोरि मौन जिमि फदा ॥
पथी जो ओहि बार लहु जाई । आपु केवार उघारि कै जाई ॥
चित रहसत पट ऊघरत, मिटै नैन अधियार ।
जैसे बीतै स्याम निसि, होइ बिमल मिनुसार ॥
आगे गोरखपुर भल देसू । निबहै सोई जो गोरख भेसू ॥
जह तह मढी गुफा बहु अहहीं । जोगी जती सनासी रहहीं ॥
चारिहु ओर जाप नित होई । चरचा आन करै नहिं कोई ॥

कोउ दुहुँ दिसि डोलै बिकरारा। कोऊ बैठि रह आसन मारा ॥
काहू पचअगिन तप सारा। कोऊ लटकइ रूखन डारा ॥
कोऊ बैठि धूम तन डाढे। कोऊ बिपरीत रहै होइ ढाढे ॥
फल उठि खाहि पियहि चलि पानी। जाचहि एक बिधाता दानी ॥
परम सब्द गुरु देइ तह, जेहि चेला सिर भाग।
नित जेहिं ड्योढीं लावई, रहै सो ड्योढी लाग ॥
ताहि देस बिच आहि सो पथा। चलै सोई जो पहिरै कथा ॥
तेल नाहि सिर जटा बरावै। रजक नासि जे बसन रगावै ॥
भसम देह पग पांवरि होई। एहि मग बिकट चलै पै सोई ॥
मेखलि सिगी चक्र अधारी। जो गौटा रुद्राष घँधारी ॥
भल मँद बसैं तहा इक भेसा। होइ बिचार न रॉक नरेसा ॥
एही भेष सिद्ध बहु अहहीं। एही भेष बहुत ठग रहहीं ॥
एही भेष सों बहु ठग आए। एही भेष सों बहुत ठगाए ॥
जो भूले एहि भेष जग, खुले न तेहि हिय आछ।
आगे चलै न तह रहैं, वरु फिरि आवैं पाछ ॥
जो कोउ आगे चाहै चला। परगट देह भेष सो भला ॥
पै अंतर सब जानै धधा। भेप पत्याइ सोई जग अधा ॥
घटही माहि भेष सो लेखै। हिय के लोचन मारग देखै ॥
काया कथा ध्यान अधारी। सींगो सबद जगत धधारी ॥
लोचन चक्र सुमिरनी सासा। माया जारि भस्म कै नासा ॥
हिय जो गोट मनसा पावरी। प्रेम बार लै फिरि भावरी ॥
परगट भेष तहा दइ डारै। आगे चलै सो पवरि उघारै ॥
रहहि नैन जो जोति बिनु, खीपक पहिल मिलानु।
पुनि ससिहर सम दूसरे, होहि तीसरे भानु ॥
आगे नेह नगर भल देसू। राक होइ जह जाइ नरेसू ॥
भूलै देखि देस की सोभा। जह वह देखतही चित लोभा ॥
जाइ तहहि जह कोइ लै जाई। ऊच खाल सम एक देखाई ॥
खाइ सोई जो कोई खियावै। बिष अमिरित एक स्वाद जनावै ॥
भल औ मद दोऊ एक लेखा। दुइ न जान सब एक कै देखा ॥
मारि मारि जिय राख न कोऊ। रहस न होउ किए कछु छोऊ ॥
उतर न देइ जो कोउ कछु कहा। ऐसे रहै तहा सो रहा ॥
पंथ नाहि पुनि पथ सो, ताहि देस निज पथ ॥
बिनु गुरु कोऊ न जानई, औ पुनि पढ़ै गरथ ॥
आगे पथ चलै पै सोई। जाके सग कछु भार न होई ॥
डारै कंथा चक्र धँधारी। करै मया जिय काया सारी ॥

ऐसन जिय जेहि लोभ न होई। रूपनगर मगु देखै सोई॥
हेरत तहा पथ नहि पावा। हेरन चहै जो आपु हेरावा॥
पथिक तहा जो जाइ भुलाना। बिमल पथ तेहीं पहिचाना॥
आवहि रूपनगर के लोगा। परषत फिरहि कौन तेहि जोगा॥
जो तेहि जोग लषहि जिय माही। आगे होइ नगर लै जाहीं॥
रूप भेष उतहिँक सजहिं, औ सिखवहि सब भाव।
ऐस न जानहिं तेहि कोऊ, आन कहूँ ते आव॥
रूप नगर अति आह सोहावा; जेहि सिर भाग सो देखै पावा॥
अतिहि डेरावन अतिहि सो ऊँचा। कोटि माह कोउ एक पहूँचा॥
बहुतक कीन्ह जोगि कर भेसा। चले छाडि घर मन ओहि देसा॥
तैं सुखिया सुख कौतुक राता। का जानसि दुख पथ कि बाता॥
भोजन बिनु मुख जाइ सुखाई। पानी बाजु कँवल कुम्हिलाई॥
छीन बसन जेहि अँग न सोहाई। कथा कैसे सकै उठाई॥
सौरि माह जिन बनउर टोवा। कुस साथरी सो कैसें सोवा॥
बसन अपूरब पहिरि तन, लावहु मोद सुबास।
अहहि नारि अछरी सरस, मानहु भोग बिलास॥

अजगर खंड

कुअर अँधेरे हा जह परा। बिधिना कह बिनवै भाखरा ॥
ए गुसाइ जगरच्छ बिधाता। तोहि बिनु और न दुख सघाता
अह निसि जगत कीन्ह सब तोरा। तै सिरजा अँधियार अँजोरा ॥
तहीं सरग ससि सूर बनावा। तहीं कीन्ह दधि अत न पावा ॥
तहीं सकल गिरि मेरु सँवारा। तैं सब कीन्ह नदी औ नारा ॥
तुहीं पताल कीन्ह बलि बासू। तै पति और सबै तोर दासू ॥
तुहीं सोई जो सब जग पूजा। सुमिरौ काहि और नहिं दूजा ॥
तै सुख दायक दुहूं जग, दुख भजन जेहि नाउं।
तही बिछोवसि दुइ मिलै, तहीं करसि एक ठाउ ॥
मै जबहीं जिय सौरा तोही। तहीं मया करि काढे मोंही ॥
कूप माहि जे सुमिरन साजा। काढि किये तै देस के राजा ॥
प्रेम बिछोह अध जेहि कीन्हे। बहुरि मिलाइ जोति तेहि दीन्हे ॥
अगिन जरत जे तहीं सँभारा। किये ताहि फुलवारि अँगारा ॥
मैं अब परा आइ तेहि ठाऊं। अपनी सकति निकास न पाऊ ॥
मकु तैं होइ दयाल बिधाता। तोरे निकट कहा यह बाता ॥
मैं जस हा तस कीन्ह गोसाई। अब तू कर जस चाहसि साई ॥
हेरु गोसाई आप कह, मोरे का जनि हेरु।
आपन नाउ दयाल गुनि, हो दयाल एहि बेरु ॥
जहा कुअर चित सुमिरन ठाना। अजगर आइ एक नियराना ॥
ओदर खोह जाहि नहि अतू। लीलै हस्ति और को जतू ॥
सिखर डाग तम आवै चला। बन बीहर सब का दलमला ॥
औ तह पाइस मानुष बासा। खोह लाइ मुख ऊंचिस सासा ॥
पाहन रूख डार भरमना। सास सग पुनि कुअर समाना ॥
गयो कुअरे पुनि साँसहि लाग। उठी खात ओहि ओदर आगी ॥
परयो उलटि भा उदर दुहेला। डारिसि उगिलि जेत हुत लीला ॥
भागा अजगर जीउ लै, परा कुअर बिसँभार।
जे तापे बिरहा अगिन, तेहिं को निजवै पार ॥
कुअर सभारि बैठु पुनि तहा। नैन न जोति जाइ उठि कहां ॥
टोइ टोइ तह ठाव सवारा। टारे पाहन औ द्रुम डारा ॥
बनमानुष एक तेहि बन अहा। कुअर चरित सब देखत रहा ॥
कहेसि जाहि विधि चहै न मारा। अस अहि ओदरहु ते निसारा ॥

जौ जम सों बिधि जीउ उबारा । रहे न नैन जोति बिष झारा ॥
कौन जिअन जो नैन न जोती । सोत न लहै पानि बिनु मोती ॥
हाथ पाँव बर बुधि सब आही । एक बिनु नैन करै का काही ॥
मान न बातैं इमि करै, जौ लहु घट महँ पौन ॥
बिधिना एतना राखु थिर, नैन बैन औ सौन ॥
बिधि तेहि हिये दया उपजाई । नियरे होइ पुनि देखेसि आई ॥
देखि रूप मन किहिसि बिचारी । यह सुरपुर हुत दियेॅ अँडारी ॥
जग न होइ अस कोई मानवा । निहचै यह गन गध्रव छवा ॥
अब पूछौ एहि की सब बाता । कौन जाति कस लीन्ह बिधाता ॥
केहि अभाग के दीन्ह सरापा । अस कारन दहु भौ केहि पापा ॥
कहेसि रे अध विधाताद्रोही । कहु सो सत सत पूछौं तोही ॥
जो सतसग साथ लष गोती । हियैं सत्त लोचन सिर जोती ॥
सती मरै जो सत चढ़ै, सत्त सहस दस आउ ।
तन मन धन बरु जीउ किन, जाउ सत्त जनि जाउ ॥
सत्य सपत दै पूछौ तोका । का तोर जाति जन्म केहि लोका ॥
का तोर सरग देव औतारा । इंद्र सराप लहे महि डारा ॥
कै रे जनम बल बासुकि देसा । कै तपि मही आइ परवेसा ॥
केहि गुन एकति इहा तैं आवा । मानुष इहा न आवै पावा ॥
जो मानुष तौ गुन कहु मोहीं । जेहि ते साँप न निजवै तोहीं ॥
कै तै जनम अध चखु पाए । कै अबहीं भौ अहि के खाए ॥
देखौ सब मानुष कै भावा । कहु सत इहा कौन लै आवा ॥
देखत लोना रूप तोर, छोह उठै जिय मोहिं ।
कहेसि सत्त सत पूछौ, सपथ सिंभु दै तोहिं ॥

———

हस्ती खंड

बीते चलत पाख दुइ चारी। परा दिष्टि एक कुंजर भारी ॥
ऊँच सीस जनु मेरु देखावा। सूँड़ जानु अजगर लरकावा ॥
तरुवर जनु चबाइ दुइ दाँता। डारत आउ खेह मदमाता।
धावत जाइ पुहुमि जनु धँसी। आवै पीठ सरग सों खसी ॥
भागहिं और हस्ति मद बासा। कुँअर देखि जिय भयो तरासा ॥
कहेसि मीचु अब पहुँची आई। एहि आगे कहँ जाब पराई ॥
अस्त्र नाहि जो सम्मुख धाऊँ। मारौ एहि जैपत्र जौ पाऊँ ॥

जनम अकारथ जगत भा, गई अमिरथा आउ।
चित्रावलि के दरस कर, रहा हिएँ पछताउ ॥

अस्त्र न जो सनमुख होइ लरौं। जो निजु मरन भागि का मरौं ॥
कुंजर धाइ कुँअर पर परा। रहा ठाढ ही नेक न डरा ॥
धाइ लपेटि सूँड सों लीन्हा। चाहेसि मूड़ डाढ तर दीन्हा।
कुँअर हिए विधि सँवरा तहा। जो विधि केर मीचु तेहि कहा ॥
ततखन राजपछि एक आवा। परबत डोल जो डैन डोलावा ॥
ओहि हस्ती पर टूटा आई। गहि ले उड़ा सरग कहँ जाई ॥
सूँड़ समेटि जो कुंजर रहा। कुँअर न छूट डरन्ह सुठि गहा ॥

उड़ा जाय अंतरिख महँ, दीखै जैस पहार ॥
घरी चार मँह लै गयो, सात सुमुदर पार ॥

बारिध तीर जहा हुत रेतू। परा तहा छुटि कुँअर अचेतू ॥
भरि गये सीस देह सब खेहा। जेहि तन नेहा गति देहि एहा ॥
जेहि के हिए बस प्रान पियारा। सतत देह चढावै छारा ॥
जिमि जिमि छार देह पर चढा। तिमि तिमि रूप मुकुर जिमि बढा ॥
छार चढावैं बहु गुनि जोगी। छार मरम का जानै भोगी ॥
मानुस देह छार हुत कीन्हा। छार बुद्धि जिन छार न चीन्हा ॥
कवन जनम केहि तप करतारा। मूँठी छार अमित बिस्तारा ॥

देखि बड़ाई छार को, बसेउ आइ करतार।
छारहि ते कीन्हेसि सबै, अन्त कीन्ह पुनि छार ॥

पहर एक गहि उठा जो चेती। देखा परा समुँद की रेती ॥
ना सो हस्ति जेहि के बस अहा। ना सो पछि जो कुँजर गहा ॥
सौंरिस हिए विधाता सोई। जेहि के करत खेल सब होई ॥
ऐ गुसाइ तै दुहुँ जुग राजा। ए सब चरित तोहि पै छाजा ॥

जियतेहि मारि मिलावसि छारा। चहसि तो देखि फेरि औतारा ॥
गिरि परबत कै पानि बहावसि। पानिहि साजि सुमेरु देखावसि ॥
छत्रिन अछत रॉक सम करई। चहइ तु छत्र रॉक सिर धरई ॥
भंजन गठन समस्त तू, और न दूजा कोई।
तही अहा अरु है तही, औ पुनि आगे होइ ॥
कुँअर संवरि चित्रावलि नेहा। उठि के चला झारि तन खेहा ॥
गिरि परवत औ कानन घना। प्रेम प्रसाद न लेखे घना ॥
निडर जाहि तेहि बनखँड माहीं। जम सौ बाच मीच अब नाहीं ॥
बीता चलत मास एक सारा। बन ओरान औ भा उजियारा ॥
रहसा सिये देस जब पावा। दिष्टि परा एक नगर सोहावा ॥
कहेसि जाउ अब नगर मॅझारी। मकु मिलि जाय कोऊ बैपारी ॥
पूछि लेहुँ तेहि नगर की बाटा। चित बिकान है जेहि की हाटा ॥
देखेसि पुनि फुलवारि एक, फूले फूल अमोल।
अलि गुजारहि जहाँ तहँ, करहिँ मजोर कलोल ॥
देखि अपूरब ठाउँ सोहाई। कुँअर तहा छिनु बैठेउ जाई ॥
सपति कुसुम देखि चित लावा। लोचन जरे निहारि सिरावा ॥
जूही फूल दिष्टि भरि हेरा। लखै भाव चित्रावलि केरा ॥
देखि गुलाल अधर चित चढा। दारिम दसन रहसि हिय बढा ॥
चपक मॉहि सरीर की शोभा। नारगि लखि उरोज मन लोभा ॥
अली माल फूलन पर हेरी। होइ सुरति अलकावलि केरी ॥
गीव मजोरि देखि मन आवा। लोचन खजन आइ देखावा ॥
जाहि होइ चित की लगनि, मूरख सों सो दूरि।
जान सुजान चहूं दिसि, वोहि रहा भरि पूरि ॥

चित्रावली बिरह खंड

चित्रावलि चित भएउ उदासा । पिउ न गए दै अवधि की आसा ॥
बिरह समुँद अति अगम अपारा । बाज अधार बूड मँझ धारा ॥
चहुँ दिसि हेरहुँ हित कोउ नाहीं । बूडत काह उँचावै बाहीं ॥
निसि दिन बरै अगिन की ज्वाला । दुरगा मँदिल भयो है बाला ॥
बुझै न लूम सगर लहु बाढा । पथी गयो लाइ हिय डाढा ॥
जोगी सुरति रहै चखु माहीं । ज्यों जल महँ दीपक परछाहीं ॥
झलझल जोति होइ उजियारा । पानी पौन बुझाव न पारा ॥
बिरह अगिन उर महँ बरै, एहि तन जानै सोइ ।
सुलगै काठ विलूत ज्यों, धुआँ न परगट होइ ॥
एक दिन कहिसि कि ऐ रँगमाती । करिया भयो रूप रगराती ॥
रूप रग सब लै गा जोगी । लोग कुटुँब जानै यह रोगी ॥
जोगी गयो छाड़ि तजि माया । भोर कि धुई भई मम काया ॥
जोगी करत कहा दहुँ फेरी । आसन परी छार की ढेरी ॥
बिरह पवन जो करै झँकोरा । बिथुरे छार न कोऊ बटोरा ॥
जोबन गज अपसर मद कीन्हें । अब न रहै अँधियारी दीन्हें ॥
निसि बासर तन कानन गाहा । जाकी साल हिये तेहि चाहा ॥
जोबन सखी मतग गज, तौ लहुँ लाग गुहार ।
जौलहुँ अपसर होइ कै, सीस न डारेसि छार ॥
सुनि रँगमती कहा सुनु बारी । जोबन मैगल मद दिन चारी ॥
अपसर होइ देइ नहि कोई । जौ तिय आपु महाउत होई ॥
अकुस सकुच गहै कर नारी । दै आँखिन्ह घूँघुट अँधियारी ॥
औ कुलकानि महादिढ अदू । निसि दिन राखै मेलि के फदू ॥
जौ हठि कै अरि पाँव निकारा । हटक बुद्धि चरचा गडदारा ॥
एह ससार रीति अस अहई । जो जेहि लाग दुःख जिय सहई ॥
जो तजि ठाउँ सकै नहिं जाई । आपुहि तहाँ मिले सो जाई ॥
आजु बदन तोर कौल सम, औरै रग सुभाउ ।
सब तन लागै मधुप पुनि, मकु कोउ चाह सुनाउ ॥
एहिं महँ सखी एक हितकारी । आई हँसति भई रतनारी ॥
कहिसि कुँअरि सुनु बचन सुहाये । गये बिदेस नपुसक आये ॥
बदन अरुन हिय हुलसत अहहीं । जानहुँ बचन कछुक सुभ कहहीं ॥
सुनतहि चलि धाई बरनारी । गिरी रही पै सखिन्ह सँभारी ॥

जोगी आइ मनावत नाथा । दरस पाइ भुइ लायउ माथा ॥
कहिन कि हम पुहमी सब धाए । चित्र सरूप चीन्हि अब आए ॥
सुनि रहसी चित्रावलि हीया । चित्रहि जानु फेरि रग दीया ॥
हिय हुलास बिहसे अधर, औ कपोल रँग होइ ।
पुनि उपजै उर धक धकी, होइ न औरै कोइ ॥
पूछिसि कौन रूप सो देखा । केहि दिन कौन भाँति केहि लेखा ॥
जोगिनि रहसि रहसि जस जानी । आदि अन्त लहुँ कथा बखानी ॥
सुनि चित्रावलि हिय सतोखा । निहचै जानि गयो जिय धोखा ॥
कहिसि कि हौं तुम्ह ऊपर वारी । मोरे दुख बहु भए दुखारी ॥
अब सुख करहु बैठि एहि ठाऊँ । करिहौं सेव जगत जब ताई ॥
मै सब इच्छ तुम्हार पुराई । तुम जग इच्छा पुरवहु जाई ॥
सेवक सेव तजौ जिन कोई । सेवा ठाकुर आपन होई ॥
मान सेव सोइ कीजिये, जासों पति पहिचानु ।
ठाकुर आपन जो भयो, सब जग आपन जानु ॥

कौंलावती गवन खंड

देखि कटक जिमि बादल छाहा । परी हूल सागर गढ माहा ॥
यह अब को जस सोहिल राऊ । कटक साजि भुइँ चापे आऊ ॥
वह हुत कौलावति अनुरागी । एह अब दहुँ आवै केहि लागी ॥
ओ कहँ हुत सुजान सघारा । अब कहँ पाउब तस बरिआरा ॥
सागर मन पुनि चिंता भई । साहस बाँधि मीचु पुनि भई ॥
जहँ तहँ सजग बीर हित बासे । सूर बदन जनु कोल बिगासे ॥
एहि महँ हंस पहूँचा आई । कहिसि करहु अब अनंद बधाई ॥

जो जोगी सोहिल हना, औ राखा तुम प्रान ।
आयो बहुरि नरेस होइ, चलहु करहु सनमान ॥

हंस बचन जब सागर सुना । भा जिअ सोच हिआ महँ गुना ॥
अब लहु कौल आस जल अहा । अब जो राखिय कारन कहा ॥
लोग कुटुम मिलि कै मत ठाना । कौल न काज आउ बिनु भाना ॥
जस बर कै ओहि दीन्ह बिआही । अब बर कै पुनि सौंपहु ताही ॥
दुहिता केर कठिन है भारा । तबहीं पति जो जाइ ससुरारा ॥
जनम पिता माता घर लेई । दुख सुख माथे बिधि लिखि देई ॥
यह बिचारि कै डाँडी फाँदी । गौन जान कौलावति साँदी ॥

समदी गगा गोद गहि, औ कुमुदिनि कंठ लाइ ।
पुनि समदेउ परिवार सब, लोगन आँगन आइ ॥

कौलावति चढि चली बिमाना । जेहि अँबराउ सुरेस सुजाना ॥
सागर साजि कटक पुनि चला । कौल गौन दुख जग कलमला ॥
औ जहँ लहु हुत दायज दीन्हा । सो सब लाइ पुरोहित लीन्हा ॥
सागर आइ सुजानहि भेटा । मुख देखत सब दुख गा मेटा ॥
कंठ लाय हिय सीतल कीन्हा । भुजा जोरि अँकवारी दीन्हा ॥
औ जहँ लहु पर आपन अहे । छुइ छुइ पाँउ दूरि तकि रहे ॥
सागर तब बिनती औधारी । कस घर तजि के उतरेउ बारी ॥

जो राखहु नीरज चरन, सोभ पाउ हम माथ ।
चलउ आर घर जानि कै, कीजै हमहिँ सनाथ ॥

तब सुजान बोला सुनु राऊ । एहि मारग हम लोग बटाऊ ॥
पथिक पंथ जौ छाड़ै कोई । भूलै अंत महा दुख होई ॥
सूध पंथ तजि उत्तर केरा । कौल बचा आएउ एहि फेरा ॥
कौलावति कर बिदा करीजै । अगुआ एक संग पुनि दीजै ॥

तुम परसाद जाउ अब देसा । मकु भेटउ के जियत नरेसा ॥
राय कहा कछु आहि न खाँगा । का राखै जो आपन माँगा ॥
सूख पथ बहु दुख जग जाना । पानी पानी बहुत मिलाना ॥
अज्ञा देहु तो जाइ घर, साजों बोहित साज ।
लीजै सभै लदाय जो, आउ तुम्हारे काज ॥
कुँअर गहे सागर के चरना । कहिसि वेगि कीजै जो करना ॥
सागर राउ पलटि घर आवा । चित्रावलि पहँ कुँअर सिधावा ॥
कहिसि कि सुदरि प्रान पियारी । तोहि बिनु प्रान होइ घट भारी ॥
एही नगर जहवा हौ कहा । पाँच मास पग साँकर रहा ॥
एही नगर हम कहँ दुख बीता । इहा हा कि सोहिल रन जीता ॥
मो कहँ तुम्ह बिनु आन न भावा । वै मोंहि बिरह बहुत दुख पावा ॥
ओहि के दूसर आन नहि, मोहि बिनु एहि ससार ।
तजि आपन घर बार सब, आई कै अभिमार ॥
अब लहुँ रही इहा औडेरी । आजु अवधि पूजी ओहि केरी ॥
जो जेहि कारन तन मन जरई । सो पुनि ताकर चिता करई ॥
सौति जानि जनि होहु दुखारी । वह तुम्हारि जस आज्ञाकारी ॥
सुनि चित्रावलि हिए सताई । नैन दुराइ कहिसि बिलखाई ॥
तुम साई अपने सुख राजा । तिरियहि नाउ सौति सिर गाजा ॥
जो बिधि ससी करावत देई । सहै न तौ अब काह करेई ॥
निसि आयो तहँ कुँअर सुजाना । कौला जहा कीन्ह अस्थाना ॥
कत बचा परतीति पर, सोरह साजि सिंगार ।
बासक-सेजा होइ रही, लाइ नैन दुइ बार ॥
पदुम कोस अलि लीन्ह बसेरा । हिये सोच भइ मालति केरा ।
नीरज लोयन रूप अतिसाए । दिन कर देखि नीर भरि आए ॥
बिहँसि कत कामिनि कठ लाई । बिरह दगधि उर लाइ बुझाई ॥
मनमथ दाव जाव पुनि काँपी । रावन बार लक गहि चाँपी ॥
दीन्हीं चार नखच्छत छाती । फूट सिंधोर सेज भइ राती ॥
होइगा अंग भग नव साता । अति परसेद सिथल भइ गाता ॥
भयो प्रभात गयो उठि साई । कौल पास कुई चलि आई ॥
हँसि हँसि पूछहि रैनिसुख, रहसि करहि परिहास ।
लाजन गोवै कौल मुख, सखियन अधर बिगास ॥
चित्रावलि कहँ बिनु ससि साई । गई रैनि सब गनत तराई ॥
सौति सग सालै जनु काँटा । अग अग लागै जनु चाँटा ॥
सुलगी उरध आगि सन सेजा । औटि होइ जल रकत करेजा ॥
करम करम कै सो निसि गई । पिअ देखत तिअ खडित भई ॥

रही सोइ मिसि बदन छिपाई। नायक सकुचत आनि जगाई ॥
परी चौंकि लागै कर सीरा। दच्छिन नाहिँ नायका धीरा ॥
कहिसि अहिउँ सुद सपने माहीं। कहा जगाइ लीन्ह गहि बाहीं ॥
अहिउँ महा सुखसपन महँ, तुम कर लागे अग।
गए नैन पट उघरि कै, भयो सकल सुख भग ॥
जानहुँ तुम एक सुदरि सगा। मानत अहै केलि रति रगा ॥
मोहि देखि नौ सात बनाए। तजि सो नारि आनि कठ लाए ॥
हिये लागि हिय मोर सिराना। पाएउ अधर अमिय कै पाना ॥
और सकल सुख कहे न जाहीं। उठै आगि सवरत मन माहीं ॥
भई दोहागिन बिकल सरीरा। जनु गिरि गयो हाथ ते हीरा ॥
वह रौवै परि सेज अकेली। हौ हँसि हसि मानों रस केली ॥
मोरे छुरै कुसुम जनु गाथा। वह लगि रहे हाथ सों माथा ॥
सेज अकेली रैन सब, सहेउ सकल उतपात।
चतुर नारि चित्रावली, रस काढै रस बात ॥

सिद्धसमागम खंड

भयो सोर सब नगर मँझारी। करहि बखान सकल नर नारी ॥
सागर गाँव सिद्ध एक आवा। मुख देखत मन इच्छ पुरावा ॥
कुष्टी कया बाँझ सुत पावै। अंधहि चखु दै जग देखरावै ॥
कहै चाह परदेसी केरी। बिछुरेहि आनि मिलावै फेरी ॥
सुनि के धाए सब नर नारी। बार बूढ़ तरुनी औ बारी ॥
जेहि निहचै ते निधि लै आए। निहचै बिना बादि सब धाए ॥
निहचै नग जनि डारो कोई। निहचै सिद्धि परापति होई ॥
निहचै इच्छा सरग हुत, आनि मिटावै दुंद।
जैसे नैन चकोर कह, अमी पियावै चंद ॥
सुना कुँअर पुनि सिद्ध बखाना। अकसमात चित रहस समाना ॥
कहिसि कि भाग जोर समुहाई। तब अस सिद्ध मिलै कोउ आई ॥
करू जाइ मन बच कै सेवा। मकु तो नहि होइ जाइ परेवा ॥
चित्रावलि करि कुसल सुनावै। रूप नगर कर पथ दिखावै ॥
चला कुँअर निहचै यक हाथा। सेवक पाँचन न छोड़हिं साथा ॥
महत गरब दोऊ तहँ त्यागे। मन बच कर्म तिनो सँग लागे ॥
सनमुख आइ दरस जब कीन्हा। वै ओकह वै ओकहँ चीन्हाँ ॥
देखत दुहू आनन्द भा, रहसत आगें आय ॥
परेउ परेवा कुँअर पग, कुँअर परेवा पाय ॥
कहै कुँअर सुनु हनिवँत बीरा। लागु कठु ज्यों सीत समीरा ॥
कहु कुसलात बेगि सिय केरी। निसरत प्रान राखु घट फेरी ॥
हौं जिमि राम भयो बैरागी। नख सिख परी बिरह की आगी ॥
राम सग हुत लछिमन भाई। हौं अकेल दुख पुनि अधिकाई ॥
हनिवँत कहा सीय कुसलाता। राघव बदन सुनत भा राता ॥
औ पुनि बिथा कहिसि ओहि केरी। जेहि दिन ते तुम ओहि ओडेरी ॥
तहँहौं दिवस देखि अकसरी। रावन बिरह नारि से हरी ॥
सीता रावन बस परी, करौ न कोटि उपाइ।
तौ लहु नाहि उधार निजु, जो लहु राम न जाइ ॥
पुनि दीन्हेसि चित्रावलि पाती। खोलि कुँअर लाई लै छाती ॥
सुलगत काठ लागु जनु लूका। दुहूं आगि मिलि उठा भभूका ॥
हिया जरत जो लिहिसि उसासा। धूम बरन होइ गयो अकासा ॥
अमिरित बचन भरी हुत छाती। ता सों अगिन मुख बाँची पाती ॥

पाती पावस सलिता भई। दूनहुँ कँवल दुःख जल मई ॥
आखर मगर गोह घरिआरा। अरथ भँवर परि कठिन निसारा ॥
भँवर अनेक पैठि मन तरा। एक तें निकसि ऐक मँह परा ॥
पाती जनु पावस नदी, मन तकि पार तराइ।
चित्रावलि दुख अगम जल, बूड़ि बूडि तह जाइ ॥
पाती पढी समापति भई। बिरह झकोर कुँअर सुधि गई ॥
हीवर जिमि ग्रीषम रवि जरा। जिउ जनु पात बवडर परा ॥
बर कै उठा चला लै चाहा। पाइ फिरा जैसे उतसाहा ॥
पुनि जो चेत होइ देखा हेरी। पायन परी बचा की बेरी ॥
कहिसि कहौ का दुःख बखानी। जनम सिराइ न कहत कहानी ॥
हौ पछी भूला हुत आवा। जाल मेलि एहि गाँव फँदावा ॥
चार लोभ वैसेउ एहि आडा। अचक आइ खोंचा उर गड़ा ॥
पाँखन लासा प्रेम का, बाचा बधन पाइ।
दै दै मारौ मूड बहु, निकस न केहु उपाइ ॥
अब तोहि मिले भयो सतोखा। आसा मिली गयो जिउ धोखा ॥
करहु उपाइ गवन जेहि होई। मैं आपन बुधि मति सब खोई ॥
चोरी चलै धरम की हानी। परगट चहुं दिसि रोकहिं रानी ॥
सुनि कै बिथा परेवैं कहा। अब दुख सब बीता जित अहा ॥
परगट जाइ सँवारहु कथा। अजन लाइ गुपत चलु पथा ॥
रहसि कुअर मदिर महँ आए। कौलावति कहँ निअर बुलाए ॥
कहेसि सुनहु अब राजदुलारी। हौ परदेसी आदि भिखारी ॥
आउ न हमरे काज यह, राज पाट सुख भोग।
चित्रावलि हियरे बसी, जाकर बिरह बियोग ॥
अब लहु मिला न अगुआ कोई। जेहि परचय ओहि दिस कै होई ॥
अगुआ मिला चल्यों उठि सगा। तुम जनि करहु कौल मन भगा ॥
जौ बिधि आस पुरावै मोरी। तौ मैं चेत करब पुनि तोरी ॥
सुनतहिं गवन धसकि उर गयऊ। कचन अग राग पुनि भयऊ ॥
कहिसि कि ऐ जग जीवन साईं। मोर जिअन तुअ दरसन ताईं ॥
जौ तुम होब विदेसी राजा। इहवा मोर कौन अब काजा ॥
पाछें महा दुःख पुनि कीता। जहवाँ राम तहाँ पुनि सीता ॥
जैसे पनहीं पाव की, तैसे तिया सुभाउ।
पुरुष पथ चलु आपने, पनहीं तजै न पाउ ॥
कहै सुजान सुनहु वर नारी। तुम सयानि औ बूझनिहारी ॥
मेहरिहिं कहैं लोग सब देहरी। धरै असन अस्थिर सोइ मेहरी ॥
औ पुनि घरनि कहै सब कोई। घरहिं सँभारै घरनी सोई ॥

राघव जौ लाई सँग सीता। बिछुरें जनम दुःख सब बीता॥
तुम कछु चित चिंता जनि करहू। जो हम कहा सोई चित धरहू॥
इतना कहि कथा गिवँ डारा। औ पुनि अग चढाएउ छारा॥
लुकअजन लै आँखिन दीन्हा। गा छिपाइ चटेक जनु कीन्हा॥
कौला देखि अचक रही, जनु ठग लाव देखाए।
पुनि लागें बिरहा धका, गिरी पुहुमि मुरछाए॥
देखि सखी सब कीन्ह अदोरा। गहि उठाइ बैठीं लै कोरा॥
सुनि कौलावति मदिर कूका। परी अचल गगा जिय हूका॥
राजा पुनि बिसँभर होइ धावा। नगे पाँव तहाँ चलि आवा॥
देखि अवस्था धिय कर रोवा। दूनहुँ बदन नैन जल धोवा॥
पूछहि बिथा सुनावहिं ईठा। गुर गूँगा कर तीत न मीठा॥
रानी पूछि हारि जब रही। कौल बिथा तब फूलन कही॥
प्रति उत्तर जस दूनहुं बीता। औ सुजान चेटक पुनि कीता॥
आदि अत बहु सखिन सब, एक एक कीन्ह बखान।
सुनत आगि दुहुँ उर परी, औ ओहि पारा प्रान॥
राजकुँअर कर सुनत बिछोहा। धाइ मेलि पुनि राजा रोआ॥
कौलावति दुख दीरघ जानी। उमड़ि चली गगा चखु पानी॥
सखो सहेली पुनि सब रोई। ससि अथई जानहुं सर कोई॥
पर आपन जन परिजन लोगा। सगरे नगर परा सुनि सोगा॥
नर नारी जुबती औ जरा। सब के सीस गाज जनु परा॥
मलि मलि हाथ कहैं सब कोई। अस परजापति आन न होई॥
पहर एक बीता होइ रोरा। कोऊ साँच कोउ झूँठ नीहोरा॥
छमा कराए सब जना, पडितन्ह ज्ञान बुझाइ।
मारे बिरह बयारि के, कौल रही कुम्हिलाइ॥
जोगी खेल जो चेटक खेला। छाड़ि मँदिल होइ चला अकेला॥
आवा बार जहाँ जग रोका। भोर लागि पै काहु न टोका॥
देखि भीर जिय कौतुक होई। सब सगी पै चीन्ह न कोई॥
आदि पथ सो आगे कीता। यह कौतुक जनु सपना बीता॥
बेगिहिं आइ परेवहिं मिला। सगिहि देखि कौल जनु मिला॥
पथ चले तजि सागर गाऊ। जपत चले चित्रावलि नाऊ॥
सूध पथ अगुवा लै आवा। बेगहिं रूपनगर निअरावा॥
कहिसि कि एही ठाँव तुम, बैठि रहहु लौ लाइ।
हौ चित्रावलि निअर होइ, चाह सुनावौं जाइ॥

परेवा बंधन खंड

चेरी एक अहित जो आही। ते छिपाइ हीरा सों कही ॥
एक दिन देखत अहेउ छिपानी। चित्रावलि निकसी कुम्हिलानी ॥
रोइ परेवा सों कछु कहा। पाती दीन्ह पाँव पुनि गहा ॥
गयो परेवा लै कहुँ चीठी। तेहि दिन सौं पुनि परा न डीठी ॥
पेम बाउ जो बाउर करही। सेवक पाय तबहि पति धरही ॥
देखा अहा कहा मैं सोई। अब तुम करौ वो करबै होई ॥
सुनि के हीरा हिए सँकानी। धसकि गयो हिय अजुगुति जानी ॥
केहि अधरम केहि पाप विधि, हस कोखि भा काग।
अपने जान न बिसतुरेउ, चित्र परेउ कहँ दाग ॥
पुनि मन कछु गियान उपराजा। जाँघ उघारें मरिये लाजा ॥
अधिक उदगरी काढी भूरी। राखौं आगि मेलि सिर धूरी ॥
बाट बाट सब लाई भूता। रोकहिं राह परेवा दूता ॥
आवइ कहुं पूछे बिनु नाहीं। आनि बाँधि राखहु बँद माँहीं ॥
जो जहं तहाँ रोकि मगु रहा। आवत पथ परेवा गहा ॥
बाँधि आनिके बद मँह राखा। अचक रहा कछु आव न भाखा ॥
मन मँह कहिसि रहा पछतावा। कुअर न आवन कहन न पावा ॥
वह पुनि रहिह रैनि दिन, मारग लाए आखि।
वह परदेसी बापुरा, मरिहि अकेला झाँखि ॥
रहा सुजान नैन मगु लाई। का दहु कहै परेवा आई ॥
सो पुनि आशा काह करेई। कौन भाँति दरसन पुनि देई ॥
सगर दिवस एहि सोंच गँवावा। साँझ परी न परेवा आवा ॥
ज्यों ज्यों छिन छिन रैनि बिहाई। त्यों त्यों बिरह आगि अधिकाई ॥
लोयन दोऊ रहैं मगु लागे। आहट कह खरन पुनि जागे ॥
सकल रैनि पुनि ऐसेहि बीती। जानु कवल जिय मानु कि पीती ॥
दिनकर उठत उठै हिय आगी। बिरह बयारि सरग गै लागी ॥
कहिसि कि प्रीतम हिया सिर, सूखि गयो जल नेह।
फाट न हिया तडाक जेउ, हस चलेउ तजि देह ॥
जौ वै मो सौं निज मुख फेरा। तौ काया परान केहि केरा ॥
जीउ लेइ जो जम बरिआरा। छुटै प्रान यह दुःख अपारा ॥
जो अब मारौं होइ अपघाती। जगत नसाइ जनम औ जाती ॥
मैं बिरही मोहिं नाँच नचावा। अत सो यह कौतुक देखरावा ॥

अब नाचौं किन परगट होई। ओहि के पथ लै मारौ कोई॥
निसरा कुँअर डारि सिर छारा। चित्रावलि चितरवलि पुकारा॥
कोऊ आहि अस पर उपकारी। आनि देखावै राजकुँआरी॥
खनक देखाउ सरूप मुष, लिहिसि चोर जिय मोर।
यह राजा हत्यार बड़, घर मह राखै चोर॥
सुनि के लोग अचभौ रहा। जोई सुना सोई मुख गहा॥
बिरह उसास अगिन कर ज्वाला। लागत परै हाथ महँ छाला॥
दूरहि हटकि रहे सब कोई। कोउ मुख मूदै नियरे होई॥
होइ गा सगरै नगर चवावा। रूपनगर एक बाउर आवा॥
कहै सोई जो कहा न जाई। मरै लागि एह बुद्धि उपाई॥
राजसभा सब काहू सुना। सुनतहि चित्रसेन सिर धुना॥
बदन सुखान अग दुति छाड़ी। लाजन सीस पुहुमि गा गाडी॥
कहिसि कि जा कह जिय डरत, सवरि सुहात न राज।
सोई आनि हम सिर परी, अचक कहूँ हुत गाज॥

दलगंजन खंड

पुनि सँभारि कै बैसेउ राजा । कहिसि कि भल नाहीं यह काजा ।।
किन भिखारि पर कीन्ह अगासा । जिन अस वचन असुभ परगासा ।।
काढि जिभि जिय मारहु सोई । जो अस सुनै कहै नहिं कोई ।।
राजनीति एक मंत्री अहा । तिन उठि सीस नाइ के कहा ।।
यहि समार वेद अनुमाना । बाउर बचन न कोऊ माना ।।
जाकर बचन नाहिं परतीता । ताके मारे होइ अनीता ।।
लाज लाग जो मारै कोई । अस मारे भल कहै न कोई ।।
गहि जो भिखारी मारई, दुइ घट यहि जग होइ ।
एक हत्या काधे चढै, पुनि भल कहै न कोइ ।।
यह चरचा पुनि मंदिर भई । रानी सुनत सूखि जिय गई ।।
कहिसि कि मुई न ऐसन बारी । जे अपने कुल लाइसि गारी ।।
आपनि जानि बिसारेउ नाहीं । पौन न पाउ छुवै परछाहीं ।।
एहि क रूप कहँ काहु न तेखा । मिटी न सीस करम की रेखा ।।
कुमुद यह भेद परेवा जाना । पूछहुँ बोलि कहै अनुमाना ।।
बहुरि कहिसि यह पावक जरई । ज्यों ज्यों खुदी त्यों उदगरई ।।
बाहर नगर परा जन कूका । कहुँ घर लागि जाइ जनु लूका ।।
तब कुछ हाथ न आवई, होइ आन की आन ।
तातें बरजे सकल जन, परै न चित्रिनि कान
राजे मते महाउत लावा । पान दीन औ कहि समुझावा ।।
जहा कहूँ वह बाउर होई । अस जस दूसर जान न कोई ।।
अपसर गज दलगजन नाऊ । छुलि मकुलाइ देहि तेहि ठाऊ ।।
मकु गज धाइ हनै सो जोगी । बिनु औषधि जिय होइ निरोगी ।।
लै सो पान महाउत लावा । मूरी दइ गज अतिहि मतावा ।।
खोलि गयद ओहि दिसु लावा । कोऊ न जानत गुप्त की कला ।।
जह बाउर सिर डारत छारा । उतरि महाउत भयो निसीरा ।।
छूटि चला मैमत गज, चहुँ दिसि परी पुकार ।
जग लै भाजो जीउ सब कूटा जम बरिआर ।।
भा अदोर मैगल मकुलाना । सुनि चारिहुँ दिसि पारा बसाना ।।
देखि देखि लोग हीय सब कूटा । भा अजुगुत दलगजन छूटा ।।
एहि सों जिअत बचा जो आजू । ताकर नवा जनम कर साजू ।।
आपु आपु कह परजा रा । जहँइ सुना सोजू जिउ लै भाजा ।।

पूँतहिं बाप सँभारे नाहीं । कुटुम्ब लोग केहि लेखे माहीं ॥
जेहि सग अहा बटम हय हाथी । अकसर जाइ न कोई साथी ॥
जाकर अग न छुअत समीरा । गहे आनि अनचीन्ह शरीरा ॥
जेहि तन लाग रैनि दिन, चोआ चन्दन सार ।
तिन्ह तन बन मह सग बिनु, निभरम लागै छार ॥
चले छाड़ि बनिया बैपारी । रही जहा तहा हाट पसारी ॥
छाड़ि चले जित मदिर लोना । जहवा लाग रूप औ सोना ॥
छाड़ि तिया जामों रँग कीन्हा । चले जाँहि जानहुँ अनचीन्हा ॥
छाडहिं अन धन घोर घोरमारा । छाडहि दरब झूठ ससारा ॥
छाड़हिं अगर कुमकुमा चोवा । छाड़हिं रतन जो माल परोवा ॥
छाड़हि कस्तूरी घन सारा । अत आइ तन लागी छारा ॥
सगरे जनम सैाति दुःख पावा । छिन एक मह सब भयेउ परवा ॥
यहि विचार कै मान कवि, महापुरुप जग माहि ।
तामों जोउ न लवहीं अत जो साथी नाहिं ॥
कुँवर देखि हस्ती मतवारा । मरन जानि जित कीन्ह विचारा ॥
जा कह अत मरन जित य माहीं । मीचु देखि सा भागै नाहीं ॥
मोहि एहि मारग निजु जो मरना । भागि रहौं लै का की सरना ॥
बिनु साहस जो तजउ सरीरा । कोउ कहै यह छत्री बीरा ॥
बाजौं आजु भीम की नाईं । मारों जो जय देइ गोसाईं ॥
मारौं तौ लोग कहै यहि देसा । छत्री कहा जोगि के भेसा ॥
पुनि चित्रावलि सुनि यह बाता । जूझि मुवा जोगी रंगराता ॥
बाँधि काछ दृढ होइ रहा, मन महँ मरन विचारि ।
जेहि जिय डाड प्रेम कर, सब जग जीतनि हार ॥
आवत हस्ति चुवत मदगधा । तारत तरुवर धावत कधा ॥
गज बाजी कहँ फरलो कोपा । अगद पाव पुहुमि जस रोपा ॥
कुँअरहि देखि धाइ अस परा । बीर पँवार न पाछे टरा ॥
कधा डारि गयद झुकावा । आपु सजग होइ पाछू आवा ॥
गहि कै पूँछि गयद घुमाइसि । येही भाँति घरी एक लाइसि ॥
जनु चकई गहि डोर फिराइसि । पुहुमि परा गज ताँवरि खाई ॥
मस्तक आइ मूँक तब मारा । सीस फोरि गजमोति निकारा ॥
पुहुमी परा गयद ढहि, जानहुं परा पहार ।
देखि अचभित जग भवो, चहुँदिस परी पुकार ॥
कहैं लोग यह को बरिआरा । जिन गयद दलगजन मारा ॥
यह राजा कर हस्ती सोई । जेहि ते बली आनि नहि होई ॥
यह जोगी भल कीन्ह न काजा । परलै करहि आजु सुनि राजा ॥

राज दुआरे भई पुकारा। जोगि बली दलगजन मारा॥
एहि जोगी कह सिव परसना। नाहिं तो अस परबल को हना॥
मानुष अस बल करै न पारा। निज यह पुहुमि भीम औतारा॥
औरौ हस्ति सभारहु नाहीं। मति कहुँ भटकी सिर कहुँ जाहीं॥
सुनिकै राजा थकि रहा, रुधिर सूखि गा गात।
हियें थरथरी पै टहर, मुख नहिं आवै बात॥

सुजान बंधन खंड

पुनि सँभारि के बोला राजा । साजहु बेगि जूझि कर साजा ॥
हनुमत जस लंका हुत आवा । तस छलि कै यहि काहु पठावा ॥
काहु केर पठावन होई । जिअत न जाइ करहु अब सोई ॥
बाजन बार जूझि कर बाजा । जानहु सरग मेघ दल गाजा ॥
साजे हस्ती सिंघलदीपी । चीता माथ छीट जनु छोपी ॥
साजे तुरै समुद जलगाहा । पखरै राउत पहिरि सिनाहा ॥
राजा सपरि भयो असवारा । चलै बीर चढि तुरी तुखारा ॥
बाजे बाजन जूझि के, धुका दमामा भेरि ।
छेका जोगी कटक लै, मंडल चहुँ दिस फेर ॥
जुझि साज जौ कुअँरहि सूझा । कै बिचार अपने मन बूझा ॥
जाकर दोष करै जो कोई । का बसाइ जो मारै सोई ॥
मोहिं नहिं इहा जूझि सों काजा । मारौ लै पुहमीपति राजा ॥
एह गुन बैस्यो आसन मारी । जैसे निरगुन जोगि भिखारी ॥
सीस नाइ पुहमी तिन हेरा । कटक आउ सब करत करेरा ॥
मंत्री राज-बाग तब गही । सीस नाइ के बिनती कही ॥
जूझि केर जग अस बेवहारा । मारिय सोइ जो गहै हथियारा ॥
जोगी बाँधिय जिअत गहि, मारि न करी अनीत ।
पूछि भेद पुनि लीजिये, को बैरी को मीत ॥
घेरत घेरत आए राँधा । पाँच जने मिलि जोगी बाँधा ॥
अस कै ढील दीन्ह दुइ बाँहीं । जानहुँ एक रती बल नाही ॥
राजा सनमुख जोगी आना । देखि रूप सब कटक भुलाना ॥
पूछै को हसि कह ते आवा । केहि कारन केहि केर पठावा ॥
कुँअर न बोल मौन मुख गहा । सीस नवाइ औंधि चखु रहा ॥
एहि अंतर एक चतुर चितेरा । सागर नगर कीन्ह जे फेरा ॥
कुँअर चित्रलिखि अति मतिमाना । सोहिल जूझि भेद पुनि जाना ॥
आइ पहुँचा राज ढिग, देखि नवाइसि माथ ।
लान्हे चित्र अनेक जे, देस देस के नाथ ॥
वे कुँअरहि देखा पहिचाना । कहिसि कि यह जस कुँअर सुजाना ॥
वह उहवा पुहुमी पति भारी । राज छाडि कत होत भिखारी ॥
पुनि वह अस कुकरम कत करई । जेहि कोइ बाँधि चोर कै धरई ॥
चित्र काढ़ि जो पटतर देखा । सोई कुँअर सुजान सरेखा ॥

कहिसि कि यह पुहुमीपति राजा। पुहुमी रहो सदा ओहि साजा ॥
यह पँवार छत्री बरिआरा। यही हाँकि रन सोहिल मारा ॥
यह पुहुमी पति देस क राजा। अचरज मोंहि देखि यह साजा ॥
कुँअर चित्र लैकर दिहिसि, कहिसि कि अचरज होय।
बाँधा सिंह सियार ज्यों, का कौतुक बिधि कीय ॥
इहाँ नरेस जूझि कहँ आवा। रानी उहाँ अँदोर बढावा ॥
जे मारा दलगजन सोई। तेहि के जूझि आजु कस होई ॥
हिये सोच करि हीरा रानी। पूँछौ बोलि परेवा ज्ञानी ॥
वह पडित औ चतुर परेवा। आमग न चलै जानि पति सेवा ॥
जिन मारा दलगजन हाथी। मकु वह होइ परेवा साथी ॥
खोलि मँगावा सीध परेवा। आइ देखाइसि कन्तहिं सेवा ॥
होइ अकसर लै मत बईठी। कहिसि कहाँ लै गवनेहु चीठी ॥
बिनु पूँछे किछु ना कहै, तै पडित सहदेव।
को जन यह हस्ती हना, कछु जानसि यह भेव ॥
कहिसि कि सदा सोहागिनि रानी। तुम सयान पडित औ ज्ञानी ॥
मैं यह सुफल सुआ सो खोजा। चीन्हहु होइ सो राजा भोजा ॥
जो कहँ भोर सदा सिर नाई। चहै मारि तो कहा बसाई ॥
कथा कहत लागिहि बड़ि बारा। उहाँ न होइ जाइ सघारा ॥
थोर कहौ जौ बिलँब न होई। सोहिल जिन मारा वह सोई ॥
धरनीधर नैपाल भुआरा। एह सुबस औ बीर पँवारा ॥
चित्र माँह चित्रावलि जानी। भा जोगी सुनि रूप कहानी ॥
एहि सो रतन जेहि कीजिये, कुन्दन घालि जराउ।
जनि गहि डारहु समुँद महँ, नतु रहिहै पछुताउ ॥
रानी कहा बेगि चलि जाहू। लगै न पाउ मयकहि राऊ ॥
जाइ जनाउ नरेस रिसाना। जौ लहुँ छुटै पाव नहिं बाना ॥
दसरथ धोखे सरवन मारा। पाइ सराप भयो हत्यारा ॥
आज्ञा मिली परेवा धावा। निमखि माँह राजा पँह आवा ॥
देखिसि राजहि रिसि मन नाही। हाथ चित्र चित चिता माहीं ॥
औ पुनि कुँअर बाँधि कै आना। कीन्ही जल चखु जानि सुजाना ॥
आइ नवाइस पति कहँ माथा। कहिसि हे पुहुमीपति नाथा ॥
एह सोई जिन बैरी हना, सोहिल अस बारि आर।
जंबूदीप नरेस सोई, निरमल जाति पँवार ॥
एह जस विक्रम राजा भोजा। मैं चित्रावलि कहँ बर खोजा ॥
चित्रावलि कर रूप सुनाई। कै जोगी आनेउँ बौराई ॥
मै राजा सों कहै न पावा। बीचहि बैरी मोहिं बँधावा ॥

तौ एह कौतुक सब बिधि कीन्हा । रतन खेह महँ काहु न चीन्हा ॥
राजा हिय सुनि कुँअर बखाना । तजि चिता चित रहस समाना ॥
जो जहँ चित्र मूँदि वै राखी । तब भा आनि परेवा साखी ॥
एह पडित औ बिधि सो डरई । पडित काज बूझि कै करई ॥
छोरे बधन दुःख के, महावीर पहिचानि ।
राजा उतरि तुखार सों, अक मिलायो आनि ॥
ततखन तहा कुँअर अन्हवावा । राज साज सब आनि पन्हावा ॥
औ पुनि लीन्ह चढाइ अँबारी । दूलह जानि बरात सँवारी ॥
रहसत चला तुरै चढि राजा । बाजत अनँद बधावा बाजा ॥
एकै बाजन जेहि जग जाना आवत आन जात भा आना ॥
गह गह बाजन बाजत आवा । नगर लोग सब देखै धावा ॥
जिन देखा तिन धनि धनि कहा । रूप निहारि चित्र होइ रहा ॥
धनि सो चित्र धनि सोई चतेरा । कहहिं जोर चित्रावलि केरा ॥
निकसा हाट मझार होइ, चहुं दिसि रहस अनद ।
देखै आई उतरि जनु, सूर तराई चद ॥
चढि अँटारि देखहिं रनवाँसा । जनु ससि नखत सरग परगासा ॥
देखि कुँअर मुख हर्षाहिं रानी । हिए अनद अधर बिहसानी ॥
कहिसि कि जानु आहि एह सोई । जेहिक चित्र चितसारी धोई ॥
पुनि तिन्ह साथिन्ह आनि देखावा । जे अपने कर चित्र नसावा ॥
जिन देखा तिन मुख अनुसारा । यह सोई गँधरब औतारा ॥
जब ते हम वह चित्र नसाई । नैन हिए जानहुँ लिखि लाई ॥
धनि यह दिन धनि घरी सरेखा । हिया इछ इन्ह नैनन्ह देखा ॥
मान न मन्त निसारहिँ, सिह पुरुख मुख बैन ।
जो मूरति हिअरै बसी, सो निजु देखी नैन ॥
रानिहिँ यह सुनि भयो अनदा । सीस पुहुमि धरि बिधना बदा ॥
जिन्ह काहू यह भेद न जाना । सो बिधि कौतुक देखि भुलाना ॥
कहै कि यह कस बैरी होई । आदर चाह करै सब कोई ॥
सखी एक चित्रावलि केरी । चढि मदिर पुनि देखिसि हेरी ॥
कोतुक लखि चित कीन्ह हुलासा । गई धाइ चित्रावलि पासा ॥
कहिसि कि ऐ कुल मनि मनिआरी । तोरी जोति पुहुमि उजिआरी ॥
फिरेउ बीति सग्राम भुआरा । गहि आना बैरी बरिआरा ॥
देखौ सोइ हस्ती चढा, नहि जानौ केहि काज ।
पुहुमी आवै इद्र जनु, तजि इन्द्रासन राज ॥
मेहरिन्ह मह पुनि चरचा होई । चित्र जो मेटा जनु यह सोई ॥
सुनतहि चित्र चाउ चित बाढी । होइ व्याकुल धौराहर ढाढ़ी ॥

देखत मुख सुधि बुधि सब हरी। होय अचेत पुहुमी खसि परी ॥
सखी सो हाथन हाथ उतारी। सेज सुवाइ ओढाइन्ह सारी ॥
डरहिं कहहि विधि का भा आई। भीर माँह काहू डिठि लाई ॥
सुनै पाउ जनि राजा रानी। हम जिय करहिं परी महँ हानी ॥
ततखन मँदिर परेवा आवा। सखियन्ह कहँ सब भेद सुनावा ॥
कहिसि कि ऐ पति कलप जुग, हम माथे तुम छाँह ॥
अब किमि जरिए धूप दुख, छत्र आउ घर माँह।
सुनत बैन चित्रावलि जागी। देखि परेवा के पौ लागी ॥
कहिसि कि ऐ हीरामन सूआ। रतन लागि कस कौतुक हूआ ॥
कैसे जाइ भोराएहु साई। कैसे आनेहु इहवा ताईं ॥
का कहि चित्रसेन समुझावा। काहि लागि मँदिर लैआवा ॥
बैसि परेवा प्रेम कहानी। आदि अंत लौं कहिसि बखानी ॥
चित्रावलि चित भयो सँतोषा। गा सो सोच अहा जो धोखा ॥
बर बिआह सुनि मनहि लजानी। घूँघट ओट दिये मुसुकानी ॥
कहिसि परेवा सुमति तैं, पूरन सेवा कीय।
जो चित भावै सोइ करु, मैं तुअ अज्ञा दीय ॥

---

*

बोहित खंड

उहवा सागर बोहित साजा। इहवा दुद गौन कर बाजा ॥
पखरे घोर पलाने हाथी। सँभरि चले पुनि अत के साथी ॥
चली दोऊ घनि करत कलोला। अपने अपने चढि चडोला ॥
एक बाए एक दहिने जाई। एकहिं एक न पास सुहाई ॥
कुँअर साजि पुनि कटक सुहावा। रहसत जाइ समुँद लहु आवा ॥
बोहित साज देखि मन भावा। चित्रिनि कर चडोल चढावा ॥
पुनि कौलावति समदि भुआरा। चढी जाइ तजि सब परिवारा ॥

अगिनित दायज दरब जेहि, देखि हिया हरखत
एक एक सबै चढाइ के, कुँअर चढा पुनि अत ॥

बोहिते चढेउ कुँअर लै भारा। समदि चले पहुचावनहारा ॥
समदे लोग कुटुब हय हाथी। सोई साथ अत जो साथी ॥
लोकाचार तीर लहुँ आए। नाव चढे सब भए पराए ॥
पीठ देत ही मित बिसारा। सब काहू घर बार सँभारा ॥
कुँअर पेलि बोहित लै चला। भार देखि केवट कलमला ॥
कहिसि कीन्ह तुम दूर पयाना। बोहित नाहिं भार अनुमाना ॥
बोहित चढे बहुत उतपाथा। ऊँचे भौंर ऊठहि पुनि साथा ॥

भौंर फेर जलजतु डर, तेहि पर आँधी आउ।
जिउ आवै तब पेट मँह, तीर लाग जब नाउ ॥

सोन रूप तुम कहा बटोरा। भार बहुत देखत पुनि थोरा ॥
गाढ परे पुनि होइहि भारी। अबहीं कस नहि देहु अडारी ॥
कुँअर कहा सुनु बोहित पती। दरब न डारि जाय एक रती ॥
बोहित साजा दरब हि लागी। का ले जाब सग यहि त्यागी ॥
जो मानै जिय अस डर भारी। चढ़ै न कोऊ नाव नवारी ॥
तुम खेवहु जनि मानहु सका। मेटि न जाइ सीस कर अका ॥
हँसि कै बोहित केवट पेला। चला जाइ जल माँह अकेला ॥

देखत बारिध अगम जल, प्रान न धीर धराइ।
सोई चलै निचित होइ, जो कोउ आवै जाइ ॥

रैनि एक बादर जुरि आये। दुहु दिसि होइ रिखि सात छपाये ॥
मारग भूला केवट डरा। बोहित जाइ भौंर बिच परा ॥
भँवै लाग तहँ बोहित भारी। कुँअर कहा कछु देहु अडारी ॥
जाके अहा सग कछु भारा। पलिहि तें सब रूप अडारा ॥

हरुआ होइ बोहित अगुसरा। दूजे भौंर जाइ कै परा॥
जह लहु अहा सोन कर नाऊ। सो सब डारि दीन्ह तेहि ठाऊ॥
तीजे भौंर जहा नग हीरा। चौथे अन जा कर नर कीरा॥
पचए भौंर भयो सेस नर, अंत जानि पुनि मीच।
कुअर जिअन जिअ सौंरिकै, परे कूदि जल बीच॥
छठए भौंर मरन निज हेरी। साहस बाँधि गिरीं सब चेरी॥
सतए भौंर जो आइ तुलाना। कौंलावति कर जिउ अकुलाना॥
कहिसि कि हौं बलि देउ सरीरा। मकु ए दोउ लगि लागैं तीरा॥
पुनि मन कहिसि रहा पछितावा। चित्रिन रूप न देखै पावा॥
मरन बेरि मुख देखौ जाई। मकु अजहूं तजि कोह छोहाई॥
चित्रिनि पह आई गुन भरी। बदन बिलोकि पाउं लै परी॥
कहिसि कि हौ अपराधिनि तोरी। करहु छोह सुनि बिनती मोरी॥
रहै सदा तुअ सीस पर, सेंदूर भाग सुहाग।
हौं समदति हौ चरन गहि, इहै मोर अनुराग॥
चित्रावलि सुनि हिए छोहाई। कौंलावति कह कंठ लगाई॥
कहिसि कि तजहु सौति कर नाता। मोरि तोरि एकै जनु माता॥
हौं जिउ देउ रहउ तुम्ह दोऊ। मोरे मुए होउ सो होऊ॥
मरन लागि दुहुँ बाद पसारा। सुनि सुजान भायो बिकरारा॥
कहिसि कि मेहरिन्ह बुद्धि न रती। हौ अब मरौ होहु तुम्ह सती॥
तीनिहु गही मरन की टेका। मरन न पाउ एक ते एका॥
देवता सरग जो देखत अहे। इन्ह कर प्रेम देखि थकि रहे॥
ससि सूरज कुज दोउ गुरु, राहु बुद्ध सनि केतु।
कहहि कि अब लहु भूमि मह, अस न कीन्ह कोउ हेतु॥

आलमकृत

माधवानल-कामकंदला

आलमकृत

माधवानल-कामकंदला

प्रथमहिं पारब्रह्म के सरनै। पुनि कछु रीति जगतरस बरनै ॥
पारब्रह्म परमेस्वर स्वामी। घट घट रहै सो अंतरजामी ॥
घट घट रहै लखै नहिं कोई। जल थल रह्यौ सर्ब मय सोई ॥
जाको आदि अंत नहीं जानौ। पंडित कथै ग्यान सोई मानौं ॥
ग्यानी होइ सो गुर-मुख पावै। खोजी होइ सो खोज लगावै ॥
मन वच क्रम सोवत चलत, जागत चितवन चित्त।
संग लागि डोलत फिरौ, सो करता धरु चित्त ॥
जग पति राज कोटि जुग कीजै। सहज लाल छाजे थिति कीजै ॥
दिल्लिय पति अकबर सुल्ताना। सप्त दीप मैं जाकी आना ॥
सिंहन पति जगन्नाथ सुहेला। आपनु गुरू जगत सब चेला ॥
जब घर भूमि पयानौ करई। वासुकि इन्द्र आसन थरथरई ॥
गहि त्रिन दंत सरन सो आवै। थापहि फेरि भूमि सो पावै ॥
दंड भरै सेवा करै, वासुक इन्द्र कुबेर।
गनु गंध्रव किन्नर सबै, जच्छ रहै होई चेर ॥
देस देस के भूपति आवै। द्वारे भीर वार नहि पावै ॥
कंपै बहुत त्रास जी लेहीं। लै अकोर पर द्वार न देहीं ॥
इक छत राजु बिधाता कीनौ। कहुं दुर्जन कोउ रह्यो न चीन्हौं ॥
धर्म राजु सब देस चलावा। हिंदू तुरक पंथ सबु लावा ॥
आगेरेंबु महामति मंडनु। नृप राजा तोडरमल डंडनु ॥
जो मति विक्रम कीन, मन्त्रु करत मनु चैन।
सुनत वेद सुमिरत सदा, पुन्य करत दिन रैन ॥
सन नौ से इक्यावन्नुवै आइ। करौं कथा अब बोलौं गाहि ॥
कहो वात सुनो अब लोग। कथा कथा सिंगार वियोग ॥
कछु अपनी कछु परकृति चोरौं। जथा सकति करि अच्छर जोरौं ॥
सकल सिंगार विरह की रीती। माधो कामकंदला प्रीती ॥
कथा संसकृत सुनि कछु थोरी। भाषा बाँधि चौपही जोरी ॥
माधोनल सब गुन चतुर, कामकंदला जोगु।
करौं कथा आलम सुकवि, उतपति बिरह बियोगु ॥
पहुपावति नग्र इक सुनो। गोपीचंद राज वह गुनो ॥

धर्मपंथु दिन प्रति पगु धरई । पहुमी पवित्र पापु नहिं करई ॥
तिहिपुर बसै सदा सुख त्यागी । माधौ विप्र नाम बैरागी ॥
राजा पास प्रात उठि जावै । लै तुलसी दल देव पुजावै ॥
देव पुजाइ विप्र फिरि आवै । प्रात भयें पुनि दरस दिखावै ॥
बाचै बेद पुरान, नौ व्याकरन बखानई ।
जोतिक आगम जानि, सामुद्रिक सँगीत सब ॥
विद्या सोइ बृहस्पति जानौ । रूपु सोइ मकरध्वज मानौ ॥
ताको रूप नारि जो देखै । पलक ओट जुग जुग भरि लेखै ॥
जे सब नारि बसैं पुर माहीं । तिहि के निरखि गर्भ गिरि जाहीं ॥
गावै सरस बजावैं बीना । नर नारी मोहे भ्रम बैना ॥
मनु लागै जिहि धाइ, सो पुनि मन ही मो बसै ।
जागत सोवत नित्त देखहु आँखिन मै लसै ॥
बिन देखे अकुलाइ, प्रान नहीं धीरज रहहि ।
निसु दिन भीजहि चार, नैना ही के नीर ही ॥
दिन एक प्रात भयो उजियारा । माधौनल अस्नान सिधारा ।
करि मजन पुनि तिलक सँवारै । नाद मधुर धुनि मुख उचारैं ॥
सुनत नाद मोहीं पनिहारी । सीसहु ते गागर भुमि डारी ॥
सुनत नाद तिहि दीनै काना । रीझि रहैं सब चतुर सुजाना ॥
करैं राग मोहन के वेसा । ज्यौ ठग मूर करै वर वेसा ॥
थके कुरगन जूथ, सुनत नाद मुग्धीन के ।
तब धाई करिहूय, काम कमान चढाइ के ॥
इक त्रिय मोहि मुर्छित धर परही । इक त्रिय धरत सुद्धि नहि रहहीं ॥
इक नैनन सों नैन मिलावै । तजि सर एक निकट चलि आवै ॥
एकन परत न चीर सँभारा । व्याकुल भई छूटि गये बारा ॥
एकनि भूषन दए उतारी । एकनि तजी कचुकी सारी ॥
एकै नारि चली उठि सगा । जैस धुनि सुनि चले कुरगा ॥
काम धनुष सरपच लै, मारौ त्रिया सुनाइ ।
वे मृगगति मोहीं सकल, द्विज पारधी की नाइ ॥
एक नारि हँसि हँसि मुख जोवै । नैन नीर इक भरि भरि रोवै ॥
डोलै एक पवन ज्यों दिया । छुटे केस उघरि गये हिया ॥
करै राग माधौनल रागी । ज्यौ तन माँहि ठगौरी लागी ॥
माधौनल देख्यौ पनिहारी । व्याकुल भई नगर की नारी ॥
तब उठि चल्यो नग्र कहँ सोइ । कहत चरित्र सप्र दिन सोइ ॥
गयौ मदन सर मारि, नारि डारियत हार सब ।
बिरह अनल तन जारि, तन मन द्वद उदेग दैं ॥

नगर खोरि माधौनल आवै। त्रिया पुरिख गृह अन्न जिवावै।
सुनत नाद कर छीन सँभारी। भूमि अहार दीन सब डारी॥
पूछै पुरिष नारि सुनु मोही। ऐसे नैन दिये विधि तोही।
कत तैं भाजन दियौ सो डारी। वेगि कहौ नहिं डारौं मारी॥
बोली बचन कत सुनि लीजै। स्वामी दोसु मोहि नहि दीजै।

माधौनल कियौ रागु, सुनि धुनि हौ बिस्मै भई।
तहा जाइ मनु लागु, ताते गिरयौ अहार भूइ॥

तब सुनि कै उठि चल्यौ रिसाई। नगर लाग सकवै बुलाई।
चलहु राइ के सनमुख हाही। कहौ विप्र त्रिया सब माहीं॥
नग्र लाग बूढे अरु वारे। राजा आगै जाइ पुकारे।
सुनौ राइ इक वचन हमारा माधौनल माहीं सब दारा॥
पूछै राइ कौन गुन करही। कैस विप्र त्रिया मनुहरही।
करै नाद सब त्रिया लुभाहीं। मृग गति माहि थाकत ह्वै जाहीं॥

कहै प्रजा राजा सुनौ, हम न रहैं इहि गाँउ।
कै यह बेग निकारिए, जिहि माधौनल नाउ॥

सुनि राजा जिय चिंता करही। कहा करौं जो परजा जाहीं।
पहिले पूछि लउ वेउहारा। तब माधौ को देउ निकारा॥
तब राजा पठवा इक बारी। माधौनल को ल्याउ हकारी।
गयौ पौरिया माधौ जहँ रहही। सीस नाइ विनती इक करही॥
चलौ वेगि तुम राज बुलाए। परजा पवन कहन कछु आए॥

माधौनल चिंता करी, मन मै भयौ उदास।
माधौ धारि बीना चल्यौ, आयौ राजा पास॥

अधिक मधुर धुनि वीनु बजावै। सरस राग रागिनि उपजावै।
चेरी बीस कराइ हकारी। सब पहिराइ कुसुभी सारी॥
तब राजा परतिज्ञा लेही। कमल पत्र पर बैठक देही।
माधौनल वीना कर गह्यौ। खस्यौ काम धीरज नहि रह्यौ॥
माधो विप्र नाद अस कहा। भीजे नीर मदन तब बहा।

तब राजा आइसु दयौ, चेरी दई उठाइ।
सब ही के पीछे रहे, कमल पत्र लपटाइ॥

अचरज देखि राजा तब रहा। मिली प्रत्यग्या जो गुन कहा।
उठि राजा गयौ पौरि पगारै। तुम को ठौर न विप्र हमारैं॥
तीनि पान कौ बीरा लयौ। राइ हाथ माधौ के दयौ।
तब उठि वरन अठारह पती। चल्यौ छाँडि कै पुहुपावती॥
बीना गहै बजावै रागा। छिन छिन उपजावै वैरागा।

कामवती नगरी भली कामसैनि नृप नाम।
मन मैं माधौनल कहै, इहाँ करौं बिश्राम॥
नगर लाग सब बसै सुकर्मी ब्राह्मन छत्री बैस सुधर्मी॥
तिहिं पुर मद गयद सो रहै। मदिरा नाम औरन सों कहै॥
मार सोइ सतरँज मैं हाही। पुष्प पत्र लै बाधै कोही॥
दंड साही जो जोगी लेहीं। और दंड काहू नहिं देही॥
चचल चार कटाछ त्रिया के। जा नित चारे चित्त पिया के।
दीपक वधिक बसै जहा, जो निसि बसै पतग।
ऐसो नगर रच्यौ बली, काम सैनि चतुरग॥
तिहि पुर बसै चद्र की कला। पातुर सुनी कामकदला।
ताको रूप बरनि को पारा। बरनत सहसजीभ पुनि हारा॥
कुतल चिहुर चुवहिं ज्यों धाला। अबुधार कैधों अलिमाला॥
मध्य माग चदनु घसि भरै। दूध धार विषधर मुख परै॥
कहुं कहु पुष्प कहूँ कहुं मोती। जनु घन मैं तारागन जाती।
माँग अग्र मानिक दिए, औ मुक्ता गन सम।
छिन छिन जोति धरैं मनौं, मनि उछली जु भुजग॥
करनन करन फूल छबि भारी। मन्द मयक की कोटिन नारी॥
मनि मुक्ता लागै बैडूरज। मानौ घन मह दिए दाइ सूरज॥
कर कुकुँम लै तिलक सँवारे। चैन मैन जनु बान सुधारै॥
भृकुटी चाप चचल जब मोरै। चितवन चारु चतुर चित चोरै॥
मीन मधुर पजर मृग हारै। निरखत लोचन जुगम डरारै॥
पलक ओट अकुलाइ, चलच नैकु न थिरु रहै।
श्रवन कोर लौ जाइ, निरखौं त्रिया कटाछ जब॥
नासा अग्र बेसर को मोती। घट वीव रोहिन की जोती॥
तिल प्रसहि बीव तुषारा। छिनु छिनु दारिज नु माछिनि हारा॥
नासा अग्र मोती इमि रहहीं। दीपक पुष्प करन कौ चहहीं॥
मृगमद तिलक रहै अति मानौ। निर्खत अलिविंदु नीयर जानौ॥
रस बिनोद लागैं अहिछौना। लालच लुबुध लोभ जनु गौना॥
आलम अलकैं छुटि रहीं, बेमरि सौ अरुझाइ।
मानहु चारा चोंच तें, अहि सुत लेत छुड़ाइ॥
पल्लव बिंब बँधूक लजाहीं। आस्वास रस भौंर लुभाहीं॥
दामिन दंत दिए जनु हीरा। सेत असेत अरुन के धीरा॥
सखि स्यौं हास करहिं जब कामिनी। कमल पत्र कैधौं जनु दामिनी॥
सरस्यौं बचन जु बोलि सुनावै। सहज मनहुं बाँसुरी बजावै॥
लोग कहैं कोकिल कल नीकी। ताकी धुनि सुनि लागति फीकी॥

अबला बचन अमोल, प्रान धरन चिंता हरन ॥
श्रवन सुनत वे बोल, मुनि मनसा नहि थिर रहैं ॥
हरे पीत मनि लाल बिसाला। रतन जटित सोहति कँठमाला ॥
मुकताहल दोउ कुच बिच रहहीं। दुहुँ सुर मध्य जु सुरसरि बहहीं ॥
कुच कंचन भरि सा सवाँरे। सुर सरि धरि जुग ससी दुधारे ॥
चक्रवाक सरिता की धारा। मानहुं मुनि मन वारहि पारा ॥
कनक बेलि श्रीफल जुग लागे। किधौं पुष्प गुथि अति अनुरागे ॥
अति कठोर कुच तन उठे, सबलैं समेत सुभाइ।
मनुहु मैन को भस्म करि, बैठै ईस चढाइ ॥
कनक बरन दुइ बाँह सुहाहीं। देखे नीत सँगीत सुहाई ॥
कनक टाड कर ककन चलिया। फुद जू चामहि मुद्रिक पलिया ॥
भुज सतूल अरु सीन कटाही। लगी फूली सुघरी जु सुहाही ॥
सहज हस तज्यौ कमल दिखावे। नखन अग्र किन्नरी बजावै ॥
पलव पल्ल सोभी नख भारे। बिद्रुम बिच कटक मनौ दारे ॥
भुज चंदे की मजुरी, मिलति एक के रूप।
मानहु कचन खभ तें, द्वादस लता अनूप ॥
उदर छीन रोमावलि देखा। कनक खभ मृगमद की रेखा ॥
नाभि निकट स्यों नागिनि चली। जनु कुच कमल नलिन इक भली ॥
नाभि पात सौ उठी सुहाही। कँवलहु तैं अति अवला आई ॥
हृद कर सख ब्रह्म दै काढी। खभ बेलि कचन मनौ बाढी ॥
कै उलटी कालिंद्री बहही। गिरि गगा परसन कौं चहही ॥
इत तें गगा सुर चल्यौ, उत तैं जमुना अभु।
कुकुम चग तुरग भरि, मिलि परसै इक सभु ॥
मृग अरु ससा सिंघ बन भागे। देखि मध्य उदि उपमा लागे ॥
मध्य झीन बोलै ज्यौं आधे। कसनी कसी कुच नीके बाँधे ॥
जघ जुगल कदली के खभा। तिहि छवि को पूजै नहि रभा ॥
नूपुर चूरा जे हरि वाजैं। छुद्रावलि घटिका बिराजैं ॥
घसि चदन इक चाली कीनी। कचुकि पहिरि पटोरी लीनी ॥
कुसुँभी सारी पहिरि कैं, बेनी गुही सवारि।
राजा के मदिर चली, कामकदला नारि ॥
औसर चली कामकदला। नगर लोग सब देखन चला ॥
माधौ बिप्र बात या सुनी। कहियतु कामकदला गुनी ॥
तब उठि माधौनल सँग लागा। काँधे बीन धरे बैरागा ॥
मंदिर मध्य गयौ सब लोगा। माधौ विप्र पवरियन रोका ॥

राजमँदिर कैलास सम, जान देउ नहि तोहिं।
तुहि वाम्हन देखत कछू, कहैं राज बुलावे मोहि॥
पूछि राय उत्तर कह ऐसी। जब तुहि पहिचानै परदेसी॥
उहिठा माधौ पँवरि दुवारा। राजा मदिर होइ अरवारा॥
तत गिरा गाइन बहु गाँवहि। द्वादस तहा मृदँग बजावहि॥
द्वादस माझ इक तुरिया दीना। दहिनै हाथ अँगुरिया हीना॥
टूटै तार भग सुर होई। मूरख सभा न जानै कोई॥
ऐसो को सुर ज्ञानि, राज सभा मूरिख सकल।
ताल भग को जानि, द्वादस तहा मृदग धुनि॥
ताल भग माधवनल सुनही। द्वारे बैठि सीस बहु धुनही॥
ताल कुताल सप्त सुर जानै। सब पुरान सगीत बखानै॥
माधव कहै पौरिया आवहु। राजा आगैं जाइ सुनावहु॥
द्वारे बैठि विप्र इक आही। सकल सभा सौ मूरखि कहही॥
द्वादस माहिं तुरिया अनारी। दहिनै हाथ अगुरिया चारी॥
सात चारि के मद्धि है उठिकै देखौं ताहि।
चूकै तार जो पाव निमि, पातुर दास न आहि॥
सुनत पँवरिया उठि कि धावँही। राजा आगैं जाइ सुनावहिं॥
विप्र एक है पँवरि दुवारा। निर्त ताल सब कहै विचारा॥
कर मीजै सिर धुनि धुनि रहई। सकल सभा सौं मूरिष कहई॥
कहै जु तुरिया द्वादस माही। दच्छिन हाथ अँगुरिया नाहीं॥
सात चारि के अतर रहै। ऐसी बात विप्र इक कहै॥
ताही ठौर को तुरिया, राजा लियौ हकारि।
हतौ अगूठा मैन को, तरम अगूरिया चारि॥
मिली बात माधौ जो कही। सभा सकल चकत ह्वै रही॥
कहै राज सुनि रे दरबारी। बेगि जाइ कैं ल्याउ हँकारी॥
अयौ पौरिया माधव ठाई। पाउ धारिये विप्र गुसाई॥
राजा मदिर माधौ चला। सुदर विप्र मदन की कला॥
कँठ सोहै मौतिन की माला। कानन कुंडिल मैन विसाला॥
झीने पट की धोवती, उपर उपरनी झीन।
सीस पाग वैना धरे, राज-मँदिर पगु दीन॥
सभा मध्य माधौनल गयौ। बेगि लोगु सब ठाढो भयौ॥
आवत माधौनलहि निहारा। सिंहासन तजि भयै नियारा॥
माधौ विप्र चिरजी कीन्हों। आसिर्वाद नृपति कहँ दीन्हों॥
राजा दियौ सिँघासन टारी। ता पर बैठे रूप मुरारी॥
बैठ्यौ विप्र सिंहासन जाई। देखि लोग सब रहे भुलाई॥

कै रे इद्र कै चद्र है, कैं कान्हर कैं काम।
कै कुबेर के जच्छ हैं, कै किन्नर कै राम॥
कनिक मुकट मुद्रिक मनि माला। माधौनल कौ दीन भुवाला॥
मुद्रिक टोडर दये उतारी। पहिराये भूषन सब भारी॥
टका कोटि द्वै दछिना दीनी। स्वस्ति बोलि माधौनल लीनी॥
चँदन खौरि तिलक सरसाखैं। पोथी काँन्ध उपरना काधैं॥
बैठि सिंघासन बहुत सुखु पायो। दुख सँताप लै गग बहायौ॥
गुन देखे गुनिजन सुखी, निर्गुन होइ जनु कोइ।
राय रक सब बीच लै, नौ रँपेट गुन होइ॥
ऊच नीच पूछहि नहि कोई। बैठहि सभा जौर गुनु होइ॥
गुनी पुरिष जौं परभुमि जाई। त्या त्यों मॅहग मोल बिकाई॥
जैसे पुत्रहि पालै माई। त्यों गुनु रहै मदा सुख दाई॥
गुन बिन पुरिष पख बिन पखो। गुन बिन पुरिष अंध ज्यों अखी॥
गुन बिन पुरिष पत्र ज्यों ... . ॥
सगति गति उठत, तत कृती तिहिं काल।
बहुरि अलापै राग पट, पच पच सँग बाल॥
एक राग सँग पाच रागिनी। सग अलापै आठौ नदनि॥
प्रथम राग भैरव उच्चरही। पाचौ कामिनि सग सुहाहीं॥
प्रथम भैरवी पुनि बिलावली। पुनि जाकी गावै बगाली॥
पुनि असावरी ओ बैरारी। ये भैरो की पाचौ नारी॥
पचम हर्ष दे साथ सुनावै। पागाली मधु माधौ गावै॥
ललित बिलावलि गावही, अपनी अपनी भाँति।
अस्ट पुत्र भैरों कहैं, गाइनि गावै पाँति॥
दूर्तो मालकौस आलापै, पच कामिनी सगति थापै॥
गौडी काटी औ देवगॅधारी। गधारी सी हुर्तो उचारी॥
धनासिरी ये पाँचौ कामिनि। मालकौस के सग सुभामिनि॥
मारू मस्तक अग मेवारा। प्रबल चद्र कौसिक औ भारा॥
घूघट्ट और भौरन दग गाए। मालकौस आठौ सुत भाए॥
पुनि आयो हिंडोल, पच कामिनी अस्ट सुत।
उठै सो तान कलाल, गाइन ताल मिलावही॥
तेलगी पुनि देव गिराइ। बासती सिधुरी सुहाई॥
सा अहेरि लै आया राजा। सग अलापहि पच भारजा॥
सुर मा नद भस्म करि आई। चद्र बिब मगली सुहाई॥
सरसबान औ आहि बिनोदा। गावै सरस बसतक मोदा॥
अस्ट पुत्र मै कहे सवारी। पुनि आई दीपक की बारी॥

काछाली पट मजरी, टोडी कही अलापि।
कामोदी औ गूजरी, सँग दीपकैं थापि ॥
काल काल औ कुतल रामा। कमल कुसम चपक के नामा ॥
गौड़ी कान्हरिय कल्याना। अस्ट पुत्र दीपक के जाना ॥
सब मिलि वहि श्री रागहि गावै। पचौ सग वरग अलापै ॥
बैराटी करनाटी धरी। गौरी गावै आसावरी ॥
पुनि पाछैं सिधवी अलापी। सिरी राग सग पाचौ थापी ॥
सावा सारँग सागरा, औ गधारी भीर।
अस्ट पुत्र श्री राग के, गोल बुड गभीर ॥
अष्ट मेघ राज वै गावैं। पाचौ सग वरगनि ल्यावैं ॥
सौर गौडमल्लारी धुनी। पुनि गावै आगा गुन गुनी ॥
ऊचे सुर सौं सूहौ कीनी। मेघ राग सँग पचौ चीन्ही ॥
बीरा धर गज अरु केदारा। चडाली धर नित उजियारा ॥
पुनि गावै बासकर औ स्यामा। मेघराग पुनि तिन के नामा ॥
अस्ट राग ये सकल सँग, रागिनीय गनि तीस।
सब सुत राग न के कहे, अठारह दस बीस ॥
गयौ राग रागनि सगीता। अब बरनौ सभा सगीता ॥
रगभूमि बहु भाँति सँवारी। ताल मिलाइ करै पतिहारी ॥
दीपक दीवती चले चहुँ भाँती। बहुत ममाल मैन की बाती ॥
अतर वोट पिछौरी दीन्ही। पहुप अंजुली दुहुँ कर लीन्हीं ॥
सब मिलि श्री राग वै गावैं। सकर गौरि गनेस मनावैं ॥
षरज रिषभ गधार, मध्यम पचम धैवतो।
औ निषाद उचार, ये कवि गाये सप्त सुर ॥
पनु मिलि सग एक सुर कीन्हा। रग भूमि पातुर पग दीन्हा ॥
सुर सुर मध मध धिधि धिधि बोलहिं। तार धार सँग लागे डोलहिं ॥
तथेइ ताथेइ ताता थेइ करहीं। तनु थकत न थक मुख उचरहीं ॥
जभकत भभकत लाल तरगहि। ...
झंक झझकत उठत तरग रग, अरी उचारहि दद दद मिरदंग ॥
प्रथम ताल औहै झप ताला। सकल ताल डोलैं इक ताला ॥
राग दाव नरपतिहि प्रधाना। प्रगटे सप्त भेद सुर शाना ॥
दुदुर छंद धुरपद सचारहि। ठही रीत जनु इद्र अखारहिं ॥
धुनि देसी कदला दिखावै। अच्छर अर्थ हस्त पल्यावै ॥
थिरकी लीन तार जब तोरहि। नैन कोर माधो सो जोरहि ॥
सुर सुदर दोहा षटपदा, और विस्मै पद गाइ ॥
बूझै चतुर बिलच्छन, माधौनल सब भाइ ॥

पुनि गुन काम कदला करई । जल भरि सीस कटोरा धरई ॥
भृकुटी चाप चलल मुख मोवहि । कर अँगुरी सौं चक्र फिरावहि ॥
दीप जोति इक भँवर उडाई । कुच के अग्र मो बैठा जाई ॥
जब लागै तब दैं दुख डारहिं । मनहु भवग ममै सरसावहि ॥
चदन बास लीन है रहा । बैठो भाँवर प्रेम रस भरा ॥

छिन छिन काटहि मधुकरा, अस्तन वेदन होइ ।
माधौ नल सब बूझही और न बूझै कोइ ॥

भेटैं पवन सुख वासुन आवइ । अस्तन श्रोत समीर चलावहि ॥
ज्यों कर छुहा चक्र गिरि परई । कामकदला चौगुन भरहीं ॥
पवन तेज मधुकर उडि चला । माधौनल बूझी यह करा ॥
तब राजा के नैन निहारै । मूरखराज न कला बिचारै ॥
रीझ्यौ माधव कला बिचारी । मुद्रिक तोडर दए उतारी ॥

कनक मुकुत मनि माल सब, टोडर दए उतारि ।
टका कोटि दै दच्छिना, माधौ दिए सुकारि ॥

चतुर चतुर सा नैन मिलावहि । दुहुतन मदन उमगि बहु आवहि ॥
दुरि दुरि देखैं मुरि
जब पारखी नाद मुख गावैं । सुनतहि मृग हिय मोहित ह्वै आवैं ॥
हरिनी कहै हरिन का कीजै । रीझि पारखी कौं का दीजै ॥
हमरैं कहा दैन कौ दाना । कहें कुरग सो दीजै प्राना ॥
तब पारखो धनुष सधाना । मृग हियरा आगे कै दीन्हा ॥

धनि कुरग जिनि राग सुनि, रीझि न राखे प्रान ।
वैन करत वलि विक्रमा, दियौ न ऐसो दान ॥

धारा भोज लच्छ जिनि दीनौ । करन वैन वलि विक्रम कीने ॥
ये सब मुए मीचु के मारे । रीझि प्रान नहि दिए पियारे ।
लच्छ लच्छ जे त्यागहिं दाना । तौ नहि पूजहि हिरन समाना ॥
कह राजा सुनु विप्र उदासी । कौन रीझ त त्यागी रासी ॥
कहै विप्र हौ कला विचारी । औ मुग्धा सब सभा तुम्हारी ॥

नाचत त्रिय कुच अग्र पर, मधुकर वैठ्या आइ ।
अस्तन स्रोत समीर सों, दीनौ भँवर उडाइ ॥

तू राजा अविवेकी आई । गुन औगुन बूझौ नहिं ताही ॥
मै विद्या परवीन सुजाना । रीझि कला नहि राखौ प्राना ॥
क्रोधवत राजा उठि कहै । ढीठ विप्र चुप क्यों नहि रहै ॥
मारौं खड्ग टूक द्वै करौं । विप्रघात अपजस सों डरौं ॥
भा राजा तू मारै मोही । कला रूप है व्यापौ तोही ॥

पतित करौं तुहि लोक महँ, स्वर्न लोक हरिद्वार।
जग मै अपजसु पावही, सकल कहै हत्यार॥
राजा ब्रह्म हत्या जो करै। कलि मैं कुस्टी ह्वै अवतरै॥
तीरथ कोटि जग्य जो करै। तबहुँ न ब्रह्म दोष तैं तरै॥
सुनि राजा कछु कहन न पारै। कोधवत मनही मै विचारैं॥
कह राजा जहँ लग मोर राजू। छाँड़ि जाहु तहँ लगि तुम आजू॥
जो तोहि इहा बहुरि सुनि पाऊ। खाल खैचिकर भूस भराऊ॥
बोलहि क्रोध न बाल, बेगि निकारहु नग्र ते।
भूस भराऊ खाल, जो कोउ राखै देस मै॥
तब सो वचन माधवनल कहै। तोरे नग्र राइ को रहै॥
मैं गुनिवत भूमि पर बेसा। चरन धोई करि पिये नरेसा॥
यह सुनि नृप मदिर मैं जाई। नीच सीस करि सासैं लेही॥
राजा मन मै चिंता करही। फिरि फिरि दोस कर्म को देई॥
मैं दिन राति सभा सचारौ। त्यागहुं लच्च लोभ नहि करौ॥
जो दच्छिन ध्रुव अस्तवै, तप्त अग्नि सिवराइ।
पश्चिम भान उदै करै, तऊ न कर्म गति जाइ॥
सम दुग भीर होइ जौ थाहा। गगा पश्चिम करै प्रवाहा॥
पख लागि कै सिला उडाँही। पाहन फोरि कमल विहसाही॥
जौ इतनी विपरीत चलावै। तऊन कर्म सौ छूटन पावैं॥
कर्म हेत हरिचँद जलु भरा। कर्म हेत वलि सर्वसु हारा॥
कर्म हेत पाडव फल खाये। कर्म रेख रघुपति बन आये॥
सोई कर्म मनुष्य मै, कोटि करावहि भेख।
सो कवि आलम ना मिटै, कठिन कर्म की रेख॥
चित चिंता माधव गहि रहा। तब उठि कामकदला कहा॥
कवन सोच सोचहु सग्याना। विद्याधर तुम चतुर सुजाना॥
तुम सुजान जाना गुन मेरा। मै कुछ गुन पहिचानहुं तोरा॥
मधुकर अहि कमलन गुन जानैं। दादुर कहा पीउ पहिचानै॥
नाच कूद कछु अंध न देखै। रूप कुरूप एक सम लेखैं॥
बहिरौ आगे जो कोऊ, सख बजावै आइ।
वह अपने मन जानहीं, कछु अमृत फल खाइ॥
चलहु बिप्र घर बैठहु मेरे। चरन धाई सेवहुं कर जोरे॥
प्रेम कथा कछु मोहि सुनावहु। काम अग्नि की तपनि बुझावहु॥
मैं रोगी तुम वैद गुनानी। सोहि सजीवनि देहु सो आनी॥
काहे गोरिख फिरहि अकेला। अब सँग लाइ करहु मोहि चेला॥
मैं भई धूधल तू सूरज मेरा। तू चदा हौं भई चकोरा॥

तू मधुकर हौं कमलिनी, बैस वास रसलेहि।
भरै बूदते स्वाति जल, ऐस बूद भरि देहि।
सुनहु वारि माधौनल कहई। इहि जग नेहुं नहीं थिर रहई॥
जो थिर रहै तो कीजै नेहू। बिछुरि सँताप देह को देही॥
नेह लगाइ जो बिछुरै कोई। निम दिन रोम रोम दुख होई॥
×ऐसो खडग की धारा× × ×
×सेज पर बैठहु जाई × × ×
उठि माधौनल बैठे सेजा। देखत काम तजै तन तेजा॥
कुसुम मुकट सिर केसर सोहै। निरखत मकरध्वज मन मोहै॥
उठि फूलन की माल, रतनजतित कुडल दियै।
मृगमद तिलक सो भाल, कर बीना माधौ गहै॥
कामकदला करयो सिगारा। अरून फूल के पहिरे हारा॥
तापर पहिरि कचुकी झीनो। सोंधे छिरकि वेल सौ भीनी॥
पुष्प गूथि वैनी बनवाई। चचल गात प्रवीन सुहाई॥
दियो लिलाट चदन को टीका। मध्य विदु विदुंन कौ नीका॥
दये न लेइ दृग ओर करि अनन। पलौ ओट जनु फरकहि खजन॥
कुसुंमी सारी पहिरि सुजान, अग अग भूषन किये।
मुख भरि खाये पान, दाड़िम दसन विराज ही॥
कहै कदला सुनौ सहेली। मोहि सिखावहु प्रेम पहेली॥
अब लौं मुग्धाहति अलबेली। सिखवहु रसकी रीन सहेली॥
पुरुष सग रचि सेज न जानहुं। प्रथम समागम जिय पहिचानहुं॥
वह सुजान माधवनल आही। सब अग कोक बखानहु ताही॥
चौदह विद्या कोक बखानै। अग बास मनमथ की जानै॥
कोक कला हौ ही कहौ, सब विधि अरच बखानि।
और सिखायहु मोहि कछु, पूछहु गुन जन मान॥
कहै सखी सुन हो कंदला। तो तै रस जानै को भला॥
जहां वासु मनमथ को जानौ। तिहि ठाँहरि सु निकट जनि आनौ॥
जहा अग मनमथ रह तहा। छिपन कियौ रहियों पै तहा॥
कोक रीति कदला सिखाई। माधौनल पै सखी पठाई॥
माधौ निरखि रीझि कै रहा। तिहि छिन आइ मदन तन दहा॥
मदन धनुष सरपच लै, माधौ सनमुख आइ।
कामकदला निरखि कै, सरन सरन गुहिराइ॥
मिलि प्रजक पर जुगल किलोलहिं। बचन चातुरी दोऊ बोलहिं॥
सखी सिखाइ कदला गई। आवर मदिर ठाढी भई॥
बैठि कदला माधव पासा। सूर सग जनु चन्द प्रकासा॥

जोई कछु कोकिल की रीती। तैसिय रीत रची विपरीती ॥
दोउ कामवत भरि जोबन। सुदर सुघर सुजान विलच्छन ॥
परसन लालन वै पतन, त्रिया पुरुष सुख लीन।
फुटक बदन उमगे रहैं। भये पचसर हीन ॥
किलकत बोलत लोक कहानी। भयौ भोर प्रगट्यो जु बिहानी ॥
कामकदला परिहरि सेजा। भइ बिहाल तन रह्यौ न तेजा ॥
झलकैं पलक उनीदे नैना। अति जम्हुआई आवहि नहि वैना
कवल प्रवेस भवर जो किया। कोस झकार सकल रस लिया ॥
सिथिल गात कचुकि पहिरि, बिछुरि मोग लट छूटि।
अधर निरखि औ नख निरखि, गये कचांक बँध फूटि ॥
पून्यो जोति ज्यों कामकदला। ह्वै प्रगटी परिवा की कला ॥
डोलति चलति मनहुँ मतवारी। पीत बसन मुख भयौ सवारी ॥
सखी आनि छिरकहिं मुख पानी। सुरति रीति औ सब पहिचानी ॥
उरझे बार हारनि न निवारहि। सब अँग भूषन सखी सुधारहि ॥
मुख पखारि पुनि पान खवावहि। नखछुत मह कुमकुमा लगावहिं ॥
भवॅर बास रस लेइ कै, भौंर रहे लपटाइ।
सूर तेज तैं कुमुदनी, रही अतिहि कुम्हिलाई ॥
बोलहि सखी चलहु मगु रजन। सरवर जाइ करहिं हम मज्जन ॥
माधव विप्र धाम करि धीरा। गई सकल सरवर के तीरा ॥
गई कदला सरवर पामा। चकही जान्यौ चद्र प्रकासा ॥
चकही बिछुरि गई भुमि भूली। बाधे कमल कुमुदनी फूली ॥
चक्रवाक उडि चले अकासा। अथवा चद सूर परगासा ॥
सखी तरायन सग, कामकदला विधुवदन।
चकई मन भयो भग। कमल देखि सपुत गह्यौ ॥
तेल सुगन्ध अरगजा कीन्हा। अग उबटना मज्जन कान्हा ॥
करि मज्जन सब बाहिर आई। चपक बदन सुदेस सुहाई ॥
कहुं कहुं बूँद एक छबि बनी। चपक लता ओस की कनी ॥
सजल ओस अलकै घुँघराली। ऊपर दलति कँदला डारी ॥
अगन बूद चुवहिं धर जोती। जनहु भुवराम उगिलहि मोती ॥
कुटिल स्याम चिहुरा घुँघरारे। डालै मधुय जनहु मतवारे ॥
नीर चुवहिं चिहुरा सजल, बदन निरखि छबि माल ॥
मनहु पान मकरद पर, पवन करत अलि जाल ॥
डोलहिं कामकदला बाला। चिहुर चुवहिं मोतिन की माला ॥
निरखत अलक उलटि घुँघरारी। अमृत लगी नागिन ज्यों कारी ॥
कै सावक अलिरस अब डोलहिं। सखी सबहिं उपमा कौं बोलहिं ॥

कुटिल कुटिल दोउ छबि लीन्हैं । कहू रसिक मन प्यासे दीन्हैं ॥
सो जेहि फँद्यो सो निकस नहि पारै । जो जिय सकल जन्म पचि हारे ॥
मूलन चिहुर चुवाहि, सखी कहैं कदल सुनहु ।
बधन सुरत डराहि, उचे लुट्यौ चिहुरा सजल ॥
सुनि कदला धाम कह चली । नखसिख बरन चपे की कली ॥
कहैं सखी सो चलै अवासा । माधौनल जनि होइ उदासा ॥
गवनम राज मद की नाई छिन एक माँझ मँदिर मै आई ॥
सखी गईं सब अपने धामा । माधौनल मै आई बामा ॥
कहै कदला माधौ ठाऊँ । अब सरवर मज्जन नहिं जाउँ ॥
कँवल देखि सपटु गह्यौ, चकही सग बिछोह ।
मो मुख पुरन चद सम, निरखत दुख अति होइ ॥
वह कलक की कला दिखावहि । पून्यो चन्दस सवानहि आवहिं ॥
तू गभीर सहम रम काला । समता लै ऊपर कै पाला ॥
तव मुख रूप रैन दिन नीको । सूरज होइ देखि कै फीको ॥
रोम बचन जब माधव कहई । भुज भरि कामकदला गहई ॥
बैठि सेज पुनि करहु बिलासा । महकत जेहि ठा सकल सुवासा ॥
मधु कुरल विध्यौ मदनरस, को ये पवन मदनेसु ।
नैन प्रान तन मन फस्यौ, छिन न प्रेम कें प्रेम ॥
ऐसे बचन जौ राजा कहई । माधव सूर चेत जिय धरई ॥
पुंछहु कामकदला तोही । अब मै चलहुँ विदा दै मोही ॥
राजा बात सुनै मग पावहि । मोहि तोहि लै भार झुकावहि ॥
कहै कदला बूझै नहि तोही । ऐसे बचन सुनावहु मोही ॥
तोहि चलत मोरे प्रान चलाहीं । पलक ओट आँखिनि अकुलाहीं ॥
चलन कहत है मित्र, स्रवन सुनत प्रानहि चलहि ।
अति ब्याकुल मन चित्त, सजल नैन भरि भारि ढरहि ॥
तुम सुजान माधव सब जानहु । राज कहे कर विलग न मानहु ॥
राज सिद्ध धनमद जिहि होई । सकल वोच बस करै जु कोई ॥
कहि माधो सुनि तेरी चिन्ता । राज अपनो होइ न मिता ॥
राजा त्रिया सुनारि, बिटिया रोकष आगि जल ।
पाँसा साँपिनि हारि, ए दस होइ न आपने ॥
यह जिय जानि सोचि करि कहौ । दिन दस जाइ और पुर रहौं ॥
यह जग मे बिधि कियो सँजोगु । जिहि मिलना तिहि होइ वियोगु ॥
कर्म रेख सों कछु न बसाइ । जो विधि लिख्यो सो मेटिन जाइ ॥
मिलन बिछोह बिधाता कीन्हा । दमयती नल को दुख दीन्हा ॥
मिलि बिछुरै जानहिं दुख सोई । बिछुरि मिलन दुंहु तन सुख होई ॥

आलम मिलन बिछोह, तीछूण सकल सँताप ते।
तपत अग जनु लोह, विरह अग्नि इमि पर जरहि ॥
बोलहि नारि बचन अन चैनी। माधव रहहु आजु की रैनी ॥
ललित कुसुम भरि सेज बिछावहुं। भुज भरि अकम भरि लपटावहु ॥
परी साँझ भइ निसि अँधियारी। सखी पहुप भरि सेज सँवारी ॥
बहुरि सिंगार कदला कीन्हें। अग अग लै भूखन दीन्हें ॥
करि सिंगार माधौ पै आई। जुगल सेज पर बैठे जाई ॥
आगम विरह वियोग, बिछुरन मूल जु रहत जिय।
मिलत मैन सजोग, बचन वियोगिनि उच्चरै ॥
.. . न कदला कहई। रजनी बीति अल्प ह्वै रहई ॥
ऐसा कछु कीजै ... । बाढै रैनि न होइ सकारा ॥
तब माधौ वीना कर लीन्हा। ... नयननि सुविलीन्हा ॥
सरस बजावहि वीन सुरगा। टिक्यौ चद थकि रहे तुरगा ॥
कुलानै। बाढी रैनि न होइ बिहानै ॥
स .. , राहुजाइ सूरज गिलहु।
चलन कहत पिय प्रात, रैनि च निधि ॥
बढी रैनि नहि होइ उजियारा। तब माधव धरि वीन विहारा ॥
थक्यौ नाद मृग चल्यौ उदासा। अथयो चद सूरज परकासा ॥
वीती रजनी पृथ्वी जागी। माधवनल उठि भयौ विरागी ॥
पुनि कामा सो अग्या लेई। आग्या लै मारग पगु देई ॥
कहै नारि हौ ही तुम थाहू। हौ न कहौ माधौनल जाहू ॥
रसना पाकौ साइ, चलन कहत जो मित्र को।
मद द्रिस्टि मति होइ, जो निरखै बिछुरन सजन ॥
करि धाती पोथी करि बाँधै। उठ्यो विप्र वीना धरि काँधै ॥
गहि रही कामकदला बाहीं। हों तोहि जान दैउ जो नाहीं ॥
कहति काम ये मीत बताउ। कै जु चले मन मोर लुभाउ ॥
अहो मीत सज्जन परदेसी। विद्याधर मनमोहन वेसी ॥
मारि कहा रिनि मेटौ दाहू। ता पाछै तुम पर भुमि जाहू ॥
नैन झरत जिमि मेह, गरब देह भीजत सकल।
बिछुरत नयौ सनेह, मन ब्याकुल तन थकित भय ॥
कहै त्रिया पूजै आस तिहारो। कर अजुल मुहि दीजौ वारी ॥
प्राननाथ अब क्यो इच्छा आवै। ताके आसू भरि भरि आवै ॥
रति गति मति लै गवनहु मोरी। लै सुखु दै दुखु सबहु जोरी ॥
नेहु नाव तवगुन करि लीना। छाँडि बियोग समुद महँ दीना ॥
बिन गुन नाउ लगहि नहिं तीरा। करि हा हीन झकोरहि नीरा ॥

नैन समुद तारग, प्रीतम विनु उमगे फिरहिं।
बिनु गुन बोहित अग, बूड़हि सो त्रिय कत बिन ॥
तजि समीप जिनि करहु बियोगिनि। तुम बिछुरत हैहौं हम जोगिन ॥
कथा पहिरि जटा सिर केमा। घर घर फिरहु तपस्विनि भेसा ॥
मुद्रा पहिरि भस्म सिर लाऊ। मुख माधौ माधौ गुहिराऊ ॥
किंगरिय गहि दिन रैन बजैहौं। जोगिनि है माधौ गुन गैहौं ॥
घर घर वन वन ढूढौं तोही। सो कछु करौं मिलौ जो मोही ॥
खड खंड तीरथ करौं, कासी करवत लेहुं।
मन रच्या करि मरि जियौं, ढूढि मित्र को लेउ ॥
जिन दै जाहु बिरह के हाथा। पाइन परहु लेहु मुहि साथा ॥
ये हो मीत पडित पइडांही। बाट मंझि जिनि छाड़हु मोही ॥
मोहि मारि जाहु पिय नाहा। छाँड़हु प्रान न छाडहु बाँहा ॥
चद विलोकत सकल चकोरा। चकवी सती होई जो भोरा ॥
नैन सकल निरखत भावता। जिय दूखत सुनि बिछुरि भवता ॥
आलम प्रीतम के मिले, अग अंग सुख होइ।
पलक आट जग लाज तें, रहौ सकल सुख होइ ॥
कहै नारि सुनि विप्र उदासी। मेरे गृह जो करहु निवासी ॥
जिहि मुख सुखद बचन सुनावहु। तेहि मुख काहे चलन कहावहु ॥
माधो नैन नीर भरि आये। कामकदला बचन सुनाये ॥
बोलै विप्र नैन बरसाहीं। सुनहूं नारिय छाँडहु बाहीं ॥
तब मुख निरखि नैन सुख पाऊ। बिछुरि जानि कै वहि मरि जाहु ॥
भावता के बिछुरनै, नैन उमगि जल धार।
मन अधीर तन पीर अति, बिरह उदेग अपार ॥

———

माधव-कामकंदलावियोग

सखी आइ कर बाह छुड़ाई। चल्यो विप्र त्रिय गई मुरझाई ॥
काम मूर्छित धरनि मह परी। सखी आइ करि अकन भरी ॥
लै करि सखी सेज पर धाई। तन व्याकुल जनु मिरगी आई ॥
अधर सूक जिय रहे निरासा। सखि जीवन की छाड़ी आसा ॥
मूदि नासिका छिरकहि पानी। पुहुप मूरि औषध बहु आनी ॥

करि उपचार सखी थकी, रहीं बिसूरि बिसूरि।
बिरह भुवगम वा डसी, ताकौ मत्र न मूरि ॥

पुनि इकु मत्र सखी मिलि थापहि। कान लागि माधवनल जापहि ॥
माधौ माधौ उहि गुहिरावौ। जागि नारि विप्र जनु आयौ ॥
सुनत नाउ जब नैन उघारे। श्रवन नैन जल मानहु नारे ॥
सूनौं भवन देखि बिनु मित्रा। भई पीत तन व्यापी चिंता ॥
बिन कॉदव जिमि कमल सुखाई। बिना सूर्ज ज्यों तेज मुरझाई ॥

जैसे जल स्यौ मीन, घरी एक ज्यों बिछुरई ॥
सदा रहे तन छीन. छिन ही छिन दुख सचरै ॥

यह हिय वज्र वज ते गाढा। पाल्यौ वज्र वज्र मे बाढा ॥
जा दिन मीत बिछोहा भयऊ। तॅवकि निखड खड है गयऊ ॥
बिछुरन जस भा ताल तरकै। पापी हियौ नेक नहि फरकै ॥
ऐसे निलज रहत नहि प्राना। मीत बिछोह सुनत किमि काना ॥
गये न प्रान मीत के सगा। ऐसे निलज रहत गहि अगा ॥

आलम मीत विदेसिया, लै गयो सपति सुष्ष।
नैन प्रान तन विरह बसि, रहे सहन को दुष्ष ॥

गयो विप्र चित्त उचाटउ। अब कह पाऊ मीत बतावउ ॥
तीन्या अपने होई न कोई। छिन इक बिछुरै नैन दुख होई ॥

चदन जान नहि पीर, तादिन भरहि चकोर दूख।
व्याकुल रहे सरार, निसि अँधियारी सास धुनि ॥

तजि सनेह हम धौन लगायौ। कामकदला बहु दुख भयौ ॥
दिन बीतै रजनी ज्यों आवै। भरै नैन जल पलु न लगावै ॥
खिन माधौ माधौ गुहिरावै। खिन भीतर खिन बाहिर आवै ॥
बिरह ताप निसि सेजन सावै। कर मीजै सिरु धुनि धुनि रोवै ॥
ऐसे दुख करि रैन बिहावै। काटि जतन बासर नहि पावै ॥

जो दिन होइ तो निसि रटै, जो निसि होइ तो प्रात ॥
भा दिन सातिन रैनि सुख, बिरह सतावत गात ॥
कामवत बिरहा बसि भई। बिद्याबुद्धि सकल नसि गई ॥
नृत्य गीत गुन की चतुराई। गति मति आनि बिरह चौराई ॥
जिहि तन मन बिरहा सचरै। सो जिउ जीवै नहि पुनि मरै ॥
बिरह अनल सोइ लै सुख जारइ। रोम रोम वेदनि सचरई ॥
पाउ हर्ष सुख रहै न कोइ। जिहि सरीर बिरहानल होइ ॥

बुधि बिद्या गुन ग्यान, प्रेम चाव धुनि हर्ष वल।
सब तजि होइ अयान, जा घट बिरहा सचरै ॥

कामकदला भई वियोगिनि। दुर्बल जनू वर्स की रोगिनि ॥
अजन मजन भोग बिसारे। सजल नैन वहैं जल के नारे ॥
बस्त्र मलीन सीस नहिं धोवे। लक टेक माधौ मग जोवै ॥
नींद न भूख न भावै पानी। काया छीन दीन मुख बानी ॥
हा हा आइ स्वास के गाढे। छिन छिन बिरह अनल तन बाढै ॥

हा हा प्रान न सग गय, जब बिछुरे भावत।
कर मीजै बस्तर धुनै, गहै अँगुरिया दत ॥

पलक बाह नहि रहहि नियारे। मगन भये नैन के तारे ॥
माधौ पीर कदलहि व्यापी। मनमथ अग तपति त्रिय तापी ॥
तोरै तनु मनु डारै रहही। हृदै पीर नहिं का है कहही ॥
छिन अचेत छिन चेतहि आवहि। पुनि पुनि बिरह बिया तन तावहि ॥
स्वास लेत पिंजर ज्यों डोलहि। हाहा सजनी मुख नहि खोलहि ॥

रकत न रहै सरीर, पीत पत्र के बरन तन।
डोलत अतिहि अधीर, पवन तेज नहिं सहि सकत ॥

सखी आनि मुख नीर चुवाहीं। हिदै तपत घसि चँदन लगावहि
कुसुम सेज पर जो पगु धरई। तिहि छिन काम अग्नि पर जरई ॥
त्रिविध पवन त्रिय सहै न पारै। चदन चँद अधिक तन जारैं ॥
पीक मधुर धुनि बोल सुनावै। मदन घाउ पर जनु बिष लावै ॥
गीत नाद रस कवित कहानी। श्रवन सुनत ये विष सम बानी ॥

अकुलाई तन विरह के रस सँजोग रसलीन।

माधव विरह वर्णन

बिछुरे कामकदला नारी । माधौनल मन भय दुख भारी ॥
बिरह के साँस जु हिरदे बाढ़ैं । गहि गहि आहि आहि कै काढ़ैं ॥
बन बन फिरै नैन जल धावै । बिरह सँताप नींद नहिं सोवै ॥
छिन बैरागी बीनु बजावै । सूखे गात अगिनि जनु लावै ॥
मन चिंता करि त्रिया वियोगी । गोरख ध्यान रहे जिमि जोगी ॥

अगम अथाह अलेख अति, विरह समुद्र अगाध ।
प्रीति हिरानी बुद्धि जनु, भूले ब्रह्म समाध ॥

विरह समुद्र अगम अति आही । बूडि मरै नहिं पावै थाही ॥
बुधि बल स्यै कोउ पार न पावै । जौ नर सप्रेंग गुन चढ़ि धावै ॥
विरह डसत नर जिऐ न कोई । जौ जीवहि तौ बौरा होई ॥
विरह चिनग जिहि तन पर जारै । छिन छिन विरह अगिनि विस्तारैं ॥
सोइ अगिनि माधौनल लागी । बीनु बजाइ रहे वैरागी ॥

हिऐं हूक भरि नैनजल, विरह अनल अति हूम ।
अतर घर सवर बरै, स्वास प्रगट भइ धूम ॥

जिय बिनु सूक पत्र ज्यौं डोलै । सूल सहित माधौनल वोलैं ॥
निसि दिन विप्र पीर करि रोवहि । वन पछी निसि नीद न सोवहि ॥
बाघ सिंह कोइ निकट न आवहिं । चहुं दिस विरह अग्नि अति धावहि ॥
विरही नैन सजल मुख भरे । सीतल होत तपन जिहि हरे ॥
स्वासा वेग नैन भरि पानी । सानल गत बिरहा की जानी ॥

वस्त्र मलीन उदास तन, उभय स्वास बहु लेइ ।
नीदं भूख लजा तजै, विरही लच्छन एइ ॥

माधौ नैन रहे भरि आँसू । सूखो चर्म रुधिर अरु माँसू ॥
तब माधौ मन माहि विचारहि । विरह बासु मन आपु सँभारहि ॥
अहो वन विरह जोर मरि जाँहू । कामकदलहि हौं न मिलाऊ ॥
अब खोजहु कोउ जग उपकारी । मिलवहि मोहि कदला नारी ॥
ढूँढो पर वेदनि जिहि होई । दुखखण्डन नर जौ कहुं होई ॥

लच्छ दैन सकट हरन, जीवन प्रन मति धीर ।
तिहि के कलि उत्तम करम, ते खडहिं पर पीर ॥

विक्रम सहायता खंड

यहै मत्र माधवनल लागा । बल सँभारि कन तजि मग लागा ॥
कोइ न भयउ कलि त्रिया वियोगी । माधौनल जो भरथरि जोगी ॥
जग्य विचारि माधौनल कहै । चल्यौ जहाँ नृप विक्रम रहै ॥
पर दुख हरन दसौ दिसि दैनी । सुनियतु विक्रम नग्र उजैनी ॥

सुध सगति बहु करत है, जा मन उत्तम होइ ।
पर दुख खडन तौ गनै, नेह दान मुहि देइ ॥

काम के बस माधौनल चला । किहि विधि मिलै कामकदला ॥
बीना विरह साथ जो लीन्हे । नींद भूख प्यास बस कीन्हें ॥
मारग चल सकल दुख लैने । पहुँच्यौ जाइ नगर उज्जैनै ॥
धर्मपुरी सब नगर सुहावा । हाट पटन बहु देखि बनावा ॥
चहुँ दिसि नगर बाग फुलवारी । ताल कूप सलिता बहु भारी ॥

कनक खचित मनि मदिरनि, कलस धुजा फुहराति ।
राव रक नहि चीन्हिए, पूरन पुर जिहि भाँति ॥

अति वियोग माधौ कौ भयऊ । ततखिन चलि मदिर म गयऊ ॥
पुनि पुनि हाट पटन फिरि देखै । आनद पुरी बराबरि लेखै ॥
छत्तिस पुरी नगर बैपारी । बैठे हाट महाजन भारी ॥
कहूँ नाच कहुँ पेखन होई । कहूँ पवारा गावत कोई ॥
कहुँ रामायन भारथ होई । कहुँ गीता कहुँ भागवत होई ॥

कहुँ पडित द्वै सहस हैं, कहूं करहिं कवि वाद ।
कहूँ मल्ल बिहल भिरहि, कहूँ गीत कहुँ नाद ॥

अति उदास माधौनल भयऊ । तब राजा के मदिल गयऊ ॥
राजमँदिर मनिगन उँजियारा । कै विधना कैलास सुधारा ॥
द्वारैं पडित तापस ज्ञानी । देस देस के भूपति जानी ॥
द्वार भीर नरपति कै होई । नैकु जुहारु न पावहि कोई ॥
देखि विप्र मन भयउ उदासा । राज भेंट की तजि जिय आसा ॥

दिन उदास दहुं दिसि फिरहि, नैन दगन के नीर ।
येक न काहू सौ कहै, अतर गति की पीर ॥

दिवस व्याधि माधौ कौ लागी । मन महँ कामकदला जागी ॥
बिप्र एक सग करि लीन्हां । करि अहार माधौ मो दीन्हा ॥
करि अहारु माधौनल गयौ । नदी तीरक उदक जो भयौ ॥

हाटक यह घारे सकल, भरहि वारि पनिहारि ।
येक नारि मज्जन करहि, अग मलाइ सुधारि ॥
कनक कलस भरि सबरी नारी । धरि धरि सीस चलहि ते वारी ॥
मारग छाँडि चलहिं ते नारी । तोरहि फल औ फूल उपहारी ॥
येकै चलैं घूँघट पट डारै । चदन वदन तप अगारै ॥
लखि चरित्र माधौ मुख फेरा । दुख व्यापौ तहँ कामा केरा ॥
निसु दिन रहै तहा चितु लाई । पाहन रेख न मेटी जाई ॥
द्रग पूरन की तारिका, मूरति रही समाइ ।
जित देखौ तित सो त्रिया, पलक न इत उत जाइ ॥
दिन इक माधौ गयौ सुजाना । मडप महादेव कौ जाना ॥
मडप देखि भेख मन भावैं । तहा राइ विक्रम नित आवैं ॥
तिहिं मडप माधौनल गयौ । विरह ताप व्याकुल मनु भयौ ॥
जामैं विरह व्यापै सोइ जानै । अन जानत मुख कहा वखानै ॥
मन उदास माधौनल भयऊ । दोहा लिखि मदिर महँ गयऊ ॥
कहा करौं कित जाऊँ हौ, राजा रामु न आहि ।
सिय वियोग सताप वस, राघौ जानत ताहि ॥
रामचद्र नहिं जग महँ आहीं । सिया वियोग किधौं दुख जाहीं ॥
राजा नल पृथिवी सौं गयऊ । जिहि बिछोह दमयती भयऊ ॥
वनबासी अरु भेद सँजोगी । राजा फूहर वाचर भोगी ॥
बिछुरत त्रिया भयउ सो जोगी । भरत राज पिंगला वियोगी ॥
राजा रतनसेनि नहि भयऊ । पदमावति लगि सिघल गयऊ ॥
मधुकर कमलहि आहि, कोजि मालती वियोगु ।
ये सब गये जगत्र मैं, विरही करि करि जोगु ॥
दोहा लिखि माधौ वैरागी । गयौ नगर कामा अनुरागी ॥
तिहि मडप राजा पगु धरई । महादेव की पूजा करई ॥
पूजा करि प्रदच्छिना देई । राज द्दष्टि दोहा पर गई ॥
दोहा बाँचि राज यह कहई । विरह अग्नि किहि व्यापति अहई ॥
मोरैं पुर विरही कोउ आवा । विरह वियोग सताप सतावा ॥
आलम ते नर तुच्छ मति । जे पर हँथ मनु देहि ।
सुख सपति लज्या तजैं, दुख विरहा सोइ लेंहि ॥
राजा कहै सुनौ सब कोई । देखहु नर बिरही सो होई ॥
मोरे नग्र दुखी जो रहई । सकवसी मोसौं को कहई ॥
अब जो सौं विरही नर पाउ । सुनि वेदनि सब तुरत नसाउ ॥
कोइ वह पुरुष ढूँढ़ि सो ल्यावइ । राजा कहै लच्छि सो पावइ ॥

दुख खडन नृप दयानिधि, तन पीरे पर पीर ।
पुनि पुनि चितचिता करहि, यह विक्रम मति धीर ॥
राजा अन्न पान नहि भावहि । मन बच जब लग जो नहिं आवहि ॥
नर नारी सब ढूँढन धाई । विरही लच्छिन सकल बुझाई ॥
ढूँढहि हाट पटन फुलवारी । ढूँढत बन महँ झूलत वारी ॥
ज्ञानवती दूती इक आई । विरह वियोग खेल सब रहई ॥
सो चलि जिहि मडप महँ जाई । माधौनल ता छन गया आई ॥
तन दुर्वल अँखियाँ सजल, भरि भरि लेत उसास ।
चित उचात मन चटपटी विरह उदोग उदास ॥
मन उचाट छिन बीन बजावहि । जोरे सुनहिं तिहिं विरह सतावहि ॥
खिन खिन कामकदला रटई । स्वाति बूद को चातक चहई ॥
ज्ञानवती त्रिय सुनि मुख बानी । मन मह कही यहै सुग्यानी ॥
विरही पुरुष आइ यह सोई । जाकर दुखु राजा को होई ॥
कामकदला त्रिया वियोगी । तन मन छान भयौ सो जोगी ॥
मन मारै वस्तर मलिन, द्रग भरि ऊँचे साँस ।
तन दुर्बल पिजर झलक, रचक रकत न मास ॥
ज्ञानवती छिन इक कहि बानी । सखी बीस दस आनि तुलानी ॥
कहै सखी सौ सो यह वह आही । नरनारी ढूढत सब जाही ॥
अब लै चलहु वेगि गहि बाहीं । मखु पावइ विक्रम नर नाही ॥
पूछहि बात न नल मुख बोलहि । दुर्वल गात पवन ज्यौ डोलहि ॥
जो कछु बोलहि उतर नहि देई । नीचे नैन स्वास भरि लेई ॥
रहै ताहि को ध्यानु, मन माला हित मत्र जपि ।
ज्यों जोगी करि ज्ञान, स्रवन सुनत नवगति मुखहि ॥
बोलहि सखी सुनहु बैरागी । विरह ताप सुख सपति त्यागी ।
बोलहु बचन पीर सब कहहू । काहे दीन छीन तन रहहू ॥
ताकी सखि मानि मन बोलौ । जिहि वियोग विरहा बस डोलौ ॥
छिन एक बचन कहै छिन रोवहि । नीरज नैन कमल मुख धोवहि ॥
दुख को बात दुखिया कहै, दुख वेदनि सुख त्यागि ।
दुख समुद्र साइ परयो जो, रहयो अग दुख लागि ॥
बिछुरत कामकदला नारी । माधौनलहि भयौ दुख भारी ॥
पुनि मुख कहै विरह की रीती । अपनी कामकदला प्रीती ॥
अति उचाट मुख विरह बखानै । जिहि यह व्याप्यौ सोई जानै ॥
माधौ पीर सखी को व्यापी । विरही बात सखो सब थापी ॥
सुनत बचन त्रिय अग पसीज्यौ । नैननीर कचुकि तन भीज्यौ ॥

हौं वलि वलि जिहि जीव, पर वेदनि जिहि वेधियौ ॥
धृक ते पाहन हीय, नीदन भिदहि पषान मै ॥
बोलहि ज्ञानवती गुन नारी। चलहु विप्र अब नगर मँझारी ॥
हम राजा विक्रम की दासी। तुम वेदनि मन माहिं उदासी ॥
हम पठई राजा तुम पासा। चलहु वेगि मन पूजै आसा ॥
चल्यौ विप्र माधौ उहि सगा। त्रिय वियोग तनु रह्यौ न अगा ॥
जह सकवधी हतौ नरेसा। राजा मदिर कियौ प्रवेसा ॥
ज्ञानवती इमि उच्चरहि, सो विरही है आइ।
विप्र देखि राजा उठ्यौ, कीन्हौ आदर भाउ ॥
राजा वरन देखि कै कहै। नख सिख विरह अनल तनु दहै ॥
मूरति नयन रोइ जल धारै। कुदन देह नेह बस मारै ॥
पूछहिं राइ सुनहु द्विज देवा। अज्ञा होइ करहुँ सो सेवा ॥
कवन देस जासौ पग धारे। दरसन देख्यौ भाग हमारे ॥
अपनो नाँउ कहौ वैरागी। किहि के नेह फिरहु सुख त्यागी ॥
किहि कारन भये बिरह बस, दुख सँग फिरहु उदास।
कहौ विथा हिय पीर सम, विधि पुजहिं सब आस ॥
राजा मो माधवनल नामा। उत्तम सग करहु विस्रामा ॥
विद्या पढेउ करन सगीता। समुद्रिक जोतिक गुन गीता ॥
काव्य कोक आगम हि बखानहुं। पिंगल पढेउ सकल गुन जानहुं ॥
कर मृदग गति बीन बजाऊँ। पट रस राग रागिनि सँग गाऊ ॥
नृत्य चतुर्गन वेद विनानी। केलि चातुरी उकति कहानी ॥
पसु भाषा औ जल तरन, धातु रसाइन जानु।
रतन परख औ चातुरी, सकल अग सग्यानु ॥
पुहुपावति नगरी मों ठाऊ। गोविद चद राज को नाऊ ॥
कर्म रेख सन विग्रहु भयऊ। निर्हि मोहिं देस निकारौ दयऊ ॥
तव मैं आन उदास मनु कीन्हा। कामावति नगरी पगु दीन्हा ॥
कामसैनि राजा तह आही। सुरनर सकल सराहैं ताहीं ॥
तिहि पुर कामकदला नारी। रूप राग विद्या दस चारी ॥
नैन लगे तिहि रूप, तजि गुनबुधि वल चातुरी।
ज्यों दादुर वस कूप, निकसत परहि जु विरह बस ॥
जा दिन मोर जन्म जग भयऊ। चित परि जहा ब्रह्म लिखि गयऊ ॥
मो त्रिय निरख न बिसरहिं काहू। चित कर ध्यान रहैं द्रिग वाहू ॥
अपन रही ते अपन लागीं। जिहि निरखत सुख सँपति त्यागी ॥
अनुपम रूप विधाता दीन्हां। आँखिनि निरखि जीउ हरि लीन्हां ॥
जिय बिनु सदा रहैं नहि आसा। हिरदै नाहि जु कियौ निवासा ॥

भावता के मिलन कौं, हा हा पल न कीन।
नैन तपत हैं दरस कौं, तन परसन को जीय ॥
पंडित गुनी सकल बुधि ग्यानी। देखि विप्र मुख रह्यौं बिनानी ॥
राजा देखि अचभौ रहई। कुछवक उतरु माधव कह देई ॥
हौं पंडित तुम जग्त गुसाई। सब गुन पूरन काम की नाहीं ॥
तुम देखत त्रिभुवन वस होई। तुम ही वस्य करहि जो कोई ॥
यह मन मानिक वस करन, वाति अत लै देहु।
विरह वस्त्र सुख त्यागि कै, दुख वियोग सब लेहु ॥
सुनि राजा माधौनल कहई। यह मनु जौ अपनै बस रहई ॥
नैन बसीठ डीठ अति आँहीं। आपहि मनु दै फिर अकुलाहीं ॥
निरखत नैन कदला नारी। लाग्यौ मनु दीन्हौं तनु डारी ॥
तिहि बिछुरत अन अबु न भावहि। छिन छिन प्रेम अधिक मन आवहि ॥
मित्र वियोग बिरह दुख होई। जिहि दुख रहै जानै पै सोई ॥
बिछुरत ऐस वियोगु, स्वास उर्द्धसी लैं रहै।
अब विधि करत सँजोगु, नातर प्रान विमुक्त है ॥
राजा कहै सुनहु गुनरासी। गनिका सौ नहिं प्रीति गनासी ॥
राजा पूछहि विप्र सुजाना। कहियौ उद्दासी पुनि ग्याना ॥
जब लगि माडो की नहिं रीती। तब लौंहीं गनिका सौं प्रीति ॥
गनिका प्रीति न सदा चलाई। धन सों प्रीत बिन धन चलि जाई ॥
केलि फूल दासी कौ हेतू। रूप रग अतरगति सेतू ॥
नैन अनत चैना अनत, अनतै चित्र निवास।
जनि पातर परतीत करि, विस्वा बिसु विस्वास ॥
बालहि विप्र सुनहु नर भारी। आँखिन बीच सुदेखेहु नारी ॥
जो जेहि राता सो तिहि भावहि। तेहि विनु सून द्रिस्टि जगु आवहि ॥
जो जाके मन माह बसाई। तजि वदन सालहि गज पाई ॥
सप्त समुद्र सलिता जलु वहई। चातक स्वाति बूद कौं चहई ॥
तारा गगन भरे दुति मदा। दुखित चकोर रहै बिनु चदा ॥
जो जिहि राता होइ, निसि वासर सो मन बसहि।
ता बिनु जियै न कोइ, बिछुरत हर जल मीन ज्यौं ॥
जो चाहौ सो हम पर लेहू। तजौ विप्र गनिका सौं नेहू ॥
हौं तो तजौं नेह कर धरई। यह मन जौं अपनै बस होई ॥
गुन धन जीव कदला लीन्हा। दुद उदेग मोहि कर दीन्हा ॥
रकत मास कछु रह्यो न चीन्हा। आँसू रुधिर हिदैं करि लीन्हा ॥
जब लगि जीवहुं मरि जियहुँ, सुर्ग नर्क विस्राम।
तब लगि रटौ विहग ज्यौं, काम कदला नाम ॥

सो मतिहीन वज्र तनु होई। सग्रह नेहु न जीवै कोई ॥
पूरब जन्म कोटि जौ करई। तब सो नैकु पथ पगु धरई ॥
मानुस पसु अतरु यह अहई। मानव सोइ नेहु जो बहई ॥
ब्रह्म ग्यान पावै पुनि सोई। जिहि तन तेज नेह कौ होई ॥
अध कूप वरि देहु, गुप्त प्रगट कोइ नहि लखहि ॥
जानै दीपक नेहु, तब सब देखै रूप गुन ॥
माधौ बचन सुनै जो कोई। सकल सभा को आवै रोई ॥
जो रे सुनै सो देखन धावै। जा देखै तेहि विरह सतावै ॥
नारि बैठहीं है इक सगा। करैं बात तब दहैं अनगा ॥
नगर एक आयौ बैरागी। अति सुदर रस जान सुखत्यागी ॥
प्रेम नैम करि रैन दिन, अग चढायौ राखि।
सुनि धुनि सोई सीत कौ, दुद बिरह अस भाव ॥
एक समै विक्रम नर नाहा। गहि लीनी माधव नल बाहा ॥
विप्र सग लै धाम सिधारा। दीप मसाल मनिगन उजियारा ॥
मदिर जोति मानौ कविलासा। चदन मिली अनूपम वासा ॥
कनक भूमि पाटवर वासी। कुकुम छिरकत केसरिरासी ॥
तिहिं मदिर सिंहासन छाजा। तिहि पर बैठि विप्र अरु राजा ॥
कवित नाद गुन चातुरी, अर्थ ज्ञान सिंगार।
जो राजा मुखउच्चरहि, सो माधौ करै विचार ॥
जो बूझै विद्या नर नाहा। सो सपूरन माधौ माहा ॥
तब राजा उठि चरन पखारे। अहा विप्र तुम ईस हमारे ॥
माँगहु मन इच्छा जो होई। अर्थ द्रब्य हम पुजवहि सोई ॥
मागौ यहई बात सुनि लीजै। मों कह कामकदला दीजै ॥
जिहि कारन हम तन मन खोदब। रकत धार निसि बासर रोयब ॥
वेगि देहु करतार, बिब अँखियन पुनि पख वलु।
उडि देखौ इक बार, भावता के दरस कौ ॥
राजा कहै सुनु विप्र गुसाईं। दिन दस रहौ नलन की नाहीं ॥
दल पैदल सैना सँग लेऊ। लै तुहि कामकदला देऊ ॥
वर वर बूझि जीति मुह मागैं। राजा बाधि दैउ तुहि आग ॥
दिवस दिवस राजा बौरावहि। माँगि विप्र इहिंठा चित लावहि ॥
यह मन दियौ प्रैम चित मोहा। रह्यो लागि चुबक जनु लोहा ॥
मोहन मूरति चित्र लखि, चित पर धरी सुधारि।
सो पलु भूलै महि कहू, जो बीतै जुग चारि ॥
विप्र सग विक्रम नल भारी। गयौ सग लै भूमि सँवारी ॥
प्रभव गुनी आये बहुभारी। राजा करहिं विप्र मनुहारी ॥

ताल पखावज बोलि मँगाये। गाइन गुनी कपरिया आये॥
कमल बदन मृग नैन सुहाई। पातुर बीच काछिकै आई॥
मध्य छीन औ भूखन सोहैं। नैन निकट करि सब मन मोहै॥
एक भूमि वैडारिये, दामिनि ज्यों छिपि जाइ।
पुष्प लता जिमि पायन, धुनि अति चचल फहराइ॥
नर निक्रम औ विप्र उदासा। देखहु नैन करहु मन हासा॥
करन कपोल विषै धरि हाथा। नैना भरि नीचै करिमाथा॥
बोला राउ नैन कत भरहू। देखौ नाचर हृस जिय करहू॥
मै माग्यौ कित सावक साजू। देखौ विप्र नृत्य तुम आजू॥
माधौनल आगु करि लीन्हा। जिहि जहँ नेह पसारा कीन्हा॥
धनि विक्रम सक बाँधिया, पर दुख हरन नरेस।
विप्र काज कौ उठि चल्यौ, छाँडि धाम धन देस॥

— —

कंदलाप्रेम-परीक्षा खंड

जोजन दस नगरी जब रही। राजा सींव आनि पुनि गही ॥
राजा मत्र एक जिय धरैं। इक रन बीच सैन दुइ करैं ॥
सँग खवास राजा असवारा। आयो नग्र लगी नहि बारा ॥
जाके नग्र विप्र हैं दुखी। सो त्रिय देखहु सुखी कि दुखी ॥

राजा पूछै नग्र मै, कामकदला नाम।
कहियत गुनी विचित्र हैं, सो किहि दिसि ताको धाम ॥

मदिर पूछि सो लियौ नरेसा। उत्तर पौरि महँ कियौ प्रवेसा ॥
भीतर मदिर पौरिया जाई। कामकदला बात जनाई ॥
उत्तम पुरिष पौरि इक आया। राजबस कोइ रूप दिखावा ॥
सुनि कै दासी पौरहि आई। राइ मँदिर लै गई लिवाई ॥
चित्रसार राजा वैसारा। बहुत दीप दीपक उजियारा ॥

कामकदला बिरहवसि, वस्तर गात मलीन।
मुख माधौ माधौ रटै, होइ सो छिन छिन छीन ॥

नृत्य गीत विद्या चतुराइ। गई बिसरि गुन की अतुराई ॥
बदन मलीन पीत रँग भयऊ। रकत माँस सूखि सब गयऊ ॥
राजा बोलहि मीठे बैना। बिरहिनि नारि न जोरहि नैना ॥
राजा बोलहि उत्तर नहिं देई। वरुनी छूटि नैन भरि लेई ॥

गनिका गृध सौं काज, ऊँच नीच चीन्है नहीं।
बोलहिं बचन जै लाज, बस करि राखैं पर पुरिष ॥

ऐसे बचन ना कहौ भुवाला। बिरह वसी जनु खाई काला ॥
सुनु विप्रहि दषिन करि दीन्हा। देषत ताहि नैन हरि लीन्हा ॥
देखौं ताहि जौरे मन माई। तिहिं देखत दोउ नैन सिराई ॥
मन धन जीउ विप्र लै गयऊ। तिहि बिनु सून द्रिस्टि जग भयऊ ॥
सो प्रीतम दै गयौ ठगौरी। तजि गुन रूप भई हौ बौरी ॥

जेहि मारग प्रीतम गये, नैन गये तेहि मग्ग।
दै दूनौ दुखु विरकौ, करि सूनौ सब जग्ग ॥

तब बल पग परसै वरनारी। रोसवत कीन्हौं सुख बारी ॥
कहै कदला सुनु नृप भारी। जक्त पूज्य तुहि लाज हमारी ॥
ज्यों हिय माँझ गुप्त जिउ रहई। त्यों द्विज रहै सदा सुख दाई ॥
दुज मन माहि निवास जो कीन्हा। बोलनि तजि रसना हरि लीन्हा ॥

आलम प्रान पयान अब, करत हिए अन आस।
निसि वासर द्रग तारका, प्रीतम कियो निवास ॥
राजा बूझि देखु इमि बाता। यह वेहि राती वह एहि राता ॥
इहि के विरह विप्र दुख लीना। विप्र के विरह त्रिया तन छीना ॥
दुहु की प्रीत रहीं दुहु छाई। दोऊ मन तन रहे भुलाई ॥
इन मैं अधिक विरह कौ टीका। जिमि आखिनि कौ मारग नीका ॥
ज्यौं सरवर मह कमल रहाई। बिछुरत नींद रहे कुम्हिलाई ॥
मालति लुबधी अलिरसहि, अलि मालति मकरद।
बिछुरन विरहा सूल सम, दही विरह के द्वद ॥
नर के प्रान नारि के सगहिं। नारि के प्रान पुरिष के सगहिं ॥
राजा निरखि रीझि मन माहीं। इन महँ प्रीति कपट कछु नाहीं ॥
इहि जिय प्रीति रीति कौ गहई। त्रिया विरह लगि अति दुख दहई ॥
चाहौं नैन नींद नहि आवहि। दुहु तन अन्न पान नहिं खावहिं ॥
ब्रह्म लोक अमीरस जानहु। गुन गधर्वहि प्रीति बखानहु ॥
आलम ऐसी प्रीत, परतन मन दीजे धाई।
गुप्त प्रगट अखिया मिलैं, दियौ कपट पट जाइ ॥
राजा निरखि वियोगिनि नारी। पूछहि गुरुजन सखी हँकारी ॥
किहि लगि इहि की सुधि बुधि गई। किहि के हेत नेह बस भई ॥
कहै सखी सब कामिनि पीरा। सुनत नैन भरि आवहि नीरा ॥
विप्र एक माधौनल नामा। तिहि के विरह यहि यह कामा ॥
सो प्रीतम दै गयउ ठगौरी। तन मन लाइ प्रेम की ढौरी ॥
यह पपीह पिउ पिउ करै, छिनु अचेत छिनु चेत।
औरन सुख विरहा अनल, भयौ बरन तन सेत ॥
रूपवत अति काम के भेसा। सो दुज छाडि गयौ परदेसा ॥
कैधो चहइ इदु ठगि गयऊ। कैधों बरस मदन कौ भयऊ ॥
मोहन रूप विप्र वह आवा। नैन लगाइ तिहि मन बौरावा ॥
ताकि चाह कोइ नहि कहई। तिहि बिनु त्रिया बिरह बस भई ॥
अन्न नीर एहि नींदन आवहि। दिन उदेग निसि रोइ गंवावहि ॥
मित्र वियोगिनि नारि, धारावरि सहि नैन जल।
रही रोइ पचि हारि, तन तन दुद उदेग करि ॥
कपट बचन राजा उच्चरई। दुहु की प्रीति रीझि कैं रहई ॥
मैं देख्यौ माधौनल जोगी। पुर उजैन रह त्रिया वियोगी ॥
नारि वियोगु ताहि दुख भयऊ। विरह के सूल विप्र मरि गयऊ ॥
ऐसे बचन जब राज सुनाए। त्रिया बधन कहँ जम उठि धाए ॥
सुनत कदला विस भरि गयऊ। धरनि पछार खाइ मरि गयऊ ॥

आलम मीत वियोग को, सबद पर्‌यौ जब कान।
लोभ न कीनौ स्वास कौ, गए आहि सँग प्रान॥
सुनत पिंगला जैसो कीन्हा। ऐसे जीउ कदला दीन्हा॥
सखी आनि करि नारी रिखाई। मानहु काल बासुकी खाई॥
बैठे दसन जीभ भइकारी। किलकै नहि छुटि गइ जब नारी॥
रोवै सखी छोरि कै केसा। राजा जिय मह करहि अँदेसा॥
जिहि लगि विप्र इतो दुख लीना। सो त्रिय बचन कहत जिय दीना॥
अति वियोग मालति सुनत, सूखे पल्लव मूल।
दुखित साल भये कलित बस, कलह सकत त्रिय सूल॥
गये प्रान छिन में मरि गई। राजा के मन चिंता भई॥
सीस धुनै राजा पछिताई। कइ अपराध कियों मैं आई॥
प्रथमै तिरिया बध मैं कीन्हा। घोलि हलाहल देखत दीन्हा॥
जौ जनतेउँ त्रिय देइ पराना। कत हौ वचन सुनाएउँ काना॥
उत्तर कवनु विप्र कौं देऊँ। वह मरि जाइ दोष द्वै लेऊँ॥
गात सरोवर पच वग, प्रान हस उहि वारि।
पिसुन बचन किये व्याधि विधि, दीनौ सकल बिडारि॥
राजा कहै सखी सुनु बैना। विरह दुखित भइ मूँदे नैना॥
विरइ तेज मुर्छित तन नारी। लै आयउ गर रूधि हकारी॥
यह के प्रान स्वर्ग नहि गयऊ। पच भूत आत्मा मूर्छित भयऊ॥
यह त्रिय करे काल नहि आयउ। आहि के सग प्रान उठि धायउ॥
जा तन मैं विरहा नल रहई। सो तनु आइ कालु नहि दहई॥
गये प्रान तन फिरयौ न जिहि, इहा गगन जिमि दूरि।
हौं पारस जिहि कर छुवौं, सीतल जीवन मूरि॥
इहि विधि विक्रम भयौ उदासा। नारि उठि चल्यौ निरासा॥
कर मीजै पछिताइ नरेसा। नीच माथ कै करै अँदेसा॥
गृथ गँवाइ ज्यौं चलै लुवारी। तैसे चल्यौ राजा मनु मारी॥
जाम तीन जामिन के भयऊ। राजा उतरि कटक मै गयऊ॥
जहँ तँबुआ साजै सै वारा। तिहि तँबुआ राजा पगुधारा॥
राजा नैननि नींद नहि, अन्न न भावहि पान।
मन महँ भींतय जुरत ही, सोचत भयौ विहान॥

माधव-प्रेमपरीक्षा

भयौ प्रात बैठ्यौ दरबारा । राजा माधौनलहिं हँकारा ॥
सभा माँझ नल बैठे आई । राजा विप्रहि बात सुनाई ॥
जब लगि विप्र कथा यह भई । सो त्रिय विरह ताप मरि गई ॥
सुनि बात माधौनल काना । तुम पर दिये कन्दला प्राना ॥
सुनत बात दिज बिस भरि गयऊ । धरनि पछार खाइ मरि गयऊ ॥

दँव दाधी मालति सुनत, अति दाध्यौ तिहि ठई ।
अलि मालति विनु नहि जिए, अलि बिनु मालति नाहि ॥

राजा वचन सुनत द्विज काना । इहि के सग दिये मुहि प्राना ॥
माधौ सकल सभा उठि धाई । स्वास नासिका मूदै जाई ॥
पडित गुनी वैद उठि धाए । जोगी मत्र गारहू आए ॥
ओषधि मूर मत्र करि थाके । फरे न एक जियहि गुन ताके ॥
सीतल गात विप्र कौ भयऊ । मन धन जीउ स्वास सग गयऊ ॥

आलम ऐसी प्रीति करु, ज्यों वारिज अरु वारि ।
वह सूखे वह ना रहै, रहै मूल दल जारि ॥

विक्रमचितारोहन खंड

करि उपचार लोग सब हारे। राजहि देखि आँसु भरि ढारे ॥
प्रथमहि तिरिया वध मैं कीन्हा। पुनहि विप्रहि जानत विष दीन्हा ॥
नर मारत कोइ मोखु न पावै। ब्रम्हन वध्य नर्क उठि धावै ॥
दोनों वध कीने मैं आई। चिहुरचि अग्नि जरौ मै जाई ॥
मै विस्वास गुप्त जिय धारा। छलु करि जीउ दोउ कर हारा ॥

प्रेम नैम निरखत रहत, यह नर नाहिन दोष।
भगत करत जिहि प्रीतमहि, तिहि नर नाहिन मोष ॥

सकल कटक मैं पर्‍यौ हिरोरा। छूटैं फिरै हाँथि औ घोरा ॥
रिध्या नाजु कोइ नहि खाई। सैना उठी सकल अकुलाई ॥
जिहि कै कारन इतनौ कीन्हो। तिहि द्विज वचन सुनत जिउ दीन्हों ॥
उठि राजा विक्रम बल वीरा। बैठ्यौ जाइ नदी के तीरा ॥
मलयागिरि के काठ उठाए। चदन अगर बहुत लै आए ॥

कियौ हेम सकल्प लै राजा, कर लै वारि।
घीउ कलस जहँ डारि कै, साजी चिता सवारि ॥

लोग बैठि राजा समुझावैं। नेगी नेह लोग सब आवैं ॥
कहैं लोग राजा तुम जरहू। थोरी बात लागि तुम मरहू ॥
राजा येतौ दुख जिनि करही। कोतिक नारि पुरुष जो मरही ॥
उठि कै चलहु कटक कौ जाही। नातर जरै सैना सग याहीं ॥
घर भर लोग कटक मै मरई। उठि किन चलहु साति जब परही ॥

जग समुद्र सुख दुख करम, नातिहि मेटन पार।
राज मरन व्यापहि सकल, जिहि पृथिवी को भार।

राजा कहै सुनहु सब कोई। जिहि विधि हानि धर्म की होई ॥
इहि जग माँहि मरन सब आये। राजा रक काल सब खाये ॥
जाको सब जग अपजस करई। जीवत मुयौ पाछै का मरई ॥
शिच्छा दई सब ही गहि रहे। आप आप को चित गहि रहै ॥
उठि राजा कीन्हें अस्नाना। धोती पहिरि दिये बहु दाना ॥

गगा जल अस्नान करि, द्वादस तिलक बनाइ।
नमस्कार करि भानु को, बैठि चिता मैं जाइ ॥

बैताल खंड

स्वर्ग लोक महँ बात चलाई। जीवन जरत है बिक्रमराई ।।
देवी देवता सब उठि धाये। चढ़ि बिवान सब देखन आये ।।
गन गधर्व किन्नर सब गुनी। तब बेताल बात यह सुनी ।।
जाकों मित्र वीर बेताला। सुनत बचन आयौ ततकाला ।।
राजा अग्नि दैन कौ चहई। तिहि छिन आइ बाहैं पुनि गहई ।।
तू सकबधी चक्कवै, सिह सूरपति सेस ।
किहि कारन तू जरत है, पर दुख हरन नरेस ।।
राजा कहै सुनहु बैताला। मै बड पाप आय कौ घाला ।।
पहिले तिरिया वध मै कीन्हा। पुनि मै जीउ विप्र को लीन्हा ।।
जिहि कारन पावक मै जरहूँ। जम के त्रास नर्क तै डरहू ।।
कह बेताल राजा जनि जरहू। ऐसी बात लागि जनि मरहू ।।
खिन मै अमृत ल्याऊँ जाही। विप्र नारि तुम देहु जियाही ।।
आलम उत्तम सोइ, अपजस तैकर का करहि ।
रहत न लज्जा होइ, आपु बुराई कान सुनि ।।
कहि बैताल सुनहुँ बलबीरा। मै लाऊँ जीवन कौ नीरा ।।
वेगहि गयो वीर बेताला। सुधाकुँड तहँ होते ब्याला ।।
परकत नयन बिलब न लावा। तुरत वीर अमृत लै आवा ।।
पहिले लै माधौ कौ दीन्हा। तिहि यह प्रेम पसारा कीन्हा ।।
सुधा पियत माधौनल जागा। आये प्रात सुन भ्रम जागा ।।
नैन उघरि स्वासा चली, कियौ प्रान विस्राम ।
'कामकदला कदला, लेत उठ्यो मुख नाम ।।
उठ्यो विप्र राजा सुखु पावा। तिहि छिन उतरि चिता स्यौ आवा ।।
तब बैताल के चरन पखारे। प्रान जात तुम रखे हमारे ।।
कियो अनद बाजा बहु बाजहि। अर्व खर्व अति द्रव्य लुटावहि ।।
सुनि सुख सकल कलक महँ होई। नर नारी की चिंता जाई ।।
राज कहै हौ तब सुख पाऊँ। लै अमृत कदला जियाऊँ ।।
भूसुर दीन असीस, जुग जुग जीउ नरेस बहु ।
लोभ न करयौ सरीर, प्रेम काल यौं चाहिये ।।

राजा-वैद खंड

कनक कलस अमृत भरि लीन्हा । राजा मेघ वैद को कीन्हा ॥
काम कदला के घर आवा । पौरि दार सों बात जनावा ॥
सुनि कै वैदु पौरिया जाई । सखियन आगे बात जनाई ॥
सुनि कै वैदु सखी इक आई । मदिर मै लै गई बुलाई ॥
सुदर वैद सुमूरति कामा यह की मूरि जियहि यह वामा ॥
पडित मीन विदेसिया, सुदर गुनो सु आहि ।
सनमुख आवत देखि क सखी रही सब चाहि ।
सखी बहुत कै आदर कीन्हा । पातवर बैठन का दीन्हा ॥
जहा कदला मृतक पराई । वैदहि जाइ सो नारि गहाई ॥
सीतल गात देखि कै नारी । तब कछु बैद करहि उपचारी ॥
बैठि सखा सौ बोलहि गाता । नाहिन स्वास झूँठि सनिपाता ॥
नहिन राग वेदन जिहि हरई । मितक परा वैद कह करई ॥
स्वग गये तऊ फिर, प्रान जिये जम जाल ।
ताकौ मत्र न मूरि कछु, डसी विरह कै व्याल ॥
सुनहु वैद जौ नारि जिवावहु । मुख मागौ सोई तुम पावहु ॥
मृतक परयौ जौ वैद जियावहि । सो आपन को ब्रह्म कहावहि ॥
वैद रोग को औषध करई । ताकौ कहा अचर्ज नर करई ॥
वचन निरास जब वैद सुनाये । सब के नैन नीर भरि आये ॥
साचहु मरी कदला नारी । परी खेह महँ खाइ पछारी ॥
गुन सुदरता चातुरी, जब लगि तब लगि प्रान ।
स्वास गहैं इहि अग ते, सब कोइ कहै समान ॥
निरखि वैद जिय आस कराई । जिन कोउ सखी और मरिजाई ॥
कहै वैद जिनि तोरौ वारा । देखौ कछू करौ उपचारा ॥
सकल सखिनु कौ धीरजु दीन्हा । अमत वैद हाय करि लीन्हा ॥
जहा हती कदला नारी । सींच्यौ अमृत वदन उघारी ॥
अमृत बूद जब मुख परयौ, आयौ चलि घर स्वास ।
बोली नारी कदला, भई सखी मन आस ॥
प्रगटे प्रान कदला जागी । उघरि नैन चिता सब भागी ॥
लेत उठी मुख माधौ नामा । पचभूत मै किय विश्रामा ॥
कहै सखिन सौ सखी सुहाई । केती बार नींद मुहि आई ॥
तब यह उतरु दीन्हौ वाला । तू तौ मुई विरह के काला ॥
यह विषहर धन्वतरि आयौ । मूर मत्र पढ़ि तोहि जियायौ ॥

यह हनुमंत महावली, पर स्वारथ चल्यो दूरि ।
लछमण को सकट पर्‌यौ, आनि सजीवन मूरि ॥
जब सुख काम कदला भई । सबरी सखिनि की चिंता गई ॥
तब उठि वैद के चरन पखारे । गये प्रान तुम दये हमारे ॥
कहै वैद हौं दान न लेऊँ । मागै और सुमागै देऊँ ॥
जौ जिय लोभ तौ गुनी न कहिये । गुन सकर वैगुन तै रहिये ॥
जौ जिय लोभ तौ गुन कहा, जौ गुन लोभ तौ काइ ।
गुन बिन रूपहि ना गुनौ, गुन बिन पुरिष अपाइ ॥
कहै कदला वैद सुनु मोही । वैद रूप नहि देखौ तोही ॥
कै तुम देउ रूप चलि आये । मुख अमृत दै माहि जिवाये ॥
मन बच बोलहु अपनी बाता । कहिये साँचु सत्त मै साता ॥
हौं सकबधी विक्रम राजा । पर की पीर हरहुँ करि काजा ॥
नगर उजैन राज तहँ करऊँ । दुखिया देखि सकल दुख हरऊँ ॥
माधौनल द्विज कारनै, चलि आयौ इहि देस ।
तुम तन मिर्तक देखि कै, कियौ वैद कर बेस ॥
तोहि मरन जब माधव सुनिऊँ । वह मरि गयउ सीस मै धुनिऊँ ॥
मै छल रूप दाइ सिर लीन्हा । तब उपचार जरन का कीन्हा ॥
जरतैं सुनि कै वीर वेताला । सो अमृत लायउ ततकाला ॥
प्रथमहि माधौनलहि जियायौ । तिहि पाछे हम तुम घर आयौ ॥
अब सब साजि सैनि लै अऊँ । युद्ध जीति तोहि विप्र मिलाऊँ ॥
उपकारन दुख हरन जे, अगीकरन अभार ।
सुरपुर तिहि कीरति करे, जग मै जस विस्तार ॥
ऐसे बचन जब राजा कहई । उठि चरन कदला गहई ॥
दया निधान तुम रूप मुरारी । राजनि के राजा बुधि भारी ॥
यह ससार समुद्र अथाई । तहँ तुम तारन तरन गुसाई ॥
विरह घाव जे वाषधि करई । ते नर दुहू लोक जसु लहई ॥
बूड़त नाव जे पार लगावहि । ते नर दुहूं लाक जस पावहि ॥
बिरला नर पडित गुनी, बिरला बूझन हार ।
दुख खडन बिरला पुरिष, ते उत्तम ससार ॥
ऐसे चरित तुमहि पर आवहि । यह बुधि लोक वैद कहँ पावहि ॥
पर उपकार करहु वलवीरा । बूडत नाव लगावहु तीरा ॥
कीरति कहिय न जाइ तुम्हारी । धर्म कर्म वलि वीर मुरारी ॥
तुम समर्थ करि हौ सब काजा । हम ससार नरनि के राजा ॥
जो बुधिवत महावली, नरसिर जे करतार ।
पर उपकार नर दुख हरन, जे अगवत पर भार ॥

कंदला-संदेस खंड

पायन लागौं सुनहु नरेसा । माधौनल सो कहउ सँदेसा ।।
गये प्रान लैगये उपाऊ । अब के गये न बहुरै आऊ ।।
तुम सन भई विपति की पीरा । जोगी भेष न कीन्हौ फेरा ।।
अब विधि मोहि आनि दिखरावो । निरखि विरह की पीर बुझावो ।।
पख होइ जो नैनन माहीं । छिन एक देखन को उडि जाहीं ।।
 द्दग पुतरिन की तारिका, निरखि मूरती मैन ।
 तब गुन माला कर लिये, जपौ सु वासर रैन ।।
बिति की बात कहौ सब मेरी । नृपति कह कहहुं विनती कर जोरी ।।
निसि दिन वहैं विरह दव देवा । हीयो तरकत सुनि जिय नेहा ।।
करि भर सेज नीद भरि होई । रजनी सकल सिराऊ रोई ।।
निसि दिन अग्नि गात ज्यों जरई । रोम रोम वेदनि सचरई ।।
सोचति रहौं निसि वासर जागी । नैम रहै तव मारग लागी ।।
 कर कपोल औ करन ये, सदा रहत इक सग ।
 रोइ रकत ये नयन मग, सेत बरन भया अग ।।
रितु बसत मोहि कोकिल दहई । मलय समीर आगि जिमि बहई ।।
पावस रितु बरसै जब मेहा । भुकनि मरौ हैं। सुमिरि सनेहा ।।
चातक मोदनि षरिय सताई । दामिनि दमकि प्रान लै जाई ।।
सूर चद्र सीतल सब कहई । मिलि समीर आगि जिमि बहई ।।
जे जे सीतल सुखद सहायक । ते सब मोहि भये दुख दायक ।।
 चदन चद कॅवलन कली, पिक चातक जु समीर ।
 ये सब वैरी मोहि तन, हौं क्यो राखौ धीर ।।
विरह बनावल सीतल रहई । उठत अगिनि नख सिख तन दहई ।।
मजन अजन कौन सिंगारा । सुनत न भावै नाद बिस्तारा ।।
माधौनल सो कहौ बुझाई । जौ आपनी विपत्ति जनाई ।।
विनवति हौं सकवधी राई । बिरह द्रिस्टि सौं लेउ बुझाई ।।
सो उपकार करौ जिय माई । दमवती ज्यों नलहि मिलाई ।।
 मालति अस सपति मिलै, पूरन ससिहि चकोर ।
 चकवी कौ चकवा मिलै, कॅवल विगसि भये भोर ।।
त्रिया विरह दुख राजा सुनिहू । देखत सुनत सीस कर धुनिहू ।।
काम कदलहि धीरज दीन्हा । राजा जोव कटक पर कीन्हा ।।
सखी सकल मिलि देई असीसा । चिरजीव राजा जुग बीसा ।।

तुरिय सिगारि भये असवारा। आये कटक न लागी बारा ॥
सिघासन पर बैठे जाई। लोक सभा सब लई बुलाई ॥
विरह कथा राजा कहै, निरखत बुधिजन लोग।
सुनत सकल सब थकित भे, प्रगट्यो विरह वियोग ॥
राजा कहै सुनौ सब लोई। यह जग ऐसा और न होई ॥
इहि की प्रीति इही जग जानी। जग मै जुग जुग चलै कहानी ॥
कलि मैं अमर भयौ यह नेहा। विरह की अग्नि देहैं जिय देहा ॥
पुनि राजा मत्री सौ कहई। सो कछु कहौ कथा निरवहई ॥
काम सैनि पहैं पठ्यौ वसीठा। बुधिजन चतुर सभा महा डीठा ॥
उत्तम बंस स्वरूप, गुनन बुद्धि परवीन।
वरि धरि वजन चतुर सो, पठ्यौ दै कर पान ॥

दूत-खंड

येहिलैं राजा पात जनाई । कामकदला माँगि पठाई ॥
जो कछु माँगै दर्वि सु देऊ । नातर जुद्ध जीति कर लेऊ ॥
रघुवसी इकु श्री पति नाऊ । पठ्यौ काम सैनि के ठाऊ ॥
चतुर दूत श्री पति चलि गयऊ । राजा द्वार सु ठाढो भयऊ ॥
दूत सुनत आगे भए, लेउ वेगि हँकारि ।
आदर सो तिहि लैन को, उठि धाये जन चारि ॥
आयौ सभा बैठि तिहि ठाऊ । राजा कीन्हौ आदर भाऊं ॥
राजा दूतहि मुखै लगायौ । कहौ बचन तुम कौन पठायों ॥
बोल्यो दूत सुनौ वलवीरा । हौ पठ्यौ नृप बिक्रम धीरा ॥
सकबधी वल विक्रम राई । सो तुम देस पहुँच्यौ आई ॥
माँगत देउ कदलानारी । विप्र काज आयौ बुधि भारी ॥
माधौनल के कारनै, नृप आयौ इहि देस ।
कामकदला विप्र को, माँगै देउ नरेस ॥
काम सैनि राजा तव कहई । रिस करि रूखे बचन न सहई ॥
निठुर बचन कस कहै बसीठा । बोलै और सभा की दीठा ॥
जो तुम कामकदला देऊ । सब दानिन मैं अपजस लेऊ ॥
देस देस के कहँ नरेसा । दीन्हौ दड बचायौ देसा ॥
जब लग स्वास जीउ भरि लेउ । तब लग दड न माँगे देउ ॥
बल करि आयौ राज अब, सूरवीर सग लाइ ।
मद गयद दल साजि कै, उठि रन मडौ जाइ ॥
कहै बसीठ राजा सुनि लीजै । येते लघु विग्रह नहिं कीजै ॥
देस गुरू राजा चलि आयौ । जाको सीस नरेस नवायौ ॥
आयौ विक्रमचद नरेसा । जा कह कपै सुरपति सेसा ॥
हय दल गज दल गवत न, आवै ही औसरः विचारि ॥
दुर्जन हू हँसि उठि मिलह, बोलहि रोस निवारि ॥
रानी कहै बसीठ सुनु बैना । भौह चढाइ रोस करि नैना ॥
काम सैनि नै पठ्यौ नेगी । कहौ राइ सौं आवै वेगी ॥
लै सदेस बसीठ उठि चलई । गयौ जहा नृप विक्रम रहई ॥
कहै बसीठ माँगे नहिं देई । क्रोधवत मनु लै मनु लेई ॥
कहै बसीठ राजा सुनहु, उठि रन मडहु जाई ।
सिंह रूप गाजैं सुभट, वे मृग चलैं पराइ ॥

युद्ध-खंड

सुनि राजा तब बोलहि बैना । गयद पैदल साजौ सैना ॥
साजौ मेघबरन गज कारे । चुवहि गयद घुमै मतवारे ॥
पर्वत से आगै द चलिऊ । धरनी धँमी दिकपति सब हलेऊ ॥
धूमर धूलि आन रथ जोती । छूटे सिह रूप जिव होती ॥
जबर जग गोला जब भारे । अस्टधात साचै सों ढारे ॥
हयदल पयदल गज दल, जोतिहि जाति सुरग ।
सूरबीर बानै बनै, चली चूम चतुरग ।
दुहू दिसि ते उमगे असवारा । लाह लपेटे अगम अपारा ॥
कूदहिं बाजी नाना रगा । नाचें यों ज्यों डह डहहि कुरगा ॥
उतिम जाति पछिम के ताजी । तिहि पर चढे सभट सब साजी ॥
बाधे बिष्र करि धनुक कर लीन्है । लाँकिहि कूटि सीस पर लीन्हैं ॥
साँग सेल फरसा चमकारा । चमकत लोह अगिनि की झारा ॥
रन मंडन खडन दवन, आनदै सब सूर ।
चलेति चचल चाउ करी, डरै ठकाइर कूर ॥
मेघ सबद जिमि बजै निसाना । उठै अकूट अंबर घहराना ॥
भरे झाझ धुनि सुनै अडारू । सूर समूह अरु बाजहि मारू ॥
मारू सब्द सुनहि जिमि बीरा । पुलकत रोम रोम अरु धीरा ॥
इक दिसि तै रथ जोरि चलाये । इक दिसि गज ढाढे सत भाये ॥
बीचहि लैकर पैदल भारा । तिहिं पाछे आवै असवारा ॥
सेल सोध कर रग बिनु, पाये भडन जूद ।
बहुरि सुभट जे सुभट सौ, सिह रूप ह्वै कूद ॥
बिच बिक्रम हस्ती असवारा । रन अभरन सब पहिरै सारा ॥
जामन चलत सेत सिर दती । स्याम घटा मानहु बगपती ॥
घंटक धुनि दिगपति थरहरइ । कर तजारत इद्रासन डरई ॥
चहुं दिसि बीर परवरिया चले । दोनौ जूझ इहूं बिधि भले ॥
मुड कूट सूरन के सीनै । गज सिपाह आँगे करि लीने ॥
सिहनि ऐसो पूत जनि, पर रन मडहि जाइ ।
कुभ पिदारन गज दलन, अब रन मडै जाइ ॥
जुद्ध राग प्रगटी सुनि काना । कामावति पुर सुन्यौ निसाना ॥
परी रोइ नगरी उकताइ । प्रजा पवन सब चले पराइ ॥
कामसैनि राजा तब बोला । चहुं दिसि देहु जुद्ध कह ढोला ॥

ततखन सूर समिटि सब आये। करि सकूट चहूं दिसि धाये ॥
अब राजा आग्या जौ देई। सब रन जाइ आगे है लेई ॥
जौ जगपतिहूं को सूनिय, मृग गन षुटि सब जाई।
सो हरजन की धाक सुनि, रहे न मदिर माँहि ॥
यकै साज साजैं रजपूता। दुर्जन को लागैं है भूता ॥
तू वर चढे बाँधि कै बानै। मिलि औ चले राव सब रानै ॥
काम सैनि राजा दल साजा। चले लरन मारू जब बाजा ॥
चले बजाइ राव औ बानी। चढी धौरहर देखति रानी ॥
अचरज सूरमा देखि कै, वली अनद करेइ।
दुहु बिधि माँग सिदुर भरि, हाथ नारियर लेइ ॥
इत तैं कामसैनि चढि गयौ। राजा बिक्रम सनसुख भयौ ॥
एक खेत जब दो दल भये। एक एक सों सनमुख भयो ॥
हिसहि तुरग चिकारैं हाथी। सोभैं हक हक मिलि साथी ॥
दुहु दिसि युद्ध राज भल बाजा। कायर डरैं सूरमा गाजा ॥
बान बाधिजु बिरद सुगावहि। सुनि सुनि सुभट उमगि करि आवहिं ॥
सुनि मारू कौ रागु, भुज फरकैं रन बीर के।
युद्ध जाइ मन लाइ, 'मारु' 'मारु' मुख उच्चरैं ॥
अगिन बान छुटैं दुहु ओरा। चकित बिजुकित हाथी घोडा ॥
धुनुषहि धनुष वीर जो नाहा। अटकैं पच बान सौ काहा ॥
चलै चक्र जो लै हथि नाला। पसरहिं धूम होइ अँधकाला ॥
छिन इक धनुष बान सौ लरई। हमकत बाहिर षग मह परई ॥
भीर बान तें सहैं न पारैं। दुहु दिसि तुरी भीरन को मारैं ॥
सूर गरजि काइर डरहि, सुनि गज सिह सदूर।
षड्ग खोल तैं जानियै, कोइ कायर कोइ सूर ॥
रावत पर रावत चढि धाये। धानष पर धानष चढि आये ॥
पाइक सौं पाइक भये जोरा। लरत बार यौ मुष नहि मोरा ॥
गज सौं गज कीन्हे चौ दता। चिकरैं कुंजर मैमत मंता ॥
बाजै लोह उठै टकारा। तापर फिरैं खड्ग की धारा ॥
फूटैं फूट मुड कटि जाहीं। बाजैं सार सार छन जाहीं ॥
सेज खड्ग नेजै सहैं, खाँय खड्ग की मार।
सूर वीर पैते गनौ, सहैं लोह की मार ॥
रावत सों रावत जो भिरइ। एकहि मारि एक पग धरई ॥
हाकै सूर सूर सौं भिरही। घायल भूमि एक गिरि परहीं ॥
मारै खड्ग उतरि गये मुडा। फिरैं राति धरती पर रुंडा ॥
सूर जूझि धर तेजे परही। रडौ मार मार उच्चरहीं।

कर न करैं बिस्राम , घाव जे सन्मुख सहि सकहि ।
जे जूझैं सग्राम , ते अपछर वर ह्वै रहहि ॥
सकर मुड बीनि करि लीन्हें । गूथि गूथि कर माला कीन्हें ॥
सन्मुख होइ जो देइ पराना । तिन कह स्वर्ग ते आवे बिमाना ॥
सग निसगनि करै उबारा । दुहु दिसि चलै रुधिर की धारा ॥
परहि खड्ग टूटै तरवारा । तब कर काढी कमर कटारा ॥
सुभट वीर खोलि कै लरहीं । दोनौ आनि भूमि मह परहीं ॥
गमि मारैं सनमुख लरै , जे मारहि तजि छोह ।
लोभी सूर लहरि मरै , जो अपछर बरनै मोहि ॥
कपै सूर वीर ते भारी । गज कपै सहि सकै कटारी ॥
लागै खड्ग गिरहि ते दता । टूटे सुँड रोवै मैमता ॥
टूटै मुड होइ मुख भगा । पर्वत से जनु परे भुवगा ॥
गन गयद रन जह तह परे । जनु धरनी मह पर्वत डरे ॥
लरि लरि सकल थमित ह्वै दरै । इक जूझै रन कानि न करैं ॥
सिहनि ऐसो पूत जनि , सिह बिदारन जोग ।
घर सूरा रन भागना , जिन न हँसैये लोग ॥
बोलै धाव 'मारू' उच्चरही । जह तह रकत के नारे ढरहीं ॥
फूटै मुड चलै रन लोहुव । सुभटै सुभय फिरै जन कुहुरुव ॥
जोगिनी फिरै भूतनी साना । बैठि करैं लोहुअ कर पाना ॥
भिरहिं धाइ लोथि लै जाहीं । लोहू पियै मासु मिलि खाहीं ॥
जोवन जाल करालै करोलै । लोथहि काटि सरो महि बोलैं ॥
जोगनि फोरै खोपरी , जबुक भखै जु मास ।
सूरन की गति देखि कै , सूरज होई उदास ॥
लोहू भरे छूटै सिर वारा । सूते सूर वीर बिकरारा ॥
सुन्यौ सरन उमड़े ते भलै । दहनै चुवहिं रुधिर के चलै ॥
चिहुरो हाथ आव नहि मेरै । गुन ज्यों सिह देखि डहि मरै ॥
कहू कहू गावै बरछा लै कोऊ । कहू दौर रागन गुन दोऊ ॥
पर दल खडहि लरि मरैं , खाय जु सन्मुख घाव ।
स्वामी सँग ते ना तजै , छत्री कुलहि सुभाव ॥
पहर चारि लौ विग्रह भयऊ । दुहुँ दिसि लोग जूझि सब गयऊ ॥
सुभट सूर विक्रम के बाचे । जूझे सुभट सूरमा साँचे ॥
कामसैनि सब सैनि जुझाई । जूझि गिरे सब रावत राई ॥
जूझे सुभट जे चढे बिवाना । गेये सकल रवि के अस्थाना ॥
स्वामि काज जे कटि कटि मरहीं । ते सब सूर अप्सरा बरहीं ॥
जूझता सूरा भलै , घाव जै सन्मुख खाँहि ।
जीवत मै मुख भागहीं , मरै त सुरपुर जाँहि ॥

*

माधव-कंदला मिलन खंड

कामसैनि राजा जो हारा । जाइ मिल्यो तजि के हथियारा ॥
हाथ जोरि के सनमुख आयो । विक्रम आगे सीस नवायौ ॥
सुनहु राज मै दीन्ह्यौ देसा । सकबधी पर हरौ कलेसा
चढतै थहराई सिर सेसा । विक्रम जा दिन करै प्रवेसा ॥
कामसैनि जब मिल्यौ जु जाई । फिरि पछितानौ सैन जुझाई ॥
मिलकरि राज नगर मह॑ चला । दीनी आनि कामकदला ॥
मिली कदला बहु सुख पावा । राजा माधौनलहि बुलावा ॥
कलि मह विरह वियोगिनी, भरि भरि लेहि उसास ।
सीसु ठगौरी भोर भय, कीनौ सूर प्रकास ॥
माधौनल औ कदला मिलेउ । मिलि बिरही दोनौ दुख दलिऊ ॥
मिलि के अधिक सुक्ख तिनि पावा । दुउ सॅताप लै गग बहावा ॥
मिल्यौ सोइ भावत भावती । राजा नल रानी दमयती ॥
मिले भरथरी अरु पिगला । माधौनल औ कामकदला ॥
पूरन ससि जिमि दुखित चकोरा । कुमुदिन चक्रवाक जिमि मोरा ॥
नित प्रति केलि करहि सुख रहहीं । दिन दिन प्रीत अधिक मन करहीं ॥
भावता जा दिन मिलै, ता दिन होइ अनद ।
सपति हिएं हुलास अति, काटि विरहा दुख फद ॥
माधौकाम कदला मिलाई । पुनि राजा उज्जैनै जाई ॥
सग विप्र माधौनल लीन्हा । जिहि कारन इतनौ जस कीन्हा ॥
राजा नगर उज्जैनै गयऊ । तबही अत कथा कर भयऊ ॥
माधौ कामकदला नारी । जानौ विधि रचि दई सँवारी ॥
अपनौ सुख तजि दुख लहैं, पर दुख खडन जाइ ।
वार निबाहै एक सम, धनि सकबधी राइ ॥
कथा चौपही आलम कीन्हीं । पहिले कथा स्रवन सुनि लीन्हीं ॥
कहु कहु बीच दोहरा परै । कहू आनि सोरठा धरैं ॥
सुनत स्रवन यह कथा सुहाई । अति रसाल पडित मन भाई ॥
प्रीतिवत है सुनै सो कोई । बाढै प्रीति हिए सुख होई ॥
कामी पुरिष रसिक जे सुनहीं । ते या कथा रैनि दिन सुनहीं ॥
पडित बुधिवता गुनी, कविजन अच्छर टेक ।
नाम नमित गुन उच्चरहि, कहि कहि कथा अनेक ॥

———

कवि निसार-कृत

यूसुफ़-जुलेखा

आदि खंड

सुमिरौं प्रथम स्वरूप सुहावा । आदि प्रेम निज तन उपजावा ॥
उतपति प्रेम अगिन उपजावा । बहुरि पवन अबुअ उपजावा ॥
आगिन तें पवन पवन ते पानी । पुनि पानी ते खेह उड़ानी ॥
यहि सब में उपज्यो ससारा । धरती सरग सूर ससि तारा ॥
चारि तत में सब कुछ साजा । पँचवे सन आकास विराजा ॥
मुनि रिष गँधरब दूत बिठाये । जगम अस्थावर उपजाए ॥
प्रेम अगिन तेहि काहुँ सँभारा । रचा मनुष बहु विधि बिस्तारा ॥
तेहि सौंपा वह प्रेमक थानी । दीपक माँह धरा जस बाती ॥
तेहि बाती मँह आय छिपाए । होय परछिन पुन देह जराए ॥

प्रभुताई के बीच ते, को गत लोखन पार ।
कहा स उत्तम अस वह, कहँ निकसत तेहि भार ॥

रचा मनुष तेहि रूप सोहावा । प्रेम अस तेहि हिए छिपावा ॥
अस गुनवत दयाल सयाना । तेहि निरगुन नर सब अग्याना ॥
जाके रूप न रंग न रेखा । ताकिय रचना आव न लेखा ॥
वहै रूप वपु प्रेम क साना । दीन्ह भार कहि अलख सुजाना ॥
यहि विधि सब जग परगट कीन्हा । एक ते एक उदित कर दीन्हा ॥
जब वह नेस्त करै पुनि सोई । एक ते एक अलोपित होई ॥
पानी खाइ खेह का लेई । पुन पानी कँह अगिन हेरेई ॥
पवन अगिन कहँ करे सँघारा । मिले आन तेहि अंस अपारा ॥
वह के सग जगत कर लेखा । नेस्त हेस्त सभ करे सरेखा ॥

अलख अमर अविनासी, घट घट व्यापक होय ।
सरब मई सुखदायक, दुख भजन है सोय ॥

वह पूरन चौदह खँड माही । वह बिन जिया जतु कोउ नाहीं ॥
सब मँह आप सु खेले खेला । नट नाटक चाटक जस मेला ॥
ना वह मरे न मिटे न होई । अपरम मरम न जाने कोई ॥
जाकी रति से सुख नित साजा । तन तिरिया मँह आय विराजा ॥
कहँ रसना तेहि अस्तुति जोगू । रचा ताहि जो चीन्हे भोगू ॥
गुजत ज्ञान ओ भेद अपारा । अगम आव घट तिन दहुं सारा ॥
कबहूँ आय अकेला रहई । कबहूँ यह रचना चित चहई ॥
नाटक खेल रच्यो ससारा । जा कहँ देख ज्ञान बल हारा ॥
एक रूप चारिहुं दिस देखा । दूसर अवर न जाय विसेषा ॥

अगनित बार सँवारा, तेहि जग अगम अपार।
जहा अलख ससार सब, जह जग तिन्ह करतार॥
वहि कर दरस दुओ जग पूरा। नर बाउर सो गिनहि अधूरा॥
वह निर्गुन सौगुन सोउ रूपा। परघट गुपत सो दुओ अनूपा॥
जो निर्गुन कहँ चाहिय देखा। अलख अमूरत जाय न देखा॥
चौसर गगन तो रूप विसेषे। रूप अपार हिये जग देखे॥
पै जब आप देखावै चाहिय। दिव्य दिष्ट निरभावै ताहिय॥
पूरन चहुँ दिस जोत अपारा। बिना दिष्ट कोउ लिखे न पारा॥
जो यह जग वह रूप न लेखा। वह जग केहि बिध जाय बिसेखा॥
अनहद सबद सुने सब कोई। का नहि दरस दिये तिन्ह सोई॥
कत सरवन सुन बचन हुलासा। काहें ते नयन सो रहें निरासा॥
सुने सबद सब कोऊ, अनहद दस परकार।
ताकर रूप देंखे, कारन कवन बिचार॥
तैं दयाल सुखदायक राजा। जिन अस मोहिं गरीब निवाजा॥
हतेउ नेस्ति आधीन मिले ना। तैं करतार रहे मोहि कीन्हा॥
मूरख हतेउ कीन्ह सज्ञाना। गुन विद्या सब कीन्ह निधाना॥
गौरी सहन बस अतवारा। दीन्ह स्वरूप भाउ उँजियारा॥
तिन मोहिं दीन्ह सदा सुख भोगू। तिन्ह का देहुँ अहहुँ केहि जोगू॥
सकट गाढ बड़े जब सहहीं। तिन पल मँह हर लेहि गुसाईं॥
मैं तो अधम पातकी आहा। तै निरभान कीन्ह जस चाहा॥
गुजत ज्ञान गिरा अनेक, दीरघ दया अपार।
तोरे गुन केहि लेहि कहे, तैं दाता करतार॥
बरनौं ताहि आदि बेहि साजा। तेहि के जोति जगत उपराजा॥
आदि साज तेहि अनत पठावा। बोहित साज सो पार लगावा॥
तेहि के जोति सब सिष्ट सँवारा। जिया जतु जोहि वार न पारा॥
जो अस पुरुष न जग मँह आवत। ऊँच नीच को पार नप ावत॥
जग बोहित वह सेवक देवा। केहि गुन पार उतारे खेवा॥
जिन अवतार सो सबहिं सरेखा। कोउ निर्गुन कोउ सर्गुन देखा॥
अस अवतार काहु नहिं लीन्हा। जिन निर्गुन सरगुन दोउ चीन्हा॥
कोट कलाँत करे जो भावे। बिन वह नाम मुगत नहिं पावे॥
वह कर नाम लिए एक बारा। पावे मोख मुगति निस्तारा॥
आदि जोति जाके रचे, तेहि तें सब कुछ कीन्ह।
मोख मुगत गुन पावे, जब नाम मोहम्मद लीन्ह॥
चार मीत जस चार गरथा, चारिउ सभा चारि सो पंथा॥
पहिले अबूबकर मग चीन्हा। नबी परापत राज जेहि कीन्हा॥

दूजे उमर खिताब सोहाये। लिख सपथ इबलीस पुराए ॥
तीजे उसमान पूरन लाजू। आदि करी चढि कीन्हेउ राजू ॥
अली बली गुन कीरत भारी। आद इमाम जो पर उपकारी ॥
खड खड जेहि खड अखडा। लीन्हा दड मड भुज दडा ॥
दीन नबी कर प्रोहित कीन्हा। मारि सत्रु कहँ सब जग कीन्हा ॥
तिन इमाम जग खेवक आये। पाप हरे गुन पाप लगाये ॥
हसन हुसेन महा जग तारन। दीन्ह सीस उम्मत के कारन ॥
होय असहाब सो करि चढे, वहि दीन सो प्रोहित कीन्ह।
आद अंत लहि जगत सब, अगम निगम करि दीन्ह ॥
आलम शाह हिन्दू सुलताना। तेहि के राज यह कथा बखाना ॥
देहली राज करे औ नीता। उमरावन तेहि कीन्ह अनीता ॥
कादिर खान सो अधम रुहेला। सो अपराध कीन्ह बद फेला ॥
पादशाह कहँ आँधर कीन्हा। सुत उतारि सब दुख तेहि दीन्हा ॥
कीन्ह अपत तैमूर घराना। राज प्रताप अधम तेहि माना ॥
वह चडाल अधम अन्याई। पातशाह तें कीन्ह बुराई ॥
जस वै कीन्ह नेक फल पावा। देइय चरित खेल दिखरावा ॥
नेह विटप पुन जहर मिलाये। पातशाह सर छत्र भराए ॥
अघधुध सभ जग करि दीन्हा। तस आपुन देहलीपति कीन्हा ॥
कीन्हीं राज प्रताप जुत, रहिअ उतै कछु नाहँ।
तब सेवक साई भये, साई दुखित जग माँह ॥
चहुं दिस अघधुध सब छावा। अवध देस का दियो बहावा ॥
येहिया खा आसफुद्दौला। जासु सहाय अहइ नित मौला ॥
हिन्दू सचिव वह बाली नरेसा। तेहि के धरम सुखी सब देसा ॥
दुऔ गुन ताह सो धर्म बिधाना। धरम नींत जग इदु समाना ॥
करै नीत कुछ और न भावे। धरम दान को सरवर पावे ॥
तेहि के राज नीत जग छाये। सूर सुजान न सके सताये ॥
करै न नीत धरम सुन्हि होई। मनुष समान सो परगट होई ॥
धरम नीत सब जग करे, परजा सुखी सरीर।
जुग जेग रहे सुदेस भी, यहि नव्वाब उज़ीर ॥
सेख पुरा उत गाव सुहावा। सेख निसार जनम तहँ पावा ॥
चारिउ ओर सुघन अमराई। अगम अथाह चहूँ दिस खाँई ॥
सेख हबीबुल्लाह सोहाये। सेख पूर जिन आन बसाये ॥
बादशाह अकबर सुलताना। तेहि के राज कर जगत बखाना ॥
अवध देस सूबा होय आये। बीस बरस लहि रहे सुहाये ॥
तेहि के शेख मुहम्मद नाऊँ। सो हम पिता सो ताकर गाऊ ॥

तेहि घर हौ बिधने अवतारा। चारि दीप जस चौमुख बारा ॥
सभै बली सुपुरुष सुज्ञाना। रूपवंत औ बिद्यामाना ॥
बस मौलवी रूम कै, सेख हबीबुल्लाह ।
जेहि के मसनवी जगत मह, अगम निगम अवगाह ॥

अब आपन गुन करौ बखाना। हौ निरगुन कुछ भेद न जाना ॥
सबहे गुरू कर गुरू सुहावा। सो हम गुरू वह जग महँ आवा ॥
जेहि सो गुरू कि दोउ जग आसा। अवर गुरू की भूख न प्यास ॥
चहै गुरू वह पार लगावै। चहै तो बार बार भटकावै ॥
वह कर प्रेम हिएँ महँ गोवा। अवर प्रेम सभ चित तन खोवा ॥
अच्छर एक पठावा सोई। बहुर गुरू वह कियो बिछोई ॥
भयो हिया जस समुद अपारा। किये गरथ अनूप सँवारा ॥
झूँठ कथक कहि रैन बिहाये। अब यह समै भौर कै आये ॥

बस मौलवी रूम कै, मौलैं लावा पथ ।
होय सिद्ध बुध मसनवी, निरगम अगम गरथ ॥

सात गरथ अनूप सोहाये। हिंदी और पारसी सोहाये ॥
ससकिरत तुरकी मन भाये। अरबी और फारसी सोहाये ॥
हीर निकारि के गेहू खाने। रस मनोज रस गीत बखाने ॥
औ दिवान मसनवी भाखा। कर दोइ नसर पारसी राखा ॥
बार वेस महँ कथा बनाये। हीर निकारि अनूप सोहाये ॥
रस मनोज रस गीत सोहावा। सभै बात कार भेद बतावा ॥
हंस जवाहिर प्रेम कहानी। कहा मसनवी अमृत बानी ॥
इशा कहे जहाँ लह भेदू। औ सब कथा जहाँ लह वेदू ॥
झूँठि जानि सब ते मन भाना। अब यह साँच कथा चित लागा ॥

तीन नसर एक मसनवी, औ निसाब दीवान ।
सर दुई हीर निकार तिन, रस मनोज रस खान ॥

हिजरी सन बारह से पाँचा। बरनेउ प्रेम कथा यह साँचा ॥
अठारह सै सताईसा। सवत बिकरम सेन नरेसा ॥
सतरह सै बारह पुनि साका। सतरह सै नब्बे ईसा का ॥
सत्तावन बरस बीते आयू। तब उपज्यो यह कथा बँचाऊ ॥
सात दिवस महँ कथा समापत। दुरमति नाम रहे सो सम्मत ॥
गयो तरुन को तेज उमगा। साथी गये छाँड़ि सब सगा ॥
बाएँ अँस उठि के जग माहीं। बिरिध दिवस अब कुछ रस नाहीं ॥
बना जनम को गोरख धधा। अबहु न समझै यह मन अधा ॥
बार बस औ तरुन सोहावा। गयो बीत तीसर पन आवा ॥

बजे नगारा कूच का, करहु सुचेत संभार ।
अगम पंथ साथी नहीं, केहि विधि उतरब पार ।।
बिरिध वैस महँ कीन्ह बिचारा । केहि विधि होय मोर उद्धारा ।।
कहयों तो तब कथा उत साँचा । जो क़ुरान मा सुना ओ बाँचा ।।
सभ भाषा महँ कथा सोहाई । बरनन भाँति भाँति करवाई ।।
इबरी औ अरबी सुर बानी । पारस औ तुरकी मिसरानी ।।
भाषा मा काहू ना भाखा । मारै अस दइव लिखि राखा ।।
सो अब कथा कहौं चित लाई । जेहि तन मोख मुगति होइ जाई ।।
यूसुफ नबी विदित जग आवा । तारा गन्ह महँ चद सोहावा ।।
जहँ लहि महा सिद्ध अवतारा । सब महँ रूप दीन्ह उँजियारा ।।
कथा अनूप जगत महँ सोई । प्रेम भगति सत धरम समोई ।।
यूसुफ नबी अनूप जग, प्रगट भये ससार ।
जाकी कथा तत अब, बरनऊँ भजि करतार ।।
जो यह कथा सुनै चित लाई । नासै पाप पुन्न अधिकाई ।।
बाँझिन सुनै सो सतति पावे । अकट तरुनि माँझहि फरिआवे ।।
निरधन होय, होय धन आकर । निरगुन सुने होय गुन सागर ।।
दुःखी सुने सुक्ख अधिकाई । बदी सुने तो मोख होइ जाई ।।
बिछुरे परे सो देय मिलाई । रोगी सुने रोग हरि जाई ।।
निरदायी कहँ दाया आवे । जोगी सुने जोग अधिकावे ।।
कैसेउ विपति गाढ जो होई । सुनै कथा बुध डारै खोई ।।
सुने सती दिन दिन सत बाढै । बिरही बिरह दीन दुख दाढै ।।
प्रमी सुने प्रेम अधिकावे । पडित सुने महा रस पावे ।।
जो कोइ सुनै पढै लिखै, होय सिद्ध ससार ।
वस सुनत सुख पावे, देइ असीस निसार ।।
कथा अनूप अहै जग माहीं । दूसर कथा सो यह सँघ नाहीं ।।
नबी लागि यह कथा सुहाई । सरग लोक तिन दैव पठाई ।।
एक दिवस जबरैल जो आये । हसन हुसेन को दुःख सुनाये ।।
मारिन्ह तिन बैरिन निरदाई । पानी बूँद न दीन्ह कसाई ।।
सुनि के मरन नबी दुख माना । रोवै लाग दुखित होइ प्राना ।।
तब जबरैल कथा यह लाये । आन अरथ यह बाँच सुनाये ।।
जो इमाम कहँ उम्मत मारिन्ह । यूसुफ बधु कूप महँ डारिन्ह ।।
कथा सत्त अस कहौ सुहाई । जेहि विधि सरग लोक तेहि आई ।।
चूक होय तो लेहु सभारी । सुद्ध असुद्ध सो लिखहुँ बिचारी ।।
बरनौ कथा अनूप अब, प्रेम भरी ओ साँच ।
मोख मुगति गति पावहिं, जो रे सुनावै पाँच ।।

किनाँ नगर जो 'नूह' बसावा। तहाँ नबी याकूब सोहावा ॥
जग महँ महा सिद्ध अवतारा। पूजै ताहि सकल संसारा ॥
लूत नबी की सुता सुहाई। सो बियाहि इसहाक के आई ॥
भय इसहाक के दुइ सुत संगा। एक उदर दुइ रवि ससि रंगा ॥
एक ईस याकूब सो दूजा। तप जप बिद्या कोउ न पूजा ॥
महा सिद्ध ता कहँ बिधि कीन्हा। इसराईल नाम तिन्ह कीन्हा ॥
उपजे श्याम देस दोउ भाई। रहे किनाँ याकूब सोहाई ॥
भेजै ताहि अलख संदेसा। लावै निगम पंथ सब देसा ॥
नीच ऊंच कहि मारग लावै। औ गुरु मुख सब भेद बतावै ॥
करै तपस्या रैन दिन, जप तप बरत औ नेम।
जबराइल आवहि तहाँ, आन बढ़ावैं प्रेम ॥
सात इस्तरी सुखद सोहाई। बारह पुत्र दई अधिकाई ॥
रुबिया औ राहेल सुहाये। दोउ दुहिता सुत लूत के जाये ॥
दौहित बिधने नारि कुलीना। पाँच सहेली सुघर नगीना ॥
दुइ दुइ पुत्र दुहूँ के भये। आठ पुत्र दासी सन कहे ॥
बहुत गरथ माँहि अस हेरी। दोइ नागर तेहि के दुइ चेरी ॥
धरम दीन्ह राहेल स्वरूपा। महा सती औ ज्ञान अनूपा ॥
तेहि के कोख कीन्ह अवतारा। यूसुफ इबन अमीन दोइ बारा ॥
प्रथम दुहिता दुनियाँ नाऊँ। पुनि यूसुफ मानै तेहि ठाऊँ ॥
यूसुफ नबी जनम जब लीन्हा। परगट जोग जगत महँ कीन्हा ॥
दुइ अंसा यूसुफ नबी, पायो रूप अपार।
एक अंस बिधि रूप मह, दीन्ह सबै संसार ॥
बुधि सरूप जब उतपति कीन्हा। दोइ अंसा यूसुफ कहँ दीन्हा ॥
एक अंस महँ सब जग पावा। धन वह रूप जो दइय बनावा ॥
यूसुफ नबी लीन्ह अवतारा। घर बाहर होइगा उँजियारा ॥
जो उपमा कबि दीन्ह बखानी। रूपवन्त जस यूसुफ सानी ॥
तेहि स्वरूप कर कहौ बखाना। जेहि कर रूप सो कीन्ह बखाना ॥
जब तिन जन्म सो यूसुफ लीन्हा। अलख सबहि सुख तिन्ह सो दीन्हा ॥
सत्रु अनेक भयो जरि छारा। जो इमलाक़ यहूदा मारा ॥
बड़े बंस सब बली सोहाये। एक तें एक सरिस अधिकाये ॥
सैन धनी गहि गदा पवारहि। बन महँ सौंह सिंह कहँ मारहिं ॥
दस दिग्गज दस बंधुवै, दल गंजन बलवान।
सेवा करै सु तात कै, जगत काज सुज्ञान।
दस भाई जो तरुन जुझारा। दुइ भाई लखि बालक बारा ॥
इब्न अमीन जब लीन्ह अवतारा। माता मुई छाँड़ि दुइ बारा ॥

निस दिन रखै नबी निज पासा। छिन बिछुड़े जब होय उदासा ॥
बहु बिद्या औ ज्ञान सोहावा। पितै पुत्र का सभै पढावा ॥
और पुत्र जो एक छिन आवै। बेद पढाय सोकाज बढावै ॥
यूसुफ कहँ दिन रात पढावैं। छिन नैनन नहि ओट करावै ॥
जबराईल प्रान तजि दीन्हा। तब यूसुफ कहँ फूफहि लीन्हा ॥
प्रान ते अधिक रखै दिन राती। निस दिन रखै लगाये छाती ॥
औ याकूब चहै मन माहीं। फूफिहिं एक छिन छाँडहि नाहीं ॥

बहुत समय यूसुफ लिए, जायँ भूलि तप जोग।
तेहि कारन बिधि कोप कै, दीन्हा पुत्र बियोग ॥

भगिनी बधु रहै अस रीती। दोउ बाउर सम यूसुफ प्रीती ॥
बसन एक इसहाक सोहावा। बाँधहि फाँट सो लीन्ह कढावा ॥
एक दिन सोवत माँह छिपाये। यूसुफ फाँट सो फंट बँधाये ॥
ऊपर और दुकूल पिन्हावा। औ याकूब के पास बिठावा ॥
लाय सो भूलि फंट कै चोरी। बमन बधु त बरबस छोरी ॥
भूलहिँ तेहि बहु सुख ते पाला। नैन ओट छिन होय बेहाला ॥
एक दिन यूसुफ बैठ्यौ पाटा। रूप तेज मनु बरै लिलाटा ॥
काहू केर मुकुरनी लीन्हा। तब अभिमान हिये महँ कीन्हा ॥
जा मोहि का बेचै लै जाई। को लै सकै दरब कह पाई ॥
उदय अस्त लहि दरब पटोरा। मोरै मोल जोग सब थोरा ॥

यूसुफ कहँ निस दिन पिता, राखै प्रान समान।
आन ते अधिक सपूत सुत, सुदर सुघर सुजान ॥

नीक न लाग दइअ कहँ बाता। काहुक गरब न रखै बिधाता ॥
एक दिन यूसुफ रिस अधिकारा। कोपित भयौ दास कह मारा ॥
औ मातहि मारा तिन दासा। भयौ हिये वह दास निरासा ॥
औ याकूब मियाँ के मारे। बोध न कीन्ह सो दास पुकारे ॥
करता कोप हिएँ महँ आने। दास होय तब यूसुफ जाने ॥
आयो एक सुरेख भिखारी। आन बार याकूब पुकारी ॥
कहा नबी तुम्ह आमन करहू। पावहु भोग छुधा कहँ हरहू ॥
कहि यह बात सो गयौ भुलाई। यूसुफ प्यार मते बिसराई ॥
ताके भूख रहै सुध नाहीं। दीन्ह सराप तपा हिय माँहीं ॥

बरस चारि महँ भूलहि, जब कीन्हा सरग पयान।
तब पावा याकूब तेहि, हिया अधिक हुलसान।

वह मन भावन रूप सोहावा। औ जेहि दीन्ह रूप जग पावा ॥
आन स्वरूप हेत जो लाये। वह मन भावन ताहि सुहाये ॥
औ याकूब सिद्ध अवतारा। निस दिन यूसुफ रूप निहारा ॥

अलख सहाय क्रोध तब कीन्हा । यूसुफ बिरह सोग तेहि दीन्हा ॥
आँखी ओट पिता नहि करई । छुधा त्रिषा मुख देखत रहई ॥
निस दिन रखै प्रान सम पासा । और पुत्र मन रहैं उदासा ॥
आवहिं पुत्र करहिं सब सेवा । काहु के ओर न देखै देवा ॥
चालिस सहस मेष चुन लीन्हा । तिर तिर महस सबहन कहँ दीन्हा ॥
सात सहस यूसुफ कहँ दीन्हा । सौ दुबे सब महँ चुनि लीन्हा ॥
सबहन हिये लखि क्रोध भा, देखि पिता कर प्यार ।
लघु बालक कहँ दून तिन, दीन्ह अस अधिकार ॥
नबी के अँगन एक द्रुम्म सुहावा । कलपवृच्छ सम ताकर छाया ॥
जब याकूब नबी सुत पावे । सुदर सुता वृच्छ उपजावे ॥
ज्यों ज्यों पुत्र होय वहि बारा । त्यों त्यो बढे वृच्छे के डारा ॥
बालक तरुन होय सुख पावै । काट डार वह छड़ी बनावै ॥
यहि बिधि तेहि निकसे दस साखा । दसौ पुत्र पायो बैसाखा ॥
यूसुफ जन्म लीन्ह जग माहीं । लोना द्रुम महँ निकसे नाहीं ॥
कह्यो तात तिन पुत्र सोहाये । सबहि बधु कहँ छड़ी सोहाये ॥
कस न दइव मोहि आसा दीन्हा । तब अरदास दई ते कीन्हा ॥
आये जबराइल कै आसा । हरिहर रतन शाख कैलासा ॥
सो आसा यूसुफ नबी, पावा अभय हुलास ।
लखि भाइन्ह कहँ क्रोध भा, जरैं हिये *आभास ॥
हत्यो जो बधु यहूदा नाऊँ । गये बधु सब तेहि के ठाऊँ ॥
हम सब पितैं करहि बड काजू । दिन दिन बढे सो ओकर राजू ॥
दिन भर रहैं सघन बन माहीं । भूख प्यास कुछ जानहि नाहीं ॥
यह बालक कुछ करे न काजू । इन्हे दीन्ह दून कर साजू ॥
कछु दिन महँ सौपे घर बारा । हमहिं रहहि सेवक तिन्ह हारा ॥
बालक कुटिल पितै बौरावा । तेहिं ते करन्ह सो बैग उपावा ॥
अबहिं बिरिच्छ ना मूल सँभारे । डारहिं उत्पत ताहि उखारे ॥
जब वह मूल करै बिस्तारा । कैसेउँ कहैं न चूक कुल्हारा ॥
देख अनुज्ञ कहँ कोपित ताता । बोला मरद यहूदा बाता ॥
वह बालक वै बिरिध मै, वै सौ पिता वह भाय ।
दोऊ कै दुख हिये महँ, दोऊ जगत नसाय ॥
यूसुफ रैन सपन एक देखा । बहुर पिता तिन कहा सरेखा ॥
जानहु गरह एकादस आए । रबि ससि मिल मोहिं सीस नवाये ॥
सुन याकूब सु कीन्ह हुलासा । राज पाट सुख भोग बिलासा ॥
जग महँ होहु महीधर राजा । सुद्ध बुद्ध नित आगर साजा ॥
पै यह सपन सुनै नहि भाई । नाहिन होहि शत्रु दुखदाई ॥

मुख तिन बात निसारै वोई । अनत भेद वह परगट होई ॥
का होनार अनुज सों कहा । करहु बिचार सपन कस अहा ॥
बधुन कहा खोट यह बारा । पिते ताह मुहँ लाय बिगारा ।
रवि ससि मात पिता निरभाई । नखत एग्यारह हम सब भाई ॥

कीन्ह मता दस बधु मिल, डारहि ता कह मार ।
नाहि तो हम सब दास सम, वह ठाकुर घर बार ॥

पिता आदि हम सब सिर नावहि । सपन झूठ कहि नेह बढावहि ॥
हत्यो निरिप इमलाक हठीला । देव कहावे सुघर नवोला ॥
पिता सदा सो तासे लडहीं । ओ कबहूँ सरबर ना करहीं ॥
ताहि यहूदे छिन महँ मारा । घर कोपहि महँ मिला पबारा ॥
जो अस बज्र न टारे टरई । ताहि मारि निहचिन्त सो करई ॥
ताहि सो पुत्र कर आदर नाहीं । यूसुफ हित राखै हिय माहीं ॥
बसीकरन जो पितहिं पठावा । सोइ पिता पर मत्र चलावा ॥
जो वह झूठ कहत है बाता । जानहिं साँच सो ताकहँ ताता ॥
हम कोटिन जो बात सुनावे । उनही कु परतीत न आवै ॥

तेहि यूसुफ कहँ मारिये, जहा न पावै नीर ।
रक्त पिए मिट जाय रिस, जो कुछ क्रोध सरीर ॥

करिकै मत आपस महँ सारा । पिता पास आए भिनसारा ॥
जो राउर हम आज्ञा पावहिँ । लै यूसुफ कहँ बनै सिधावहिँ ॥
जेहि बन मँह नित भेष चरावै । यूसुफ देखि हिये सुख पावहि ॥
बालक देख सो मन हुलसाहीं । वे खेलहिँ हम भेष चरावहिँ ॥
कहा जाउ हम भेड चरावै । यूसुफ का कहुँ बिक लै जावै ॥
मोर हिये उपजै यह ससा । जिन लैहि जाहु सग यह मसा ।
तब सबइ मिलि यूसुफ पहँ आए । खेल कूद कै बात सुनाये ॥
यूसुफ जाय पिता तिन कहा । हम हिय बहुत लालसा अहा ॥
सब भाइन्ह सँग बनहि सिधावैं । दिन भर खेल कूद घर आवैं ॥

औ यूसुफ याकूब सन, बालक सम हठ कीन्ह ।
दसो बधु दस ओर नित, उत अँदोर करि लोन्ह ॥

हम यक यक अस बल बरवडा । हैं गयद बली भुज दडा ॥
भागै सिह हाँक एक मारै । दसो बधु दस दिग्गज टारै ॥
मैमत गयद न आनहि लेखै । काँपहि गैंडा सिह बिसेखै ॥
का हम सौहँ जो करै सु आना । बृथा सोच तुम हिये समाना ॥
यूसुफ तात सें बहुत हठ कीन्हा । होय व्याकुल तब आज्ञा दीन्हा ॥
अपने हाथ सो केस बनाए । और पितै बागा पहिराए ॥
बार बार लै हिये लगावा । माया ते चख जल भरि आवा ॥

चले तात यूसुफ के संगा। जस दीपक सँग फिरै पतिंगा ॥
करै बिदा तेहि हिये लगावै। बिछुडे प्रान महा दुख पावै ॥

केहि बन महँ लै जाहि तोहिं, मन न धरै अब धीर।
कोमल गात गुलाब सम, सहै सो घाम सरीर ॥

लागहि छुधा जो बन के माही। तिरखा ते तुम अधर सुखावहिं ॥
तुम बालक वह बन अँधियारा। बिक जबुक हैं भूत बैतारा ॥
पवन तेज ते तन कुम्हिलाई। धूप देख काया मुरझाई ॥
लागहि प्यास जो बारम्बारा। होय घाम देखि बिकरारा ॥
खडे खड़े मुहँ दूभर भारी। होय कठ सो प्रान दुखारी ॥
आयहु बेग न लावहु बारा। होइहि तात सो दुखित तुम्हारा ॥
चारि याम होय जुग चारी। साँझ परै सुठ होब दुखारी ॥
कहा पुत्र उपदेस हमारे। गाढ परे जिन दिहेऊ बिमारे ॥
मन सु सतै कछु होय जु ताना। सँवरहु एक निरजन दाता ॥

कहा पिता रुबैल ते, सौंपहुँ तुम्हैं परान।
दिन आछत लै आयहु, कियहु न साँझ निदान ॥

जो बिधि लिखा आन सो पूजा। करि न सकै कोऊ अब दूजा ॥
महा सिद्ध अब भए अधीरा। भूला अलख दयाल गँभीरा ॥
नीर छीर दुओ भा जनु भरा। सभउँ कहँ दीन्हों चित हरा ॥
जब वह प्यास लगे तब दीन्हो। ओ आरत बहु भाँति सो कीन्हो ॥
बाहर नगर बिरिछ एक आहा। द्रुम बिछोह नाम तेहि काहा ॥
परदेसी जो कहूँ सिधारे। कुटुँब हितू तेहि लग पग धारे ॥
रोय रोय समधै तेहि लोगू। नयन जल सींचहि बिरिछ बियोगू ॥
तह याकूब जो रोदन कीन्हा। ओ यूसुफ जल मारग लीन्हा ॥
बहुत बेर लगि ठाढे रहै। तरवर बिरह बात जस कहै ॥

आगम बिरह बिछोह का, दीन्हा बिरिछ जनाय।
रोम रोम दुख व्याप्यो, लाग हिये पछताय ॥

डारहि डार ओ पातहि पाता। सुना वृक्ष तिन बिरहक बाता ॥
जब लहिं पिता दिष्टि भर हेरे। आरत कीन्ह झूठ बहुतेरे ॥
काहू अनुज सीस पर लीन्हा। काहू आप कहँ पाहन कीन्हा ॥
कोउ चूमै कोउ हिये लगावै। कोउ चूमै कोउ काँध लगावै ॥
काहुन पीठ पर ताह चढावा। जस तुरग लै चहुँ दिस छावा ॥
कोई कहै सिरताज हमारा। कोउ कहै सम प्रान अधारा ॥
जब लै गये दिष्ट के ओटा। सिर से डार दीन्ह जस मोटा ॥
कोउ मारै कोउ बाँधै हाथा। कोउ साँसै बहु कोप कै साँसा ॥

तुम्ह बालक अस निडर भए, रचि रचि बचन अनेक।
हम ते पिता बिमुख रहैं, यह तुम कीन्ह न नेक॥
रचि रचि बचन पितै बौरावा। तुम बालक अस बिख बिखरावा॥
मै मै मरहि करहि सब काजू। औ बैठे चुम बिलसहु राजू॥
अब सु कहौ का करौ उपाई। टूक टूक करि दै हियँ भाई॥
जब मारहि चहुँ दिसि निरदाइय। रोय रोय एक एक पहँ जाइय॥
मरतहि लात परहि तेहि दूरी। धावहि लै निकासि कै छूरी॥
लै पाँवरि उन काटि बहावा। नागे पाँव नबिय दौड़ावा॥
कँवल चरन महँ परै फफोला। प्यास ते जीभ भई जस ओला॥
यूसुफ नबी बधु के आगे। सामत देख मा रोवन लागे॥
बधु तुम्हार अहैं लघु भ्राता। तुम्ह सो तात सन्ह सौपेहु ताता॥
मोहि मारे तुम दुख है, पिता मरहि तेहि रोय।
तेहि से अब दाया करहु, धरहु छमा रिसि खोय॥
चहुँ दिसि तिन भाइन्ह तहि मारा। भया पियास त बहु बिकरारा॥
यूसुफ तबहि पाय के आसा। गया भागि रोहेल के पासा॥
मोहि पिते सौपि तुम्ह दीन्हा। कौने दोख क्रोध तुम कीन्हा॥
मारि लात उठि दूर पवारा। कहा बालाबहु एकादस तारा॥
चद सूरज जिन तोहि सिर नाए। तेहि सँवरहु जो होहि सहाए॥
तब समयू ते मागा पानी। रोय दिखवा जीभ सुखानी॥
भाजन दीन्ह भूमि मँह डारे। क्रोधवत हाथ मुख महँ मारे॥
गात गुलाब सछत करि डारा। क्रोधवत होइ मुख महँ मारा॥
छुरा काढि सिर काटन लागा। तब यूसुफ लादे पहँ भागा॥
हाय तरास लाग्यो कहै, जिन काटहु तुम सीस।
देहु डारि मोहि कूप मह, करै जो कछु जगदीस॥
लातैं मारि जो दीन्ह पवारी। गयो पान कह ठाढ पुकारी॥
तुम्ह पानी कर अहौ पियासा। हम प्यासे तुम खून के आसा॥
वे निरदाइ न दाया करहीं। जीना सबै सपन करि देहीं॥
गुफतालून जाद कै पासा। कहै बधु मै अहौ पियासा॥
कहे बधु मोहि पानी देहू। मरौ पियास से धरम सो लेहू॥
चाहा देहि यहूदा पानी। ढरकावा समयू रिस मानी॥
सबहि बधु बोलहिँ बिख बानी। चद्र सूरज ते माँगहु पानी॥
गरह एकादस लेहु बोलाई। जो तोहि पानी देहिं पिलाई॥
नौ भाई कोपित भये, कहै बधु सन बात।
बैरी छोट न जानिये, ना छोटे दिन रात॥
कोउ कहै यहि डारहु मारी। पियहिँ रकत रिस मिटै हमारी॥

कोउ कहै बिष घोरि पिलावहिं । कोउ कहै बन छाड़ि सिधावहिं ॥
कहा यहूदा बधु के मारे । होय बिनास नरसहिं कुल सारे ॥
पुनि मत कीन्ह सो होइ इकठाईं । डारहिं कूप माहँ बरियाईं ॥
बन मा कूप अहै अँधियारा । चला जाय जो परै पतारा ॥
कुरता काढि रक्त महँ भरहीं । पिता पास चलि रोदन करहीं ॥
कहहि कि बिक यूसुफ कहँ खावा । कहा तुम्हार सो आगेहि आवा ॥
यह कुरता लोहू कर भरा । हेरा बहुत सो पावा परा ॥
दिन दस पिता करहि दुख सोचू । पुनि मिटि जाय पुत्र कर सोचू ॥
बन जारा कोउ आइहि, लेइह ताहि निसार ।
लेइ जाइहि परदेस कहँ, मिटै अँदेस हमार ॥
यही मता आपुस महँ कीन्हा । कुरता काढि अग तिन लीन्हा ॥
यूसुफ नबी जा रोदन करहीं । निरदाई कुछ दया न करहीं ॥
मोहि कहँ नगन करहु जिन भाई । बसन समेत मोंहि देहु बहाई ॥
मृतक देइ बसन सब कोई । मोहि नगन मारे का होई ॥
रस्सी तासु गले महँ पिरुई । बहु मिनती माना नहिं कोई ॥
आधे कूप जो पहुँचा बारा । समयू काट गुनी वहि डारा ॥
भाई सत्रु कूप महँ डारी । चलै सुचित होय काज बिगारी ॥
दीन्ह काटि जब गुन निरदाई । तब जबरैल सँभारेहु आई ॥
लै सो कूप महँ ताहि उतारा । भये जबरैल पिता अनुहारा ॥
कहा कि जिन चिता करहु, धरहु हिये सतोष ।
सिद्ध कीन्ह करतार तोहि, करिय स।हि बिधि पोष ॥
किये प्रबोध भोग फल धरै । बसन पिन्हाय सोच सब हरै ॥
यूसुफ नबी पिता कहँ देखै । रूदन कीन्ह ओ पिता बिसेखै ॥
करुना कीन्ह पिता हिय लाये । तब जबरैल सो उभ्यो छोहाये ॥
जो निस दिन तुम्ह जोयहु गाता । सो अब कीन्ह रक्त रंग राता ॥
अधर पीत जामुन सम किये । गात लोग बदमेल सो भये ॥
नाँगे चरन धरमि दौरावा । रस्सी बाँध कूप लटकावा ॥
जेहि भाई पहँ रोवै जाई । मारि लात वह दूर पराई ॥
आधे कूप जो पहुँच्यो जाई । दीन्हा काट गुनी निरदाई ॥
जस दुख दीन्ह सो बंधु मोहि, बैरिहु नाहीं देय ।
गात सछत गये डारि, प्यास प्रान हरि लेय ॥
सुनि जबरैल न कियो संभारा । लागे बहै नैन जल धारा ॥
मै न होहुँ याकूब सोहावा । हौं जबरैल सरग तैं आवा ॥
बाँधहु सत्त हिएँ औ धीरा । एक दिन दैव लगावहि तीरा ॥
दुख बैराग बीत सब जाई । औं याकूब ते देइ मिलाई ॥

करहिं बधु तोरिय सेवकाई । होहु नबी जग राज कराई ॥
सब दुख हरै करै तोहि राजा । बधु दास होय करिहैं काजा ॥
जो करतार करहि निज दाया । का सो करै बैरिय निरमाया ॥
कोटि सत्रु जो कीन्ह उपाइय । इब्राहिम कहँ लीन्ह बचाइय ॥
बैरी सबहि किये सहारा । भयहु ताह फुलवरी अँगारा ॥

दिये बहुत दुख सन कह , करे बहुत उद्धार ।
जैसे कचन कीजियै , खरा अगिन महँ डार ॥

कगिकै नगन अगिन महँ तावा । इब्राहिम कहँ कुरता आवा ॥
सो कुरता न याकूब सुहावा । चित्र समान सो बमन बनावा ॥
जत्र समान भुजा महँ बाँधा । भूत बयारि न आवै राँधा ॥
तब जबरैल नगन तहि देखा । भये दुखित लखि नगन सरेखा ॥
तब कुरता बाजू तन खोला । पहिरायौ सो बसन अमोला ॥
चौकी एक अनूप लै आवा । तहि पर यूसुफ कहँ बैठावा ॥
जो अमरित ना सुना न देखा । सो यूसुफ कहँ दीन्ह सरेखा ॥
कहहु भोग सँवरहु करतारा । हरै दुख सो बेग तुम्हारा ॥
करि परबोध सो सरग सिधारा । यूसुफ तिन सो कहयो कै बारा ॥

महा सिद्ध तुम होहु कै , महाराज जग माँह ।
माँत पिता हत बधु कुल करहु तो सब पर छाँह ॥

अवया मार रकत रँग धारे । कुरता लै सो चलै हत्यारै ॥
बिरह बिछोह जो नगर निमारा । तहाँ ठाढ याकूब दुखारा ॥
ओ यूसुफ कै भगिनी दीना । पिता सग वहि हती मलीना ॥
भइय साँझ नहि यूसुफ आये । केहि कारन तेहि बिलँब लगाये ॥
बार बार वहि बाट निहारी । ओ यूसुफ कहँ पिता पुकारी ॥
यही समय आये हत्यारे । रोदन करत झूठ वै सारे ॥
सुनि रोदन यह भा बिकरारा । हिरदै मनहुँ बान अस मारा ॥
दुनिया कहै कुसल है नाहीं । बिरन मोर नाहीं उन्ह माहीं ॥

बिन बीरन यह नगर सब , भयो सून अँधियार ।
पिता मुए घर ऊजरा , काह कीन्ह करतार ॥

लखि दुनिया सो छार चढाई । कहा छाँडि आयो मोर भाई ॥
रोय रोय दुनियाँ गोहरावा । आवहु यहा पिता दुख पावा ॥
रोवै लाग देखि कै ताहा । सबूह आयो मोर बीरन काहाँ ॥
रोवत गये पिता के पासा । बहु बिलाप वै किय परगासा ॥
काह कहै कछु कहा न जाई । हम सब गये सो छाँड़ि चराइय ॥
पसुन पास यह खेलत अहा । तहा सो आन भेडहि वह गहा ॥
ढुँढत फिरै सभै बन झारा । तब लहि बिक तेहि कीन्ह अहारा ॥

रकत भरा कुरता वह पावा। देख हिये करुना होइ आवा॥
तेहि ते पिता करो सतोखू। हम काहू कर आह न दोखू॥
बात तुम्हारे जीभ कै, कैसे अबिर्था जाय।
बिधि कर लिखा को मेटै, यूसुफ कहँ बिक खाय॥
सुनि याकूब सो मुरछित भयऊ। मानहु प्रान काल लै गयऊ॥
जबराइल धरयो मुख हाथा। हरै साँस लखि धूमिल माथा॥
खाय पछाड यहूदा रोवा। बृथा प्रान पिता कर खोवा॥
का अस मरम बधु तुम कीन्हा। पिता सिद्ध कै हत्या लीन्हा॥
रोय रोय दुनियन सिर फोरा। भयो कठिन दुख रोज अँदोरा॥
दिन भर बाट बिलोकत हारे। गये बार खिज बार सिधारै॥
व्याकुल पिता पुत्र कै काजा। सिर पर पडे अचानक गाजा॥
दिन भर रहै बिलोकत बाटा। साँझ भये तेहि आयो घाटा॥
भये साँझ यह दुख कै कारी। के मेटै यह निस अँधियारी॥
बीरन मोर कहा पहँ गयऊ। जेहि बिन घर अँधेर सब भयऊ॥
वह बीरन जेहि बिन भयो, घर बाहर अँधियार।
दहुँ आये तजि सुघन बन, कै दहुँ कुप महँ डार॥
अस अज्ञान न कुरता मारा। लहू लाय ते आये सारा॥
ज्ञानी लोग जो कुरता देखें। करहिं बिचार ओ झूठ बिसेखहिं॥
जो बिक खात रहत कत सारा। टूक टूक होय जात नियारा॥
निस भर रहै बिकल बिसँभारा। आयो प्रान होत भिनसारा॥
जब जागै तब यूसुफ कहा। कहैं लोग कत यूसुफ कहा॥
तव रोवहि अस छाँडि डफारा। सरग दूत रोवहि एक बारा॥
तब जबरैल भूमि पै आये। तो याकूब नबी समझाये॥
अब सतोष किये बनि आवै। रोदन किहैं कोऊ न पावै॥
तुम्ह अवतार सिद्ध कर लीन्हा। सहौ दुख जो साईं दीन्हा॥
पुत्र गये सतोष करि, प्रान देहु जिन रोय।
रोदन करहु सदा हिए, पुत्र जो कियो बिछोह॥
तब याकूब सु चित्त सँभारा। रोवै लाग सँवर करतारा॥
कहा कि कहो पुत्र का भयऊ। प्रान न गयो प्रान कत गयऊ॥
तुम्ह कछु मरम दुखी कर जाना। करहु बोध कर सिस्ट बखाना॥
जीयत अहै कि मिरतक भयऊ। जेहि बिन घर अँधियर होय गयऊ॥
कहा कि मै कछु भेद न जाना। बिन अज्ञा का करहुँ बखाना॥
मरन जियन जानै जमराजू। कै जानै जिन जग उपराजू॥
तब याकूब कहा सिर नाई। पूँछहु तुम यमराज ते जाई॥
कहो जाय याकूब सँदेसा। जहा होय यमराज नरेसा॥

बोला जम यूसुफ कर प्राना । मोरे पास न दूतन आना ॥
तब जबरैल सुनावा, वै संदेस अपार ।
जेहि सौंपा तुम्ह पुत्र कहँ, तेहि सौ माँगहु बार ॥
सुनि याकूब डरे मन माहीं । अलख त्रास ते सुठि बिलखाहीं ॥
डरे हिए सिर दै मुह मारा । मोहि ते चूक भई करतारा ॥
मैं बाउर बड अवगुन कीन्हा । चहौ दुःख जो उन दुख दीन्हा ॥
कहा कि अब कीजै सतोषा । समरहु नाह करहि जा मोपा ॥
तब याकूब सो कुटी बनावा । बाहर नगर तहाँ चलि आवा ॥
घर औ बार छाँडि सब लोगू । निस दिन करै कुटी महि जोगू ॥
काहू दरस ना देय सोहावा । औ कोऊ तहँ जाय न पावा ॥
रोदन भवन नाम तेहि राखा । यूसुफ नाम करै नित भाखा ॥
जो सोए तो यूसुफ कहै । जो जागै यूसुफ मुख छहै ॥
यूसुफ कहै भूख जब लागै । यूसफ कहै प्यास तन भागै ॥
नींद भूख औ प्यास महँ, यूसुफ नाम अधार ।
सँवर सँवर मुख पुत्र का, रोदन करै अपार ॥
नींद भूख तज साधहि जोगू । करहिं तपस्या बिरह बियोगू ॥
नित कुरता वह नैन लगावै । औ यूसुफ कहि कहि गोहरावै ॥
रोवत नयन भये दोउ अधा । फाट न हिया सँवर चित बधा ॥
गये नैन दोउ पुत्र वियोगू । जोगउ तें साधा तब जोगू ॥
यह बिध देख पिता कर हाला । भयै पुत्र मन हिए बेहाला ॥
रोदन जब याकूब करेई । सरग दूत कर जाप हरेई ॥
जब याकूब रोय जिव खोवहि । जाय भुलाय दूत सब रोवहि ॥
कहाँ प्रान तोहि भाइन्ह डारे । कहाँ छाँडि आये हत्यारे ॥
केहि दिस जाउँ कहाँ तेहि हेरौं । कौने बाट नाम कहि टेरौं ॥
निस दिन हिये लगाये, मैं तोहि सोवत पास ।
सब निम जाग भयावन, रहौ बिचारत साँस ॥
मुख तुम्हार अब देखत नाहीं । ताते प्रान रखै घट माहीं ॥
एक घडी जो दरस न पाऊँ । रोवत फिरौं चहूं दिस धावहुँ ॥
जब लहि नाव लिये ना कोई । तब लहि जीवन दूभर होई ॥
अब तोर कौन सुनाइय नाऊ । तोहि बिन सून भयो सब ठाऊ ॥
भयो भवन तोहि बिन अँधियारा । काटेव खाय सबहिं घर बारा ॥
केहि बन महँ तुम्ह काँ परहेले । तुम्ह बालक कत फिरहु अकेले ॥
मोरे साथ रहे मन माहीं । सुख तुम्हार कुछ देख्यो नाहीं ॥
केहि बस करौं सो खोज तुम्हारी । कवन देस होय जाऊँ भिखारी ॥
अब केहि बिधि दिन बीतहि मोरा । केहि बिधि रैन बिहायहि मोरा ॥

यूसुफ नाम रैन दिन, लेत रहे याकूब।
दिन भर पलक न लावे, पुत्र बिछोह अनूप॥
केहि सो माँझ लै हिये लगाउब। भोर होत केहि लाल जगाउब॥
केहि के सुनब मधुर रस बाता। केहि कर हिये लगाउब गाता॥
केहि के देखब चाल सोहाई। जेहि कॉ देखि हस मुरझाई॥
केहि तें भेंट करब दिन राती। केहि कॉ देखि सिराइह छाती॥
जब याकूब सो होंहि अधीरा। आवहि जबराइल तिन्ह तीरा॥
कहहिं कि तुम रोउब जिय खोवहिं। काँपे सरग दूत सब रोवहि॥
तुम अवतार कि सिद्ध सरीरा। ऐसे दुख जनि होहु अधीरा॥
तब याकूब सो छाँड़ि डफारा। कहा कि काह करूँ करतारा॥
ऐसे पुत्र काहे कहँ दीन्हा। मनहरिया फिर कस हर लीन्हा॥
दाया कीन्ह अनेक विधि, दीन्ह पुत्र अस मोंहि।
देखि रूप गुन बिसुभ भयो, तब मोंहि दीन्ह बिछोह॥
तब काहें का अस चित लावा। जो अब हाथ रहा पछतावा॥
अलख ठाढ चित उन सो लावे। ताकर फल मानुस अस पावे॥
दीन दयाल करै अस दाया। दिये अनूप सुखी करि साया॥
तेहि दयाल कँह दइय बिसारे। देखे निस दिन नस्ट बिचारे॥
फुलवारी बहु फूल बनाये। एक ते एक सुरग बनाये॥
जो मन पुहुप एक तिन लावे। जाय सूख कुछ हाथ न आवे॥
चित्र अनेक जो रच्यो चितेरे। मोहित होय रूप रँग हेरे॥
आवे चित्र काज कुछ नाहीं। चित्र काज सँवरहु मन माहीं॥
काहे न चित्र चितेरे लावहु। चित्र विचित्र रूप निरमावहु॥
जो कुछ रहे न हाथ महँ, तेहि चित दीजिय काउ।
जो न मरे नहि बीछुड़े, तेहि ते प्रीत लगाउ॥
भोर होत फिर बन कहँ गये। अनुज सँघार सुचित मन भये॥
यूसुफ मया मीत मन भयऊ। चोरिय एक यहूदा गयऊ॥
जाय कूप महँ ताहि पुकारा। कहूयो बीर का हाल तुम्हारा॥
यूसुफ नबी कहा बिकरारी। कहा यहूदा रोय पुकारी॥
का पूँछो अब हाल हमारा। परे अकेल कूप अँधियारा॥
बिच्छू साँप भरे तिन माँही। दिन एक जियन भरोसा नाहीं॥
जब लग सुदिन न दीपक बारा। जाय न देइ पिता तिन बारा॥
का अवगुन अस कीन्ह तुम्हारा। जो अस कूप अध महँ डारा
कूप अध दुख भयौ सँघाता। का पूछो दुखिया कर बाता॥
परे अँधेरे कूप महँ, कोऊ न संघी भाय।
बिच्छू साँप भरे तहा, केहि बिधि कुसल कराय॥

मात पिता केहि सुख ते पाला। भाई अध कूप महँ डाला ॥
कह्यौ पिता तें जाय सँदेसा। पुत्र तुम्हार गयो परदेसा ॥
मरत नाम जिन कह्यौ सुनाई। मरैं पिता निज प्रान नसाई ॥
कियो पिता की बहु बिधि सेवा। जेहि ते पार लगे तुम खेवा ॥
छुधा तृखा जब लागे भाई। भूख हमार न दिहयो भुलाई ॥
जब दुख पड़े बिपत अवगाहा। सँवरहु बधु मोर दुख दाहा ॥
बसन हीन तन नगन हमारा। सँवरहु बधु औ किहयो बिचारा ॥
सेवा किहेउ पिता कै भाई। जेहिते हम दुख जाइ भुलाई ॥
जब मिरतक कोई देख्यो भाई। सँवरेहु मूरत मोर सुहाई ॥

सुन यूसुफ उपदेस यहु, रोय यहूदा भाय।
कहा कि सँवरहु अलख कँह, जो दुख माँह सहाय ॥

समयू बहुरि पकरि बिक लावा। करि मुख बिकते रकत लगावा ॥
लैके ठाढ पिता पहँ कीन्हा। यूसुफ खाइ यही बिक लीन्हा ॥
आयो आज फेरि वहि ठाऊँ। लायो ताहि पकरि कै पाऊँ ॥
तब याकूब मु छाँडि ढकारा। कहै लाग का तोर बिगारा ॥
यूसुफ मुख लखि दया न आई। केहि बिधि लीन्ह सो तेहि कहँ खाई ॥
कैसे मन पतिआयौ तोरा। लीन्हसु खाय परान तुम्ह मोरा ॥
औ याकूब सीस भुइ लावा। अय दयाल सुखदायक रावा ॥
अज्ञा होय कहे बिक बाता। यूसुफ रकत अहै मुख राता ॥
पूँछि लेहुँ सम अरिन्ह अयारा। तिन्ह यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा ॥

भय आज्ञा जगदीस कै, बोला बिक धरि सीस।
कह्यो अरथ यूसुफ कर, लेहु हमार असीस ॥

यूसुफ कहँ खायौ केहि ठाऊ। देहु बतायै तहाँ चलि जाऊँ ॥
यूसुफ केस तहाँ एक पाऊँ। लेउँ सुदान नैन महँ लाऊँ ॥
लाखन अजा मेख हमारे। का तोहि मिला प्रान के मारे ॥
वह मुख देख दया नहि लागे। उठे न घात मया के आगे ॥
कहै लाग सुन बिक नरनाहा दोस न लाग कछू हम माँहा ॥
जहँ लै सिद्ध औ साध सरीरा। तेहि मानुस दुःखित हम पीरा ॥
तुम अज्ञाँ तिन सघ न देखै। वहै पुत्र परान बिसेखै ॥
यूसुफ रूप देख सर नावहिँ। तेहि कैसे हम खाय उड़ावहिं ॥
हम ते घाट भये कछु नाहीं। देहु असीस धरहु अब जाहीं ॥

सावक मोर बिछुड गयो, ढूढत फिरौं बे हाल।
पुत्र तुम्हार पकरि कै, लाय कीन्ह मुख लाल ॥

तब याकूब सँवरन लागे। बिक ते पूँछन लाग सुभागे ॥
तुम यूसुफ कर खोज बतावहु। कहौ मत्त सदेह मिटावहु ॥

लाल हमार कहाँ लै डारा । जीयत अहै कि मारि सँघारा ॥
सावक तोर दई तोंहि दिये । यूसुफ सुधि कहै जस लिये ॥
तब बोला बिक भुँई धरि माथा । का हम से पूछहु नरनाहा ॥
पिसुन सरूप धरे मुख रहहीं । हम काहू कर दोख न करहीं ॥
दोस होय श्रावगुन के लाये । पाप परावा परें सुनाए ॥
आन उपाय कहै जो कोई । पातक तासु ताहि सिर होई ॥
औ हम का जाने फिर भेदा । जानै सोइ रच्यो जिन भेदा ॥

तुम्ह सुअंस करतार के, आवहि दूत तोंहि पास ।
का पूँछहु हम से बिथा, पूछौं दइय जो आस ॥

बिक टीले चढि जाय पुकारा । किन यूसुफ कहँ कीन्ह अहारा ॥
यूसुफ बधु सो हत्या लावा । कहहिं कि बिक यूसुफ कहँ खावा ॥
है याकूब नबी रिस मोंहा । रोदन करै मरै नरनाहा ॥
जो वह सराप देइ करतारा । सब बिक मरहिँ होहिं जरि छारा ॥
मैं करिया देइ भयौं अदोखा । अब ढूढहु तुम आपन मोखा ॥
सुनि मारे बिक आरन केरे । आन बार याकूब सुघेरे ॥
कहा कि तुम नाहिंय कछु दोखा । करै अलख तुम सब कर मोखा ॥
कुटिय के आस पास चहुं ओरा । मारहि कूक औ करहिं अँदोरा ॥
सुनि अँदोर याकूब दुखारा । आयो निकसि बिरह कै मारा ॥

चहुँ दिस बिक रोवत चले, देखि नबी कर रोज ।
कहै चलहु अब कीजिये यूसुफ नबी कर खोज ॥

बिक अजया याकूब पहिँ आई । रोवै लाग सीम भुँई लाई ॥
सहस जगम बन महँ आहे । हमे दोख केहि कारन कहे ॥
पुत्र तुम्हार हमें दुख दीन्हा । रकत हमार सुदोखित कीन्हा ॥
सो कुरता लोहूकर भरा । तुम्ह अपने नेयनन्ह पर धरा ॥
राउर नैन ज्योति हरि गई । यहि हत्या हम्ह सिर पर भई ॥
जनम जनम मैं औगुन दोखा । केहि बिधि करै दैव हम मोखा ॥
तब याकूब बोध तेहि कीन्हा । तुम्ह कहँ दोष दइय नहि दीन्हा ॥
दोष ताँह जो तुमका मरा । यूसुफ बसन रकत रँग धारा ॥
कत कुरता यूसुफ कर सारा । अजया मार रकत सों भारा ॥

तुम्हें दोख कछु नाहिन, वै दोषी हत्यार ।
जिन्ह यूसुफ तें मोहि कहँ, कीन्ह बिछोह निसार ॥

सात दिवस दुख भयो अपारा । उतरे तेहि बन मौं बन जारा ॥
मालिक नाम महा अस नायक । जात मिसर कहँ वहि सुखदायक ॥
आगे वै सपना महँ देखा । होय लाभ यह बन उन देखा ॥
सदा आप नायक यह बासा । करै सो वही बनै महँ बासा ॥

तोहि महँ आये एक बनजारा । जल हित डोल कूप महँ डारा ॥
यूसुफ नबी डोल गहि लीन्हा । रोवत ताहि हाँक पुनि दीन्हा ॥
डारि डोल भागा डर खावा । औ नायक तें जाइ जनावा ॥
जतु एक है कूप के माहीं । डोल अडोल है डोलत नाहीं ॥
तब नायक वहँ आपसि धावा । तेहि के सघ मानुस बहु आवा ॥
अध कूप तें ताह निमारा । होयगा बन सगरो उँजियारा ॥

पानी खोज जो कूप मँह, डारा डोल 'निसार'।
तँह यूसुफ कहँ पावा, धन नायक ब्योपार ॥

नायक देख परान अस पावा । होय मोहित लै चला सोहावा ॥
लै यूसुफ कहँ चल्यौ चलाई । तब लहि पहुँचे वै दस भाई ॥
धाय आन सब कीन्ह पुकारा । कहाँ जाँब लै दास हमारा ॥
दिन पाँचक तें भाग परावा । खोजत फिरौ कहूं नहि पावा ॥
यूसुफ चहा कहै निज बाता । नायक तें बरनै दुख भ्राता ॥
तब समयूँ इबरी महँ कहा । बोल न बचन जो जीवन चहा ॥
यूसुफ नबी मौन तब साधा । लाग्यौ कहै बँधु दुख बाधा ॥
भागे सदा दास बिन मारे । करे न काज भये हम कारे ॥
भोग न करै रहै नित रूसा । कब लहि रखे सो घाल मँजूसा ॥

दास हमार वो चोर हैं, सुन नायक निज बात ।
मोल देहु लै जाहु तुम, मिटै कोप दिन रात ॥

मन महँ कहै लाख लहि देहू । यह बालक कहँ पुत्र करेऊँ ॥
मालिक कहा कहौ सो देही । यह सुदास दोखी कहँ लेहीं ॥
वह यूसुफ कर मोल न जाना । थोर दाम माँगा अज्ञाना ॥
तीन दोख यह मँह बड मारे । भाये चोर रोय बद कारे ॥
कहा लेउ मैं दोषी दासा । जाय तो जाय रहे तो पासा ॥
मोरे पास रोकट है थोरा । बिसह्यौँ मोल हस्ति औ घोरा ॥
बसन अतर औ पाट पटबर । मृग कसतूरी केसर अंबर ॥
कहा कि रोकर होय सो देऊ । यह सु दास दोषी कहँ लेहू ॥
तीन दरभ रोकर हम पासा । सो तुम लेहु देहु यह दासा ॥

अस कोरे हम दास तें, भय नायक दिन रात ।
जो तुम देउ सो लेब हम, अवर न अब कहु बात ॥

कहा कि जो कुछ देहु सो लेहीं । का दोषित कर मोल करेहीं ॥
तुरतेहि दीन्ह न लायसि बारा । तब यूसुफ पुनि कीन्ह जोहारा ॥
मालिक कहा दाम भर लेहू । लै मोहि कहँ कागद लिखि देहू ॥
तब समयू कागद लिख दीन्हा । मालिक मोल यूसुफ कहँ लीन्हा ॥
हम सब मोल दाम पर पावा । दास चोर कह बैंचि अडावा ॥

लै कागद यूसुफ कहँ चला। कहा कि करम हत्यो मोर भला ॥
लागे कहै कि भागे दासा। रखियो बँद महँ निसि दिन प्यासा ॥
जो यह भागि जाय कहुँ नायक। हमे न दोख दियो सुख दायक ॥
तेहिं ते डारि देहु पग बेरी। ऊँट चढाय फिरहुँ चहुँ फेरी ॥

गयऊ सँकर पग बेरी, हाथ हथकड़ी नाय।
टाट झूल पहिराय के, फिरहु सो ऊँट चढ़ाय ॥

कँवल चरन महँ बेरी नवावा। कुसुम्ह बाँह हतकरी पिन्हावा ॥
टाट झूल यूसुफ कहँ दीन्हा। बसन अनूप काट तिन्ह लीन्हा ॥
जब वह बंचि चले निर्दाई। यूसुफ रोय उठा अकुलाई ॥
आज्ञा देहु जाउँ उन्ह पासा। आवै समुद सो अस सो आसा ॥
नायक कहा मया तोहिं आई। वे जस सत्रु अहैं निरदाई ॥
कहा कि करत कोटि अनरीती। मोरे हियतें जाय न प्रीती ॥
पहने टाट झोल अस भारी। बेरी पकरि चला बनवारी ॥
यूसुफ बिदा रोय तहँ कीन्हा। एक एक कहँ अकम दीन्हा ॥
वह रोवै वे हँसे निर्दाये। टाट झूल लखि मन रहसाए ॥

भूँख प्यास दुख मृत्यु मँह, भूलि न जायहु मोह।
सँवरेहु सदा हिये मोंहि, हम दुख बिरह बिछोह ॥

अनुज दास कहँ सँवरेहु भाई। तुमहि सपथ जनि दिहेहु भुलाई ॥
अब हम जाहि कहाँ किन देसा। कते रे मिलन कत जियन अदेसा ॥
दास चोर बँधुआन बनावा। दहुँ आगे का चहिय दिखावा ॥
अब हम कहाँ, कहाँ तुम्ह भाई। जनम सब देइ बिधि बिलगाई ॥
तात चरन सिर लायहु भाई। मोरे ओर त कहेउ सुनाई ॥
पिता न दिहेउ प्रान तुम्ह रोई। देहु असीस भेंट जेहि होई ॥
मोर मृत्यु जिन्ह ताह सुनायहु। फिर फिर सिर चरनन्ह लै लायहु ॥
मरहिँ न पिता करेउ अस काजू। नाहित होय दुओ जग लाजू ॥
रोय रोय सब बरन सुनावा। तब नायक तेहि बालि भेजावा ॥

मात पिता जन परिजन, लोक कुटुँब परिवार।
यूसुफ चला बिदेसु कहँ, किनआ नगर जोहार ॥

रोवत चला ऊभ लै साँसा। रहे न पिता मिलन की आसा ॥
चलै फेर देखहि उन ओरा। मकु भाई पूछहि दुख मोरा ॥
भाइन्ह कहा बिलम्ब जिन लावहु। नायक संघ बिदेस सिधावहु ॥
यूसुफ नैन मघा झर लाये। नायक पास गयो बिलखाये ॥
यूसुफ हिये सँवर यह बाता। मुकुर देख मुख आपन राता ॥
ऐस रतन सपत उन्ह पावा। चला बेगि नहिं बार लगावा ॥
मन महँ जस कीन्हे अभिमाना। तस सुमोल आपन हम जाना ॥

तेहि अवगुन यह दुरगत भयऊ। दास चोर बँधुवा होय गयऊ॥
चला सँगहि लै नायक, यूसुफ ऊँट चढाय।
फिरि फिरि करै जुहार वह, किनआँ देस सिर नाय॥
नायक पथ मिसर का लीन्हाँ। चहै दास यूसुफ सँग कीन्हाँ॥
लिये जात सँग वै निरदाई। मात गोर पर पहुँचा जाई॥
यूसूफ नबी नैन भरि हेरा। रोय रोय माता कहँ टेरा॥
लखि माता की कबर सुहाई। होय बिकरार गिरा मुरझाई॥
पुत्र तुम्हार जात परदेसा। भएहुँ दास देख्यो नहिँ भेसा॥
वै चरनन महँ देखहु बेरी। टाट भूल जो कबहुँ न हेरी॥
लोटै पड़ा कबर पर रोई। खाय पछार जीव कत खोई॥
देखि कबर पर दास अभागा। क्रोधवत होइ मारन्ह लागा॥
यहि अवगुन यह मोल बिकाने। अबहूँ आस हिये नहिँ माने॥
बेचनहारन्ह सत कहा, भागि जाय यह दास।
मशक मारि सो लैचला, पकरि सो नायक पास॥
जब सो दास यूसुफ कहँ मारा। मता कबर काँपै एक बारा॥
प्रान हमार भयो तुम दासा। मारि तुम्हेँ करि दास निरासा॥
पदुम बरन जो चरन तुम्हारा। तेहि चरनन महँ बेरी डारा॥
कौन देस तोहि कहँ लै जाहीँ। जहाँ सुमात पिता कोउ नाहीँ॥
काँपै कबर औ यूसुफ रोवा। दास पुत्र तेँ मात बिछोहा॥
आँधी उठी भयौ अँधियारा। सूझि परै नहिँ हाथ पसारा॥
घन गरजै बादर चढि आए। दामिनि कौँध चमक दिखराए॥
आवै चमक जो नायक पासा। लखि मालिक मन भयो तरासा॥
मै तो दोष कीन्ह कुछ नाहीँ। केहि कारन दामिनि डरपाहीँ॥
बार बार जो आवै जाई। मलिक देखि हिए डर खाई॥
कौन पाप मोहि परगट्यो, कीन्ह दइय अस कोप।
जानि परै अँधकार महँ, सब मिलि होब अलोप॥
तब एक दास आगे चलि आवा। औ मालिक तेँ भेद जतावा॥
दास जो मोल लीन्ह तुम आजू। भयो कोप विधि तेहि के काजू॥
जैसे तेहि मारा बिन दोखू। तेहि सुदास तेँ माँगहु मोखू॥
हत्यौ कबर पर रोवत दासा। तेहि मारत अँधेर चहुँ बासा॥
तब मालिक यूसुफ पहँ आवा। नाय सीस कर जोरि मनावा॥
करहु छमा औ देहु असीसा। जेहि तेँ छिमा करै जगदीसा॥
तब यूसुफ दोउ हाथ पसारा। मिटि गा गरज कौँध अँधियारा॥
कीन्ह बहुत हठ बेचन हारे। तेहि कारन बेरी पग डारे॥
बैरी पाँव ते काटि बहावा। करि अशनान बसन पहिरावा॥

मालिक देखि अधीन भा, कीन्ह बहुत अरदास।
जैसे पकरि मँगाय कै, सौंपि दीन्ह सो दास॥

लैआए यूसुफ कै पासा। कहा कि है दोषी यह दासा॥
जो तुम कहो सो साँमति करहीं। जेहि तें सबहि दास तोहि डरहीं॥
यूसुफ नबी बोल यह चेरा। निज बाहुन तेहि आनन फेरा॥
हत्यो जो रंग स्याम अँधियारा। चाँदी सम होयगा उँजियारा॥
मलिक देखि सो अचरज कीन्हा। वह सुदास यूसुफ कहँ दीन्हा॥
पुत्र समान रखै तेहि लागा। कहै कि भाग मोर अब जागा॥
नित नवीन बागा पहिरावै। अपने संग सो भोग खवावै॥
यूसुफ नबी करै नित रोवा। सँवर सँवर याकूब बिछोहा॥
मलिक भेद बहुत निरभावे। छुटि सुदास नहिँ और बतावे॥

मालिक साज समाज के, चला मिसिर के देस।
कहुँ बिरह दुख ताकर, कीन्ह जो मिसिर परवेस॥

*

जुलेखा बरनन खंड

अब बरनौं यह कथा सुनावा । जासु विरह तेहिँ मिसर लैआवा ॥
मगरिब देस सो नगर बखाना । तहँ तैमूस शाह सुलताना ॥
सबइ कछु ताहि दीन्ह करतारा । राज पाट सब कटक सँवारा ॥
संतति और न दीन्ह गोसाईं । सुता एक अछरी कै नाईं ॥
सो कन्या हुत बार कुमारी । नाम जुलेखा दई सँवारी ॥
भई तरुनि जग बास बसानी । रूप अनूप जगत सब जानी ॥
देस देस के नृप सुलताना । कीन्ह चाह सुलतान न माना ॥
दुहिता जोग रूप कहँ पावा । जेहि तें होय सँजोग सरावा ॥
कहँ यह जोग जगत महँ कोई । जो यह कन्या कर बर होई ॥

सात दीप से चाह उत, लागे आवे जाय ।
काहु देय न उतर नृप, तौ लै गरब सुभाय ॥

अब नख सिख बरनौ तेहि केरा । आउर होय जो दरसन हेरा ॥
प्रथम कहौं माँग कै रेखा । सुरसती जमुना बिच देखा ॥
खरग धार वह माँग सोहाई । सेंदुर तहाँ न रकत लगाई ॥
औ ता महँ गूँथे गज मोती । राहु केत महँ नखत के जोती ॥
दुओ दस घन बादर जस छावा । मध्य कौंध चमकै दिखरावा ॥
दामिन अस वह माँग सोहाई । केस घमंड घटा जस छाई ॥
जस जमुना के नदी अपारा । माँग बाँध तिन्ह सुघर सँवारा ॥
सेत बंध तस माँग सोहाई । बिरही नैन बार जनु पाई ॥
जो न होत वह माँग अनूपा । डूबत नैन स्वरूप अनूपा ।

माँग सुहाई मुख बँधी, भाग अधिक तेहि दीन्ह ।
राहु केत दोउ दम तहाँ, मनहु किरन रब कीन्ह ॥

केस सीस का करौ बखाना । तच्छक देखि सो ताहि लजाना ।
मुख पर लरहिँ जो होइ बेकरारा । तब सदेह करै ससारा ॥
कोउ कहै अहै तम राजा । सोहै तहवाँ जोत बिराजा ॥
कोउ कह अहै दिनेस सोहावा । बरत हेत कालिंदी आवा ॥
कोऊ कहै कि नागिन कारी । दीन्ह छाँड़ि मन सो उँजियारी ॥
कोऊ कहै श्याम अलि गोहा । पुहुप पराग आय तेहि सोहा ॥
पुहुप चित्र महँ मृग मद बारा । खीँची चित्र चितेरन्ह मारा ॥
केस सीस मानो निसि कारी । प्रात काल मुख कै उँजियारी ॥

केस रचत तज आस न पासा। को तेहि जाय सो पावै बासा ॥
सिरिस फूल तहँ सोभा देई। औ चोटी लखि मन हरि लेई ॥
बेनी गूँथी लरी से, जग नागिन बन लीन्ह।
मूँगा चौकी पीठ पर, भान छाँड़ि तेहि दीन्ह ॥
अब लिलाट बरनौ सुखकारी। राका ससि तासों उँजियारी ॥
कनक खोर सो टीका दीन्हाँ। ससि गुरु कमल अध ग्रह कीन्हाँ ॥
मंगल बूँद सुरग सोहावा। ससि गुरु भुम्म एक ग्रह पावा ॥
राहु केत गज दोउ दस कारे। मध्य सोम पूरन उँजियारे ॥
तहाँ सो झलक किनारी देखा। जस ससि महँ दामिनि परबेसा ॥
इत अवरोध उधुध सुहावा। दुओ दस राहु गुपुत दिखरावा ॥
गुर सुर कुज ससि कै यक ठाईं। मोहै सदा लिलाट सोहाई ॥
गिरवर गढ सोहै तिन्ह सारा। होय बिकल तेहि देखन हारा ॥
जोत कहिय मन झूँठि कै जाना। उन के आग बिकल भै आना ॥
चंद लिलाट न सोहै, पूरन जोत अपार।
वह कलक बिकलक नहिं, वह षट बुध लहि सार ॥
भौंह धनुक का बरनै कोई। जाय सो ग्यान तहाँ लखि खोई ॥
बरनै सर वह धनुख समाना। ताहि देख जग डरपै प्राना ॥
भौंह कमान न्वढै नित रहै। सर सधान सो मारन्ह चहै ॥
गाछ गाछनैं सुन्दर सोहैं। लखि भृकुटी मो सूर मन मोहैं ॥
इन्द्र धनुक तेहि देखि लजाना। खीन बान होइ बेगि बिलाना ॥
धनु महँ जीव आप परबेसा। दुओ दस केस सोहावन केसा ॥
भौंह सरासन भृकुटी बाना। नैन बान इत बाँधहिं बाना ॥
देखि ताह थिर रहै न ग्याना। जाय भूलि सब सुद्धि पराना ॥
तिन्ह बेंदा कोटिन छबि देई। धनि मानहु जीवन हरि लेई ॥
धनु भौंहैं बिधनै रच्यौ, भृकुटी सनमुख बान।
देखि सरासन सिर चढैं, काँपै जगत परान ॥
नैन देखि मन होय बेहाला। जासु कटाछ हिए महँ साला ॥
सेत साम औ अरुन सोहावा। बिख अमिरित मधु घोर दिखावा ॥
जाकहँ लखै भये चख राता। मरि मरि जियै रहै मदमाता ॥
अबुज बरन दिधिग अरुनाई। भानु बरन होय गयो लुभाई ॥
अञ्जन जोर सदा मतवारे। घूमहि निस दिन प्रेम अखारे ॥
दो मोहित दोउ नैन सँवारा। लाज सनेह बोझ दोउ भारा ॥
दुअ अँबिरित कै सुभग कटोरी। ता महँ सरब हलाहल घोरी ॥
लहर कटाछ न जाय बखाना। जिन देखा तिन निश्चय माना ॥
दोइ खंजन सारद रितु माहीं। राका ससि निरभरै लडाहीं ॥

कुश्रो सुनैन जग में किए, जाल सितासित साज।
लाय बिछावा मधुर बिष, मन मोहन के काज॥
दोउ सरवन दुइ सीप सुहाये। मोती भरा सदा दिखराए॥
करनफूल औ पात सुहाए। बाली तेहाँ अधिक छबि आए॥
बरनि न जाय सरब रस ताके। प्रेम बचन सुनि निसि दिन जाके॥
प्रथम प्रेम कर सरवन बासा। बिन नैनन कर करहिँ पियासा॥
बहुरि हिए महँ करि बर बेसा। करहिँ ताहि बाउर कै बेसा॥
पुनि सरूप सरवन सुख दाई। करन करन का बरन सोहाई॥
कान अनूप सो प्रेम नगीना। कानन ते उपज्यो नित हीना॥
कान न करहिं सो कान सोहाए। सुनहिं बचन सो वह मन भाए॥
सरवन अधिक सोहाने, कुश्र दम रूप अनूप।
बिन कटाच्छ करतार कहँ, कुश्रा दम रतन सरूप॥
नासिक रसिक सदा रस गाहक। बास सुबास लिए जेहि लाहक॥
नथ बेसर छबि खेल कराए। मोती डोलत हिया डोलाए॥
मानहु हाथ सिकन्दर केरा। रूप भँवर ते लहरन फेरा॥
मोती पड़सि अधर पर आई। चिनगी मनो चकोर चुराई॥
सबहु मुख कै सोभा वह नासिक। सब रस लीन्ह औरहिँ सो बासुकि॥
जस चंपै की कली सोहाई। खड़ग धार तेहि मन विकसाई॥
नासिक रसिक महा सुकुमारा। निरखहि मनुस अनेक अपारा॥
धन नासिक की रीत सोहाई। गुन अवगुन सबहु दीन बताई॥
सभै बदन कर अहै सिंगारा। बाँधै काम खरग कै धारा॥
नासिक सोभा का कहैं, सब मुख सोह बढाय।
तापर ऊँच सुहाए, उत समुद्र अधिकाय॥
अब कपोल बरनौ सुख दाई। गात गुलाब देखि मुरझाई॥
सबहि कपोल सुरंग सुहावा। देखत काम ताहि छबि आवा॥
कँवल कपोल न जाइ बखाना। कहँ ससि पर जग ताहि समाना॥
बेसर देख सो ज्ञान लजाए। कहँ तेहि सम जेहि उपमा लाए॥
ता में दसन अनूप सोहावा। तिल कपोल छबि बरनि न आवा॥
बिसुकरमै लखि सुधर कपोला। दीठ परे तिल दीन्ह अमोला॥
ईंगुर जान कपोलन साना। उत सुरग तिन्ह भँवर भुलाना॥
सिहर सुहावन बोल अनूपा। जाय रूप लखि जाय सुरूपा॥
रचा चतुर विधि सुघर चितेरा। परी बूँद खसि केरिन हेरा॥
कँवल कपोल सोहाने तिन सोहे तिल स्याम।
जस अलिन्द अरबिंद पर, आन कीन्ह बिसराम॥
अधर सुधा धर बरनि न जाई। भये अनूठि वै जूँठन पाई॥

अँबिरित सम देवतन कर जूँठा। वह सो अधर पुहुप अनूठा ॥
जानि न परहिं अधर उत खीने। नित भाखैं वै मधुर नवीने ॥
सुनत बचन वै अधर सोहाए। ऊख पियूख बनूख सुखाए ॥
अधर सजीवन मूर सुहावा। सुधा पिडाक बिरचि बनावा ॥
अधर खोल जब वह मुसकाई। खान सजीवन की खुलि जाई ॥
जब मुसकाय सखिन्ह से गारी। झरहिं फूल औ होहि अँजोरी ॥
अरुन मृदू औ अमिय सुधारा। रहत अधर पियूख अधारा ॥
जो वह अधर मधुर मुसकाई। तो मिरतक कहँ देत जियाई ॥

अधर सुधाधर मधुर उत, कीन्ह सुरँग सुख भाग।
जेहिते बोलें औ हिये, सदा सजीवन पाग ॥

चिबुक सो ताहि का बरनै कोई। सिद्धि सदन महँ कूप सो होई ॥
देखत कूप होय बिकरारा। बूड़ै मरै जिऐ इक बारा ॥
प्यारे बदन सिद्ध करतारा। तहाँ कूप महँ चिबुक अपारा ॥
चढ़े दिष्टि मुख देखै लागै। पड़े कूप महँ जाय सो थाकै ॥
भँवरन पड़ै डीठि वह जाई। टक टक रहे सो थाह न पाई ॥
चिबुक गाड़ उत सुडौल सँवारा। मज्जहिं जग मानुस बिसतारा ॥
वह सुभलक जेहि उपमा पाहीं। बूड़हिं तड़पहिं चित तेहि माहीं ॥
परे जबहिं डूबहिं उतराहीं। पार घाट तेहि पावत नाहीं ॥
गाड अनूप चार बिसतारा। चमकै सुभग सो दई सँवारा ॥

चिबुक सुहावन सुदर, गाड अनूप अपार।
को तिन महँ बूड़हि तरहिं, कतहुँ न पावे पार ॥

गिवँ अनूप बरनै का कोई। देखत पाप जाय तेहि धोई ॥
गीँव सुहावन सुभग अनूपा। जातरूप डरि जाइ सुरूपा ॥
कुदन चाक चढाय बनाए। देहि अदेहिन गार सों सुहाए ॥
चमकै अरुन सुहावन गीऊँ। कनक खोट जेहि लखि जीऊँ ॥
बिसुकरमै उत सुदर साजा। गींवा देखि हिये महँ लाजा ॥
लखि सुगीँव थिर रहै न ज्ञाना। साँचे ढार रचा मजाना ॥
चपक कली उर बसै अनूपा। कहँ भूखन जो गिवँ रस रूपा ॥
सभै अग बिधि आप सँवारे। सभ ऊपर वह गीँव निवारे ॥
कठ अमोल गोल उत सोहा। मुनि गँधरब रिषि ता लखि मोहा ॥

गीव उठाने गरब ते, पड़ें कूप अभिमान।
रभा सिध औ उरबसी, रमा मनोज लजान ॥

उर चमकै जस उदित जुन्हाई। तिन्ह उरोज दुइ सुरति सुहाई ॥
कोमल कुच बन्यौ धरनीसा। बरन लरै फल रग महेसा ॥
नारगी सो उरज कठोरा। कुछ उपमा तेहि जाय न जोरा ॥

उर कुंदन पानी जम डारा। दुइ मूरति महँ आप उतारा ॥
दोउ लाल कै मूरति साजा। देखि सो लाल रंग वह लाजा ॥
कुँदन बागन क्यारि बनाई। दुइ अँबिरित फल तहाँ सोहाई ॥
कँवल कलिदहि उरज सोहाई। चख अलिंद रस लीन्ह लुभाई ॥
मुरत मनोज देखि कै हारा। निज अँवधाय सो रख्यो नगारा।
घुँघची सम तहि रंग सोहावा। तहाँ स्यामता उत छबि पावा ॥
तहाँ हार औ मोहन माला। होय प्रान हाल बेहाला ॥

कुच कठोर देखत हरै। सुर नारी एक बार।
काम कला पूरन तहाँ, कीन्ह आप बैपार ॥

छतिय अनूप दुइ लहे सँवारा। पान फूल कै रहे अधारा ॥
रोमावलि रेखा तिन्ह सोहै। नैनन्ह देखि देखि ताहि मन मोहै ॥
अँबिरित कुंड सो नाम सोहाई। रहे नागिनी मुख लपटाई ॥
देखि गरुड़ वह चकिरित भइ। नागिनि ठहकि तहा रहि गई ॥
अँबिरित कुंड नाभिमुख पूरा। रहि पाछे मुख फेरि न मोरा ॥
छतिय निहारि सखिन्ह ललचाहीं। सुर नर मुनि कोउ देखा नाहीं ॥
जो देखे वह छतिय सोहावा। पूरन काम सो आन सतावा ॥
ता पर पीठि अनूप सँवारा। होय मलीन दीठि कै मारा ॥
कोमल बिमल पेट निरमाया। रोमावलि बेनी कै छाया ॥

रोमावलि बेनी बिरह, सोहै छत्र अनूप।
गात सोहावन उत बिमल, छाया अतुल सरूप ॥

का बरनै भुज सोभा कोई। रचा चित्र महँ चित्रित सोई ॥
भुज ते कर अँगुरिन लहि सारा। चढा उतार सु चित्रित धारा ॥
पुहुप छत्र वह दंड सोहावा। काम चितेरै चाक फिरावा ॥
भुज भूखन कर भूखन सोहे। अँगुरिन मुदरि लखि मन मोहै ॥
दोउ कर सोहै ललित कलाई भले देख अच्छ पाय अछाई ॥
वह सावक चदन कै साखा। लपटे रहैं करैं अभिलाषा ॥
कर भुज ते उत सुदर साजा। रोम रोम छबि सिस्ट बिराजा ॥
भुज भूखन नौ रतन सोहावा। कर पहुँचीन जरत छबि पावा ॥
चित्त हरा लखि पावन रूपा। धनि पावन कर रूप अनूपा ॥

इंदु बुद्ध अरु मेहदी, रतनक जनु तेहि बान।
तेहि ईंगुर छबि देखि कै, रहे मोहि मन मान ॥

पीठहिँ तेहि कर गोल बेयारी। ता पर परी जो चोटी कारी ॥
मूँगे की चौकी छबि देई। तिन बैठे नागिन छबि देई ॥
पीठ के तन को सकै निहारी। डँसे डीठ महँ नागिन कारी ॥
वह सो पीठि जेहि तजै न डीठी। देखा करै सदा वह डीठी ॥

देखत रहे पीठि चख हारी। पाछु परे रह डीठ न पारी ॥
सुदर पीठि कनक रँग धारा। बिसुकरमै जस साँचै ढारा ॥
पीठि देखि मन चक्रित होई। कुसल छेम लखै का कोई ॥
दुश्र दम पीठि श्रपूरब देखा। सोहै बुद्ध कनक कई रेखा ॥
सो रेखा लखि ज्ञान हराई। कदलि रेख के पटतर लाई ॥
पीठि दीठि देखत सदा, होय हिए बिकरार।
नागिन बेनी तिन्ह बसी, डँसी पीठि एक बार ॥
निसँक लक बरनी नहिँ जाई। डीठि भार कत सकै उठाई ॥
रहैं सखी श्रचरज कै माहीँ। कोउ कह श्राह कोउ कह नाहीँ ॥
वार चाह कटि कोमल बेनी। देखि न सकै सो डीठि बिहूनी ॥
नारिन सग जहाँ पग धारा। लचि लचि जाय बार कै भारा ॥
चलत नारि मन सग करेई। दुमची लचि धनु हिया डराई ॥
कनक तार श्रस लक सोहाई। कौंप दीठि सो रहै डराई ॥
धन चरित्र वह सुघर सँवारा। सहैं नारि सभ तिन कै भारा।
सभ तन देखैं नैन सोहाए। श्रग सग लखि तेहि डर खाए ॥
कटी भाग छबि देइ श्रपारा। मोहहिँ सुर मुन तेहि झकारा ॥
निरगुन सुरगुन पाव जस, तस कटि परै न देखि।
श्रवर श्रग देखैं नयन, भागहिँ लक बिसेख ॥
जघ तत का करौं बखाना। कँवल श्रमोल सुभग सुर ताना ॥
भारी जघ तत सोहावा। पिँडुरी जहाँ श्रधिक सुख पावा ॥
मूँगा की यह जघ सुहाई। तस पिँडुरी श्रस चौक सुहाई ॥
का बरनै ताकै सुकुमारी। सभ तन सौँह तासु श्रधिकारी ॥
श्रौ पिँडुरी सोहै उत गोरी। नैनन भार होय मति थोरी ॥
पिँडुरी जघ लखि रहै न ज्ञाना। लखि तँत जघ तजहिँ सब प्राना ॥
जैस तत तस जघ सोहाए। तस पिँडुरी श्रस चाक फिराए ॥
चाक चढाय सँवार्‍यो ताही। होय श्रधीर नैन लखि जाही ॥
तिन्ह पायल पैजनी सोहाई। घुँघरू बिछिया बुद्धि हेराई ॥
जघ सोहावन देखि कै, सत्त धरम भजि जाहिँ।
पिँडुरी निरखत पाप दुख, हरै पला छिन माहिँ ॥
नख श्रमोल कछु बरनि न जाहीँ। कँवल चरन लखि सपुट गहहीँ ॥
जस श्ररबिंद सुरग सुहावा। तस वह चरन श्रनूप बनावा ॥
देखि कमल होय रग बिहीना। वह सुचरन सुख रँग रस लीना ॥
चरन बरन तेहि जाहिँ सोहाए। देखत पाप सोभाग हेराए ॥
श्रौ श्रँगुरिय तेहि सुदर श्रानी। मेहँदी ईंगुर ही के पानी ॥
यक नूपुर बिछिया उत सोहै। कोकिल सुनत सबद वह मोहैं ॥

रूपौ चरन सब सोभा साधा। देखत चित्त रहे तेहि हाथा।
उत कोमल एँड़ीय सोहाई। देखि महाउर हिए लजाई॥
जब तरुनी भइ राजकुमारी। काम अनग अग सचारी॥

उत एँड़ी सुकुमार तेहि, अँबिरित लाल लगाय।
भरत पाँव वह बाल के, वासुकि देखि लजाय॥

सखिन्ह जो चाहैं पाँव पखारा। चक्रित ज्ञान रग लखि सारा॥
रूप अधिक तैं हिए उछाहा। भूखन रचि तिन गँधरब लाहा॥
निस दिन सखिन्ह सग फुलवारी। करै कुलाहल कोट धमारी॥
मदन प्रवेस हिए महँ कीन्हा। पेम सुरग अग महँ कीन्हा॥
देख सरूप सखिन्ह ललचाहीँ। पवन बास तिन्ह पावत नाहीँ॥
धाइ खिलाई सखिय सहेली। तेहि के सग करहि सुख केली॥
साज सिँगार औ अभरन जोरा। रूप गुमान न काहुन जोरा॥
मता पिता के प्रान अधारी। समय सोच नहिं जानै नारी॥
और रोग तेहि तैं मुरझाही। गात तत उन्नत अधिकाहीं॥

भय बालापन बारी, सदा रूप अधिकाय।
मात पिता वहि तरुनि लखि, लागै हियै लजाय॥

स्वप्न खंड

एक रात जो करै सोहावन। प्रेम स्वरूप बिरह उपजावन ॥
प्रेम भरी रजनी उँजियारी। सखिन्ह साथ सोवै सो नारी ॥
आधि रात लहि जागि कुमारी। प्रेम कै बात सुनत सुखकारी ॥
आई नींद तमसि अलसानी। सोइ गई सब सखी सयानी ॥
सोवा पहरू औ कोतवारा। सोवा सो उत घट बजनूहारा ॥
सोवैं सुखी दुखी नर नारी। सोवै खग मृग खेत करारी ॥
सब सोवा कोउ जागत नाहीं। जागत एक प्रेम जग माहीं ॥
सोवै लगि तेहि समय जुलेखा। यूसुफ कहँ सपने महँ देखा ॥
मीठी नींद सबै जग सोवा। प्रेम बीज हिय जा महँ गोवा ॥

भाँन सरूप तहँ आय गय, देखि रहै टक लाय।
लीन्ह प्रान तिन्ह काढि कै, रूप अनूप दिखाय ॥

देखत नारि बिमोहित भई। निरख रूप बाउर होइ गई ॥
नैन बान ते बेधा हिया। बात न आउ मौन भइ तीया ॥
छिन एक ठाढ रहा रँगराता। पुन मुसकाय कीन्ह अस बाता ॥
हम तुम्ह का चाहा चित लाई। तुम्ह हियँ ते जिन देहु भुलाई ॥
कहि यह बात चहा उर लावा। जागि परी कुछ दिष्टि न आवा ॥
जागत कै चकचोंहट लागा। जस पछी कर ते उड भागा ॥
हिरदै लागि प्रेम की गाँसी। भयौ सुज्ञान हानि तन नासी ॥
सोवत सुख जागत दुख पावा। रोम रोम तन बिरह अकुलावा ॥
मूरत एक सुदिष्ट दिखाई। हिए माहि जस गई समाई ॥

प्रेम फद अरुझाने, गई ज्ञान मति भूल ॥
सँवर रूप अकुलाय मनु, उठै हिये महँ सूल ॥

उठि बैठी मुख सँवरत सोई। नई लगन कहि सकै न कोई ॥
जब सँवरै मुख तब बिलखाई। लै सुलाज ते रोय न जाई ॥
बिरह बान बेधा एक बारा। रोम रोम व्याकुल तेहि छारा ॥
चिनगी बिरह आगि कै लागी। सुलगै लाग हिए महँ आगी ॥
सखिन्ह देखि धन बदन मलीना। मन व्याकुल तन सुध बुध हीना ॥
पूँछै कत तुम्ह चित्त उदासा। कवन सोच तुम हिरदै बासा ॥
तुम्ह सब कर जग प्रान अधारा। काहे लाग भई बिकरारा ॥
सम सुख तुम्हहि बिधाता दीन्हाँ। मन मलीन केहि कारन कीन्हाँ ॥
पान न खाहु न सूँघहु फूला। अभरन अवर सिंगारहु भूला ॥

दिन भर मौन किये रहै, भूख प्यास गये भूल।
पान न खाय न रहि सकै, काँट भए सब फूल॥
भूखन रतन उतारि जो डारा। दुख दायक भये सबहिँ सिँगारा॥
मन महँ सोच करै मुरझाई। लैगा प्रान स्वरूप दिखाई॥
नाउँ ठाउँ कछु जानत नाहीं। कहाँ सो खोज करूँ जग माहीँ॥
नियरे ठाढि रहै वह मूरति। जेहि बिन तन मन प्रान बिसूरत॥
रूप दिखाय सो चेटक लावा। मधुर बचन कहि अधिक लुभावा॥
सेज परै जागै फिरि सोवै। लखै न रूप उठै फिर रोवै॥
ना वहि मूरत ना वहि ठाऊँ। कौन हत्यो वह का नहिँ नाऊँ॥
छूटै आँसु चलै जस मोंती। कहै के अय मनभावन जोती॥
कहाँ गयो वह रूप दिखाई। नट नाटक चाटक अस लाई॥

तोहिं सपति वहि दइ किये, जिन्ह कीन्हाँ तोंहि भूप।
एक बार फिरि आवहू, आनि दिखावहु रूप॥
ज्ञान हेराय तो मूरत हेरानी। लागत आगि न बरसै पानी॥
जातवेद होय सेज जराई। जानि बेध सब बेद भुलाई॥
पावक झर से पवन जो लागे। रोम रोम लै सरागन दागे॥
खिन उठ सेज परै बिकरारा। खिन उठ कै बैठे बिसँभारा॥
खिन तन डहै से अगिन उदामा। खिन बरसै चख ऊदक झरना॥
खिन सो उठै बिरह कै ज्वाला। खिन मुख सँवरत होय बेहाला॥
कहै कि ए बैरी दुख देवा। का मै कीन्ह चूक अस खेवा॥
खिन रोवै खिन नैन छिपावै। खिन सोवै पै नींद न आवै॥
बिकल सरीर भयौ जस पारा। बिरह अगिन ते सुठि बिकरारा॥

खिन चख बरसै अगिन जल, करत न बनै पुकार।
कल न परै पल ना लगै, सहै दुकूल न भार॥
यहि बिधि निसि बीतै दिन आवै। सखिन्ह देख चख नीर छिपावै॥
अधिक बिकल होय प्रान गँवावै। रोवत बनै न कहत सोहावै॥
बैठहि मौन साध बैरागी। हिये सँभार बिरह कै आगी॥
उठ धाई सभ सखी सहेली। करत सदा जस कूकत बेली॥
देखा आप जो प्रान पियारी। सखिन्ह होय अधिकौ बिकरारी॥
निस दिन खोज करै सभ कोई। कँवल भेद का जानै कोई॥
धाई लखा पेम कै पीरा। चरचा देखि मलीन सरीरा॥
जब सु एकत भई तब काहा। केहि बिधि अबुज सपुट गहा॥

कहो भेद धनि आपन, जो कुछ बिरह बियोग॥
करौं उपाय सो रोग कै, लै मेरऊँ तेहि जोग॥

मैं तोहि का केहि चाह से पाला। दिन दिन देखि सो होहुँ बेहाला ॥
बालापन तोहि हिएँ चढाये। फिरौं चहूँ दिसि तोरे फिराये ॥
पोख्यों सो तन छीर अधारा। प्रान तें अधिक सो प्यार तुम्हारा ॥
नित छाती पर तोहिं सोलावा। नैन ओट मोहि चैन न आवा ॥
तोर सो दुःख हरयो मोर चैना। कैसे दुखी लखौं निज नैना ॥
सुनि यह बात चरन सिर लावा। आपन अरथ सो बरनि सुनावा ॥
तुम माता तें अधिक पियारी। तोहि छुट अवर न हितू हमारी ॥
औ तोहिं सम कोउ नाहिं सयानी। तोहि सब बेद भेद जग जानी ॥
पै दुख मोर कठिन है धाई। जेहि दुख कर कोउ नाहि सहाई ॥
कहा हौ मोहूयौ अछरी, कहु मानुख केहि मान।
जेहि कै नित मोहि आस है, कत दुख सहै परान ॥
कह्यो लाज ते कहा न जाई, जो न कहौं कत प्रान रहाई ॥
प्रान जात का भेद छिपाऊँ। कहौ बिथा जो औषध पाऊँ ॥
धाय कहा तुइ प्रान अधारा। तोरे लाग तजौं घर बारा ॥
सौं देखौ तोहिं चित्त उदासा। कहाँ मोहि अब रहै हुलासा ॥
सो जानहु हम गुन अधिकारी। कस न कहहु तुम भेद उघारी ॥
जानहु प्रेम कीन्ह तन रेखा। काहुन कहँ तुम नैनन देखा ॥
तेहिं कर करौं सो ओखध खोजू। हरौं सकल दुख डारौं रोजू ॥
कहा जुलेखा सुन मोर बाता। मोर हिया कुठाउँ सराता ॥
सपने महँ वह. रूप बिसेखा। जो कबहूँ ना सुना न देखा ॥
करौ जतन अब धाय, न तो मरौं जिव खोय।
कहा भेद मै तुम्ह ते, सुनै न दूजा कोय ॥
तेहि कर बिरह बान मोरे लागा। लागत रोम रोम तन जागा ॥
चहहु प्रान तो करहु उपाऊ। हौं पखिय जेहि पख न पाऊ ॥
मोहि बारे बिधि हिये सँवारा। लाजन न मरों न जाय उघारा ॥
जो निलज्ज होय प्रान लुटावँहु। जन परिजन महँ लाज गँवावँहु ॥
धाई सुना प्रेम कै बाता। उपज्यो रोम रोम दुख गाता ॥
कहा बिरह पद कठिन अपारा। जेहि के प्रेम वार नहिं पारा ॥
भये सपने लखि प्रान उदासा। पूछि न लिह्यो नाउँ औ बासा ॥
नाउँ ठाउँ जेहि कर कुछ नाहीं। को जानै कछु उन जग माहीं ॥
कै दुहुँ सरग लोक कर कोई। दैगा दुख दिखाय मुख सोई ॥
कै दुहुँ कछु चाटक देखरावा। झूँठ साँच कोउ जान न पावा ॥
काह करौं कत जाउँ चलि, कासों कहौ दुख रोय।
बिना नाउँ औ ठाँउ कर, का जाने को होय ॥
सुनि यह बात सो भई अधीरा। बाढै अधिक प्रेम कै पीरा ॥

भई अधीरज औ अज्ञाना। कहा कि कौन अहै सुलताना॥
अहै सो मोर जीव लेनहारा। देउँ प्रान तो वहि हत्यारा॥
आईं सखी धाय चहुँ ओरा। लियें भोग औ कनक कटोरा॥
बैठी रहै मौन की नाईं। सखिन्ह खवावहिं भोग बरियाईं॥
वह जिय अवर भोग कै जोगू। बिरह बिथा औ प्रेम बियोगू॥
भूला खेल औ भोग बिलासा। भूला सुख औ खेल हुलासा॥
भूला बेद औ कथा कहानी। प्रेम के पथ बँधहु अरुझानी॥
भूला अभरन राग सुहागा। सखिय भई दारुन बिछुनागा॥
भूला खेल कोलाहल, सुख सपत गय लूट।
प्रेम फद अरुझाने, अवर फद सब टूट॥
चार जाम दिन यहि बिधि खोई। बोलत बात सिखिहिं मुख जोई॥
निस कौं सेज बिछावै रोगी। धाइ पड़ै पट ओढ बियोगी॥
चलैं आँसु जस झलझल सेजा। रोय बुझावै तपत करेजा॥
सखिन्ह पाँव जो चापैं बैसे। बेधहि बान सुदारुन ऐसे॥
कहैं कथा जो सखिय सयानी। चित्त बियोग को सुनै कहानी॥
फूल सो आन बिछावन सेजा। दहकै देह औ तपै करेजा॥
चंदन आनि बदन महँ लावें। लागि आगि तन दुगुन दुखावें॥
भवन भाकस अस धग खाये। अभरन तनु जस काल डँसाये॥
रोम रोम जारै दुख दीन्हाँ। भा तन फाँस बरन वह नेर्हा॥
होय बृथाकुल बिलखाय, पल न लगे बेहाल।
तज धीरज चख मूँदि कै, बिनवै दीनदयाल॥
बूड़हि देहु थाह मँझधारा। बिछुड़े तोहि मिलावन हारा॥
कहाँ मुरत औ ताकर वासा। कवन हतो जिन कीन्ह उदासा॥
का तेहि नाँव ठाँव तेहि कीन्हीं। कलपौ नाथ जाऊ मै ताही॥
कहाँ रूप उपज्यौ करतारा। कहाँ सो अहै जीव लेनहारा॥
पियुखन कै अस बचन बतावा। लैगा प्रान सो बोल सोहावा॥
केस सीस वै कहाँ बनाये। कवन जाल तिन्ह प्रान फँसाये॥
यहि बिधि रोवत जोवत आसा। सब निसि जात भरत ऊसाँसा॥
निसि बीते यह दग्ध अपारा। बिरह बिहाय होय भिनुसारा॥
कहाँ नैन औ रसभ कपोला। कहाँ सो अधर सुधाधर बोला॥
मरै जियै लाजन डरै, करै न बिरह उघार।
जेहि पर परै सो जानै, लगन कै अगिन अपार॥
दिन भर सखिन्ह सग मुख जोवै। निसि एकत होय झल झल रोवै॥
भीजे सेज औ पाट बिछावन। सँवरै हिये रूप मन भावन॥
नींद भूख सगरौ परिहरै। सोय रहै नित मोती भरै॥

छुट रोदन औषदहि अपारा । और न कुछ तेहि नींद अहारा ॥
बिरह बिथा हिय अदर राखै । लाज खोय न काहू ते भाखै ॥
यहिं बिधि दिन बीतै निस आवै । रात दिवस धन रोय गँवावे ॥
देखै सखी कँवल कुम्हिलानी । पै कछु भेद परै नहि जानी ॥
पूछे भेद कहै कछु नाहीं । बैठी रहै भवन कै माहीं ॥
कहाँ रैन वह चैन कै होई । जो फिर दरस दिखावै कोई ॥

दिन भर रहै सो बद महँ, सूर जरावत दीन्ह ।
दिन ते पीर बढ्यो सखि, निसि ते बढै सनेह ।

बीता बरख हरख तन त्यागा । रह्यो अकेल बिरह बैरागा ॥
भए अस दुखित छूटिगा भोगू । जोगउ ते साधा सुठ जोगू ॥
चरचै बिरह सो सखी सयानी । जेहि के मरम परै नहिं जानी ॥
माता देख भई बिन प्राना । कौन तुसार कवल कुँभिलाना ॥
लीन्ह बुलाय हिये महँ लाई । लाय हिये महँ धीर बँधाई ॥
माता भेद सखिन्ह से पूँछे । का वै कहैं भेद सो पूँछै ॥
डरहि सखिय तेहि देखि सुभावा । रहा निकट दुख कठिन नियावा ॥
निसि दिन जरै बिरह कै जारे । उतपत प्रेम भये सुख कारे ॥
देखि सुता जननी अकुलानी । आरत करै आप सुग्यानी ॥

चढी माय कैलास पर, भोग दई से हाथ ।
सेवा करै अनेक बिधि, राखै निसि दिन साथ ॥

कोटि जतन कै हारी सोई । एक दिवस बिधि आन सँजोई ॥
मूँध चहै हिय परगट केरा । खोलन चह हिय केर अहेरा ॥
सोवै तन जागै वह जीऊ । हिये नैनन ते देखै पीऊ ॥
जेहि बिधि आदि परघट भो सोई । आवा फेर ना जानै कोई ॥
धाय नारि पाँव लै परी । हाथ जोरि आगे भइ खरी ॥
कहा कि प्रीतम लेहु न प्राना । देहु बिछोह किहेउ तन हाना ॥
तोरे दरस परस कै आसा । रह्यो आस घट पजर साँसा ॥
तुम अस कत भुलायो मोही । मै नित जरेयौ सपन लखि तोही ॥
निस दिन सीस चढायों खेहा । भसम बिरह तोहि अबुज देहा ॥

तुम अस निठुर बिछोही, बहुरि न लीन्ह्यो चाह ।
मुयौं सो विरह बिछोह ते, अब कछु करहु निवाह ॥

कहा कि अस मोहि उपज्यो सोगू । तुम्ह ते अधिक सो बिरह बियोगू ॥
तुम पर कौन बिथा अस बीती । हौं जस सहौं सो प्रेम पिरीती ॥
तोरै बिरह भयो अज्ञाना । छाँड्यो देस औ नगर अपाना ॥
तोरै लाग भयो परदेसी । मिला न कोई प्रेम सँदेसी ॥
सो तुम मोहिं भुलावहु नाहीं । राख्यौ प्रीत सदा हिय माहीं ॥

सदा मोहि तुम नियर विसेखो । दूजे पुरुख और जनि देखो ॥
जो चाहो हम दरसन राता । दूजे ते जिन बोलहु बाता ॥
जब सॅवरो तब हौ तुम्ह पासा । हम तुम्ह आस रहौ तोरे आसा ॥
होय विलव सोच जनि मान्यहु । प्रेम न कतहुँ अबिरथा जानहु ॥

मोहिं भूल्यहु जिन प्यारी, औ सॅवरहु दिन रैन ।
करो सदा बैराग चित, तब पावहु सुख चैन ॥

कहि यह बात चहा उर लावा । जागि परी कुछ दिष्टि न आवा ॥
वहै सु सेज वहै सोउनारी । अधिक भई ब्याकुल बेकरारी ॥
उठि बैठी औ लागी देखै । देखै सभै न ताहि विसेखै ॥
कहा कि अरे प्रानपत मोरे । बॅध्यो प्रेम फाँस मैं तोरे ॥
कब देखहि भरि नैन अघाई । केहि दिन हिय की प्यास बुझाई ॥
कब वह घडी सो पल फेरि आवै । जेहि दिन दरस परस उन पावै ॥
मै बाउर कछु सुध न कीन्हीं । नाऊँ औ ठाऊँ पूॅछ नहि लीन्हीं ॥
कहि ते कह्यौ सो आपन हारा । पूॅछ न लिहयौ सो अरथ अपारा ॥

प्रेम आय हिय मे बसा, बसा सो आठों अग ।
दिन दिन वह बिरहिन दहै, कौन सु चरचै सग ॥

दिन भर रहै मौन की नाईं । रैन जाग और रोय बिहाई ॥
परसन भयो जो सपने माहीं । नाऊँ ठाऊँ कुछ जान्यों नाहीं ॥
अब की बेर फेर तोहि पाऊँ । बरुनि सजल पग साँकर नाऊँ ॥
राखौ नैन घालि बिलॅभाई । मूदौ पलक देहुँ नहिँ जाई ॥
आवत लख्यों न गोपित देखा । भयौ मोर बाउर कै लेखा ॥
कहँ बिधिना अस करै सुभागा । मिलौ कनक जस काटि सुहागा ॥
तोर जोति मोर हिये समानी । दूसर और कहा मै जानी ॥
पिउ आए मै पापिन छूॅछी । नॉउ ठॉउ कछु लेहु न पूॅछी ॥
जब लहि आवागवन करेहूँ । तब लहि अधिक बिरह दुख देहूँ ॥

यह बिधि बीती रैन सभ, भयो चराचर रोर ।
धाई आइ निकट उठि, और सखिन चहुँ ओर ॥

तब धाई ते कहा उघारी । सपने दरस फेर चख चारी ॥
कहा कि दरस भयौ परकासा । पूॅछि न लेहुँ नाउँ औ बासा ॥
रखै लाग चित अबिरम जोगू । भये मोहित लखि बिरह बियोगू ॥
चित बैराग औ हिये उदासा । रही लूटि होय नाउँ कै आसा ॥
वहि के हिये सो बिरह बियोगू । जानहि लोग भयौ कुछ रोगू ॥
औषद देहिँ पिलावहिँ मूरी । औ सुख चैन दीन्ह तिन दूरी ॥
माता देखि भई बैरागी । तन मन उठै कोख कै आगी ॥
दुहिता रोग सुना सुलताना । औ सब नगर देस कुल जाना ॥

भयो प्रगट सभ जगत महँ, दुहिता रोग बिराग ।
बेल अकूरे हिये महँ, बाढि सरग कहँ लाग ॥
भइ बाउर तन सुध बुध त्यागी। चाहा जाय सु घर से भागी ॥
पातसाह तब बैद बुलाये। होय ब्याकुल नाड़िका दिखाये ॥
औषद भाँति भाँति कै कीन्हा। काढा औ चूरन रस दीन्हा ॥
तेहि ते अधिक बिथा तेहि बाढे। भागे बैदन कहि दिन गाढे ॥
प्रेम पीर त भई अधीरा। होय ब्याकुल तन फारे चीरा ॥
उठि उठि चलै छाँड घर बारा। तन पर लागि चढावै छारा ॥
पातसाह तब लाज लजावा। दुहिता पग बेरी लै आवा ॥
बेरी परी न मानै नारी। निसि दिन सखी रहैं रखवारी ॥
कहै कि ए मन मोहन प्यारे। पग साँकर देखौ अनियारे ॥
मोरे मन सँकरी परी, तन सँकरी केहि मान ।
निज नैनन देखौ निरख, यह तन मन कै हान ॥
यक दिन पहरु धौराहर सोये। सँवर सँवर मुख ब्याकुल होये ॥
सँवरै वही स्वरूप अमोला। दुख तें नैन जल परलै खोला
कहा कि ऐ मोरे प्रान अधारा। भल दिये दरस बिछोहन मारा ॥
कहि के सपथ अय प्रीतम प्राना। जिन्ह तोहि दीन्ह रूप औ ग्याना ॥
नाँउ ठाँउ अब देहु बताई। एक बार फिर दरस दिखाई ॥
कै किरपा औ सहसन दाया। निज दासी पर फिर कर माया ॥
तोरे बिरह मरौं अब रोई। सोऊँ सेज रकत जल बोई ॥
सखी सहेली न जिऊँ सोहाई। मात पिता कुल कान गँवाई ॥
छाँड्यों भोग भुगत तोरे नेहाँ। छाँड़ सिँगार चढायो खेहाँ ॥
छाँड्यो सब सुख दुख सह्यो, किह्यो जोग तेहि लाग ।
एक बार फिर आवहु, आनि बुझावहु आगि ॥
एक रैन फिर आन तुलानी। आये समुख नींद अलसानी ॥
तीसर सपन फेर वै देखा। वहै रूप जो आद बिसेखा ॥
जानहु आप फेर अस बोला। अमीकुड अधरन तै खोला ॥
मै तोहि लाग तज्यों घर बारा। पर्यों कूप महँ मोहि निसारा ॥
मोर तोर प्रीत आदि लिखि राखा। करहु सो अत भोग अभिलाखा ॥
तब दुख हटै होय सुख सारा। जब पाऊँ मै दरस तुम्हारा ॥
यह सुन नारि भई तब ठाढी। अरुझी बेल प्रेम की गाढी ॥
अब की बेर जाय नहिँ देहूँ। जब लहि नाउँ पूँछ नहिँ लेहूँ ॥
अब लहि यहि जिव निकसि न गयऊ। जो फिर दरसन प्रापत भयऊ ॥
नाउँ ठाउँ बतलावहु, पठऊँ जहाँ सँदेस ।
होय जोगिन बैरागिन चलि आवहँ वहि देस ॥

तब मुसकाइ कहा सुन प्यारी । मिस्र देस महँ बास हमारी ॥
मिस्र साह कर सचिव सोहावा । आवहु वहँ तब होय मेरावा ॥
सचिऊ नाम जगत नित सोहै । और नाम बिरला कोउ कहै ॥
मै अपने बस महँ हौ नाहीं । आवहु वेगि मिस्र कै माहीं ॥
कछु दिन सहौ बिरह दुख दाहू । बिन दुख प्रेम न प्रापत काहू ॥
जो दुख तें नहिं होय उदासा । अंत होय सुख भोग बिलासा ॥
जस चाहौ तुम मों कहँ प्यारी । तस चाहौ तोहि अनत कुँवारी ॥
सपने महँ सुनि भई हुलासा । जागि परी कोउ आस न पासा ॥
रोय उठी गहबर अकुलानी । नाउँ ठाउँ सुनि कै बिलगानी ॥
जिऊँ तो जाउँ मिसिर कहँ, मरूँ तो मारग माहँ ।
छार होहुँ उड़ि जाउँ अब, जहाँ बसै मोर नाहँ ॥

× × ×

*

जुलेखा बिरह खंड

सदा जुलेखा रोदन करै। यूसुफ रूप हिए महँ धरै ॥
रूप दिखाय कत छल कीन्हौं। बिरह बियोग जोग दुख दीन्हौं ॥
झूठ बात कहि मोहन बाता। काहे कियो सो छल कै बाता ॥
मैं तोर बचन साँच परमाना। लाज गँवाय मिसिर कहँ आना ॥
जो तेहि हते जराऊँ साधा। जरतिउँ बैठि तऊ दुख बाधा ॥
रहत सत्त मोर यह ससारा। अब का करौं कठिन दुख डारा ॥
मिटै रोग आवै हम पासा। सत्त धरम कर होइ बिनासा ॥
हौ आपत पत राखहु लाजू। प्रान गए जीवन केहि काजू ॥
खायों कुल कै लाज सुहावनि। भयों निलज जग ढीठ कहावनि ॥
लाज धरम सब छाँडि कै, आयों मिसिर के देस।
चहौ प्रान पत मोर जो, करहु बेगि परबेस ॥
जेहि कारन मै लाज गँवावा। सो न भयो सब हत्यो छलावा ॥
रोगिनि भई रहौं कब ताईं। यक दिन मरौ रोय हिय माहीं ॥
तोर रूप मैं सपने देखा। भयो मोर अब तिहि कर लेखा ॥
हेरै गयो हुमाय जो कोई। उलू मिला जो सरबस खोई ॥
पानी हेरै गयो पियासा। रेती देखि सो भयौ तरासा ॥
कोइ बोहित चढि चाहत पारा। बोहित फस्यौ जाइ मँझधारा ॥
बहा जात भा व्याकुल प्राना। आगे आनि काठ उतराना ॥
भयो काठ वह प्रान अधारा। बूडत बहत सो ताहि सँभारा ॥
जब वह काठ नियर भा आई। काल सरूप भयौ दुख दाई ॥
करम हमार है पातर, को अब करै सहाय।
गहिर अहै मँझधार महँ, परेउ काल बस आय ॥
यूसुफ मूरत हिएँ उरेखै। धरै ध्यान निज आगे देखै ॥
करै बिलाप कहै दुख सारा। का मोहि बिरह अगिन महँ जारा ॥
देहु दरस औ आस पुरावहु। कबहुँ न मिसिर नगर कहँ आवहु ॥
करै मोर दुख परसन पाऊँ। निसि बासर दुख रोय गँवाऊँ ॥
जा मोहिं आसा देत न दाता। करत्यौ वहै दिवस अपघाता ॥
जेहि दिन दरस न तोर बिसेखा। सूर के ठाऊँ राहु मैं देखा ॥
काहे क अब लहि जरत्यौ जारे। मरत्यौं वही दिवस बिन मारे ॥
एक सपन दूजे सरग के बानो। किहेउ न तेहि असा जिवहानी ॥
निसि दिन तोहि भरोस जिव राखै। बार बार बिनती यह भाखै ॥

जेहि विधि सपन देखावहु, लायहु चित सो चित्त ।
तेहि विधि आनि जिआवहु, मरौं तोहि बिन नित्त ॥
कबहूँ कहै पवन ते रोई । करै बिलाप अधीरज होई ॥
मारुत सदा करहु परबेसा । फिरहु राति दिन देस बिदेसा ॥
कवन ठाउँ जहँ तुम नहिं जाहू । काटहु मोर बिरह अधिकाहू ॥
जाहु जहाँ वह पीतम प्यारा । कहहु जाय दुख दुखद अपारा ॥
कहौ कि सपन माहँ गहि बाँहाँ । दिहेउ भुलाइ फेरि कस नाहाँ ॥
दै धोका मोहिं मिसिर बोलायहु । तुम अजहूँ लगि लाल न आयहु ॥
मै जोऊँ नित बाट तुम्हारी । रहौं बद महँ बिरह के मारी ॥
केहि कारन अस बाचा कीन्हयौ । देस छुड़ायो सुधि नहिं लीन्हयौ ॥
नैहर तज्यौं न पायों तोही । तेहि पर धरम करम करमोई ॥
धृक जीवन पिउ प्रान बिन, धृक बिन धरम परान ।
दुअ जग करिआ होय मुख, होय सत्त कै हान ॥

× × × ×

षड़ ऋतु खंड

रितु बसत बन आदिन फूला। जोगी जती देखि रँग भूला ॥
पूरन काम कमान चढावा। बिरही हिएँ बान अस लावा ॥
फूले फूल सिखी गुजारहिं। लागी आगि अनार के डारहिं ॥
कुसुम केतकी मालति बासा। भूले भँवर फिरहि चहुँ पासा ॥
मै का करूँ कहाँ अब जाऊँ। मों कहँ नाहिं जगत महँ ठाऊँ ॥
टेसू फूल तो कीन्ह अँजोरा। लागी आगि जरै चहुँ ओरा ॥
तुन फूले औ आँब फुलाने। करुना करों दिस बास बसाने ॥
फेरी त्यागि भिरिग दुख दाहे। कानन भाँवर सदा सुनाए ॥
पीतम भूल गए सुख पाई। निरमोहीं कहँ दया न आई ॥

यह रितु चित कैसे रहै, सहै बिरह कै पीर।
पूहुप देखि बसत रितु, कैसेहु धरै न धीर ॥

कवित्त

भागे सोच वियोग बँजार सभै, बिन काम कुलाहल चाखहिँ।
चाखे जोगी जती अनुराग, सों भँवर पतिंग सभै रस पावहिँ ॥
पाखे पेम सुरग में दीन्ह, सनेह भरित ऋतु लाज जो लागहिँ।
लागहिँ टेसू दवान चहूँदिसि, कौन दिसा होइ बिरहिनि भागहिँ ॥

सोरठा

हरे हरे ऋतुराज, बनि आवें लोहित भए।
आवे कौने काज, कत न पूछे बात मोंहि ॥

ग्रीषम ऋतु उत परहि अँगारा। घेरि अगिनि बिरहिन कहँ जारा ॥
यह ऋतु महँ सब जाय सुखानी। बिरह बेल अजहूँ न लहानी ॥
ग्रीषम तेज बिरह के आगे। मोरे हिए दाँउ अस लागे ॥
मदिल छाय उसीर सोहावा। रवन भवन आवन मन भावा ॥
उमडि घुमडि घन चढै अकासा। सजोगिन मन मुदित हुलासा ॥
बरै लाग पावस कर डेरा। फिर धिर (घर) कामक मठ घेरा ॥
तम तन मैन जरावै जीऊ। काह करै निरमोही पीऊ ॥
फल अँबिरित बौरे चहुँ ओरा। हम कहँ बिरह हलाहल घोरा ॥
निठुर कत नहि पूँछहि बाता। का हियँ लगे फल अँबिरित राता ॥

नीर घटा उमड़ी घटा, घटा मोर चख नीर।
नैना घट समझहि सदा, घट घट ढेर सरीर ॥

कवित्त

सूखि समुद्र गए रबितेज, सूखि गए सरिता जल धारी ॥
सूखि गए पुहुमी पति मंदिल, सूखि गए जल मेघ सुखारी ॥
सूखहि कूप तडाग लता द्रुम, बेलि बली बन औ फुलवारी ॥
सुखहिं 'निसार' अबुनल सूखहिं, नाहिन ये अँखियान दुखारी ॥

सोरठा

सूखि भए बेचैन, ग्रीषम ऋतुद्रुम बेलि बन।
एकन सूखे नैन, नित तरसहिँ बरसहिँ सखी ॥

ऋतु पावस घन घोर बिराजे। घोर घमड घटा चढि गाजे ॥
घन गरजै दामिनि लौंकाही। नारि कत के गोद छिपाही ॥
ज्यों ज्यों चमक गरज अधिकाई। त्यों त्यों नाह नारि उर लाई ॥
हम केहि के गिउ लावे बाही। पावस समय देहि बलनाही ॥
खग मृग कबि औ मानुष सारा। साजि सदन सुख करहिं अपारा ॥
घर हमार सब भरिगा पानी। उत राजा हम बहि उतिरानी ॥
जिन के छिन पिउ तजहिं सुनाहीं। सुखी नारि पावस ऋतु माही ॥
करम हमार भयो दुख दाई। का प्रीतम कहँ आस लगाई ॥
दोस हमार जो अवगुन कीन्हाँ। निरमोही का मन चित दीन्हाँ ॥

पावस घन अँधियार महँ, कैसे बचिहे प्रान।
होय रैन बज्जर कै, जो जागे सो जान ॥

कवित्त

बोलहिँ मोर बियोग भरे, कोकिल कूल हिया निज घोलहिँ।
झूलहिँ स्याम बिना घन स्याम, घमड ते मेघ चहूँ दिस झूलहिँ ॥
डोलहिँ आसन जोगी जती के 'निसार' महारस घूँघट खोलहिँ।
खोलहिँ मेघ बियोगिन को दुख, डूबहि चित जो पिया मग कूलहिँ ॥

सोरठा

दादुर मोर अँदोर, एक ओर घन घोर उत।
सती पवन झकझोर, सूने मँदिल न जाइ रहि ॥

सारद समै रैनि उँजियारी। हँसि हँसि पिय हिय लागहिँ नारी ॥
देखि बियोगिन कचन जोरी। सारद लाय दीन्ह जस होरी ॥
भा परकास अगस्त दिखरावा। सरिता सागर नीर सुखावा ॥
सरद चाँदनी निरमल देखा। भा हमार बाउर कर लेखा ॥
सब निसि बीती गिनत तराई। सुख सोवहिँ जिन के घर साईं ॥
सेज अकेल सोभ तन जारी। जस घायल कहँ चाँदनि मारी ॥
सरद समय पिउ चाहन सेजा। धृक जीवन हिय फटै कलेजा ॥
सचिऊ के साजहि सुख साजा। बरन चाँदनी निसि उपराजा ॥

सेत बादला सेत किनारी। हीरा मोति चद घन सारी॥
सभै सेज होय दुख अधिकाए। सेत बहुत सो घन कहँ भाए॥
सेत भभूत रमाय मुख, कर जोगिन कै तत।
धूनी लाऊ जाय तहँ, जहँ निरमोही कंत॥

कबित्त

हिव सो जरे बिरहानल ते, दिन प्रीत रखै वह आगि जराए।
घायल प्रेम के बान मोहीं, करि है विन प्रीति सरूप लखाए॥
घायल और जगे न जिए, सभ लोग सहैं सन जोत दिखाए।
काहे ते प्रान तजो सजनी, नित रार करे से समुख धाएँ॥

सोरठा

लगे प्रेम के बान, जरै बिरह की अगिनि सों।
केहि बिधि तजै परान, सरद चादनी के चुनी॥
अब हेमत परघर्‍यो पाला। हिम तन उठहि बिरह कै ज्वाला॥
आवत जात न दिन निर माई। रैनि पहाड़ परै पुनि आई॥
भए जुरावन सभै सँजोगिन। औ कुफनू भय जरै बियोगिन॥
बदन जुरावा सभ नर नारी। बिछुरे प्रान जाय दुखारी॥
यक यक पछी दुहूँ के होए। मिलि कै उठहिं उटेरे सोए॥
कुफनु पछि सम यह रितु नाहीँ। नित तन बिरह अगिनि निकसाहीँ॥
अपने मुख ते पावक छारा। अपने अगिन होय जरि छारा॥
होय चकई निसि जागि बितावे। जस बूडत महँ थाह न पावे॥
बाढा बिरह रैन जस बाढै। अरुभै पेम फाँस हिय गाढे॥
निसि हेवत पहाड भय, बिन पिउ कटै न रैन।
जागि बिहाऊँ रैन दिन, जाड करै बेचैन॥

कवित्त

छाय गयो सब सेत 'निसार', लगे खग खग घिर सरसों।
कैसे कटे यह रैन पहाड सों, बँधे जो हिया हिया सरसों॥
देखिए कौन बसत समय जब, धाँक सती से बसे सरसों।
हेवत गए अपने बिन सगहिं, अब आँखिन फूलि गई सरसों॥

सोरठा

हेवँत ऋतु उत गाढ, बिरह जनावे आन तन।
घटा दिवस निसि बाढ, जागे बिरह बिहाय तब॥
लाग सिसिर ऋतु चित बैरागी। पवन उदास भए अब लागी॥
लाग बसन सो लाग सुहावे। सिरी पचमी चाह जनावे॥
राग हिएँ अँग कीन्ह अलसाहा। नर नारी हिय उपजे थाहा॥
भए हरख डफ बाजन लागे। कामिनि काम आय तन जागे॥

चहुँ दिसि उड़ै गुलाल अबीरा। केहि विधि धरैं सुहियरे धीरा॥
पुरब जनम कर पाप कमावा। जो यह समय बिरह दुख पावा॥
पहिरहिँ सखिहिँ बसती बागा। परगट भयो प्रेम अनुरागा॥
खेलहिँ फाग जो साँवरि गोरी। हम तन लाय लीन्ह जस होरी॥
बौरे आँब बास महकाने। फूले कुसुम चाह अधिकाने॥
तिय से तैसे अउर भए, बौरे आँब लतान।
मै बौरी दौरी फिरौ, सुनि कोयल की तान॥

सवैया

लाग तुषार परै चहुँ ओर, सखी तेहि अबुज देह डहे को।
पिउ बिन रैन दुहेली बिहाय, कसे अकेली ह्वै दुःख सहेको॥
आवे जाड जनावे तुषार, हिए बिरहानल जुआब भए को।
बौरी सभै दौर फिरे ललिता सखि, बौरी लता फिर कैसे रहे का॥

सोरठा

चहुँ दिस बेल निसान, हिऍ आन जागा मदन।
केहि विधि रहे परान, बिरह बान बेघे सदा॥

× × × ×

यूसुफ जुलेखा मिलन खंड

यूसुफ भयो मिसिर कर भूपा, न्याव दान नित करै अनूपा ॥
यक दिन हिये कीन्ह अस ज्ञाना। मो कहँ दई कीन्ह सुलताना ॥
बिन मत्री जो होय महीपा। जैसे सदन होय बिन दीपा ॥
पै कोइ ऐस दिष्ट नहिँ आवे। जाह सचिव कै कोरे चढावे ॥
जबराइल तेहि अवसर आये। सचिव कुरी कहँ अरथ जनाये ॥
भोर मँदिर ते बाहर आवहु। पहले मिले सो सचिव बनावहु ॥
यूसुफ भोर जो बाहर आवा। लकडी लिये जो मुख देखरावा ॥
उत दुरबल औ नृप बल हीना। महा मुखी औ जीरन दीना ॥
तब मन महँ निज कीन्ह बिचारा। कत उठावे यह जग कर भारा ॥
भये सोच महँ डाह तबाँई। जबरैल तब आइ सुनाई ॥

कौन सोच हिरदै करो, औ मन होहु अधीर।
सचिव करहु यह पुरख कहँ, दुरबल दीन्ह सरीर ॥

इन तुम्ह ते बहु कीन्ह भलाई। दई चहे तोहि उरिन कराई ॥
यूसुफ कहा बहुत गत कीन्हा। दियो अरथ मै ताह न चीन्हा ॥
कहा कि है बालक यह सोई। ताकर मरम न जानै कोई ॥
मिसिर सचिव तोहि चहा सँघारा। दै साखी तोर प्रान उबारा ॥
ते मानुस कर बालक अहा। जिन मुख बचन न्याव को कहा ॥
सो बालक यह दुरबल दीन्हा। जहाँ नाहि औ रूप बिहीना ॥
सचिव ज्ञान कर चाहै आगर। सो यह होय बुद्धि कर सागर ॥
तब यूसुफ़ तेहि हिये लगावा। औ ता कहँ हम्माम भेजावा ॥
करि असनान पन्हावा जोरा। तास बादला जोत अँजोरा ॥
कँलगी औ नवरतन पेन्हावा। ताह सचिव कै कोरि चढावा ॥

अलख निरजन न्याव कर, एकहि एक बिचार।
काहू कै सेवा नृ-फल, करै न तनिक 'निसार' ॥

अब बरनौ वह बिरह बियोगिन। यूसुफ लाय भई जो जोगिन ॥
चालिस बरस जोग जिन्ह कीन्हा। दरब भँडार खोय सभ दीन्हा ॥
जेहि दिन नाँव लिये कोउ आए। तेहि दिन खजन भोग कराए ॥
जेहि नाँव सुनै नहिं नारी। रोय रोय काटै निस सारी ॥
कुछ न रहा तब जोग कमाई। दरब अरथ सभ दीन्ह लुटाई ॥
रोवत नैन भये अँधियारे। रोम रोम तन बिरहिन जारे ॥
जब लहि नैन हुते वह केरे। तब लहि दरस प्रीतमहि हेरी ॥

गये नयन भइ रक भिखारी। विरह स्वरूप भई वह नारी॥
कूबर निकसि पीठ महँ आवा। वक्र अग भा सूध सोहावा॥
लै लकुटी हेरत फिरै, नित यूसुफ कै बाट।
जो कोइ नाँव सुनावे, भुइँ महँ धरे लिलाट॥
बालक झूठि सुनावहिँ आई। यूसुफ नाँउ सुनत बौराई॥
कहैं कि निकसी आज सवारी। धाई फिरै होत बलिहारी॥
जब लहि हत्यौ दरब औ दाना। दीन्ह नाँव सुनि कौटि समाना॥
यूसुफ काज सबहि कुछ दीन्हा। कुछ न रहा तब काहु न चीन्हा॥
तब सब लोग सो बाउर कहैं। विपत परे कोउ सग न रहैं॥
पावहिँ अरथ दरब पहिरावा। खाहिँ भोग लै नाम सोहावा॥
जब न रहा कुछ सभ अलगाना। हत्यौ नेत्र सभ भये बेगाना॥
जेहि तें कहै बात पर नारी। सो रिस खाय देइ तेहि गारी॥
लगुटी लिये गली गली, फिरैं मत्रि के आस।
सुनत सवारी मत्रि कै, धाइ फिरै चहुँ पास॥
गई निकसि सभ दासी चेरी। अपने यक प्रीतम कहँ हेरी॥
सेवक दासी रहा न कोई। बिपत पड़े कोइ साथ न होई।
रहै बहुन महँ अकसर दुखी। होय अदरार रहै बिक मुखी॥
जो कुछ रहा सो सबूहै गँवावा। पिया प्रेम बिन अवर न भावा॥
हरयो भोग सुख नींद बिलासा। हरयो चैन औ हरयो हुलासा॥
जोबन हरयो रूप हरि गयो। बिरध स्वरूप सभै तन भयो॥
भयो अग सबूह ढील समाना। पै न गयो तेहि प्रेम को बाना॥
भये तेज तन पौरुख हारा। नैनन मेटि गयौ उँजियारा॥
नास कीन बिधि, सब गयो, खोये सुख अरु चैन।
जोबन रूप न थिर रहा, रहा बिरह तन मैन॥
एक दिन एक नारि पहँ जाई। रोवे लागि सँवरि सुख दाई॥
तेहिके चरन सीस लै आवा। आवा पुनि सभ भेख देखावा॥
यूसुफ नवी कै मोंहि सवारी। देहु दिखाय होहुँ बलिहारी॥
सँवर नार पाछिल दिन सोई। लाखन दरब लीन्ह सब कोई॥
उठै मया भइ तेहि के सगा। जो दीपक सँग भई पतिंगा॥
चहुँ दिसि फिरै सग लै नारी। अकस्मात मिलि गई सवारी॥
उठै धूम तिल ऊपर भयऊ। चहुँदिस अरध अवध होय गयऊ॥
लै सो पाट पर ताहि बैठावा। कहा चेत अब यूसुफ आवा॥
औ यूसुफ ते कहा पुकारी। बैठे पाट जुलेखा नारी॥
नाम जुलेखा नार मुख, पडा जो यूसुफ कान।
मया मोह जब उपजै, हिये प्रेम कर मान॥

देखा बिरिध भई वह बाला। ना वह रूप न रग न हाला ॥
कठा एक करै महँ सोहै। पूछैं लोग कि यूसुफ को है ? ॥
नैन नाह जो देखै नारी। पौरुख नाह जो होय बलिहारी ॥
लगुटी लिये बाट पर ठाढी। बक्र पथ मँह चिता गाढी ॥
रोवत ठाऊ ठाठ जो कोरी। जोबन रतन लीन्ह क्यों छोरी ॥
हर गये जोत नैन से पानी। माँस झुरान नसैं अरुझानी ॥
अबुज रग हरिद रँग भयऊ। रती माँस सभ झूरा भयऊ ॥
जो देखै सो निकट न जाये। देखि बिरिध मुख जाय हेराये ॥
जो सवार आये तेहि पासा। कहे न आव मन्न कै बासा ॥

सब्ह सवार के पाछे, यूसुफ नबी जो आय।
कहा भये हैं यूसुफ। जिन मोहि ऐस बनाय ॥

लखि यूसुफ मन भयो दुखारी। कौन हाल तुम्ह कीन्हों नारी ॥
औ कैसे मोहि छीन्यहु बाला। नैन अध औ हाल बेहाला ॥
सब्ह सवार आये तुम्ह पासा। काहू देखि न किह्यो हुलासा ॥
कहा नारि सुन सुन प्रेम पियारे। चालिस बरस बिरह दुख जारे ॥
जब तुरग हम सौह चलावा। चारिव घरी सो हिये चढावा ॥
तुम्ह दौड़ाय तुरी लै आये। हम ऊपर खुर खद कराये ॥
चालिस बरस बिरह कै आगी। मोरे हिये रैन दिन जागी ॥
कठिन बिरह को ताह सँभारे। छिन मँह अगिन जगत कह जारे ॥
जो यह अगिन समुद्र मँह डारै। सोख समुद्र मघवानल जारैं ॥

डारौं अगिन समीर पर, तो अजन होय जाय।
धन सो हिया अनि मूरख, जेहिं यह आगि समाय ॥

जस सो अगिन महँ रहै समुदर। औ समुद्र महँ बसै जलधर ॥
तस होऊँ यह समुदर माहाँ। जीवन मोर अगिन कै माहाँ ॥
जो यह अगिन न हिय महँ होती। जस घट महँ वह पूरन जोती ॥
तो कत जीवन होत हमारा। बिरह अगिन मोर प्रान अधारा ॥
निस दिन अगिन हिये सुलगावै। हिय पसीज चख आँसू आवै ॥
बड़वानल तस प्रान हमारा। जिन यह अगिन प्रेम मभारा ॥
चित डौंडीं बुधि फेरी लावै। मन दूनौ कै भीड़ उठावै ॥
वह सो अगिन कर अहै पसीना। धरहिं नैन ते तेज बिहीना ॥
बिरह बुद्धि दोउ करहिं लराई। जस पारा लखि अगिन हेराई ॥

बसै समुँदर अगिन महँ, ताको जीवन सोय।
छिन बिछुड़ै तन लागे, पुन सो निजीवन होय ॥

यूसुफ कहा कि बात अपारा। हिये अगिन को राखै पारा ॥
राखि न सकै आगि यह कोई। दग्धै तनु जरि छार सो होई ॥

तुम्ह महँ हाल रहा कछु नाहीं। एक सो झूठ रहा तन माहीं॥
झूठ प्रेम कर का फल पावै। झूठ बात कहि धरम नसावै॥
कहा नारि सोचहु मन माहीं। जग महँ अगिन कहाँ है नाहीं॥
अगिन धुध जेहि ओर न छोरा। पूरन वहै अगिन चहुँ ओरा॥
देखहु अगिन बीच कै छारा। सूरज अगिन जगत सब्ह जारा॥
अगिन भार जरत होय लोका। गरज गरज महँ देख भभूका॥
मधवानल वहि अगिन समानी। अगिन अगस्त सोखावत पानी॥

अगिन सरग रबि ससि, चन्दन घन नखत निहार।
कत मानुख वहि अगिन ते, रहा न लोह 'निसार'॥

अगिन तरुन नित लावत दाऊँ। अगिन बिरिछु महँ रवहिं ठाऊँ॥
अगिन बिपत ते करै प्रकासा। भूमि अगिन चढि जात अकासा॥
सब महँ अगिन परघट परचँडा। गूदर बाँस सरहर सरकण्डा॥
जो नाहीं आगे दुख देखहु। काह माँह वह अगिन बिसेखहु॥
कहा कि तुम सब्ह पढा औ जाना। प्रेम अगिन तेहि हिये समाना॥
सुन यह बात जुलेखा रोवै। परघट अगिन हिये जो गोवै॥
तोरे हाथ कुछ यूसुफ आहै। कहा कि जाकहँ ताजिना कहै॥
कहा कि मोंह देहु पकराई। बिरह अगिन तब देहुँ दिखाई॥
फुदन लीन्ह कोंड़ कर हाथों। लै लायो ताकहँ हिय साथों॥

फुदन जरा तजियाना जारा, दस्ता जरै जो लाग।
डार दीन्ह तब यूसुफ, देखि बिरह कै आग॥

कहा जुलेखा सुन नर नाहा। राख्यों अगिन जो हिरदै माँहा॥
जबहीं बुध मानुख उपराजा। चार तत्त कर पजर साजा॥
यहै अगिन जो आद सँवारा। आद जोत वह अगिन सँचारा॥
तेहि छुट दूत होय ससि सूरू। कोउ न सकेहु रखि प्रेम अँकूरू॥
चकमक ते जस पथरी झारै। उठा भभूका हियें परचारै॥
आद पिता कहँ अगिन सो दीन्हा। जेहि ते सभ नर परगट कीन्हा॥
सब्ह तेहि सकेउ न आग सँभारी। पेमै हिये रख्यो पर चारी॥
सो पावक मै हिये निचोवा। चालिस बरस बीज जस गोवा॥
तेहि सो आग कै एक चिंगारी। जगनायक यक्र सकेहु सभारी॥
पूरन चहुँदिस अगिन बिसाला। खाल माँह वदिह अगिन कै ज्वाला॥

देख अवस्था नारि कै, औ हिरदै कर आग।
सभै लोग अचरज करहि, प्रेम हिये महँ जाग॥

धन यह नार आग जिन बोई। बिरह बीज जस हियें निचोई॥
अहै अगिन वह प्रेम कै थाती। दीपक माँह जरै जस बाती॥
धनि वह हिया अगिन जिन राखा। धनि वह नारि प्रेम रस चाखा॥

पीठि ओ पेट सरापन लागा। अबहुन मिटेहु बिरह बैरागा ॥
ज्यों ज्यों बिरध होय सरीरा। लाजन बठै ओ होय अधीरा ॥
यह मन कबहूँ मरे न मारा। जब वहि पड़े न तन पर भारा ॥
मन मारै सोई बड़ साईं। धाय निसार पड़ै तेहि पाईं ॥
भयो अँग सब्ह ढील समाना। निकसन तेहि ते प्रेम के बाना ॥
नैनन रूपन देखहुँ, कानन सौह न बात।
केहि कारन पछिता करौ, भयौ रैन परभात ॥
धन सबत ओ शब्द सुख साजा। बिनु पौरख सभ कौने काजा ॥
अब तन नैन गये सब्ह खोई। तबहुँ न दरस परायत होई ॥
तो कहँ देखि आय कहँ रोवा। मेरे लिखत सबै तुम खोवा ॥
कहाँ रूप वह जोबन जोरा। कहाँ नैन जस समुंद हिलोरा ॥
कहाँ अधर सुरग अमोला। कहाँ मदन वह सिहर कमोला ॥
कहाँ कठ वह कोकिल बोली। कहँ कठोर गुजराती चोली ॥
कहाँ लक जो बारमूबारा। लचि लचि जायँ बार कै भारा ॥
कहाँ चरन वह कवल सोभावा। कहाँ अँग वह सूध सोहावा ॥
कहा कपोतहि जोबन बाला। सदा जो सौतिन कै तन साला ॥
कहा सरवर कहँ हसँ, वह मोती चुन चुन खाय।
लाग चुनै अब काँकर, झूरे में मरि जाय ॥
का भा तोर सरूप सोहावा। चाँद सुरज जेहि देखि लजावा ॥
कहा कि रूप तुम्हें सब्ह दीन्हा। तोरे बिरह अगिन हर लीन्हा ॥
कहा कि ते जो कीन्ह निठुराई। मैं जोंबन ओ जोर ँवाई ॥
कहा कि वह जीवन औ जोरा। जाकै सौंह न काहुन जोरा ॥
कहा कि नैन कटाच्छ सोहाये। कहा गये कोऊ हिये न लाये ॥
कहा कि रोय रोय मै खोवा। गये नैन तोर बिरह बिछोहा ॥
कहाँ गये वह अमिरित बानी। जेहि ते भये आग ओ पानी ॥
तोरे प्रेम सभै हरि लीन्हा। सभै बात मैं तोंहि कहँ दीन्हा ॥
कहाँ गये लाल जवाहर मोती। लेइ तेहि झलक सो रब कै जोती ॥
सुनेउँ नाँउ तोर मैं, दीन्हों सभै लुटाय।
सभ कुछ गयो न कुछ रहा, रहा प्रेम चित छाय ॥
कहाँ गये वह दासी चेरी। रूपवत जो काहून हेरी ॥
तास बादला रग हरीरा। असावरी कर करै को चीरा ॥
कहा कि टूक टूक करि डारा। तोरे बिरह बसन सब फारा ॥
अब तन पर कामरी टूका। हिये फिरावहि बिरह भभूका ॥
तेहि कमरी पर देसी सोहै। प्रेमै लोग देखि तेहि मोहै ॥
कहाँ गयो वह गरब तुम्हारा। जेहि ते न काहक ओर निहारा ॥

दरब गरब औ जोबन जोरा। सब्ह यह अहै हरा मन तोरा॥
नैन अधीन औ रग नियावा। गरूड़ै कोऊ बैरन खावा॥
तोरे प्रेम सभै कुछ खोवा। एक प्रेम निज हिरदैं गोवा॥
तोरे बिरह हरयो सभै, नैन बैन गुन ज्ञान।
सब कुछ गयो न रहा कुछ, रहा एक तोर दगान॥
लागै कहै रोय पर नारी। चालीस बरस बीत कै सारी॥
निस दिन अगिन सो हिये निचोई। सुलगत रहै न चाँपा कोई॥
यहि सो अगिन कै तेहि कर साना। थाँभहि निकरयो जगत सुलताना॥
तुम्ह सुलतान करो सुख भोगू। का जानहु दुख बिरह आ सोगू॥
चालिस बरस अगिन पर चारा। छुट तोर बिरह और सब्ह जारा॥
जो कुछ दुःख सहयो दिन राती। का कोउ सहै बज्र कै छाती॥
कागद सात अकास बनावै। सात समुद्र भियानी लावै॥
लिखनी बिरिछ होय जग सेरे। तीन लोक सब्ह होहिं लिखेरे॥
चारिव जग बीतहि तेहि माहीं। दुख हमार लिखि जाय सो नाहीं॥
बारह मास बियोग दुख, यूसुफ सो भयो हमार।
चालीस बरस बन जारे, तेहि सभ दुखद अपार॥
चालीस बरस जो आग निजोई। बारह मास कहुँ दुख रोई॥
यक यक दिन जुग होय बीता। कहँ लौं कहौं अहै सुनीता॥
दिन यक दुख जो सुनहु हमारा। तुम्हो राज जुग जुग अधिकारा॥
तोहि बुध कीन्ह छत्र पुत भारी। सुनहु दुःख जो अहै दुखारी॥
जा कहँ दई बड़ा कर देई। सो दुखिया दुख कहा करेई॥
कबहुँ मोर कहा न माना। ब्याह न भयो गवन नियराना॥
कबहूँ दिष्ट न मो तन फेरे। भयो अध तब देखहुँ हेरे॥
भयऊँ बिरिध अब मरत सँघाती। सुनहु बिरह दुख हुलसै छाती॥
जो दुख सुनहु करो तुम दाया। मानहु दीन्ह अनेकन माया॥
मै तुम ते माँगहु यहै, सुनहु बिथा दुख मोर।
होय मीच सुख सो मरौ, रिझौ सो अवगुन तोर॥
चैत मास तपि गयो बिछोये। तब ते रकत आँसु मै रोये॥
सब्ह जग होय बसत धमारी। मो कहँ बिरह आगि ते जारी॥
बन उनये हरियर होय फूला। केतक भिरँग तबस्ता फूला॥
भवर भुलान फिरै चहुँ ओरा। कुहकै कोकिल चातक मोरा॥
पिव कर नाउ पपीहा लेई। बिरह हिये अधिकों दुख देई॥
सीतल पवन अग कहँ भावे। बिरहिन के तन आगि लगावै॥
रित बसत सोहै सखी, काह लगै बिन पथ।
जग तरूर फूलै फलै, बिरहिन बेल उदत॥

कवित्त

चैत तरुवर फूल फूले भँवर सब्ह भूले फिरै ।
पवन सीतल तन सेराने कवित के प्रानन करै ॥
रित अनूप लखि स्याम सुँदिल सुख सज्जा करे ।
आँसु की सरिता बढ़ै, निठुर बिरहिन बूड़े मरै ॥
बारहु मास सोहावन आवा । रित बसत सजोगिन भावा ॥
तन बसाय औ हिया भिंगाये । भूले भवर पवन महकाये ॥
कुज छाँह बन लाग सोहावा । सीतल पवन हिये कहँ भावा ॥
उपजै सुभग समै अनुरागा । कामी आय काम तन जागा ॥
चितै सती तन गंधरय छावा । रित बसत सब के मन मावा ॥
तैसे आग लाग मन माहीं । हरीं कहाँ भाग अब जाहीं ॥
अब अवगुन महँ भरे अगारा । बिरहिन हिया सरागन जारा ॥
फूले फूल सुरग कचनारन । लागे आग अनार के डारन ॥
कर माया मै बसी चहुँ ओरा । बोलहि कोकिल चातक मोरा ॥
सुख सोहाग के समय नहि, लोग कहैं रवराज ।
हमहि बसत दुख दइ यह, सर पजर सम साज ॥

कवित्त

मास माधो सनेह सोहावन, जगत सुख छायो सभै ।
बिटप फूलत फलत तरुवर, अब सों बौरन भये ॥
बहुन सीतल छाँह सुदर, सुख सँयोगिन कं रहे ।
कौन हरियर करै पिउ बिन, बेल बिरही से डहे ॥

सोरठा

सीतल छाँह गँभीर, अग सोहाय सोकालिनी ।
सुख ओ भोग सरीर, सदा उसीर सोहाय अब ॥
लाग चैत अब तपै करेजा । कामी काम करे सुख सेजा ॥
फल पाके अमिरित रस पाके । काम आय कामिन तन जागे ॥
रैन घटी दिन बहुत बढावा । बिरहिन आग अग लै लावा ॥
कठिन घाम तन जरै हमारा । भूखन मदिल ओ सपर सँवारा ॥
सीसी लै गुलाब डरवावहिं । ओ कुमकुम कहि अग लगावहिं ॥
रोव रोवँ ओ सुख अधिकाये । बिसै करत अग सुख पाये ॥
बात कहत निसि जाय बिहाई । दिन कहँ भोग भगत अधिकाई ॥
चैत मास बिरहिन कहै जारा । दीन्हा आग लाय ससारा ॥
बरखा हितु अब तपै करेजा । करेज भयो रगरेज क रजा ॥
ग्रीषम रितु अगिन बैठ, ढूँढहि सीतल छाँह ।
ऐसे समय बियोगिन, भाग सोख दस जाँह ॥

कवित्त

जेठ ग्रीषम विषम आगम पान भोग बिना करे ।
'निसार' बियोगी छाँह तपिहै अग कै सीतल कर ॥
भुवन सीतल पवन आवै रोवँ रोवँ मे चित धरै ।
गुपुत परघट एक पिव बिन बिरहिनै निसि दिन जरे ॥

सोरठा

जेठ जरावे देह, नेह माहँ मारै सखा ।
चहुँ दिस उठै सनेह बिरहिन कै दारुन समै ॥

लाग असाढ सो गाढ जनाई । घन गरजै दामिन चमकाई ॥
उमड घमड घन घोर बिराजै । काम बिसाल नवो खंड बाजै ॥
कूँघत माँह चकूघत जीऊ । केहि के कठ लगै बिन पीऊ ॥
पँछिय पतिग सबहि घर साजा । जगत काम कर बाजन बाजा ॥
मोर कुटी को छावै पीऊ । केहि बिधि दय देइ मोहि जीऊ ॥
दादुर मोर जो करहि अँदोरा । नार कथ छिन तजहिं न कोरा ॥
बिछुड़े मुये सो दुओ दुखारी । बिकल जरा भा सभ नर नारी ॥
कोकिल कूक लूक हिय लावे । कुकनू सम भभूक रचावै ॥
कैसे कटै सो यह रितु भारी बिन पिव घमड घोर अँधियारी ॥
मास असाढ सोहावे, पिव भावे निज सेज ।
देख घटा औ दामिनी, काँपै मोर करेज ॥

कवित्त

रितु असाढ घन घेर आयो, लाग चमकै दामिनी ।
रितु सोहावन देख मन, महँ हरख बैठ भामिनी ॥
रितु घमड सो मेघ धाये, दिवँस भई जस जामिनी ।
रैन दिन करुना करै, घर मे अकेले सामिनी ॥

सोरठा

बीतो जात असाढ, कत भूल सुख महँ रहे ।
बिरहिन यह दिन गाढ, पिव बिन कहु कैसे कटै ॥

आयो सखी सोहावन सावन । भावन रैन बिना मन भावन ॥
घर घर कामिन साज हिंडोला । देख समै सरगुर चित डोला ॥
जोगी जती को आसन छूटा । साध सत को मका टूटा ॥
काहु को चित रहा थिर नाहीं । हरषित चित यहै रित माहीं ॥
भवन बियोगिनि काटै खाई । देखि देखि यह समै सोहाई ॥
परहि जो आँसु भूमि पर टूटी । रँग चली जस बीर बहूटी ॥
जुगनू चमक चमक देखराहीं । बरसे अगिन जो सावन माहीं ॥
सावन मास सोहावन बीना । तन तन काम अपरबल बीना ॥

सावन मन भावन नहीं, जोवन बिरथा जाय ।
काल न आवे यह समै, कैसे रैन बिहाय ॥

कवित्त

भा सावन रितु सोहावन भावन मन भावे नाहीं ।
काम कला पावा सखी छिन यक कल्पावे नाह ॥
बैस बीती जात सजनी सेज सुख पावा नहीं ।
जाहु सावन बहुर आवन कत घर आवहि नहीं ॥
भादौ भुवन बेहावन भयो । देखत घटा प्रान हरि गयो ॥
दिन श्रो रैन जाय नहि जानी । उनई घटा रहे भरि पानी ॥
जल थल पूर सो नीर अपारा । होय गये एक नदी श्रो नारा ॥
जल परवाह जगत मा बाढा । बिरही बिरह परा दुख गाढा ॥
घन गरजत लरजत तन मोरा । दामिन दमक चहै पिव कोरा ॥
गरजै कूँध लखि मरि मरि जाई । बिना कत को लेइ जियाई ॥
ऐसे समय सो नारि अकेली । निठुर कत जिन दुख परहेली ॥
धन अकेलि औ भादौ राती । धन सो अहै बजर कै छाती ॥
धन भादो कै मास सँवारा । तासो नार औ पुरुष सँचारा ॥
भादौ रैन बिहावन केहि बिधि रहौ अकेली ।
धृक जीवन तेहि नार का जेहि सामी परहेली ॥

कवित्त

मास भादों रैन कारी देख कर दूभर भई ।
कत बिन सखि सेज सोई नीद नैनन सं गई ॥
मन हमार निपट व्याकुल स्याम बिन सब दुख हिये ।
बिरह सरिता उमड़ि आई कैस क बचिये दई ॥

सोरठा

भादों केहि रँग भीर, धरै धीर केहि बिधि हिया ।
बाढै बिरह-क पीर, कथ न पूछै बात मोहिं ॥
लाग कुआर सरद रितु आए । घटा जुनीर सब अग सुखाए ॥
जहँ तहँ पथी तुरी पलाना । पीय प्रान बाहर बेहराना ॥
जो कहु छाय रहे बजारा । सो फिर कै परदेस सिधारा ॥
हम पछी तेहि सोच हमारे । ऐसे समय सो दीन्ह बेसारे ॥
रहे नगर महँ लाल हमारा । नैनन मोह कोट पहारा ॥
जो निरदई करे नहि दाया । का भा निकट रहे निरमाया ॥
सहस कोस तेहि पाछे आवे । माया मोह हिया उपजावे ॥
रहे मदिर महँ करे न दाया । सहस कोस ता कहँ निरमाया ॥
मास कुआर घटा जल सारा । भय परकास मिटेहु अँधियारा ॥

सारद समय सुहावन, मन भावन नहिं पास ।
भय सूरत लखावनी, जो हिय नहीं हुलास ॥

छंद

कुआर मास अब लाग सुंदर, चाँदनी निरमल भई ।
सरद रंग बेभाल सोहित, सरद आवत निरभई ॥
जल अंग सब सब सोन लीन्हो, नींद नैनन सो गई ।
चख बियोगिन के नहि सूखै अवर जल सोखै दई ॥

सोरठा

यह रितु सोख्यो नीर, जब अगस्त ऊदित भयो ।
नयनन भयो अधार रितु, रात दिवस पूरन रहया ॥
कातिक मास महा उँजियारी । संजोगिन सुख समय पियारी ॥
देख चाँदनी करं हुलासा । जिनके कंत रहैं नित बासा ॥
चहुँदिस होहि हरष अनुरागा । कामिन काम एक महँ लागा ॥
यह रित महँ साहै उँजियारी । कैसे जिये बियोगिन नारी ॥
पिय कै लगन हिये अधिकाई । गगन नखत सखि रैन बेहाई ॥
सभै लगन संजोग समाना । काटे खाय न जाय बखाना ॥
बिरहिन बिरह अगिन से जारी । चंद चाँदनी डारै मारी ॥
घायल बिरह बियोगिन बाला । निरख चाँदनी होय बेहाला ॥
सरद समय बहु दुख अधिकारी । बिरहिन प्रान जुआ जस हारी ॥
मोही निंदित जगावा, पिय मोही के लाग ।
कहँ मोहन अस पावा, मिटै हिये कै आग ॥

छंद

मास कातिक सुठ सहेला, चाँदनी लखि चित हरै ।
देख कै यह रितू सुंदर, नार कथ पिव परहरै ॥
दुओ दिस बिरख फूले, देख कै बिरहिन चरै ।
सरद रितु की चाँदनी मे, बिरह के मारे मरै ॥

सोरठा

कातिक बेहावन घन बैठ, भोग रजनी बैठ ।
बिरहिन बदन मलीन भय, देख रंगै सखी ॥
अगहन दिवस घटा निस बाढै । बिरहिन बेल तुसारन डाढै ॥
जाड आन तन माँह समाना । घर घर असन बसन अधिकाना ॥
साजहिं सौर सपेती नारी । हरियर सब मसियत रतनारी ॥
भयो चार ते प्रीतम प्यारी । जेहि तन ते नहिं होय निनारी ॥
पवन उदास बहै अब लागी । हम कुकनू सम झारहि आगी ।
भाँति भाँति कै बसन सोहाये । सयोगिन प्रीतम सँग धाये ॥

सरसों फूल रही चहुँ ओरा। लाग तुसार परै निसि भोरा ॥
बाढै रैन बढा सँग भोगू। लागे केल करै सब लोगू ॥
बिरहिन भई रैन बहु भारी। जगत जाय सो बिरह दुखारी ॥
अगहन मास सोहावन, भा दूभर बिन कथ।
सेज अकेले रैन महँ, मिलै न आवत कत ॥

छद

मास अगहन जाड व्यापै, देह लागै थर थरे।
कत बिना दूभर भये ढहि, रैन होय करवट परे ॥
निठुर कत नहि बात पूँछे, मास अगहन हर हरे।
सुख सोहागिन सेज सोहैं, एक दम बिरहिन जरे ॥

सोरठा

हेवँत रितू अनग, जाड कँपावे देह कहँ।
मोहि प्रीतम की चाह, बात न पूँछे निठुर वह ॥

पूस जाड अधिकों तन लागा। घर घर नारि पुरुष अनुरागा ॥
बाढै रैन तन काम समाना। घटा दिवस सुख साज हेराना ॥
लाग परे जग माँह तुसारा। कँवल बदन हम बिरहिन जारा ॥
अबुज बदन भयो जर कारा। प्रगट जाड़ मे काँपहि दारा ॥
छिन बिरही जिनके तेहि सामे। उनका यह रित कथ बिसरामे ॥
हम का करहि जाहि कब भागी। चहुँदिस जारी बिरह की आगी ॥
रैन पहाड़ न जाय बेहाई। काँप-काँप तन उठै झुराई ॥
है रे निठुर नाह दुख दाता। कबहूँ न पूँछा हम दुख बाता ॥
निठुर नाह नहि दाया आवै। हमहि जाइ दिन रात सतावै ॥
पूस मास दिन घन अब, आवै जाय न बार।
बिरहिन निस दारुन भये, हाय के परे निहार ॥

छद

पूस मास भये निस दिन, रैन जग सम होय गये।
तन तुसार सम कँवल के जर, छार बिरहिन के भये ॥
कंत तोहिं बिन सेज सूनी, रैन दूभर निरमई।
ऐस रितु मे लाल बिन, कसे जिवे ललिता दई ॥

सोरठा

पूस भयो दिन छोट, रैन बेहाय न कत बिन।
बिरहिन लाग न खोट, निठुर कत पूछे नहीं ॥
माघ मास सोहै सुख साजा। तिल तिल दिन बाढा दुख भाजा ॥
जेहि दिन पवन नीच अधिकाये। तेहि दिन देहि तुसार कराये ॥
कैसे बीते मास सोहावा। निठुर नाह नहिँ दरस देखावा ॥

सिरी पचमी बौर सोहाये। मालो बौर देखाये आये॥
रग बसत सो लाग सोहावा। बिरह बियोगिन दुख अधिकावा॥
यह सो मास बिन कत बेहावै। प्रेम काज अब हिया जरावै॥
दारुन बिरह जरावे देहाँ। सून बसत बिन उपजै नेहाँ॥
अब कैसे यह दिवस बेहाऊँ। बिना पीउ रँग बसँत गवाऊँ॥
धावै काम कमान चढाये। बिरहिन हिया बाभ सिर लाये॥

माघ बिछोहैं कत जेहि, धृक कामिन तन सोय।
ऐसे रितु अकसर रहे, कैसे जीवन होय॥

छद

माघ थिर थिर देह काँपे, निस अकेले सोय॥
नींद नैनन मे न आवे, सँवर प्रीतम रोय॥
बैस सुदर जातपिव बिन, आँसु से मुख धोय।
कत बिन बिरहिन तपै तन, प्रान वर तेहि खोय॥

सोरठा

मोहन आये नाहि, कवन छाँह हम (कहँ) करै।
कठिन समै अवगाह, कैसे कै धीरज रहै॥

फागुन मास कीन्ह परगासा। घर घर उपज्यो रग हुलासा॥
बाजे डफ मृदग सोहाये। काम आय निज रूप देखाये॥
लागे पवन बहे हरिहरा। तरुवर पात सभै खसि परा॥
निस बिरहिन पुन भा पतझारा। रोम रोम तन बिरहिन जारा॥
सजोगिन सभ खेलहिं होरी। रग गुलाल सो भर भर झोरी॥
डारहिं रग सोरग हँकारहिं। दुख दारिद कहँ मार निसारहिं॥
जिवँ जिवँ पवन तेज अधिकाई। बिरहिन हिये न रग समाई॥
धृक जीवन जेहि कत नियासा। मरे बियोगिन दरस के आसा॥
यह रित मा भा सुख परगासू। बिरहिन जेर बिरह दुख बासू॥

फागुन सभे सोहावने, मन भावन नहिं सेज।
रन तुरग अरग कहि, बिरहिन जरै करेज॥

छद

मास फागुन सुठ सहेला, आन सुख परघट भयो।
काम पूरन जगत छावा, सोग दुख जग से गयो॥
यह समै पिव बिन सखी, यह देह बिरहिन के तयो।
दुख पुराये रह गयो यह, मास सभ सत कुछ गयो॥

सोरठा

खेलहिं लाल सु फाग, केसर बीर उड़ावहीं।
जरहिं बियोगिन भाग, फागुन सुक्ख न पावहीं॥

एक बरिस दुख बरन सुनावा। यहि बिधि चालिस बरिस बितावा ॥
सदा बसत ओ पावस आवे। मोहिं कहँ उठि बिरह जरावे ॥
निस दिन लाग रहै जस होरी। दिये जराय बिरह तन कोरी ॥
वहै रैन वह दिन नित आवे। मास माम रितु अवर दिखावे ॥
मोहि कहँ सदा गिरीषम रहा। बिरहानल दुख जाय न कहा ॥
चालिस बरस बिरह अधिकाना। नित उठ हिये लाग जस बाना ॥
दिन दिन बिरह तेज अधिकाई। चालीम बरस सो रोय गँवाई ॥
वहै भोर साँझहि सो आवै। निस दिन बिरहिन हिये जरावै ॥
तुम प्रीतम कुछ कीन्ह न दाया। अस तुम्ह भूल गयो निरमाया ॥

प्रीतम बिरथा जाय जग, मै सो जर्यौ जेहि लाग।
तुम्हरे मन उपज्यो नहीं, धिरिग मोर बैराग ॥

कहा जुलेखा प्रेम कहानी। नैने भरे जस पावस पानी ॥
रोय रोय सभ बरन सुनावा। सुन यूसुफ मन उठ्यो छोहावा ॥
सेवक सघ कै मँदिल पठावा। आय अहेर खेल लहरावा ॥
आयो मदिर सेज पर गयऊ। हिये जुलेखा सो रत भयऊ ॥
कहा बोलाय चहो का नारी। सो अब देऊ जो होहुँ सुखारी ॥
जो माँगहु सो देऊँ मँगाई। सोन रूप नग बसन सोहाई ॥
कहा जुलेखा एक न चाहौ। धन लक्ष्मी सभ भार बहावों ॥
मँदिर गाँव मोरे बाग सोहाये। जो मागै तेहि देउँ मँगाये ॥
लेउ गाँव ओ मँदिल सोहावा। चेरी दास लेउ चित भावा ॥
महा सिद्ध कै सुत कहलावहु। औ तुम्ह सिद्ध सदा सुख पावहु ॥
कीन्हों बहुत तपस्या जोगू। अलख तृसा तुम कीन्ह न भोगू ॥

माँगहु तुम्ह करतार ते, देहिं नैन कर जोत।
जेहि ते देखहुँ तोर मुख, चहौ न हीरा मोत ॥

तब याकूब यूसुफ ते कहा। जो कुछ अरथ भेद सब रहा ॥
सुना जुलेखा नबी कर नाऊँ। परे जाय याकूब के पाऊँ ॥
महा सिद्ध औ पर उपकारी। सुनहु कान दै बिथा हमारी ॥
जेहि का अग बिरह दुख भेजे। सो दुखिया दुख दीन्ह पसीजे ॥
तुम्ह जस जर्यो सो बिरह कै आगी। तेहि ते अधिक जर्यों वहि आगी ॥
तुम्ह समुझ्या मोरे दुख कै पीरा। पुत्र बिरह तुम डह्यो सरीरा ॥
वह निरदई न जाने प्रेमा। जानहि सो जेहि धरम ओ नेमा ॥
तुम्ह सभ कुछ तेहि पंथ न पावहु। कस तेहि ते तुम प्रेम छिपावहु ॥
चालीस बरस जरायो देहाँ। वहि के हिये न उपज्यो नेहाँ ॥
तुम्ह अब न्याव हमार करेऊ। निरदाई सुन कहँ सुख देऊ ॥
सबहिं गरथ तेहि देहु सिखाई। प्रेम के अच्छर न देहु पढ़ाई ॥

जेहि ते जानहि प्रेम वै, बेग पठावहु सोय ।
देहु असीस उठाय कर, नैन जोत जेहि होय ॥
अब कुछ और न चाहूँ नाथा । रहौ सदा चेरी के साथा ॥
पाऊँ नैन दरस जो देखहुँ । जब लगि जिवों सरूप बिसेखहुँ ॥
किह्यों जनम भर मूरत पूजा । तेहि छुट अवर न जान्यों दूजा ॥
अब तेहि पर कीन्हों अनखानी । फोरयों सीस रोय बिलखानी ॥
यूसुफ अलख सो अहै सोहावा । जेहि सेवक से भूप बनावा ॥
मैं सो जन्म भर सीस नवावा । तुहँ दर दर मोंहि भीख मँगावा ॥
तुइँ मोर अलख किये यहि हाला । दर दर माँगहु भीख बेहाला ॥
जब मोर आस पुराई नाहीं । भयो क्रोध मोरे हिय माहीं ॥
तब रिसाय मै मूरत फोरा । टूक टूक फेक्या चहुँ ओरा ॥
यूसुफ अलख ते अब मन लायों । औ मूरत ते हाथ उठायों ॥
वह दाता करतार जिन्ह, सभ यूसुफ कहँ दीन्ह ।
तेहि सो अलख आनद कहँ, ग्यान ध्यान मै कीन्ह ॥
तब याकूब सो हाथ उठावा । तेहि अवसर जबरैल सोहावा ॥
कहा जुलेखा कहँ लै जाहीं । कहो सखिन हम्माम कराहीं ॥
नार अनेक सघ कै दीन्हा । तब बरबस हम्माम सों कीन्हा ॥
मजन औ अस्नान करावा । ईंगुर अँग चदन तन भावा ॥
जब अस्नान कीन्ह वह नारी । चौदह बरस-क भई कुमारी ॥
आइ रूप जस हत्यो सुहावा । तेहि ते अधिक रूप छवि पावा ॥
चौदह बरस क भई कुमारी । नैन कटाक्ष तेज अधिकारी ॥
लाय सखी यक आरसि दीन्हा । देखत रूप सो अचरज कीन्हा ॥
धन करता हरता सुखदाई । तुइ सभ दीन्ह सो कहत नियाई ॥
प्रेमी प्रेम न निरफल गयऊ । कस सो निरास जुलेखा भयऊ ॥
मैं तो तोहिं न जान्यो, जनम अकारथ खोइ ।
धन्य गरीब नेवाज तुइँ, को अस दूसर होय ॥
ईंगुर अग मजन असनाना । हरिहर मानग्व सुघर सुजाना ॥
लागे षट्-दश होय सिँगारा । चोटी गूँध सो माँग सँवारा ॥
तेल फुलेल लाय के साजा । पाटी पार माँग उपराजा ॥
बार बार गूँधे गज मोती । सेंदुर दीन्ह सुरज कै जोती ॥
गुल गेसुन कपोलन लावा । दै अजन खजनै बढावा ॥
मेंहदी कर पग सोहाग सँवारा । बीर बहूटी कै रग धारा ॥
दाँतन स्याम सो मसी जमाए । चमक सोभाग सो बरन न जाए ॥
मुख तँबोल गह्यो अपने पाना । अतर लगाय कीन्ह अरगाना ॥
फूल सो लाय पेन्हावे जोड़ा । पुहुप माल तन सोहे कोरा ॥

आयसु रहा सिंगार के , बारह अभरन लाय ।
दीन्ह नार कुमार कहँ , सभ अभरन पहिराय ॥
बारह अभरन साज बनावा । सहस फूल औ मडन भावा ॥
बेसर ओ कनफूल सोहावा । करन भूखन सब्हन पहिनावा ॥
कठा भूखन सोहे जेहि ताई । गर भूखन उर पास सोहाई ॥
कठ माल बाजूबँद साजा । कर भूखन सो पहुँची बिराजा ॥
अँगुरी मुँदरी उत छबि देहीं । नेवल बद गुन ज्ञान हरेही ॥
साज सिंगार सखी सब्ह मोहैं । रूप अपछरा तासो सोहैं ॥
धन वह अलख रूप जिन दीन्हा । भर के बार कुमार सो कीन्हा ॥
लाय सेज पैठारहि कोरी । मिले न तीन भुवन महँ जोरी ॥
उर केसर फिर अधिक सोहाए । मगल बूद सो रग बनाए ॥
बैठी सेज सुनार , भूखन साज सिँगार ।
अब नख सिख का बरनौ , सभ सुदर सुघर निसार ॥
अब माथे गूधे गज मोती । राहु केत मनो चद कै जोती ॥
दुओ दस घन बाद जस छावा । मध्य कौध चमकै देखरावा ॥
दामिन अस वह माँग सोहाये । केस घमड घटा जस छाये ॥
जस जमुना कै नदी अपारा । माँग बाँध जस सुघर सँवारा ॥
सेत बद जस माँग सोहाए । बिरहिन नैन परे तेहि पाए ॥
जो न होत अस माँग अनूपा । डूबत नैन स्वरूप सरूपा ॥
चमकै माँग माँग कै बानी । सेदुर रकत रग तहँ सानी ।
पहले कहूँ माँग के रेखा । जमुना बीच सरसुती देखा ॥
खरग धार वह माँग सोहाए । सेंदुर तहाँ रकत रँग लाए ॥
माँग सोहावन सुख भरे , भाग अधिक तहँ दीन्ह ।
राहु केत दुओ दस तहाँ , रबि-कि किरन अस कीन्ह ॥
केस सीस का करौं बखाना । नागिन देख सो ताह लजाना ॥
मुख पर परै जो होय बेकरारा । तपा सदा करै ससारा ॥
कोऊ कहै अहै तुम राजा । सोहै तहाँ जीत चँद राजा ॥
कोऊ कहै सो दई सोहावा । .. .. ॥
कोऊ कहै स्याम अति मोहा । पुहुप परान आय तहँ सोहा ॥
पुहुप छत्र महँ मग मद तारा । खींचे चतुर चित्र तहँ मारा ॥
केस सीस मानो निसि कारी । सोहैं परत काल उजियारी ॥
सो प्रभात पर भयो दिखाये । स्याम लाय नित हाथ छिपाये ॥
बेनी गूध लिलाट ते , मनो नागिन मन लीन्ह ।
मूँगा चौकी पीठ पर , तहाँ छोड़ तेहि दीन्ह ॥
अब लिलाट बरनौं सुख कारी । रबि, ससि, निसि औ उँजियारी ॥

केसर खोर .. । .

तब जबरैइल कहा तेहि बाता । रूप नैन तेहि दीन्ह बिधाता ॥
देखहु जाय जुलेखा सोई । प्रेम न सकत अबिरथा होई ॥
को अस पुरुष प्रेम करेई । सुफल प्रेम पग दिन दुख हरई ॥
दूसर जनम जुलेखा लीन्हा । सो दयाल अब तुमकाँ दीन्हा ॥
तुम पूरुख वह नार तुम्हारी । दूजै बार सो दई सँवारी ॥
जेहि ते रहै सो मुरत हुलासा । रहहु जुलेखा के नित पासा ॥
वह के सुख दयाल सुख मानै । दुखी भये परभू दुख मानै ॥
वह अज्ञा तज किह्यो न काजू । वह समान यह जगत न राजू ॥
ना अस रूप न प्रेम न ज्ञाना । दई दीन्ह सब्ह ताह सुजाना ॥

सुन यूसुफ सिर नाइ के, कीन्ह व्याह कै चार ।
बाजै लाग जो नौबत, नाच गौड झकार ॥

जो कुछ होत व्याह कै चारा । सो सब्ह कीन्ह राग रँग सारा ॥
सुफल घरी भा व्याह सोहावा । दुखिया दान दरब बहुपावा ॥
आन्यो भोग छतीसो जाती । भये किनअाँ के लोग बराती ॥
तब याकूब निकाह पढावा । देख जुलेखा बहु सुख पावा ॥
बाढा प्रेम धन नार सोहागिन । धन्य अलख जिन कीन्ह सोहागिन ॥
सेज सँवार सो रग सोहाए । दुलहिन व्याह दुलह पहँ आये ॥
यूसुफ देख हिए हुलसाना । धन वह अलख दीन्ह जिन दाना ॥
जस मै रूप आदि निरमाया । तेहि ते जोबन रूप सोहावा ॥
रहस नार कहँ कँठ लगावा । जनम जनम दुख बिरह नसावा ॥

प्रेम जुलेखा कहँ मिट्यो, यूसुफ कहँ दुख दाह ।
भई जुलेखा भगत अब, यूसुफ कहँ दुख दाह ॥

दिन दुइ चार कीन्ह रस भोगू । लागी करै जुलेखा जोगू ॥
मै बिरथा यह जनम गँवावा । प्रेम बिपत मानुख सो लावा ॥
काहे न प्रेम अलख ते लाऊँ । जेहिं ते मोख मुगत पुन पाऊँ ॥
का मानुख मानुख का चाहै । चाहै अलख मुगत कर लाहै ॥
निस दिन लाग तपस्या करै । जब जोगिन ते प्रीत छबि धरै ॥
अलख काज छुट अवर न काजू । यूसुफ देख बाढ उर लाजू ॥
निस बासर जप तप कै माहीं । एको छिन प्रभु बिसरै नाहीं ॥
यूसुफ प्रेम हिये ते भागा । अलख पेम आठौ अँग जागा ॥
कुछ यूसुफ कै चिता नाही । कबहूँ न सोच करै मन माहीं ॥

निसि दिन वह तप जप करैं, सँवरै अलख सुजान ।
जेहि की दाया तें मिला, अब रूप बैस गुन ग्यान ॥

यूसुफ नबी सो रहे अधीरा । बाढै हिये प्रेम कै पीरा ॥

जब लहि दरस देइ नहि नारी। तब लहि यूसुफ रहें दुखारी ॥
वह निस दिन राखै तेहि प्रीती। भई जुलेखा आन सो रीती ॥
कहै कि सॅवरो वह करतारा। अत काल जो लावै बारा ॥
मै मानुख का प्रीत हमारी। जोबन रूप रहै दिन चारी ॥
बहुर न यहि जोबन नहि रूपा। सॅवरहु पुरुख अकाल अनूपा ॥
यूसुफ नबी करे मनुहारी। होय न सुचित जुलेखा नारी ॥
कहा जुलेखा मोहिं न सतावहु। जाय सो ध्यान अलख महँ लावहु ॥
मैं जोबन अरु रूप उतगा। देख लीन्ह कुछ रहे न सगा ॥

जाय फूल कुॅभिलाय, जब रहै रग न बास।
तेहिं ते सॅवरहु एक वह, जेहि के दुओ जग आस ॥

यूसुफ कहा सुनो अब प्यारी। जतन नाह नित रहौ दुखारी ॥
बिन देखे मोहिं कल न परई। दारुन बिरह कठिन दुख धरई ॥
दया करो औ दरसन देहू। मोंहि दुखित जिन रार करेहू ॥
प्रान ते अधिक तुम्हें मैं जानहु। रूप तुम्हार हिये महँ आनहु ॥
निस दिन रहे सो ध्यान तुम्हारा। मन अधीन जस ब्याकुल पारा ॥
जस तुम्ह बिरह अगिन ते जारा। तस अब करहु भोग सुख सारा ॥
मोहिं दुखिन जिन राख्यो प्यारी। छया मोख दुख देहु निनारी ॥
दई बढावा हम तुम प्रीती। राखहु दया प्रेम की रीती ॥
दई देह यह रूप सोहावा। मोहि कारन तुम्ह फिर कै पावा ॥

मोहि ते होहु न निठुर अब, हिये लखहु अब और।
कहै जुलेखा नाम सुनहु, दास तुम मोर ॥

एक दिन बहुत कहा नहि माना। कहा जान मोहि दास समाना ॥
जस आगे तुम्ह राखर प्रीती। राखहु दया हिये ते रीती ॥
अब सो अलख कर दीन्ह सँजोगू। देहु मिटाय बिछोह बियोगू ॥
जस दुख सबहि करै अब प्यारी। जाय भुलाय बिरह दुख भारी ॥
चालीस बरस कीन्ह तप जोगू। रात दिवस तुम छोह बियोगू ॥
करहु सेज सुख भोग बिलासा। निस दिन होय सो दुख कै पासा ॥
कोट बिनति कै यूसुफ हारा। चाहा हाथ गले माँ डारा ॥
कहा जुलेखा मोंहि ना भावै। अलख ध्यान छुट आन न भावै ॥
मोंहि को एक अलख कै आसा। बिरथा यह सुख भोग बिलासा ॥
दिना पाँच का रूप सिँगारा। होइह अत देह तेहि छारा ॥

जोबन रूप सिँगार सब, सँघ जाय तेहि खोय ॥
काहें न सँवर सो अलख कहँ, जानो मुकत कब होय ॥

अब मोंहि का सुख भोग न भावै। मृत्यु भये कुछ काज न आवै ॥
यहि जग मा छुट जीवन थोरा। अब जिन करहु खोज तुम मोरा ॥

निसि दिन लेहु अलख कर नाऊँ। जेहिं तें मिलै सरग माँ ठाऊँ ॥
मैं अब निजु जान्यो तेहि साई। जिन सब्ह दीन मोहिं बरियाई ॥
सो साई तज अवर न भावे। बिरथा सुक्ख भाग चित लावै ॥
यूसुफ नबी बहुत समुझावा। एक जुलेखा कान न लावा ॥
तब बरबस उठि हाथ चलावा। भागि जुलेखा यूसुफ धावा ॥
दामन फार रहा तेहि हाथाँ। गई भाग वह दार के हाथाँ ॥
धन चरित्र वह अलख देखावा। यह कर करा सो वह कर पावा ॥

एक दिन हत्यो जुलेखा, फारा यूसुफ पाट।
अब यूसुफ के हाथ ते, धन कर दामन फाट ॥

यह बिधि रहै जुलेखा भागी, यूसुफ लगन रहै नित लागी ॥
निसि दिन रहै नार से ध्याना। नार हिये उपज्यो अब ज्ञाना ॥
राज काज कुछ ताहि न भावे। नित चित हित बनिता ते लावै ॥
बरबस करै नारि से भोगू। आवै ताह जाय श्रो जोगू ॥
यूसुफ कहैं भयो तोहि काहा, का भा तोर प्रीत श्रो चाहा ॥
कहा सुनो सामी सब बाता। तब सों मोर मन तोह सो राता ॥
मूरत तोर हिये मह आन्यो। छुट तोर प्रीत आन नहिं जान्यो ॥
तब सो अलख कह जान्हों नाहीं। मूरत तोर रहै हिय माहीं ॥
अब सो अलख हिये तर बासा। तेहि कर ध्यान हिये पर कासा ॥

एक हिये दुई प्रेम अब, कैसे कहो समाय।
जग सामी कै प्रीत अब, रहै हिये महँ छाय ॥

बरबस करै भोग सुख सारा। सुत तिन दिये तेहिं करतारा ॥
पाँच पूत दुई दुहिता भयो। जब तप करै प्रान पर छुयो ॥
दुहिता सुत सामी नहिं भावै। नित उठ चित्त अलख से लावै ॥
धाई कोर रहे सुत बारा। औ प्रतिपाल करै करतारा ॥
करै जुलेखा निसि दिन जोगू। भावै ना तेहिं सुख औ भोगू ॥
धन करता कह खेल सोहावा। करै सोय जो वह मन भावा ॥
कबहुँ पुरुष कहँ नारि के चेता। कबहुँ नार कहँ पुरुष कै मीता ॥
वहिक पास यह मन नित आवै। जेहि ... सोहावै ॥

बारह बँधु के बस पुन, भये बहुत अधिकार।
करै राज सुख भोग सब, बढ़ै बहुत परिवार ॥

भये याकूब सुखी मन माहाँ। निसि दिन करै पुत्र पर छाहाँ ॥
सब सुख देख कुटिल परिवारा। तब लहि आय पुन काल हमारा ॥
बिरथा तेज नबी जब भयो। सेवा का यूसुफ चलि गयो ॥
सभै पुत्र का पास बोलावा। कीन्ह बहुत उपदेस सोहावा ॥
औ यूसुफ कहै सब परिवारा। सो तब आप सिवलोक सिधारा ॥

जब याकूब देह तजि दीन्हा। तब यूसुफ बहु रोदन कीन्हा॥
औ रोवे सगरो परिवारा। बारह पुत्र ' सारा॥
रोवैं सभै सुतन की नारी। औ रोवे दुहिता पुन सारी॥
दुहित पुत्र कै बस सोहाये। रोय रोय सिर छार चढाये॥
भा अँदोर सभ नगर मईं, रोवे नर औ नार।
ऐसे पुरुष सो चलि बसे, को दूसर ससार॥
रोई बहुत जुलेखा नारी। सॅवर मुरत तज भई दुखारी॥
यूसुफ पिता अन्हवावा। औ पुत्रन सभ साज बनावा॥
चले साज कै पिता जनाजा। दुख बाजन घर-घर महॅ बाजा॥
मिसिर नगर महॅ परै अँदोरा। नारिन करै रोट चहुँ ओरा॥
औ यूसुफ का भा दुख भारी। रोवे बहुत सो छॉड डफारी॥
छाड सो लोग कुटॅब परिवारा। होय अकेल अब पिता सिधारा॥
बहुत बम कुछ काज न आए। अकसर पिता सो सरग सिधाए॥
सुत बिन बधु पुत्र ओ नारी। सबूह तजि गयो गयो पैयारी॥
कोऊ न सँघ जाय तेहि गैला। गयो अकेल छाड सबूह खेला॥
छिन बिछुरे दुख होई। छिन-छिन राख सकै नहि कोई॥
... ... सभ साथ।
. . राख न सकै कोऊ हाथ॥
गयो समूल छाड कै नाऊॅ, रहा सूख सबूह ठावें ठाऊँ॥
यूसुफ नबी साज सब साजा। स्याम देस लै गये जनाजा॥
अयस नाम याकूब कै भाई। एक संग विधि जनम गॅवाई॥
तेहि दिन अयस मरे तेहि देसा। ओ याकूब पहुॅच परवेसा॥
एकै सग वै दूनौ भाई। रहै सोय दुओ खुमार समाई॥
एकै सग जनम वै लीन्हा। एकै सग प्रान तजि दीन्हा॥
एकै सग रहै यक पासा। एकै सग गये कैलासा॥
जगत धन्ध सब छाड कै गय अकेल निज धाम।
लोग कुटॅब परिवार सबूह, कोऊ न आयो काम॥
दोउ पिता कै गत पत कीन्हा। मुरत अमोल छार रख दीन्हा॥
खावा भोग ओ भूल अँदेसा। धधा लाग करै सब देसा॥
फूल चढाय फिरे सभ लोगू। लागे खाय अन्न ओ भोगू॥
महा सिद्ध जग रहै न कोई। दूसर कौन अमर जग होई॥
यूसुफ नबी बहुत दुख माना। बेद भेद कों करे बखाना॥
अब न पिता देखब जग मॉहीं। कवन करै हमहि अब छाँहीं॥
कहि ते दुख सुख बरन सुनाऊँ। केहि ते अपरम मरम सो पाऊँ॥

काटिय गाढ सो कवन हमारी । कूट बचन बरनै को भारी ॥
गाढ परे केहि सँवरब, कूट साँच उपदेस ।
अब ना पिता को देखियत, गये सो कौने देस ॥
तब जबरैल सरग तें आए । यूसुफ कहँ सुठ बचन सुनाए ॥
करहु पिता कर अब सतोखा । जेहि ते होय दुओ जग मोखा ॥
पैठो तुम सो पिता के ठाऊँ । सँवरहु सदा अलख कर नाऊँ ॥
औ सुख देहु करहु सुख सारा । पूजै तुम्हें सभै ससारा ॥
तुम का नबी अलख अब कीन्हा । बुद्धि सुद्धि सभ तुम कौ दीन्हा ॥
तब यूसुफ सभ नगर बोलावा । अलख सँदेस सो बरन सुनावा ॥
सभ जग आय सो सीस नवावा । औ सुख भयो मत्र सभ पावा ॥
तुम सो अहो याकूब के ठाऊँ । हम आधार सो राउर नाऊँ ॥
जस वे बेद भेद बतलावहिँ । हिन्दु तुरुक कहँ राउर नाऊँ ॥
सभ जग सीस नवावा, दीन्ह नबी कहँ हाथ ।
दीन्हा सभ सुख पूजा, अवर भये सब साथ ॥
भयो बिरिध बालक घट्यो हारा । घट्यो चाह और घट्यो परहारा ॥
रूप रँग बल बुध सुख खाँगा । यूसुफ मीच देव तन्ह माँगा ॥
उपज्यो क्रोध औ काम हेराना । कामिन देख सो नैन लजाना ॥
रह्यो न रूप सो सभ जग चाहा । रह्यो न बल जेहि करब बेसाहा ॥
रह्यो न केस भँवर अस कारी । रह्यो न दसन दाडिवँ जेहि हारी ॥
रह्यो न सरवन सुरत अमोला । रह्यो न सुदर स्वभाव कपोला ॥
रह्यो न द्रग मृग खजन भजन । रह्यो न बानी कोकिल गजन ॥
नार पुरुष नहिं आदर करहीं । नारि बिरिध कर नाउँ सो धरहीं ॥
जेहि के ओर चाहे चख हेरा । देख बिरिध सो अब मुख फेरा ॥
रहै न हाथ पावँ कै सोभा । जेहि का देख सभै जग लाभा ॥
रह्यो न रग रूप वह, जेहि चाहे ससार ।
कँवल बदन कुँभिलात, नित मनसा तब गा हार ॥
जो मन चाहत रँग सोहागा । सो सब . . ॥
जो मन चाहत उडन खटोला । लागे नहि . डाला ॥
हँस अमोल जो सरवन सोहा । जा कहँ देख सती जग मोहा ॥
बिन पानी अब हँस पियासा । लखि सरवर मन भयो उदासा ॥
कहाँ गये बे दिवस सोहाये । रूप रग दिन दिन अधिकाये ॥
अब दिन दिन वह रोब घटाहीं । बल बुध जाह सो जात हेराई ॥
रहे न सुदर मुरत न मानी, ठौर ठौर रह गये निशानी ॥
गये रैन भूला सुख चाहू । भयो भोर उठ गयो बटाऊ ॥
मोती लर जस चमक बतीसी । सो सँग छाड भयो परदेसी ॥

रूप भाव नहिं रह गये, डार कठ ले हाथ।
भूल बात सब चल बसे, गये झाड के हाथ॥

हँस हँस झूल भुम्म खसि परैं। देख सकामिन रोदन करैं॥
फूले फूल भये पत झारा। यहै हाल अब होय हमारा॥
तब लहि मोर बात नहि मानै। जब पत झार होय तब जानै॥
औ दयाल तुई सबुह कुछ दीन्हा। सब दाता सोई मोहिं कीन्हा॥
दीन्ह जनम मोर नबी के बारा। नबी के सुन नहि मार अधारा॥
वहै रूप सबुह जग उपराहीं। वहै .. जग माहीं॥
भाइन मोहि कूप महँ डारा। नबी कृपा कर मोहिँ निसारा॥
बहु देस सब गाहक मोरा। बंद डार तुम कीन्ह बहोरा॥
भये राज बाढा सभ भोगू। मात पिता कीन्हे सयोगू॥
भाई लोग सभ भये अधीना। पिता मिलाय सभै दुख दीन्हा॥
दीन्हा नार जगत उमराहीं। दीन्हा सुख सतति जग माहीं॥

सभ कुछ दीन्ह दयाल तोहिं, कछु हींछा अब नाँह।
करौ कूच अब जगत सें, करो सो महि पर छाँह॥

यहि जग मा जस कीन्हे दाया। वह जग करो अभय निधि माया॥
मुनि रिखि सिद्ध रहें जेहि ठाऊँ। तहँ मोर अलख कहावहु नाऊँ॥
अब मोहिँ अवर न इछा मोहे। यही जगत मन व्याकुल होये॥
अब तहँ चलूँ जहाँ कै आसा। रहौं सदा जेहि मँदिल उदासा॥
अब यह जग मोहिं तनिक न भावै। चलौ अत जहँ सब कोउ जावे॥
अब दिन दिन अवगुन अधिकाई। गयो रूप जेहि जगत लुभाई॥
अब जीवन से भला सो मरना। रस धावन ... ...॥
तेहि तें बेग उठावहु मोहीं। देखहु पिता जो कियो बिछोही॥

भोर आय नियराया, लेउँ न रैन बसेर॥
ज ... ..., चलना तहाँ सबेर॥

पुन दस बरस जो यूसुफ जिया। सत्त सोभाव जगत महँ किया॥
धरम नीति से कीन्ह सो काजू। दीन्ह सुधार दुखी कर काजू॥
दरब दान दुखिया कौ दीन्हा। नीत छाँह परजा पर कीन्हा॥
धरम नीत औ न्याव करेहीं। बेद भेद सब्ह कौ सुख देहीं॥
पुत्र सयान हिये सुख माहीं। मात पिता के सर परछाहीं॥
बेद भेद सब सुख निरमावा। बधु बस कहँ बेद पठावा॥
यूसुफ नबी कौ अमर न बारा। जेहि घर मा मूसे अवतारा॥
ता कों अलख नबी अस पावा। आद गरथ तुरत भेजावा॥

बारह पुत्र के बस वै, इसराईल कहाहिं।।
मिसिर नगर, लों बसा अधिकाहिं ।।
पातसाह सब के सुत आवा। सो फिरोज़ जग माँह कहावा ।।
इबन अमी सुत कै सुत मूसा। डार दीन्ह जग जान मँजूसा ।।
सो पुन कथा अहै बिस्तारा। कहौं कथा यूसुफ कर सारा ।।
दसमे बरस आय जम राजू। यूसुफ नबी प्रान कै काजू ।।
कहा अलख जो आशा कीन्हा। चहौं प्रान तोर मैं लीन्हा ।।
यूसुफ कहा जो आज्ञा होई। तो सम लेउँ सीस पर सोई ।।
देख लेउ मैं दरस जुलेखा। तब हम करहु जो अवगुन लेखा ।।
तब जमराज कहा यह बाता। आज्ञा नाह लखो मुख राता ।।
अब तुम तजो प्रेम वहि केरा। करहु प्रेम जो करहि निबेरा ।।
बहुत भाँति बिनती कै हारा। पाव न जुलेखा रूप निहारा ।।
यूसुफ चाहा बहुत मन, लखै जुलेखा रूप ।
पै जमराज न माना, अज्ञा अलख अनूप ।
जब लहि आय जुलेखा पासा। तब लहि फूल गयो तजि बासा ।।
आय नार जो पीव के तीरा। दखै परा सो सून शरीरा ।।
पुन निहार यूसुफ कहँ देखा। रह्यो न रूप रग न रेखा ।।
मूँदे नयन खुलैं अब नाहीं, बैन हरे मुख बोलत नाहीं ।।
हाथ पाँव मुख सरवन नासा। सब ते हरत गए जस बासा ।।
सून सरीर परा बिन जीऊ। ठहक मार देखहि मुख पीऊ ।।
घँसक अहै हिय माँह समाना। गयो छाड जस देहँ सें प्राना ।।
मुरझ रहै नार बस फिरै। ... .. ।।
नार देख पिउ कर तन सूना। बिना प्रान सभ पिड बिहूना ।।
कौन हस सरवर हत्यो, केहि दिस गयो हेराय ।
जेहि पुन सून सरीर भै, काहु न कहा सोहाय ।।
परी जुलेखा होय बिन जीऊ। बहुर न देखा आयन पीऊ ।।
तब नहलाय साज सभ कीन्हा। लै गये सौप घर कहँ दीन्हा ।।
छार मिलाय सो छार उडावा। थाती सौंप लोक फिर आवा ।।
जो जाकर तेहि सौपा सोई। साथी सग रहा नहिँ कोई ।।
तीन दिवस दुख रहयो अपारा। रहीं जुलेखा अतिहि बेकरारा ।।
पिव गवनब कछु जानत नाहीं। रहै सोनार सूख पट माहीं ।।
तिसरे दिवस भोर होय गयो। तब पुन चेत जुलेखा भयो ।।
देखा खोल नैन चहुँ ओरा। कहा कि आज भयो कस भोरा ।।
पिउ जागत सब मोहि जगावै। आज सखी कहुँ दिस न आवै ।।
अब मैं आज भोर कै जागी। अयो पीऊ कस अकसर भागी ।।

पिऊ कर मुख नहि देखहु आजू। मोहि तज अजहूं करत न काजू ॥
जब लगि रहौं सेज पर, कन न छाँड़हि मोह।
अब राज त्याज कहाँ गयो, लाल सो मोहि बिछोह ॥

कहा सखी उन सरग सिधारे। हम काँ बिरह आग महँ जारे ॥
सुन यह बात सो खाई पछारा। फिर फिर सीस भुम्म पर मारा ॥
जहाँ सो पीउ होय निहि चिता। तहँ लै चलो जहाँ मोर मिता ॥
चलै सखी सँग व्याकुल नारी। जहाँ कथ सोवै सो नारी ॥
तेहि के ठहर जाय सिर नावा। परथग केस तोर छितरावा ॥
छितराइस मोतिन कै हारा। जूडा टूक टूक कर डारा ॥
बार खसोट तुरंतहि डारा। अभरन तोर बहु सह सिगारा ॥
चूरी फोर सीमन तब फोरा। झार मिलाय दीन्ह वह चूरा ॥
परै ढेर पर झार उडावहि। बिपत-बिपत मुख बैन सुनावै ॥
नैन काढ दोउ लिहिस, दीन्हेसि ढेर पर डार।
जेहि नैनन पिउ तोहिं लखै, देखै काह निहार ॥

कहा कत तुम कहँवा गयऊ। नैन बैन मुख सून सब भयऊ ॥
गात गुलाब देख मुरझाई। सो तन झार लीन्ह अब खाई ॥
जेहि मुख बोलत अमिरित बानी। अमृत बोल वे कहाँ हेरानी ॥
नित मो प्रीतम करत जो दाया। कस अब लाल भयो निर्मोया ॥
मै पापी तुम्ह सँग न लागी। अहौ करम की सदा अभागी ॥
मोहि छाड कत कन सिधारे। नैन ओट न करत बयारे ॥
जब जमराज प्रान तोर लीन्हा। निठुर लाल मोहि खबर न दीन्हा ॥
मैं जम तें अस करत निहोरा। लिह्यो लाल सँग प्रान सो मोरा ॥
एकहु छिन न मोहि बिसारेहु। चलत बार मोहि कसन पुकारहु ॥
नैन ओट कहुँ होत रहु, मोहि ते आज्ञा लेहु।
एसै कत बिदेस कहँ, मोर न खोज करेहु ॥

चालिम बरस जो जोग कमावा। तब प्रीतम हम तुम कौ पावा ॥
दरब अरथ सब देहु लुटाई। जोबन रूप अनूप गँवाई ॥
कीन्ह दया तब अलख गोसाई। दीन्हा रूप सोय सुख माहीं ॥
तब महिमा मै तोर न जानी। निसि-दिन रहयों हिये अभिमानी ॥
सो अब कत कहाँ तोहि पाओं। चरन लाय सिर तोहि मनाओं ॥
तुम्ह नित करो मोर मनुहारी। मैं न करौं कुछ कान तुम्हारी ॥
का अब करहुँ मनाऊँ कैसे। बिनती करहुँ कीन्ह तुम्ह जैसे ॥
तुम्ह साईं मैं चेरी मोरी। का अब करहुँ अहौं मति थोरी ॥

सात बरस बँद राख्यौं, लायो दोख न मोहि ।
औगुन मोर छिपायो कह्यो न तुम कछु मोहि ॥
सात बरस राख्यौं बंद माहीं । मन महँ रोस कियो कुछ नाहीं ॥
चलत बार तोर रूप न देख्यौं । बचन न सुन्यों न बयन बिलेख्यों ॥
सो लालन तजि रहे अभागी । गई लाल मै सोय न जागी ॥
जब तोहिं का बाहर बहिराए । बैरिन नींद कहाँ ते आए ॥
देख्यौं जाग मँदिर तोर सूना । नगर काट घर भयो बिहूना ॥
आयो फूल छाँड फुलवारी । काँटा रह्यो बाग महँ भारी ॥
गयो कत सो बेग सुभागा । पाछे रह्यो कलक सो लागा ॥
दिह्यो उत्तर मोहि कत सोहाई । फाटै भुम्भ अब जाऊँ समाई ॥
यह कलक अब दिह्यो मिटाई । उठ कै लाल लिह्यो सँग लाई ॥
ऐसो रतन मिला जग, छार समान्यो आय ।
धृक जीवन जो लाल बिन, जग माँ जियत रहाय ॥
यह घर बार सो देस तुम्हारा । भया सून सब जग अँधियारा ॥
कवन बताइहि भेद करम था । भूलै कवन देखाइहि पथा ॥
को तुम बिन यह भार उठाई । नेम धरम दिन-दिन अधिकाई ॥
अब तुम अस जग उपजा नाही । कौन सो करै दुखी परछाहीं ॥
तुम्ह समान जग फेरि न आई । को अस रूप ज्ञान बुध पाई ॥
भरम नींद रह्यो पिउ सोई । नार सो उत्त चेत न कोई ॥
तुम निहचित भयो पिव जाई । सोच हमार तज्यो सुख दाई ।
सभै लोग हैं यह ससारा । तुम्ह बिन कोऊ न अहै हमारा ॥
केहि-क देख मन हुलसैं पीऊ । तृखा बुझाय पियासै जीऊ ।
वह बसत वह पावस, वहै फूल फल सोय ।
सब अपने रितु देखब, तुम्हैं न देखै कोय ॥
वहै मदिर औ सरवर तीरा । करहिं धमार सदा वह तीरा ॥
वहै फूल फूले चहुँ ओरा । वह चातक रँग खजन मोरा ॥
वहै पावन जो फिर फिर आवै । वहै दिवस वह रैन दिखावै ॥
एक न तुम जेहि बिन ससारा । होयगा तीन भवन अँधियारा ।
वह तरुवर वह पात सहावन । भावन एक बिना मन भावन ॥
एक दिन हत्यो सो भाग सोहावा । जेहि दिन तोहि कहँ नायक लैआवा ॥
भये धूम सम मिसिर के देसा । उठ धावा सभ रंग नरेसा ॥
बैठ्यो नील करै असनाना । नर-नरेस सबहु देख लोभाना ॥
यक दिन आज सो देख्यौं, सो मुख छार छिपान ।
का भा रूप अनूप वह, जेहि ससार लुभान ॥
सपने देख बिमोह्यों तोहीं । उपजा बिरह तेज लखि तोहीं ॥

आयो मिसिर कथ तोहिं लागी। कह्यों कि का गुन कीन्ह अभागी ॥
प्रेम हमार सॉच बिधि कीन्हा। पाहन स्वरूप सो हम कों दीन्हा ॥
जब प्रीतम हम सें मुख मोरा। जीवन भयो दरस लखि तोरा ॥
चालीस बरस जोग मैं कीन्हा। सुन कै नॉव सबै कुछ दीन्हा ॥
जब तोर नाउँ सुनावै कोई। पावे लाख देऊँ जो होई ॥
बीस बरस रह्यों दरस अधारा। बीस बरस सुन नाम सॅभारा ॥
अब तोर दरस हरा भुव माहीं। नाऊँ तुम्हार सुनब अब नाहीं ॥
देखहुँ दरस सुनहुँ नहिं नाऊँ। केहि के अधार रहौ यह ठाऊँ ॥
ना पिउ बोल सुनावहु, न अब दरसन देहु।
करहु दया पति राखहु, यह जीवन आपन लेहु ॥
अब पत रहै जो जाय पराना। धृक जिव तुम बिन पुन छिन माना ॥
जिवन भला जब लहि पिउ होई। बिना पीव धृक जीवन सोई ॥
पिव बिन सून सभै समारा। सुख सपत सभ पिव बिन जारा।
बिन पिव कोई सॅघाती नाही। केहि बिधि रहे प्रान घट मॉही ॥
जरै जाय सुख सपत साजा। बिना पीउ आवै नहि काजा ॥
पिव लै सँग जो होय भिखारी। बिन पिउ सुख सपत बलिहारी ॥
पिव के सॅग . ... । बिना पीव सुख बिलसै नाहीं ॥
तुम बिन कत जगत अँधियारा। भयो उजार सभै ससारा ॥
निठुर प्रान जो अब लहि रह्यो। पाहन हिया निठुर दुख सह्यो ॥
खाय पछार जो छार पर, करै आह एक बार।
पछी प्रान सो उड़ गयो, रहे छार महॅ छार ॥
यूसुफ निकट राख तेहि दीन्हा। बिरहिन प्रेम समापत कीन्हा ॥
धन वह सती प्रेम चितलावा। आद अत लहि प्रेम लगावा ॥
जब लहि जियै प्रेम रस चाखै। पिव सॅग गये प्रान पुन राखै ॥
जो कुछ अहै जो जीवन माहीं। मरै प्रात निठुर कुछ नाहीं ॥
रिखि मुनि सिद्ध तपा ओ जोगी। प्रेम पुरुष ओ बिरह बियोगी ॥
पडित कवी और सज्ञाना। मीर अमीर राव सुलताना ॥
रूपवत गुनवत सोहाई। तेजवत बलवत बनाई ॥
ऐसे लोग रहै ना पाये। केहि कारन यह जग मॉ आये ॥
सब आए यहि जगत महॅ, कीन्ह सो गुन बिस्तार।
कोउ रहे पुनि आवा, खाय लीन्ह यह छार ॥

उपसंहार

उन लोगन कहै सँवर 'निमारा' । उठा रोय मनमहँ एकबारा ॥
जब ते जनम लीन्ह जग माहीं । छुट दुख और सो देख्यो नाहीं ॥
जब लहि जिऊँ पिऊँ दुख नीरा । माथहिं दीन्ह सो दुख कै पीरा ॥
अवर दुःख मै सब कुछ सहा । भयो एक दुख बाउर महा ॥
पुत्र अनूप दई मोहि दीन्हा । रूप अनूप बुध आगिर कीन्हा ॥
बाइस बरस रहा जग माहीं । छुट विद्या उन जान्यो नाहीं ॥
नाम लतीफ अनूप सोहावा । सब गुन ज्ञान दई अधिकावा ॥
बात भुलात नहिं पुत्र सोहावा । सायर सुघर सो ग्रंथ बनावा ॥

बाइस बरस के बयस महँ , छाड दीन्ह उन देह ।
मुरत अनूप गुलाब से , जाय मिले पुन खेह ॥

तब मै भयऊँ सो बाउर भेसा । करे सदा अपकाल अँदेसा ॥
सबूह औषध कीन्हा उपचारा । बिनति किह्यो सो बारम बारा ॥
जब तें लतीफ कर मरम चिसेख्यो । तब सपत अचिरथा देख्यो ॥
तब मैं कहा पुत्र से रोई । किरत सोहाय नहीं अब कोई ॥
मोहिं का जान पड़ा जग माही । कोइ ठाकुर ओ सूरत नाहीं ॥
तब उन कहा कहै का ताता । हमका दोख होय यह बाता ॥
अहै सो सत्त एक करतारा । वह कर खेल सो अहै अपारा ॥
तुमको दोख होब अब ताता । दइ सुखिया कहँ दोख बिधाता ॥
जो कुछ .. . मारा । सो पुन अहै को मेटन हारा ॥

जेहि दुख ते अकुलाव तुम , करहु पिता संतोष ।
बड़े लोग सब दुख सहै , होय मुगत गत दोख ॥

जेहि लहि नबी भये जग माहीं । छुट दुख और सो देखा नाहीं ॥
काहुँ कहै कवि लास निसारे । रोवत आद बीन कै सारे ॥
काहु बाँध अगिन महँ डारा । काहू अँध कीन्ह अँधियारा ॥
काहु कहँ आरसी चीरा । काहु कहँ सर तज्यो सरीरा ॥
काहु मीन के मुख महँ डारा । काहू कूप डार निसारा ॥
जेहि के लाग रच्यो ससारा । तेहि का दुख वार न पारा ॥
ओ श्याम दुख सब्द जगजानी । जब लग वै सो दुख निभानी ॥
जहँ लहि भये सिद्ध अवतारा । सभ का दुख दीन्हो करतारा ॥
कोऊ न यह जग दुख ते बाँचा । सहै आँच सो कुदन साँचा ॥

रामचद्र जो दुख सह्यो । सो जान्यो सब कोइ ॥
मानुष देह धर सभ, दुख ते व्याकुल होइ ॥
तेहि ते दुखित होइह जिन ताता । करहु न अब रोय अपघाता ॥
सत साधु कहँ वह दुख दई । कनक जराइ खरा कर लई ॥
अब तुम करहु मोर सतोखा । देहु असीस जो पाऊँ मोखा ॥
यह जग मा सुठ जीवन थोरा । अन काल सुठ होइय मोरा ॥
कोउ दिन दस आगे कोउ पाछे । है नित काल सो काछे-काछे ॥
उन लोगन कै मेट न होना । होने हुए, सो हुए न होना ॥
देखउ यह जग को गत ताता । दई जनम भर मरन बिधाता ॥
जे कोइ जनम लीन्ह जगमाहीं । सो जान्यो एक दिन है नाहीं ॥
जनम साथ यह मरन है, मरन साथ गत मोंख ।
हिये बोल न गाँठहु, करहु पिता सतोख ॥
कहि यह बात जियन मुख मोरा । गयो प्रान तजि प्रान सो मोरा ॥
सब सँवरहुँ वह लाल अमोला । हिया फाट मुख आव न बोला ॥
जस याकूब सो पुत्र बिछोहा । रह्यो प्रान सो निठुर बिछोहा ॥
नस यह प्रान निठुर अब रहे । यूसुफ बिरह नेह निर्दहै ॥
यूसुफ सभ कहँ पुत्र सोहावा । कहैं अस पुत्र सो जगभा आवा ॥
निसि दिन करै तपस्या जोगू । जब तप करै चहै सुख भोगू ॥
जाय जोग महँ रैन बहाई । तरुन बस महँ बिरिध सोहाई ॥
कई ग्रथ अनूप बनावा । जिन देखा चख नीर बहावा ॥
सँवर रूप गुन ज्ञान सोहावा । रात-दिवस जल चख बरसावा ॥
हिया बजर का भयो हमारा । को लै गयो सो लाल हमारा ॥
गयो लाल केहि देस कहँ, जेहि कै मिलै न खोज ।
होय सोइ निहिचिन्त, सो देइ हमें दुख रोज ।
सबै गये हौ रहा अकेला । पहिले पढहि मोह पर हेला ॥
तेहि पाछे मोहि छाड सिधारा । . ... ॥
यह जग छाड़ सोई निहचिता । गये पैठ और सागर मीता ॥
जब सँवरौं वह सभै सोहाये । छाती फाट बेहर न जाई ॥
कहाँ गये औ कहाँ ते आये ; जान न परे भेद निरभाये ॥
सँवर सँवर वै लोग सुजाना । रोवे निम दिन होयँ अज्ञाना ॥
अपने मीत्र सँवर सुख पायहु । होय बोध मन ।ा समुझावा ॥
वै सभ गये तुम्हीं यह देसा । केहि दिन कर अब करहुँ अँदेसा ॥
तुम का अत वहै नहिं जाना । तेहि का कौन सोच पछिताना ॥
जेहि पथ सिधारें, सभैं बटाऊ लोग ॥
चलहु सुचित जेहि मारग, और न जोग न भोग ॥

रोय रोय यह बिरह बखानी । कोऊ न रहा जग रहै कहानी ॥
यह जग ते मन रहै उदासा । सँवरो जहाँ सदा कर बासा ॥
देखि जगत कर कूकत हाला । होय सदा मन हाल बेहाला ॥
जान न परे भेद अवगाहाँ । जग जीवन उपज्यों भुव काहाँ ॥
देहु दयाल मोरहिँ कर मोखू । दरद मोर अब अवगुन दोखू ॥
पैठ प्रेम कै अवर कोई । दिहेन असीस मोहिँ मन होई ॥
हम न रहे अनकर रह जाई । सँवर हियों लोग हिये सुख पाई ॥
सात दिवस महँ कथा सोहाई । कीन्ह समापत दीन्ह बनाई ॥
सभ लोकन कहें लाऊँ सीसा । लावहु दोख न देहु असीसा ॥
गुन आखर ... , जहाज ।
जनम ... , ...लाज ॥